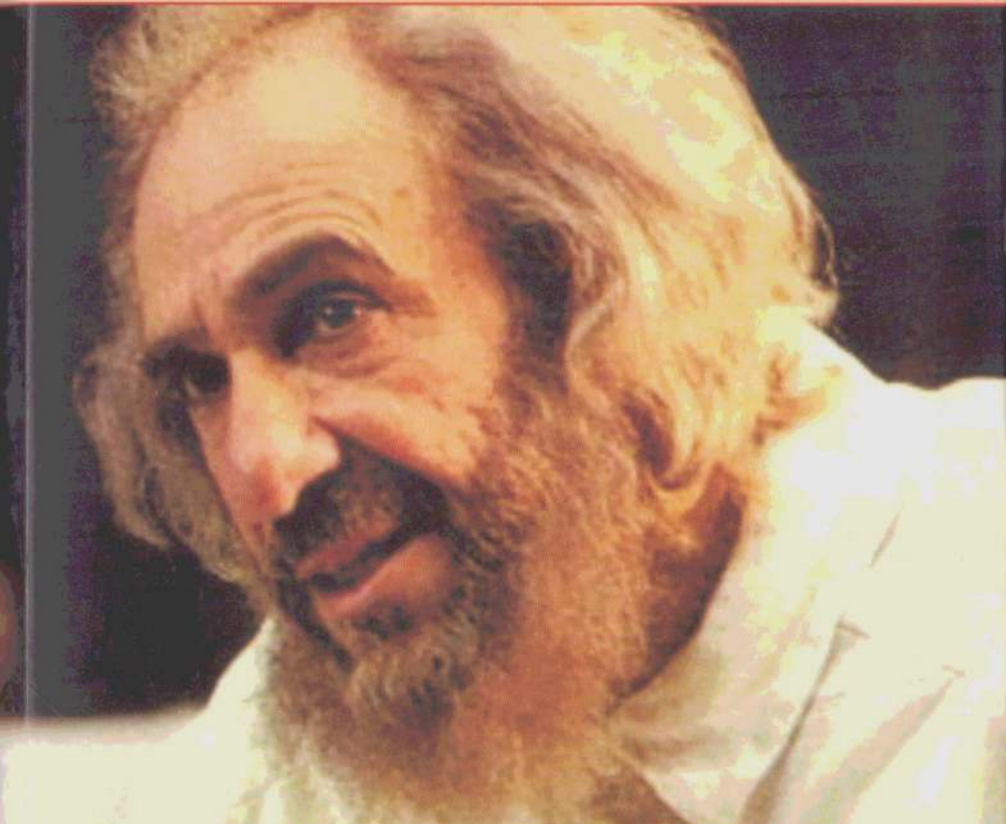
लियो टॉल्सटॉय

प्रतिनिधि रचनाएँ

भाग-3



कितनी जमीन
बालकों का विवेक
कलवार की करतूत

ईसा की सिखावन
प्रेम में भगवान
अँधेरे में उजाला

लियो टॉल्सटॉय : प्रतिनिधि रचनाएँ

(भाग - 3)

लियो टॉल्सटॉय : प्रतिनिधि रचनाएँ

(भाग - 3)

संपादक

कृष्णदत्त पालीवाल

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

ISBN 978-81-7309-436-1 (PB)

•

प्रकाशक

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

एन-77, पहली मंजिल, कनॉट सर्कस, नई दिल्ली-110001

Publisher

Sasta Sahitya Mandal Prakashan

N-77, First Floor, Connaught Circus, New Delhi-110 001

फोन / Phone : 23310505, 41523565

Visit us at : www.sastasahityamandal.org

E-mail : sastasahityamandal@gmail.com

शाखा : कमला सदन, पटना साइंस कॉलेज के सामने,

अशोक राजपथ, पटना-800 006 (बिहार)

फोन : 0612-2678025

•

संस्करण : 2019

मूल्य : 220/-

•

आवरण सज्जा : अंतिका आर्ट्स

मुद्रक : इंडिया बाइंडिंग हाउस, ए-98, सेक्टर-65, नोएडा

LEO TOLSTOY: PRATINIDHI RACHANAYEN ***PART-3(MISCELLANEOUS)***

by Leo Tolstoy *Edited by* **Krishna Dutt** Paliwal

Price : Rs. 220/-

प्रकाशकीय

विश्वप्रसिद्ध चिंतक टॉल्सटॉय के साहित्य से हिंदी के पाठक भलीभाँति परिचित हैं। 'सस्ता साहित्य मंडल' से प्रकाशित उनके साहित्य का हिंदी अनुवाद अपार लोकप्रियता हासिल कर चुका है। वस्तुतः टॉल्सटॉय के साहित्य की उपादेयता देश-काल तक सीमित नहीं है, वह सब काल और सबके लिए समान रूप से उपयोगी है।

टॉल्सटॉय की प्रतिनिधि रचनाओं को तीन भागों में प्रकाशित किया जा रहा है। पहले भाग में उनकी पुस्तकें— *धर्म और सदाचार, जीवन-साधना, सामाजिक कुरीतियाँ* तथा *स्त्री और पुरुष*, दूसरे भाग में— *हम करें क्या, बुराई कैसे मिटे, हमारे जमाने की गुलामी* और *मेरी मुक्ति की कहानी* तथा तीसरे भाग में— *ईसा की सिखावन, कितनी जमीन, प्रेम में भगवान, बालकों का विवेक, कलवार की करतूत* और *अँधेरे में उजाला* संकलित की गई हैं।

इन रचनाओं के माध्यम से जो लेखक के उदात्त विचार सामने आते हैं वे आज भी हर व्यक्ति के लिए प्रेरक और ग्राह्य हैं। आशा है डॉ. पालीवाल के संपादन में ये पुस्तकें पाठकों के लिए संग्रहणीय सिद्ध होंगी।

—**मंत्री**

लियो टॉल्सटॉय : चिंतन के नए दिगंत

लियो टॉल्सटॉय विश्व साहित्य के लिए एक जाना-माना नाम है। उन्होंने अपने गंभीर चिंतन से रचना एवं आलोचना को नवीन दिशा-दृष्टि दी है। उनके चिंतन का मुहावरा इतना प्रभावी है कि विश्व के रचनाकार, सुधारक और नेता उससे आंदोलित एवं प्रभावित हुए हैं। भारतीय साहित्य चिंतन एवं राजनीति पर टॉल्सटॉय ने अपनी अमिट छाप छोड़ी है। धर्म-संस्कृति अहिंसा-करुणा सर्वोच्च मानवीय मूल्य-चेतना एवं संस्कारी आधुनिकता को उन्होंने जड़ों से सींचा है। इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक में जब हम टॉल्सटॉय की सर्जनात्मकता और विचार-दृष्टि पर विचार करते हैं तब स्पष्ट रूप से यह पाते हैं कि आज भी उनके विचारों की ताजगी में झुर्रियाँ नहीं पड़ी हैं। उनके निबंध हर दृष्टि से पठनीय हैं और उनकी कहानियाँ मानव-आत्मा की अमर प्रतिध्वनियाँ हैं जिनमें देश और काल से परे चिंतन के नए दिगंत आलोकित हो रहे हैं।

टॉल्सटॉय ने अपने समय एवं समाज में धर्मों-संस्कृतियों की टकराहट को झेला और समझा था। साथ ही वे भारत से भावित और प्रभावित थे। बौद्ध-दर्शन एवं अन्य भारतीय दर्शन की अंतर्यात्रा ने उन्हें एवं खास ढंग का भारतीय 'ऋषि' बना दिया था। यहाँ ऋषि का अर्थ है—रचनाकार एवं मनीषी। ऋषि ही कवि एवं मनीषी होता है—मुनि नहीं। इस दृष्टि से ऋषि को मुनि का पर्याय मानना भूल होगी। वे ऋषि थे और बहुश्रुत ऋषि। उनके चिंतन में मानवतावाद की लौ निरंतर जल रही है और इस प्रकाश से पीढ़ियाँ प्रेरणा पाती रही हैं। उनके चिंतन में जटिल समस्याओं-चिंताओं के दार्शनिक समाधान हैं और इस चिंतन में नकलची भाव न होकर मौलिकता है। चिंतन की मूलगामी मौलिकता के कारण ही उनका चिंतन महात्मा गांधी के युवा-मानस को दक्षिण अफ्रीका में बहुत विस्मित और विक्षुब्ध करता है। भारत में यह स्वाधीनता संग्राम का दौर था और अंगड़ाई लेकर एशिया का नवजागरण गुलामी की स्थिति से मुक्ति पाने का संकल्प ले रहा था। इस नवजागरण में टॉल्सटॉय के चिंतन का बहुत भारी योगदान है क्योंकि यह चिंतन आत्मविश्वास और मानवीय गरिमा की महत्त्व प्रतिष्ठा करता रहा है।

फ्रांसीसी राज्यक्रांति 1789 ई. का प्रभाव विश्व भर पर पड़ा था और उस चिंतन

के मधुचक्र की भनभनाहट पूरे परिवेश में व्याप्त थी। भूलना न होगा कि इसी जागृति के परिवेश ने लियो टॉल्सटॉय की मनोभूमिका का गठन किया था। रेनेसाँ से यानी नवजागरण से एक नए विश्व का जन्म हो रहा था। सैकड़ों वर्षों से ढाली गयी सामंत प्रथा और आर्थिक ढाँचे सारे यूरोप में बदल रहे थे। कोलंबस और वास्कोडिगामा समुद्री रास्तों के खोजी एक नई इमारत रच रहे थे और अमेरिका तथा पूर्व के देशों से आई स्पेन और पुर्तगाल की दौलत ने यूरोप का दिमाग बदल दिया था। उसका दिमाग संसारव्यापी व्यापार से अथाह संपत्ति कमाने के लिए मचल उठा और संसार पर शासन करने का अरमान भी उठान पर था। प्रोटेस्टैंट और कैथोलिकों के धार्मिक युद्ध, साथ ही राष्ट्रीय आजादी के युद्ध जैसे नीदरलैंड के युद्ध बादशाही अधिनायकवादी तंत्र के विरुद्ध विद्रोह थे—मध्यवर्ग के विद्रोह। यहाँ सबसे बड़ा जमींदार था—ईसाई-संघ। इसलिए 'रेनेसाँ' नवजागरण 'रिफार्मेशन' या सुधार और 'रिवोल्यूशन' या क्रांति के विशेष अर्थ संदर्भ थे। दरअसल नवजागरण विधाओं का पुनर्जन्म था—जिसमें साहित्य कला, विज्ञान, दर्शन ,अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र के क्षेत्रों में और यूरोपीय भाषाओं में परिवर्तन-चक्र बहुत तेज हो गया था। वहाँ सुधार आंदोलन तो ईसाई संघ के खिलाफ़ खुला विद्रोह था। साथ ही छपाई ने शिक्षा का प्रसार किया। भारी संख्या में पुस्तक-प्रकाशन ने ज्ञान की लहर को तीव्र किया। इसी हलचल के भीतर से 'रेनेसाँ' का सूर्य निकला था जो इटली में उगा जरूर लेकिन प्रेरणा यूनान से पायी थी। तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी में फ्लोरेंस इतावली भाषा के दो महान व्यक्तित्वों को जन्म दे चुका था—कवि दांते और पेत्रार्क। चंचल फ्लोरेंस ने तीन अनुपम व्यक्ति पैदा किए—लिओनार्दो द विंची, माइकेल ऐंजिलो और राफिएल। लियानार्दो महान चित्रकार, मूर्तिकार, चिंतक और प्रयोग में सक्रिय वैज्ञानिक था। लेकिन उसके साथ दगा किया गया, फिर भी नयी दुनिया ने नई करवट ली। रेनेसाँ इटली में पंद्रहवीं शताब्दी में फूल की तरह खिला और अपनी सुगंध लेकर दूसरे पश्चिमी देशों में फैल गया। कलाओं के क्षेत्र में सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी में एक नया चित्रलोक ही रच डाला।

सोलहवीं शताब्दी में हार्वी और सत्रहवीं शताब्दी में आइजक न्यूटन ने विज्ञान का एक नया लोक उजागर किया और पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत ने प्रकृति के रहस्य से पर्दा उठा दिया। उधर तमाम भाषाओं ने स्पेनी-जर्मन-अंग्रेजी-फ्रांसीसी ने नए ढंग का साहित्य प्रस्तुत किया। इंग्लैंड में शेक्सपियर और मिल्टन, फ्रांस में मौलियर जैसा नाटककार और देकार्त जैसा दार्शनिक पैदा हुआ। फ्लोरेंस में मेकियावेली ने 'प्रिंस' का राजनीतिक चिंतन दिया। 'रेनेसाँ' ने रोमन ईसाई-तंत्र की हवा निकाल दी। जर्मनी में मार्टिन लूथर ने ईसाई-संघ के भ्रष्टाचार-विलास की पोल खोल दी।

इस तरह प्रोटेस्टैंट विद्रोह शुरू हुआ। इसे प्रोटेस्टैंट विद्रोह कहा इसलिए जाता है कि इसमें रोमन-ईसाई संघ के कट्टरतावाद-जड़तावाद के प्रति खुला विद्रोह था। हालाँकि कट्टर 'जीसस-संघ' वाले डटे रहे लेकिन इन दिनों काले पड़ते गए। प्रोटेस्टैंट ही 'जन-रक्षक', 'दीन-रक्षक' धर्म बनकर फैल गया। इस तरह रेनेसाँ और रिफार्मेशन के आंदोलनों ने धर्म-दर्शन-साहित्य-कला चिंतन के पूरे चक्र को ही बदल दिया। लेकिन इस बीच सारे यूरोप में बादशाह सभी के ऊपर अपना वर्चस्व कायम करने में सफल हुए। रूस, जर्मनी और इटली में ज्यादातर निरंकुश, एकतंत्री सम्राट। युद्धों, हत्याओं, लूटों और धार्मिक कठमुल्लाओं का एक संसार तब थमा जब रेनेसाँ के बाद का समय आया। नीदरलैंड की आजादी का संग्राम एक सबक बन गया। इंग्लैंड धीरे-धीरे पनपा-उठा और भारत जैसे देश पर हावी हो गया। इतिहास विधाता का रथ किन-किन दिशाओं में चला, इसकी गहरी पड़ताल ने टॉल्सटॉय की मानसिकता का गठन किया। उन्नीसवीं शताब्दी का रूस दुनिया का पिछड़ा देश था जबकि यूरोप में क्रांतियाँ हो रही थीं। खेतिहर किसानों की दशा गुलामों जैसी थी और वे भयंकर अत्याचार के शिकार थे। जारशाही के अत्याचारों से प्रोग्राम, झेलता देश। पीटर और कैथरीन ने वहाँ ऐसी हालत पैदा कर दी कि किसानों की हालत बदतर होती चली गई, लेकिन नौवा नदी के किनारे बसा सेंट पीटर्सबर्ग नामक नया पश्चिमी ढंग का नगर फल-फूल उठा। इस नई राजधानी पीटर्सबर्ग के शासकों ने किसानों के विद्रोह कुचल दिए। 1825 का दिसंबरी विद्रोह भी दबा दिया गया— लेकिन जनता में राजनीतिक चेतना का बीज-वपन हो गया। क्रीमियाई युद्ध में पराजय के बाद रूस की आँखें खुलीं और 1861 में किसानों को थोड़ी राहत भी मिली। लेकिन गुलाम-किसानों के पासा जोतने-बोने की भूमि नहीं थी। 1870 में समाजवादी झुकाववाले विद्यार्थी किसानों की दशा सुधारने आगे बढ़े, किंतु सफल नहीं हो सके। रूस में क्रांतिकारी हलचलों ने आतंकवाद, बमवाद-अराजकतावाद का रूप ग्रहण किया। किंतु ये सभी खूनी-दमन के शिकार हुए।

रूस के एक प्रांत पोलैंड में भारी बगावत हुई जिसे कुचल दिया गया और पचास हजार पोल साइबेरिया में पटक दिए गए। यहाँ यहूदियों का 'प्रोग्रोम' हत्याएँ हुईं और भगदड़ मची रही। इस समय रूस का सत्ता विस्तार पूर्व की तरफ हो रहा था और वह प्रशांत महासागर तक बढ़ आया। मध्य एशिया में रूसी लोग अफगानिस्तान की सीमा तक तथा दक्षिण में तुर्की की सरहद तक। लेकिन रूस कृषि-प्रधान देश ही रहा। थोड़े से कल-कारखाने खुले जो प्राय: अंग्रेजी की देख-रेख में चलते थे। इन अंग्रेजी कल-कारखानों में मजदूरों का भयंकर शोषण हो रहा था और इसी स्थिति के भीतर से समाजवाद-साम्यवाद की नई वैचारिक लहर में तेजी आई। फलतः वहाँ

'सोशल डेमोक्रेटिड लेबर पार्टी', बनी और यह सब मार्क्सवाद के सिद्धांतों के आधार पर हुआ। मार्क्सवाद ने आतंकवाद की हत्यानीति का विरोध किया। क्योंकि उनका लक्ष्य शक्ति संगठन की सामूहिकता से जारशाही को खत्म करना था। 1880 में लेनिन ने क्रांतिकारी हलचलों को बढ़ा दिया। मार्क्स का ख्याल था कि मजदूर वर्ग की क्रांति की शुरुआत जर्मनी से होगी, उसे रूस में क्रांति की संभावना बहुत कम नजर आती थी क्योंकि देश में मध्ययुगीनता व्याप्त थी। लेनिन क्रांति के लिए संकल्पबद्ध युवकों के दल की खोज में था क्योंकि स्वार्थी तत्त्वों के कारण इंग्लैंड, जर्मनी, फ्रांस आदि देशों में मार्क्सवाद कमजोर ही चल रहा था। 1905 में असफल रूसी क्रांति हुई। लेकिन लेनिन बोल्शेविक दल के नेता के रूप में उभार पर रहा। त्राटस्की का मेनशेविक-दल (अल्पसंख्यक-दल) बोल्शेविक दल (बहुसंख्यक) दल से अलग रहा। 1894 में रूस-जापान युद्ध का सिलसिला शुरू हुआ और 1904-05 में भयंकर युद्ध। इस युद्ध में रूस की पराजय हुई। इस जय-पराजय के बीच उन्नीसवीं शताब्दी के रूस ने पुश्किन को पैदा किया और साहित्य की एक महान परंपरा अंगड़ाई लेकर उठ खड़ी हुई। कथाकारों में गोगोल, तुर्कनेव , चेखव, दोस्तोवस्की का महान लेखन सामने आया। टॉल्सटॉय को याद करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने अपनी पुस्तक 'विश्व इतिहास की झलक' (दूसरा खंड) में पृ. 850 पर लिखा है, ''फिर, शायद इन सबसे महान लियो टॉल्सटॉय हैं, जिनमें केवल उपन्यास लिखने की ही प्रतिभा नहीं थी बल्कि जो एक मजहबी और रूहानी नेता भी हो गए और जिनका प्रभाव बहुत दूर तक फैला। यह प्रभाव सचमुच गांधी जी तक भी जा पहुँचा जो उस समय दक्षिण अफ्रीका में थे। ये दोनों एक-दूसरे की कद्र करते थे और आपस में पत्र-व्यवहार भी करते थे। अविरोध या अहिंसा में पक्का विश्वास इन दोनों को जोड़नेवाली कड़ी थी। टॉल्सटॉय की राय में ईसा का बुनियादी उपदेश यही था और गांधी ने प्राचीन हिंदू ग्रंथों से यही नतीजा निकाला था। टॉल्सटॉय तो अपने पक्के विश्वासों को जीवन में उतारते हुए, पर दुनिया से विलग रहकर, भविष्य के द्रष्टा ही बने रहे, मगर गांधी जी ने इस नकारात्मक नजर आनेवाली चीज़ को दक्षिण अफ्रीका व भारत की सामूहिक समस्याओं पर अमली तरीके से लागू किया।'' रूस में टॉल्सटॉय के साथ ही मैक्सिम गोर्की की ख्याति फैली। टॉल्सटॉय की 1910 और गोर्की की 1936 में मृत्यु हो गयी।

टॉल्सटॉय की यह शताब्दी अनेक अर्थों में विलक्षण शताब्दी है। इतिहास-विधाता ने विज्ञान और उद्योग, अर्थशास्त्र और राजनीति, धर्म और दर्शन, अमीरी और गरीबी, पूँजीवादी और साम्राज्यवाद, समाजवाद और मार्क्सवाद, लोकतंत्र और निरंकुशतावाद, डार्विन और मार्क्स, आजादी और गुलामी, अकाल और महामारी,

युद्ध और शांति, सभ्यता और बर्बरता, टॉल्सटॉय और पुश्किन, क्रांति और भ्रांति न जाने कितने खेल खेले हैं। इस युग का पूरा मानचित्र चित्र-विचित्र रंगीनियों से निर्मित हुआ है। भाप, बिजली मशीनों की ताकत से उत्पादन बढ़ा और पूँजीवादी उद्योगों में गति आई। लंकाशायर के कपड़े के मशीनी उत्पादन ने भारत की करघा कला की कमर तोड़ दी। इस तरह की लूट और तबाही का वर्णन हमारे चिंतक रमेशचंद दत्त ने 'भारत का आर्थिक इतिहास' में किया है। दत्त जी की इस पुस्तक को पढ़कर गांधी जी की आँखें खुल गयीं और उन्होंने ब्रिटिश लूटतंत्र की नीतियों को विस्तार से समझा। गांधी जी ने 'हिंद स्वराज' (1909) अपनी पुस्तक के अंत में उन बीस पुस्तकों की सूची दी है जिन्हें अवश्य पढ़ने का अनुरोध किया है। इन बीस पुस्तकों में एक पुस्तक रमेशचंद दत्त, एक पुस्तक दादाभाई नौरोजी और अकेले टॉल्सटॉय की छह पुस्तकें शामिल हैं। इन छह पुस्तकों से अंदाजा हो जाता है कि गांधी पर टॉल्सटॉय का कितना गहरा असर पड़ा है।

दरअसल, गांधी जी अपने प्रेरणा-नायक के रूप में टॉल्सटॉय का स्मरण करते रहे हैं। गांधी जी ने 'लियो टॉल्सटॉय' शीर्षक संस्मरण में लिखा है, ''तीन पुरुषों ने मेरे जीवन पर बहुत बड़ा प्रभाव डाला है। उसमें पहला स्थान मैं रायचंद कवि को देता हूँ, दूसरा टॉल्सटॉय को और तीसरा रस्किन को। टॉल्सटॉय और रस्किन के बीच स्पर्धा खड़ी हो और दोनों के जीवन के विषय में मैं अधिक बातें जान लूँ तो नहीं जानता कि उस हालत में प्रथम स्थान मैं किसे दूँगा, परंतु अभी तो दूसरा स्थान टॉल्सटॉय को देता हूँ।'' (गांधी संस्मरण और विचार, 1968, गांधी शांति प्रतिष्ठान तथा सस्ता साहित्य मंडल का संयुक्त प्रशासन, पृ. 37) शीलवश गांधी जी ने आगे कहा है कि ''टॉल्सटॉय के जीवन के विषय में बहुतेरों ने जितना पढ़ा होगा उतना मैंने नहीं पढ़ा है। ऐसा भी कह सकते हैं कि उनके लिखे हुए ग्रंथों का वाचन भी मेरा बहुत कम है। उनकी पुस्तकों में से जिस किताब का प्रभाव मुझ पर बहुत अधिक पड़ा, उसका नाम है, 'किंग्डम आव हैविन इज विदिन यू'। उसका अर्थ यह है कि ईश्वर का राज्य तुम्हारे हृदय में है। उसे बाहर खोजने जाओगे तो वह कहीं न मिलेगा।'' यह पुस्तक गांधी की स्मृति में बसी रही है, ''इसे मैंने चालीस वर्ष पहले पढ़ा था। उस समय मेरे विचार कई एक (अर्थों में) बातों में शंकाशील थे। कई मर्तबा मुझे नास्तिकता के विचार भी आते थे। विलायत जाने के समय मैं हिंसक था, हिंसा पर मेरी श्रद्धा थी और अहिंसा पर अश्रद्धा। यह पुस्तक पढ़ने के बाद मेरी यह अश्रद्धा चली गयी। फिर मैंने उनके दूसरे कई एक ग्रंथ पढ़े। उनमें से प्रत्येक का क्या प्रभाव पड़ा, सो मैं नहीं कह सकता, किंतु उनके समग्र जीवन का क्या प्रभाव पड़ा, वह तो कह सकता हूँ।'' (वही, पृ. 37)

टॉल्सटॉय की ओर गांधी खिंचते चले गए और उनके शिष्य हो गए। "उनके जीवन में से मैं अपने लिए दो बातें भारी समझता हूँ। वह जैसा कहते थे, वैसा ही करनेवाले पुरुष थे। उनकी सादगी अद्‌भुत थी, बाह्य सादगी तो थी ही। वह अमीर वर्ग के मनुष्य थे। इस जीवन के छप्पन भोग उन्होंने भोगे थे। धन-दौलत के विषय में मनुष्य जितनी इच्छा रख सकता है, उतना उन्हें मिला था। फिर भी उन्होंने भरी जवानी में अपना ध्येय बदला। दुनिया के विचित्र रंग देखने पर भी, उनके स्वाद चखने पर भी, जब उन्हें प्रतीत हुआ कि इसमें कुछ नहीं है तो उनसे मुँह मोड़ लिया और अंत तक अपने विचारों पर पक्के रहे।" अच्छे मनुष्य थे—टॉल्सटॉय इसलिए उनमें जीवनद्रष्टा और स्रष्टा की शक्ति की अकूत प्रतिभा थी और चरित्र की गरिमा-महिमा का तप-बल था। टॉल्सटॉय की ओर तन-मन से आकृष्ट गांधी जी ने लिखा, "इसी से मैंने एक जगह लिखा है कि टॉल्सटॉय युग की सत्य की मूर्ति थे। उन्होंने सत्य को जैसा माना वैसा ही पालने का उग्र प्रयत्न किया। सत्य को छिपाने या कमजोर करने का प्रयत्न नहीं किया। लोगों को दुख होगा कि अच्छा लगेगा कि नहीं, इसका विचार किए बिना ही उन्हें जिस माफिक जो वस्तु दिखायी दी, उसी माफिक कह सुनायी। टॉल्सटॉय अपने युग के लिए अहिंसा के बड़े भारी प्रवर्तक थे। अहिंसा के विषय में जितना साहित्य टॉल्सटॉय ने लिखा है, जहाँ तक मैं जानता हूँ, उतना हृदयस्पर्शी साहित्य, दूसरे किसी ने नहीं लिखा है। और उससे आगे जाकर मैं तो यह कहता हूँ कि अहिंसा का सूक्ष्म-दर्शन जितना टॉल्सटॉय ने किया था और उसके पालन करने का जितना प्रयत्न टॉल्सटॉय ने किया था, उतना प्रयत्न करनेवाला आज हिंदुस्तान में कोई नहीं। ऐसे किसी आदमी को मैं नहीं जानता।" (वही, पृ. 37)

भारतीय अहिंसा-चिंतन की लंबी परंपरा पर गहन प्रकाश डालते हुए गांधी जी ने पाया कि "मेरे लिए यह दशा दुखदायक है, मुझे यह भाती नहीं है। हिंदुस्तान कर्मभूमि है। हिंदुस्तान में ऋषि-मुनियों ने अहिंसा के क्षेत्र में बड़ी-से-बड़ी खोजें की हैं; परंतु हम बुजुर्गों की ही प्राप्त की हुई पूँजी पर नहीं निभ सकते। उसमें यदि वृद्धि न की जाए तो हम उसे खा जाते हैं। इस विषय में न्यायमूर्ति रानाडे ने हमें सावधान कर दिया है। वेदादि साहित्य में से या जैन साहित्य में से हम बड़ी-बड़ी बातें चाहे जितनी करते रहे अथवा सिद्धांतों के विषय में चाहे जितने प्रमाण देते रहे और दुनिया को आश्चर्यमग्न करते रहे, फिर भी दुनिया हमें सच्चा नहीं मान सकती। इसलिए रानाडे ने हमारा धर्म यह बताया है कि हम इस पूँजी में वृद्धि करते जाएँ। दूसरे धर्म विचारकों ने जो लिखा हो, उसके साथ मुकाबला करें ऐसा करने में कुछ नया मिल जाए या नया प्रकाश मिलना हो तो उसका तिरस्कार न करना चाहिए।" नए ज्ञान का स्वागत और पुराने ज्ञान का नया भाष्य करने से परंपरा में जीवंतता रहती

है। हमारे पूर्वजों की कथनी-करनी एक-सी नहीं रही। टॉल्सटॉय की तरह समाज को खरी-खोटी सुनानेवाले भी हमारे यहाँ नहीं मिलते। 'हमारे इस अहिंसा प्रधान देश' की यह दयनीय स्थिति रही है। हमारी अहिंसा निंदा के योग्य इसलिए भी रही कि हम मच्छर, बिच्छू, पशुओं पर 'अहिंसा' धर्म का पालन कर सकते हैं किंतु तड़पते-लाचार मनुष्य पर नहीं। हम उनकी चिंता तक नहीं करते जो दरिद्रता-भुखमरी में डूबे हुए हैं। दुखी प्राणी को मुक्त करना, उसके कष्टों में शरीक होना हम पाप समझते रहे हैं। इसलिए अहिंसा का अर्थ हमारे हाथों से खिसकता रहा है।

भारतीय चिंतन-परंपरा की स्थिति को समझते हुए गांधी जी ने कहा, "टॉल्सटॉय का स्मरण करते हुए फिर कहता हूँ कि अहिंसा का यह अर्थ नहीं है। अहिंसा के मानी है प्रेम का समुद्र, अहिंसा के मानी है बैर-भाव का सर्वथा त्याग। अहिंसा में दीनता, भीरुता न हो, डर-डर के भागना भी न हो। अहिंसा में दृढ़ता, वीरता, निश्चलता होनी चाहिए।" किंतु ऐसी अहिंसा हिंदुस्तानी समाज में है कहाँ? यहाँ तो प्रेम को दबाकर घृणा का उभार मिलता है। अहिंसा का सही और सच्चा अर्थ टॉल्सटॉय ने समझा था, "टॉल्सटॉय का जीवन प्रेरक है। उन्होंने जो वस्तु मान ली, उसका पालन करने में भारी प्रयत्न किया और उससे कभी डिगे तक नहीं। मैं यह नहीं मानता कि उन्हें वह हरी छड़ी (सिद्धि) न मिली हो। 'नहीं मिली' यह तो उन्होंने स्वयं कहा है। ऐसा कहना उनको सुहाता (शोभा) देता था, परंतु यह मैं नहीं जानता कि उन्हें वह छड़ी मिली न हो।" वे अहिंसा के पालन में समर्पित रहे—हो सकता है कि उसके कुछ पक्ष छूट गए हों। इस जगत में कौन है ऐसा पुरुष जो अपने सिद्धांतों पर पूरा अमल करता हो? गांधी मानते थे कि अहिंसा का पालन अशक्य है—जब तक शरीर है तब तक कुछ-न-कुछ अहंभाव रहता ही है। इसलिए शरीर के साथ हिंसा भी रही है।

टॉल्सटॉय ने स्वयं कहा है कि जो अपने को आदर्श तक पहुँचा हुआ समझता है उसे नष्टप्राय ही समझना चाहिए। बस, यहीं से उसकी अधोगत शुरू होती है। ज्यों-ज्यों हम आदर्श के नजदीक पहुँचते जाते हैं, आदर्श दूर भागता जाता है। आदर्श अहिंसा की मंजिल तक कोई भी जल्दी से नहीं पहुँच सकता। भारतीय ऋषि चिंतन की परंपरा मानती रही है कि मोक्ष माने इच्छाओं का बुझ जाना है—शून्यता है। इस बात को टॉल्सटॉय ने अपने कर्म-ज्ञान-तप और अनुभव से कमा लिया था कि सिद्धि पाना कठिन चुनौती है। लेकिन चुनौती के सामने घुटने टेकना भी उन्होंने नहीं सीखा था। उनमें साहसपूर्ण आनंद की उमंग का उत्साह उमड़ता रहता था। हाँ, टॉल्सटॉय के जीवन में जो 'विरोधाभास' दिखाई देता है वह कमजोरी नहीं है—देखनेवालों की दृष्टि का दोष है। एमर्सन कहते थे कि अवरोध तो छोटे से आदमी का पिशाच है।

सीधा रास्ता यह है कि जिस समय जो सत्य प्रतीत हो उसका अनुसरण करना चाहिए। आचरण में चुनौतियाँ छिपी रहती हैं—और चुनौतियाँ समर्थ व्यक्ति की शक्ति बनती हैं। संत-दर्शन यह मानता रहा है कि निंदा-स्तुति में हमें समान रहना चाहिए और अगर कोई ज्यादा स्तुति करे तो डरना चाहिए। क्योंकि तप तो हृदय में चलता है—निंदा से क्या भय। हमारा हृदय ही हमें भय-मुक्त करता है। इसलिए सत्य-सेवा-त्याग में लगा हुआ मनुष्य तपस्वी है और यह तपस्या की अग्नि ही जीवन में पावनताजनित विवेक को उत्पन्न करती है तथा त्रासजनित विवेक से मुक्ति। इसलिए साधुता ही सिद्धि की हरी छड़ी है।

टॉल्सटॉय आत्म-निरीक्षण में विश्वास रखते थे और आत्म के साक्षात्कार से ही जीवन के सच पाते थे। वे दूसरों के हिमालय से दोषों को राई-सा समझते थे और अगर अनजाने कोई अपराध हो गया हो तो उसके लिए आत्म-शुद्धि-यज्ञ में लग जाते थे। वे मानते थे कि साँप के जहर और बिच्छू के दंश से भी जहरीला असत्य और हिंसा का दंश होता है। अगर पुरुषार्थ है तो ईश्वर ही हमें इस हिंसा से मुक्ति दे सकता है। अपने दोषों के प्रति हमें सचेत रहना चाहिए क्योंकि दोष हमारा पीछा नहीं छोड़ते। ''दूसरी एक अद्‌भुत वस्तु का ख्याल टॉल्सटॉय ने लिखकर और उसे अपने जीवन में ओत-प्रोत करके कराया है। वह वस्तु है 'ब्रेड लेबर'। यह उनकी स्वयं की हुई खोज न थी। किसी दूसरे लेखक ने यह वस्तु रूस के सर्व-संग्रह में लिखी थी। इस लेखक को टॉल्सटॉय ने जगत् के सामने ला रखा और उसकी बात (विचार) को भी प्रकाश में ले आए। जगत् में जो असमानता दिखाई पड़ती है, दौलत तथा कंगालियत नज़र आती है—उसका कारण यह है कि हम अपने जीवन का कानून भूल गए हैं। यह कानून 'ब्रेड लेबर' है। गीता के तीसरे अध्याय के आधार पर मैं उसे यज्ञ कहता हूँ। गीता ने कहा है कि बिना यज्ञ किए जो खाता है वह चोर है—पापी है। वही चीज टॉल्सटॉय ने बतलाई है।'' मूल बात यह कि 'ब्रेड लेबर' एक महत्त्व पूर्ण सिद्धांत है—उसके अंतर्निहित अर्थ की गंभीरता को समझना चाहिए। इस ब्रेडलेवर सिद्धांत का सीधा अर्थ है कि जो शरीर रूपाकार श्रम या मजदूरी या किसानी या कला-कौशल का कार्य नहीं करता उसे खाने का अधिकार नहीं है।

हम मनुष्य लोग श्रमजीवी बनकर भरपूर मेहनत-मजदूरी करें तो गरीबी जगत में दिखाई ही न दे। थोड़े से लोग मेहनत करें और सफेदपोश 'ह्वाइट कालर्ड' हरामखोर बुद्धिजीवी हों या राजनीतिज्ञ मजे उड़ाएँ तो गरीबी अभाव कैसे दूर हो। आलसी अजगर न जाने कितनों का हिस्सा हड़प जाता है। अजगरी इंसान न जाने कितनों को भूखों मारता है—क्योंकि वह केवल बैठा-बैठा हुकुम चलाता है—अपना काम दूसरों से करवाता है-औरों के श्रम साधनों पर पलता हैं—पैरोसाइट है।

टॉल्सटॉय मानते रहे कि सबसे बड़ा परोपकार है कि हम दूसरों के हाथों पलना बंद कर दें—स्वयं श्रम करें। क्योंकि पसीना पावक है, पवित्र है—उसमें नहाने से मन और आत्मा का मैल धुल जाता है—तन-मन पवित्र हो जाता है। श्रमरत-कर्मरत मानव में ही नारायण का निवास होता है, "नर जिसकी अनझिम आँखों में नारायण की कथा भरी है।" अज्ञेय कहते रहे हैं कि यह जो मढ़िया में रहता है, महलों को बनाता है, उसकी मैं व्यथा हूँ। टॉल्सटॉय ने ऐशो-आराम का जीवन छोड़कर किसानों का जीवन जिया, उनके साथ रहकर श्रम किया और श्रम ही ईश्वर है इसे मानकर 'ब्रेड लेबर थियरी' में निष्ठा को व्यक्त किया है।

कितनी बड़ी बात है कि टॉल्सटॉय मखमली गद्दों से उतरकर खेती के श्रम के लिए समर्पित हो गए। गांधी के दरिद्रनारायण में कहीं-न-कहीं टॉल्सटॉय का चिंतन बीजरूप में या मंत्ररूप में मौजूद है। उन्होंने खेती में आठ-दस घंटे काम किया तथा अन्य प्रकार के श्रमकार्य को सौभाग्य समझा है। 'बड़े बाप के बेटे हैं। जब से जनम हुआ लेटे हैं।' तकिया-सिद्धांत का सहारा कभी नहीं लिया। उनका साहित्य भी श्रम का नमूना है। 'वार एंड पीस' उपन्यास को टॉल्सटॉय और उनकी पत्नी ने लगभग पंद्रह बार लिखा। बार-बार टॉल्सटॉय उसके प्रकरणों में परिवर्तन करते थे और पत्नी को वह प्रकरण फिर से हाथ से लिखना पड़ता था। इस तप-निष्ठ श्रम के कारण—प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास—तीनों के योग के कारण उनके सृजन में तप का सूर्य सबेरे की धूप में खिला कमल-सा प्रतीत होता है। उनकी एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक है 'ह्वाट इज आर्ट' अर्थात् 'कला क्या है'। इस पुस्तक में वे 'कला कला के लिए' सिद्धांत का समर्थन नहीं करते। वे कला को जीवन के लिए मानते हैं—और उसमें कर्म-सौंदर्य को आदर देते हैं। 'कला क्या है' पुस्तक टॉल्सटॉय ने अपने श्रमदान-यज्ञकाल में आंतरिक-प्रेरणा से अपने को ही उस यज्ञ में समिधा बनाकर लिखी थी। मजदूरी-मेहनत से उनको प्रतिभा में अपूर्व तेजस्विता का आलोक उत्पन्न हुआ। जो लोग उनके साहित्य-सागर में गहरी डुबकी लगाते हैं वे पाते हैं कि उनके श्रम का तप महान है, वह मनुष्य और मनुष्यता को बड़ा करने की शक्ति रखता है। जीवन का राग-दीप्त-सच उनके ग्रंथों की रचना-स्थिति में प्रेरणा बनकर मौजूद है।

सामान्य मनुष्य के सामने प्रायः दो मार्ग ही खुले होते हैं—(1) स्वेच्छाचारिता का मार्ग और (2) तप-श्रम-संयम-अनुशासन का मार्ग। गांधी जी का कथन है कि "यदि तुम्हें यह प्रतीत होता है कि टॉल्सटॉय ने जीना और मरना जाना था तो तुम देख सकते हो कि दुनिया में सबके लिए और विशेषकर युवकों के लिए संयम का मार्ग ही सच्चा मार्ग है। हिंदुस्तान में तो खासतौर पर है ही।... देश में पश्चिम से तरह-तरह की हवाएँ, मेरी दृष्टि में जहरीली हवाएँ आती हैं। टॉल्सटॉय के जीवन

के समान सुंदर हवा भी आती है सही, परंतु वह प्रत्येक स्टीमर में थोड़े ही आती है। प्रत्येक स्टीमर में कहो या प्रतिदिन कहो, कारण कि प्रतिदिन कोई-न-कोई स्टीमर बंबई या कलकत्ते के बंदरगाह में आता ही है। दूसरे परदेसी सामान के साथ उसमें परदेसी साहित्य भी आता है। उनके विचार मनुष्य को चकनाचूर करनेवाले होते हैं—स्वेच्छाचार की ओर ले जानेवाले होते हैं। तिलक महराज कह गए हैं कि हमारे यहाँ 'कांशयंस' का पर्यायवाची शब्द नहीं है। हम यह नहीं मानते कि प्रत्येक व्यक्ति में 'कांशयंस' होता है। पश्चिम में यह बात मानते हैं। व्यभिचारी के लिए, लंपट के लिए 'कांशयंस' क्या हो सकता है ? इसीलिए तिलक महराज ने 'कांशयंस' की जड़ ही उड़ा दी।''

गांधी जी हमारी परंपरा के सर्वोत्तम के प्रतीक थे या कहना चाहिए हमारी हजारों वर्षों की चिंतन-परंपराओं ने गांधी के रूप में अपने को साकार किया था। विजयदेव नारायण साही ने 'लघु मानव के बहाने हिंदी कविता पर एक बहस' शीर्षक निबंध में कहा है कि गांधी जी हिंदुस्तान की जिंदगी की रिदम या लय थे—इस लय में इतनी शक्ति थी कि स्वाधीनता आंदोलन के दिनों में पूरा देश इस लय से भर गया था। भारतीय जीवन-परंपरा की अटूट लय का नाम है—गांधी। इस लय को हजार प्रयत्न करने पर भी पश्चिमी साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, अंग्रेजीवाद तोड़ नहीं सका, केवल मरोड़ने में सफल हुआ। गांधी जी अपने को सनातनी हिंदू कहते थे और कहते हैं, ''हमारे ऋषि-मुनियों ने कहा है कि अंतर्नाद सुनने के लिए अंतर्कर्ण भी चाहिए, अंतर्चक्षु भी चाहिए और उसे प्राप्त करने के लिए संयम की भी आवश्यकता है। इसलिए पातंजल योग दर्शन में योगाभ्यास करनेवालों के लिए, आत्मदर्शन की इच्छा रखनेवालों के लिए, पहला पाठ यम-नियम पालन करने को बताया है। सिवाय संयम के मेरे, तुम्हारे या अन्य किसी के पास कोई दूसरा मार्ग ही नहीं है। यही टॉल्सटॉय ने लंबे जीवन में संयमी रहकर बताया। मैं चाहता हूँ, प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि यह चीज़ हम उसी तरह साफ देख सकें जैसे कि आँखों के आगे का दीया स्पष्ट देखते हैं।''

टॉल्सटॉय से पोर-पोर अभिभूत गांधी संत-संकल्प लेकर हिमालय पर बैठे शिव हो जाते हैं। उनके स्वर में यह लय-नाद प्रस्फुटित होता है कि सत्य की आराधना ही जीवन की सच्ची पूजा है—नवधा-भक्ति का विश्वास है। ''सत्य के लिए दुनिया में सच्ची अहिंसा ही धर्म है। अहिंसा प्रेम का सागर है। उसका नाम जगत में कोई ले सका ही नहीं। उस प्रेम सागर से हम सराबोर हो जाएँ तो हममें ऐसी उदारता आ सकती है कि उसमें सारी दुनिया को विलीन कर सकते हैं। यह बात कठिन अवश्य है किंतु है साध्य ही। इसी से हमने प्रारंभ में प्रार्थना में सुना कि

शंकर हों पर विष्णु; ब्रह्मा हों या इंद्र; बुद्ध हों या सिद्ध; मेरा सिर तो उसी के आगे झुकेगा जो राग-द्वेष रहित हो; जिसने काम को जीता हो, जो अहिंसा, प्रेम की प्रतिमा हो। यह अहिंसा लूले-लँगड़े प्राणियों को न मारने में समाप्त नहीं होती। उसमें धर्म हो सकता है, मगर-प्रेम तो उसमें भी आगे बढ़ा हुआ है।'' प्रेम का अर्थ तभी है—जब 'अन्य' या अदर का अलगाव न रहे। क्योंकि प्रेम से अलगाववाद, बर्बर-व्यक्तिवाद और घमंडी अहंभाव की गैर-बराबरी का भाव नहीं रहता। द्वैत से प्रेम दर्शन में अद्वैत-विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत की ओर बढ़ता है। इसलिए वैष्णव चिंतन में प्रेम ही सबसे बड़ा पुरुषार्थ है।

सार सर्वस्व यह कि श्रम के साथ जीना ही जीना है, परोपकार है, तप है, यज्ञ है और मनुष्यता की सच्ची सेवा है। मानव धर्म है।

दरअसल, पारमार्थिक दृष्टि से किया हुआ काम ही भाव-यज्ञ है। यही है वह 'ब्रेड लेबर' यज्ञ जिसकी साधना-तप का अर्थ टॉल्सटॉय में व्याप्त है। लंपट के भोगों में कामवाद का घटिया सुख है। आठ घंटे कसरत करना ब्रेड लेबर नहीं है, यह तो अपने शरीर को मजबूत बनाने का यत्न है। ब्रेड लेबर यज्ञ वही है जो दूसरों की सेवा के लिए है। इसी का संदेश गीता देती है। पुरुषार्थ की महिमा शीरी के लिए फरहाद रूप में लगन से पत्थर तोड़ना है—प्रेम अहिंसा में जीना है—यही स्वराज है—इसमें 'स्वाधीन' होने का अर्थ समाया हुआ है। टॉल्सटॉय ने पूरा जीवन 'अन्य' के लिए जिया। उनकी आत्मा का मरण तो हो नहीं सकता। उनका नाम-काम अमर है—केवल तिरासी वर्ष की आयु में मिट्टी से बना शरीर मिट्टी में मिल गया हैक्ष्यह मरण नहीं है—रूपांतरण है। आज समस्त संसार टॉल्सटॉय का नाम जानता है, एक सैनिक के रूप में नहीं, यद्यपि वे सैनिक भी रहे, एक लेखक की भाँति नहीं, यद्यपि वे बड़े लेखक भी रहे, एक रईस ईसाई के रूप में नहीं, यद्यपि उनके पास अपार संपत्ति थी। लेकिन आज का संसार उन्हें एक महान आत्मा, संत-महात्मा , ऋषि-मुनि के रूप में जानता है।'' भारत में ऐसे व्यक्ति को महर्षि अथवा फकीर कहेंगे। उन्होंने अपनी दौलत छोड़ी। ठाठ-बाट छोड़ा और ग़रीब किसान की जिंदगी अपनाई। टॉल्सटॉय का सबसे बड़ा गुण था कि उन्होंने जो भी सिखाया उस पर अमल करने का प्रयत्न किया।'' इसलिए आज भी उत्तर-आधुनिक विश्व में उनके लिए निष्ठा है।

धर्म में उनका विश्वास था और पक्के ईसाई थे। वे स्वयं ईसाई थे और हमेशा यह मानते थे कि ईसाई धर्म सर्वश्रेष्ठ है परंतु उन्होंने अन्य धर्मों का खंडन नहीं किया। उन्होंने यही कहा कि सभी धर्मों में सत्य विद्यमान है। फिर यह भी जोर देकर कहा कि 'स्वामी-पादरियों, स्वार्थी ब्राह्मणों और स्वार्थी मुल्लाओं ने ईसाई

और इसी तरह दूसरे धर्मों को गलत रूप दे दिया है और मनुष्यों को भ्रमित किया है। खूब मौन-मंथन के बाद टॉल्सटॉय इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि शरीर-बल से ज्यादा बलवान है—आत्मबल। संसार से दुष्टता मिटाने कर एकमात्र सही मार्ग यही है—बुरे के साथ भलाई करें, दुष्टता अधर्म है। अधर्म रोग का नाश धर्म से ही हो सकता है। इस तरह टॉल्सटॉय में बौद्ध-चिंतन का सर्जनात्मक खमीर उठा हुआ मिलता है।'' इस महान टॉल्सटॉय ने 20 नवंबर, 1910 में मृत्यु की गोद में जाने से पहले गांधी के 'इंडियन ओपीनियन' के अंकों में गहरी दिलचस्पी ली तथा गांधी के नाम पत्र लिखे। अपने अंतिम पत्र में टॉल्सटॉय ने सत्याग्रह पर बहुत बल दिया एवं कहा कि 'ट्रांसवाल' संसार-भर पर अपनी छाप छोड़ जाएगा। इस संघर्ष से मानवता को बहुत कुछ सीखना है। गांधी के सत्याग्रह-आंदोलन को टॉल्सटॉय का आशीर्वाद मिला। यह हम भारतीयों के लिए प्रोत्साहन-प्रेरणा का प्रतीक है।

टॉल्सटॉय ने अपनी डायरी में संकल्प लिया था कि धर्म को आचरण में उतारने की सूरत पैदा करने के लिए मुझे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में काम करना चाहिए और जरूरत पड़े तो इसमें अपने को खपा देना चाहिए। संसार को प्रेम से ही—प्रेम धर्म से सुंदर बनाया जा सकता है—हिंसा-आतंक से नहीं। वे सेना में नौकरी करते रहे—उन दिनों भी उसमें प्रेम ज्वार आता-जाता रहा। इस तरह द्वंद्वग्रस्त-तनावग्रस्त रहे कि सेना की नौकरी छोड़ दी। फ्रांसीसी राज्य-क्रांति के तीन सूत्र—समानता, बंधुता, स्वतंत्रता का प्रभाव और भाष्य-कुभाष्य, पाठ-कुपाठ भी मन में चलता रहा और पाया कि समानता बड़ा ही असंभव मूल्य चेष्टा है। युद्ध-आतंक का तिरस्कार, कल-कारखानों में फँसे मजदूर की कथा और किसान के प्रति सत्ता-तंत्र, साहूकार तंत्र से वे बेचैन रहे। उनके ही मन में 'लीग ऑफ नेशंस' का विचार पुष्ट हुआ और मेधावी केलॉग जैसे चिंतक ने युद्ध को समाप्त करने के जो विचार रखे उन पर टॉल्सटॉय का असर है। टॉल्सटॉय चोटी के कथाकार, निबंधकार थे और उनकी 'बचपन' ने छपते ही रूस को हिला दिया। यह उनकी जीवन-कथा है और सभी व्यक्ति वास्तविक जीवन से लिए गए हैं। उन्होंने कहा, ''ग्रिशा नाम का आदमी मैंने गढ़ा है, क्योंकि ऐसे सनकी तमाम साधु-संत घर पर आते रहते हैं। इनमें ज्यादातर ढोंगी-पाखंडी, मक्कार और कपटी हैं।'' बचपन में टॉल्सटॉय को पिता की मृत्यु से गहरा सदमा लगा। फिर टॉल्सटॉय ठहरे भावुक युवक और रागी मनवाले। 'सैनिक के रूप में क्रीमिया के युद्ध में शामिल हुए और अनुभवों की उसी पूँजी से 'वार एंड पीस' का सृजन किया। सेवास्तोपोल में उन्होंने युद्ध की विभीषका का स्वयं अनुभव किया। इसलिए अनुभूति की ईमानदारी ने 'वार एंड पीस' में यथार्थ-रूपाकार पाया। 1857 से 1861 के बीच तीन बार विदेश यात्राएँ और तुर्गनेव के साथ तमाम विश्व

के नामी-गिरामी रचनाकारों-कलाकारों-वैज्ञानिकों से परिचय।

जीवन की अनेक यातनाओं की अंतर्यात्रा के बाद उन्होंने पाया कि "मैं जानता हूँ कि परंपरा और धर्म तथा नीति के नियम किन्हें कहते हैं और मैं कला के उन नियमों और अनुशासनों को भी जानता हूँ जो आनंद देनेवाले हैं। मगर हाय रे राजनीतिक कानूनो! कितने झूठे और बेशर्म हो तुम।" इसलिए उन्होंने कभी भी कोई राजनीतिक पद स्वीकार नहीं किया। औद्योगिकीकरण, मशीनीकरण से वे भयभीत रहे क्योंकि वह किसान के जीवन की खेती छुड़ाकर उसकी हत्या करता है। उन्हें बराबर मानव धर्म की स्मृति घेरे खड़ी रही और यही बात 1908 में गांधी को पत्र लिखकर कही कि धर्म तो प्रेम की नोंक पर निर्मित इमारत है। 1860 से 1871 के बीच 'द काकेशस', 'वार एंड पीस' तथा 'अन्ना कैरेनिना' तीन विश्वप्रसिद्ध कृतियों की रचना की। हर जगह हिंसा का विरोध और सत्ता के सत्यानाशी तंत्र का भंडाफोड़ किया। उन्होंने लेनिन को चेताया कि बोल्शेविक सत्ता आने पर जारशाही की पद्धति से कम क्रूर नहीं होंगे। टॉल्सटॉय का कथन ठीक सिद्ध हुआ। क्रांति के बाद हिंसा-हत्या-फाँसी का बेरहम दौर चला। हालाँकि लेनिन 'टॉल्सटॉयवाद' में विश्वास नहीं रखते लेकिन टॉल्सटॉय के प्रेम-चिंतन पर उन्हें सोचना पड़ता था। लेकिन लेनिन ने टॉल्सटॉय के प्रेम की दुनिया को ठुकराकर कहा कि सड़े हुए चिंतन से मानक समस्याओं का हल नहीं हो सकता। इस तरह रूस में टॉल्सटॉय के चिंतन के प्रति उपेक्षा का भाव उभरा। हिंदी में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने गांधी और टॉल्सटॉय के चिंतन को हिकारत भरी निगाहों से देखकर उसे अपनी आलोचना-दृष्टि से दूर रखा है।

फ्रांस के एक प्रकाशक ने टॉल्सटॉय की जीवनी फ्रेंच मे छपानी चाही तो टॉल्सटॉय और निर्भीक भाव से सामने आ गए। उन्होंने कहा कि मैं अपने कुकृत्यों को छिपा कैसे सकता था, और छिपाना भी क्यों? इस 'आत्मजीवनी' में टॉल्सटॉय ने टिप्पणी में सत्य को सोने की तरह तपाकर-अपने पाठकों को दे दिया है। अपने को भीतर से उघाड़कर देखने का यह टॉल्सटॉयी कलेजा अपने में अपूर्व है। टॉल्सटॉय का उपन्यास 'रेजरेक्शन' आया तो धरती हिल उठी। एक अदालत में ज्यूरी के सामने एक ऐसी औरत लाई जाती है जिस पर खून करने का आरोप है और वह वेश्या बताई जाती है। ज्यूरी का एक सदस्य अदालत में जो शायद ज्यूरी का अध्यक्ष है उस औरत को पहचान लेता है। यह वही औरत थी जो वर्षों पहले उसके घर में नौकरानी रह चुकी थी तथा जवानी के दिनों में इसी जज ने उसके साथ बलात्कार किया था। यही है उपन्यास का बीज-भाव एवं उसका आरंभ। यह कहानी टॉल्सटॉय ने जिस रूप में सुनी उसमें यह व्यभिचारिणी औरत थी। लेकिन अपने रचना-स्वभाव के कारण इस

थीम पर टॉल्सटॉय ने बहुत समय तक गंभीरता से कार्य किया। उपन्यास में 'पर्सोना' कला के कारण सब कुछ बदला हुआ है। पात्रों का ध्वन्यर्थ है कि आदमी न अच्छा है न बुरा है—परिस्थितियों की निर्मिति है। सामाजिक जीवन की जटिल संवेदनाओं-विद्रूपताओं-विसंगतियों पर टॉल्सटॉय ने कमाल की निगाह डाली है। वे भ्रष्टाचार-अन्याय-शोषण पर पर्दा उठाने में माहिर हैं। 1906 में पके अनुभवोंवाले टॉल्सटॉय ने एक निबंध लिखा, 'मैं चुप नहीं रह सकता।' इस निबंध पर जारशाही ने प्रतिबंध लगा दिया। इस लेख में टॉल्सटॉय ने फाँसी को निर्मम हत्या की संज्ञा दी और रूस के समूचे तंत्र को उस हत्या के लिए अपराधी करार दिया। उनका विचार था कि यह तंत्र मनुष्य को जानवर बना रहा है।

टॉल्सटॉय ने फ्रांसीसी कलाकार, कहानीकार मोमासां की कहानी कला पर विचार करते हुए कहा था कि सच्चे कलाकार में तीन गुण होने चाहिए—(1) विषय-प्रतिपादन की ईमानदारी। (2) शिल्प-कला का हुनर और (3) कला के प्रति गहन ईमानदारी। कहना न होगा कि ये तीनों गुण मोमासां के साथ टॉल्सटॉय की कला के भी गुण हैं। यही उनकी नैतिक-मूल्य चेतना के मूलाधार हैं। टॉल्सटॉय अपने कथ्य और पात्र के अंतर्मन में पैठकर भाव-सृष्टि करते हैं—ओट में रहकर। पूरी पृथ्वी ईश्वर की है और इस पर किसी एक मानव का अधिकार नहीं होना चाहिए। वे निजी संपत्ति एवं स्वामित्व के खिलाफ लगातार आवाज़ उठाते रहे हैं। उन्होंने औद्योगिक सभ्यता, विज्ञानवाद, डार्विन के विकासवाद का कड़ा विरोध किया है। उनके विचार से आधुनिक औद्योगिक सभ्यता भौतिक मूल्यों को बढ़ावा देकर आध्यात्मिक मूल्यों के विकास को रोक देती है। इस भोगवाद की संस्कृति को वे पतन-संस्कृति मानते हैं। इस पतन-संस्कृति ने सभी मानवीय रिश्तों, विश्वासों, मूल्यों को कलंकित कर दिया है। टॉल्सटॉय के ये विचार गांधी, रवींद्रनाथ, प्रेमचंद, जैनेंद्र, भवानीप्रसाद मिश्र आदि सभी में हम पाते हैं। बड़ी बात यह है—टॉल्सटॉय ने भारतीय-साहित्य-धर्म-दर्शन का गहन अध्ययन किया था और वे रामायण-महाभारत, वेद-उपनिषद् के चिंतन से, बौद्ध-जैन-वैष्णव चिंतन से गहराई तक जुड़े थे। गीता, शंकराचार्य, रामकृष्ण परमहंस, अरविंद, विवेकानंद उनके मानस में गूँजते रहे हैं। वे हिंदुओं की मूर्तिपूजा पाठ के विरोधी थे और ब्रह्मा-विष्णु-महेश का त्रिमूर्त्ति भाव उन्हें समझ में न आता था। उन्हें भारतीय बहुदेववाद की पकड़ न थी और वे व्रत-उपवास-कर्म को निरर्थक-पाखंड मानते थे।

भारत पर मुट्ठी भर अंग्रेज राज करें और भारत की जनता का शोषण। यह बात उन्होंने गांधी जी को 'एक हिंदू के नाम पत्र' लिखकर कही थी। उन्होंने भारतीयों को यह सीख दी थी कि अंग्रेजों के साथ किसी प्रकार का सहयोग न करें। गांधी

स्वयं इसी दिशा में सोच रहे थे—सविनय अवज्ञा आंदोलन के बीज-मंत्र टॉल्सटॉय से मिले थे, साथ ही अहिंसा-आंदोलन का प्रेम-दर्शन भी। टॉल्सटॉय निर्भीक थे और गिरजाघर वालों को अँगूठे पर रखते थे। अपने चिंतन की मौलिकता के कारण ही विश्व-चिंतन-परंपराओं का उत्तमांश उनके चिंतन और सृजन में बोलता-बजता मिलता है। मूल बात तो है कि एक युग टॉल्सटॉय की आत्मा से हटकर हम तक आया है। यह ठीक है कि आज की दुनिया में भूमंडलीकरण चक्र में फँसा मानव न गांधी के मार्ग पर जानेवाला है, न टॉल्सटॉय के, न मार्क्स के। वह 'ग्लोबल कल्चर' में अपने को लपेटे खड़ा है और बाजारवाद, मीडिया-साम्राज्यवाद, उत्तर पूँजीवाद, उत्तर सांस्कृतिक साम्राज्यवाद की गिरफ्त में इतने आगे आ गया है कि पीछे लौटना संभव नहीं है। लेकिन मनुष्य इतिहास-भूगोल-कला-संस्कृति की स्मृतियों में जीता है—प्रतीकों-मिथकों-रूपकों में जीता है। इस दृष्टि से गांधी-टॉल्सटॉय, मार्क्स-फ्रॉयड से छूटना भी संभव नहीं है। जीवन में टॉल्सटॉय को आने दिया तो हम आज की चिंताओं से कट जाएँगे। कुछ लोग ही टॉल्सटॉय और गांधी के रास्ते चलने का प्रयत्न करेंगे, क्योंकि बड़ी कठिन है डगर पनघट की।' गांधी नमक को राम-रस कहते थे और नमक तोड़ो आंदोलन चलाते थे, चर्खा का संदेश देते थे—लेकिन आज की उपभोक्तावादी पीढ़ी यह तय नहीं कर पा रही है कि हमें गांधी-टॉल्सटॉय के साथ रहना है या नहीं। भोगों के पीछे पागल-संस्कृति का मनुष्य टॉल्सटॉय को लेकर करेगा क्या? भारत ही गांधी को छोड़कर भाग खड़ा हुआ है केवल दिखाने के भाव में बौद्धिक कहते मिलते हैं कि आज के विषम युग में—उत्तर-औद्योगिक समाज के नरक में गांधी हमारे लिए बहुत प्रासंगिक हैं। टॉल्सटॉय-गांधी मिलकर जिस अहिंसा प्रेम के 'मेटानैरेटिव' को लेकर आगे बढ़ रहे थे उस विचारधारा को कहा जा रहा है कि उत्तर-आधुनिकतावाद, उदारवाद, वृद्ध पूँजीवाद ने अंत कर दिया है।

कितनी अजीब स्थिति है कि ज्यादातर भारतीय यह स्वीकार करने में अपनी हेठी समझते हैं कि गांधी पर अभारतीय टॉल्सटॉय-रस्किन का गहरा प्रभाव है। रोमारोला ने 'एशियन रेस्पांस टु टॉल्सटॉय' शीर्षक अपने प्रसिद्ध लेख में कहा है कि "भारतीय युवक गांधी ने टॉल्सटॉय से एक चिर प्रज्वलित ज्योति प्राप्त की थी—जिसे उस रूसी देवदूत ने अपनी आत्मा में बड़े प्यार से सँवारा था।" इसी ज्योति को पाकर गांधी ने भारत से पराधीनता के अंधकार को भगाने का प्रकाश-मंत्र पाया। टॉल्सटॉय द्वारा सिद्ध किया हुआ मंत्र। थोरो और रास्किन से गांधी ने अपनी परंपरा का पुनराविष्कार करने का मंत्र पाया और चिंतन में सनातन-धर्म पर डट गए। वामपंथियों द्वारा हजार-हजार जीभों से कोसने पर भी गांधी उनके सामने न रुके, न झुके। पूरी निर्भयता से 'पंथ होने दो अपरिचित प्राण रहने दो अकेला' का महादेवी-

राग गाते रहे और 1942 के बाद वे एकदम अकेले रह गए—लेकिन इस अकेलेपन का मलाल न किया। नेहरू और पटेल दोनों कई मुद्दों को लेकर गांधी का साथ छोड़ गए—वैसे ही जैसे घर के बड़े-बूढ़ों का साथ बच्चे छोड़ देते हैं और उनकी राय न मानकर खुद फैसला लेने लगते हैं। 1942 के बाद गांधी इसी तरह के गहन अपमान के शिकार हुए लेकिन जहर पी गए नीलकंठ गांधी।

टॉल्सटॉय के मन में गांधी की पुस्तक 'इंडियन होमरूल' और 'हिंद स्वराज' का बड़ा आदर था। गांधी ने 'हिंद स्वराज' का खुद अंग्रेजी अनुवाद करके टॉल्सटॉय के पास भेजा एवं टॉल्सटॉय के पत्र 'एक हिंदू के नाम पत्र' का गुजराती अनुवाद किया। यह बात भूलने के विरुद्ध है कि गांधी के साथ टॉल्सटॉय के पत्राचार को सर्वप्रथम पी.एल. विश्यूकोव ने अपनी पुस्तक में प्रकाशित किया। यह अपूर्ण था—जिसे पूर्ण रूप से कालिदास नाग ने अपनी पुस्तक 'टॉल्सटॉय और गांधी' 1950 में प्रकाशित किया। यह पत्राचार दोनों के हृदय-संवाद-सेतु का ऐतिहासिक दस्तावेज है। फिर गांधी-टॉल्सटॉय एक-दूसरे के निकट तब आए जब रूस पूर्वी और पूर्व की संस्कृति अपनाने के लिए बाँहें फैला रहा था।

महात्मा टॉल्सटॉय अपने चिंतन की मूलगामी मौलिकता से गांधी ही क्यों पूरे विश्व को चकित करते हैं। वे कहते हैं, "कला, विज्ञान, धर्म का मुझ पर गलत आरोप लगाया जाता है। मैं कला का नहीं, कृत्रिम कला का विरोधी हूँ। मानव हितकारी विज्ञान का मैं आदर करता हूँ, पर मिथ्या विज्ञान का शत्रु हूँ। मैं गहरी आस्था का आदमी हूँ, पर धर्म-विकृति करनेवाले चर्च का विरोधी हूँ।" टॉल्सटॉय की मनोभूमि में मानवतावाद-करुणावाद-अहिंसावाद का अपार विस्तार है। इसीलिए वे 'कला क्या है' पुस्तक में कहते हैं कि कला का उद्देश्य मानव को मानव से जोड़ता है—उसके मानुष-भाव का उन्नयन-परिष्करण करना है। ऐसी स्थिति के कारण कला चर्च के पादरियों, व्यभिचारी प्रभुओं, सामंतों, घन्नासेठों के प्रशस्ति-पाठ के लिए नहीं है। वह हर तरह के शोषण-अन्याय-अपमान के विरुद्ध संघर्ष है और यह संघर्ष ही कला का सच्चा सौंदर्य है। इसलिए उनके कला-चिंतन में न तो विलासी कलावाद को स्थान है, न व्यक्तिनाशक अधिनायक को।

टॉल्सटॉय का सर्जनात्मक मुहावरा उपन्यास हो या कहानी या निबंध, विश्वभर के रचनाकारों में 'अपूर्व' है। वे अपने जीवनानुभवों को अपने जीये-भोगे को रचते हैं। उनका पूरा ध्यान कथात्मक संवेदना, अंतर्वस्तु पर एकाग्र रहता है और अनुभूति की घनता में ईमानदारी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। वे रूप-विधान की चिंता नहीं करते, कथ्य स्वयं अपने रूप को खोजकर जड़ीभूत-सौंदर्याभिरुचियों पर प्रहार करता है। कलाकृति में कथ्य, विषय-प्रतिपादन और शिल्प या तकनीक तीनों में एक

सहज तारतम्यता या अंतर्योजना दृष्टिगत होती हैं। अपने विषय से वे इस कदर तादात्म्य स्थापित करते हैं कि वह उनसे संवाद-संवादी संबंध जोड़ लेता है। थीम पर वे इतना श्रम करते हैं कि जब तक वह पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो जाता। वे कलम नहीं उठाते। संयम और सावधानी उनकी कला के गुण हैं। अपने उपन्यासों की थीम को लेकर उन्होंने कहा है, '' 'अन्ना कैरेनिना' में मुझे परिवार की थीम से मोह है। 'युद्ध और शांति' में मुझे 1812 की लड़ाई में जागी रूसी जनता से प्यार था। अपनी नई पुस्तक 'पुनर्जन्म' में मुझे स्पष्ट दिखाई दिया कि जनता की अपराजेय शक्ति का थीम मुझे आकृष्ट कर रहा है।'' टॉल्सटॉय के रचनाकार ने 'कज़ाक', 'इवान इलिच की मौत', 'क्रूजर सोनाता' और 'हाजी-मुरात' जैसे कहानी-उपन्यास के नए नए प्रयोग किए। लेकिन विश्व-साहित्य में टॉल्सटॉय 'युद्ध और शांति' तथा 'अन्ना कैरेनिना' जैसे उपन्यास लिखकर ही प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँचे हैं।

'युद्ध और शांति' जैसे महाकाव्यात्मक उपन्यास के मूल में नेपोलियन का रूस पर आक्रमण है। अपनी देशभक्ति की प्रेरणा तथा परंपराओं के गौरव की रक्षा के लिए रूसी जनता एकजुट होकर युद्ध में कूद पड़ी और दुश्मन को पराजित कर खदेड़ दिया। इस जीत से रूसी जनता का मनोबल अदम्यता को प्राप्त हुआ। चार बड़े घरानों का नैतिक-पतन भी उजागर किया गया—रोस्तोनों, बोल्कोन्स्कियों, कुरागिगों तथा बेजखोवो। अभिजात-वर्ग का खोखलापन, स्वार्थंधता का यथार्थ चित्रण टॉल्सटॉय ने जमकर किया। टॉल्सटॉय ने उस समय की ऐतिहासिक घटनाओं का नया पाठ प्रस्तुत किया कि युद्धों का निर्णय सेनापतियों के हुक्मों से नहीं होता बल्कि जनता के अदम्य उत्साह से होता है। इस दृष्टि से कथा के मूलाधार का केंद्र रूसी जनता है। उपन्यास के प्रमुख पात्रों—किसान प्लातोन करातायेव तथा आंद्रेई बोल्कोन्स्की और पियर बेजूखोब से यह व्यंजित किया कि प्रेम ही जीवन है। इस उपन्यास की अनुपम नारी-सृष्टि है—नताशा रोस्तोवा। इस नारी पात्र के चरित्र को कमसिन बाला, प्रेयसी, पत्नी, माता के विविध रूपों में प्रस्तुत किया गया है। यह तो टॉल्सटॉय की ही उपन्यास कला का कमाल है कि पूरा उपन्यास पाठक के हृदय में अमिट भाव-विभाव के साथ उतरता चला जाता है। दूसरा उपन्यास 'अन्ना कैरेनिना' पारिवारिक जीवन की त्रासदी है। अन्ना अपने पति कैरेनिना के व्यवहार से ऊबकर एक मस्त-पुरुष ब्रान्स्की पर प्यार की तलाश में न्यौछावर हो जाती है। प्यार में पागल नारी अपने पति-पुत्र को छोड़कर प्रेमी के साथ चली जाती है और उसे प्यार देकर भी जीत नहीं पाती। अंततः हताशा के क्षणों में वह रेलगाड़ी से कूदकर आत्महत्या कर लेती है।

टॉल्सटॉय का नैतिक मूल्यों से निर्मित मन अन्ना के कामवाद-देहवाद, वासनावाद

को माफ नहीं कर सका। उसे वही दंड दिया जो इस तरह भी नारियों को कभी-न-कभी मिलकर रहता है। अन्ना का पति कहता है "हमारा संयोग मनुष्य ने नहीं, ईश्वर ने कराया है। उस सहयोग को भंग करना अपराध है और ऐसे अपराध की सजा अवश्य मिलनी ही चाहिए।" टॉल्सटॉय वर्जित प्रेम, अनमेल प्रेम के नहीं, सात्त्विक प्रेम के समर्थक हैं। उन्होंने अन्ना के घर में बैठकर उसके वासना-दग्ध विवाहेतर संबंधों का चित्रण इतनी गहराई से किया है कि पाठक विस्मय-विमुग्ध रह जाता है। टॉल्सटॉय का तीसरा उपन्यास 'पुनर्जन्म' एक वेश्या की कथा पर केंद्रित है। वेश्या कात्यूशा पर चल रहे हत्या के मुकदमे के माध्यम से टॉल्सटॉय ने अपने युग के भ्रष्ट चेहरे को दिखाया है। कात्यूशा की दुर्दशा का कारण है वह न्यायाधीश जो उससे बलात्कार कर चुका है। न्यायाधीश पहचानने पर प्रायश्चितवश विवाह का प्रस्ताव करता है। कात्यूशा उसे प्यार करती है पर वह प्रस्ताव स्वीकार नहीं करती। इस प्रकार दोनों प्रेमी पीड़ा की आग में तपकर पुनर्जन्म पाते हैं।

उपन्यासों के साथ टॉल्सटॉय की कहानियों का संसार बहुत ही चित्र-विचित्र यथार्थ का संसार है। मानव के अंतर्मन में बैठकर वे रचना करते हैं—इसलिए व्यक्ति और व्यवस्था के रिश्तों पर उनकी गहरी पकड़ रही है। उन्हें विश्वास था कि किसान-मजदूर जनता एक दिन पूँजीपतियों, सामंतों का तख़्ता पलट देगी। अभिजात वर्ग के अत्याचार जनता को तबाह किए हैं और यही वर्ग जनता की दुर्दशा का जिम्मेदार है। ये लोग कोई विधि-विधान नहीं मानते और धरती पर कब्जा किए रहते हैं। टॉल्सटॉय ने इस तरह के अनुभवों को लोक-कथाशैली में प्रस्तुत किया है—चाहे कहानी 'रोटी और शैतान का बच्चा हो' या 'अंडे के बराबर दाना' या 'कितनी जमीन'। ईश्वर की धरती पर मनुष्य का शैतानी खेल ही तमाम तरह के अन्याय की जड़ है। रोटी चुराता बच्चा कई अर्थ-ध्वनियाँ देता है। शैतान के इशारे पर शैतान का बच्चा किसान को पशु बना देता है—गेहूँ से शराब बनाकर पीता किसान पशु हो गया है। जीवन के सभी राग नष्ट हो गए हैं—अमानवीयता फैल रही है। इसी संदर्भ की यथार्थ कहानी है, 'इवान इलिच की मौत'। मरते रागात्मक रिश्तों की क्रूर कहानी है और रूसी जीवन में उभरते पाखंड का भंडाफोड़। प्योत्र इवानोविच ही सूचना देता है, "दोस्तो, इवानइलिच का स्वर्गवास हो गया।" इसी तरह 'क्रूजर सोनाता' नर-नारी रिश्तों के कई जटिल पहलू खोलती है और उनके कोणों से बहस-विवाद भी। 'क्रूजर सोनाता' में कई लोग बात-बहस में जुड़े हैं—एक बूढ़ा व्यापारी है—लंपट है और स्त्री को दासी मानता है और लंपटता को जीता भी है। एक वकील है जो स्त्री-शिक्षा का हिमायती है—हर तरह के पक्षों से उठती बहस का एक मुद्दा है कि स्त्री ही पुरुष को व्यभिचाार की ओर खींचकर ले जाती है। यही टॉल्सटॉय एक

व्यभिचारी समाज के नरक का नक्शा प्रस्तुत कर रहे हैं। एक ध्वनि यह भी उठ रही है कि विज्ञान स्वयं युवाओं को चकलों में भेज रहा है। पुरुषों का भोग-वासना से दहाड़ता रूप नारी को वेश्या बनाकर दम लेता है। ऊँचे घराने की स्त्रियाँ और वेश्याएँ इत्र-फुलेल की गंध से समाज में भोग-वृत्ति को बढ़ावा देती हैं। इस तरह सदाचार-दुराचार में टॉल्सटॉय सदाचारी नैतिकता के साथ हैं जो सामाजिक विकृतियों की निंदा करते हैं। टॉल्सटॉय 'तीन जोगी', कहानी में धर्माधिकारियों का भंडाफोड़ करते हैं।

कहानी-कला में टॉल्सटॉय ने कई प्रयोग किए और चेखव, गोगोल, पुश्किन, तुर्गनेव से अपना अलग कहानी-इडीयम विकसित किया। टॉल्सटॉय ने पात्रों की मानसिकता को बहुत भीतर से उद्‌घाटित किया—जैसे 'नाच के बाद' कहानी। स्थिति-परिस्थिति का तनाव मनोभूमिका को निर्मित करता है। वस्तुजगत और मनोजगत् को गूँथ टॉल्सटॉय कहानी का सृजन करते हैं—चाहे लंबी कहानी हो या लघु कहानी। जीवन यथार्थ के सूक्ष्म-गहन अंशों को कहानी के अंतर्जगत में उतारने में टॉल्सटॉय चेखव की तरह ही उस्तादी दिखाते हैं। इसलिए पात्रों को मनोवैज्ञानिक सच पाठक को प्रभावित करता है। वे यथार्थ-चक्र में घूमते पात्रों को सहज यात्राओं के लिए छोड़ देते हैं और वर्णन-विवरण, इतिवृत्त तीनों को मिला-मिलाकर कथा में जादू पैदा कर देते हैं। 'इवान इलिच की मौत' का लंबा वर्णन फालतू नहीं लगता—वह अंतर्वस्तु की माँग का हिस्सा है। रचना में प्रतिबिंबित जटिल सामाजिक प्रक्रियाएँ निरंतर नए-नए भाव-विचार बिंब पैदा करती हैं और इसे लेनिन ने टॉल्सटॉय के विचारों का अंतर्विरोध कहा है जबकि ऐसा कहना सच नहीं है। जमींदार और किसान के चित्रण में टॉल्सटॉय की कला देखते ही बनती है। इस दृष्टि से वे 'सार्वभौमिक महत्त्व के कलाकार' और 'रूसी क्रांति के दर्पण' ठीक ही कहे गए हैं। उच्चवर्ग के प्रति कृषक वर्ग की घृणा इस कला का यथार्थ है। उनकी किसान-संवेदना किसान को अर्पित है और उनकी तरह का कोई कहानीकार न रूस में हुआ है न यूरोप में। कथा-साहित्य में टॉल्सटॉय का दृढ़ मत रहा है कि वर्तमान सामाजिक व्यवस्था अन्यायी और अवांछनीय है। इस अवांछनीय व्यवस्था के नरक को दिखाने के लिए ही टॉल्सटॉय ने अपनी महान सर्जनात्मक प्रतिभा का कलात्मक ढंग से उपयोग किया है।

टॉल्सटॉय के अंतर्जगत के निर्माण में 'टीचिंग्स आव क्राइस्ट' या 'ईसा की सिखावन' का बड़ा हाथ है। उनका पूरा प्रेम-सिद्धांत ईसा की शिक्षाओं के भीतर से ही निकला है। संसार में 'कल्याण का मार्ग' क्या है ? ईसा के उपदेशों पर भरोसा। ''ईसा ने अपने उपदेशों और जीवन से मनुष्यों को यह दिखा दिया कि हर आदमी में परमात्मा की शक्ति का वास है। ईसा के उपदेशों के अनुसार, मनुष्यों में सब बुराइयाँ

इसलिए आती हैं क्योंकि वे सोचते हैं कि उनके प्राण उनके शरीर में ही बसते हैं, परमात्मा की शक्ति में नहीं। इसी कारण वे एक-दूसरे के साथ लड़ते हैं। इसी कारण उनकी आत्माओं को क्लेश होता है और इसी कारण वे मृत्यु से डरते हैं। परमात्मा की शक्ति प्रेम है। प्रेम ही परमात्मा है और हर आदमी की आत्मा में प्रेम का वास है। जब लोग यह विश्वास करने लगेंगे कि उनका जीवन परमात्मा की शक्ति में अर्थात् प्रेम में ही है, तब न वैमनस्य होगा, न मानसिक उत्पीड़न और मृत्यु से भय।'' (लियो टॉल्सटॉय : प्रतिनिधि रचनाएँ, भाग-3, सं० कृष्णदत्त पालीवाल) कहने का सारांश यह है कि प्रेम ही ईश्वर है और उसी में कल्याण निहित है। यही कारण है कि ईसा की शिक्षा को धर्मोपदेशों का नाम दिया गया।

'ईसा का उदय' नया ज्ञानप्रकाश है। उनका जन्म जॉसफ की पत्नी मेरी के गर्भ से हुआ। वे तीस वर्ष की उम्र तक माता-पिता के साथ रहे। वे वृद्ध पिता के साथ बढ़ईगीरी में हाथ बँटाते रहे। एक दिन सुना कि लोग एक महात्मा के उपदेश सुनने जंगल में जाते हैं। जिज्ञासावश वे भी महात्मा के उपदेश सुनने गए। जॉन कहते थे कि प्रभु के राज्य में हर कोई समान है—न कोई ऊँचा, न कोई नीचा। सभी को प्रेमपूर्वक रहना चाहिए। लोग पूछते हैं हमें क्या करना चाहिए। तो जॉन कहते हैं कि अगर आपके पास दो पाशाकें हैं तो एक उस व्यक्ति को दे देनी चाहिए जिसके पास नहीं है। हमें दूसरों को लूटना-ठगना न चाहिए। फलवाले पेड़ बनो और संतोष को धन मानो। जॉन ने प्रेरणा दी कि दयालु, नम्र और न्यायप्रिय बनो। जो लोग उनके वचनों पर चलने का मन बनाते, उन्हें वह पवित्र जार्डन नदी में स्नान कराते और कहते, ''मैंने तुम्हें जल से पवित्र किया है लेकिन तुम्हारी अंतरात्मा में जो प्रभु-शक्ति विद्यमान है, वही तुम्हें पूर्णतया पवित्र कर सकती है।''

जॉन ने लोगों को 'पवित्र जीवन' का उपदेश दिया। ईसा ने सोचा कि प्रभु की शक्ति द्वारा पवित्र होने का क्या अर्थ? उत्तर मिला तन के लिए नहीं आत्मा के लिए जीयो। आत्मा परमात्मा की इच्छा से शरीर में निवास करती है। इन शब्दों का गहन अर्थ गहते हुए वे नगरों-ग्रामों में अपने उपदेशों का प्रचार करने निकल पड़े। 'अंत:खोज' के कारण ईसा की चर्चा फैल गयी। ईसा ने लोगों से कहा—प्रभु का राज्य सर्वत्र है। 'सत्य आचरण' से प्रभु के राज्य में प्रवेश पाया जा सकता है। ईसा ने यह भी कहा कि संत-वचनों का सार धर्मादेश बना है और उनका पालन करो। प्रथम आदेश यह पुराने धर्म ग्रंथ के अनुसार किसी की हत्या मत करो। दूसरा आदेश यह कि व्यभिचार न करो। तीसरा आदेश कि कसम न खाओ। चौथा आदेश यह कि थप्पड़ का जबाव थप्पड़ से मत दो। पाँचवाँ आदेश यह हर किसी से प्रेम करो। ईसा ने पाँच आदेशों के पालन का उपदेश दिया और परस्पर-प्रेम की महिमा का महत्त्व

समझाया। उन्होंने 'कर्मयोग' की शिक्षा देकर 'प्रभु राज्य' का अर्थ समझाया। सबसे बड़ा बल आत्मबल तथा सबसे बड़ा प्रेम सभी से प्रेम। लेकिन ईसा की ये बातें फरीसियों को पसंद नहीं आईं। उन्होंने उन पर दोष लगाए।

ईसा ने 'प्रार्थना-मार्ग' सुझाया तथा पश्चाताप से पवित्रता का अर्थ भाष्य। एक औरत ने ईसा को पानी नहीं पिलाया और कहा, "मैं तो समरियावासी हूँ, तुम यहूदी हो।" ईसा ने शांत भाव से कहा, "जीवन-तत्त्व, प्रेम-तत्त्व पर अमल करो। 'आत्मा अमर' है और आत्मिक जीवन ही श्रेष्ठ जीवन है। कर्म ही प्रधान है—विकारों से बचो, क्रोध मत करो। क्रोध ही नाश की जड़ है—सम-भाव से जिओ। पत्नीव्रत का पालन और नियमों में दृढ़ता मानव की रक्षा कर सकता है—प्रेम से सभी को जीतो—बुराई से बुराई दूर नहीं होती। अतः आध्यात्मिक जीवन जियो। यही अच्छा जीवन है और नरक से बचकर स्वर्ग पाओ। ईश्वर हर जगह है—सत्य पर डटे रहो।" ईसा ने अपने को परमात्मा का पुत्र बतलाया और कहा कि उसी के साथ एकाकार हूँ। बहुत से यहूदियों ने ईसा को शैतान माना। लेकिन ईसा ने यरूसलम से लौटते हुए अपने शिष्यों से कहा सेवा करो—मालिक सबको समान देगा। 'उन्होंने पुनर्जीवन', अंतर्दृष्टि का महत्त्व समझाते हुए कहा, फल की आशा मत करो, शिक्षक न बनो, निर्भय बनो और षड्यंत्रों में हिस्सेदारी मत करो। किसी से विश्वासघात न करो—ईश्वर से एकाकार होकर मानो प्रेम ही परमात्मा है। प्रभु को जानना ही सत्य जीवन है—अहंकार मत करो। लेकिन ईसा की गिरफ्तारी और यातना का इतिहास बड़ा कष्टदायी रहा। ईसा को सिरफिरों ने पापी और अपराधी ठहराया, किंतु ईसा मौन रहे—एक शब्द तक न बोला। लाट-पादरियों ने कहा, 'प्रभु का पुत्र' कहने के कानून के अनुसार उसे फाँसी दी जानी चाहिए।' यहूदियों ने अड़कर ईसा को फाँसी की सजा दी एवं कहा हमारा बादशाह तो सीजर है—इसे फाँसी दो। इस तरह परमात्मा को स्मरण करते उनका अंत हुआ। ईसा की शिक्षाओं का टॉल्सटॉय पर अमर-अटल प्रभाव पड़ा और यह प्रभाव उनकी सर्जनात्मकता के केंद्र में रहा है।

टॉल्सटॉय की विश्व-प्रसिद्ध कहानी 'कितनी जमीन?' पर भी ईसाई प्रभाव पाया जा सकता है। जरूरत उसके पाठ-विखंडन की है। टॉल्सटॉय की इस कहानी का यहाँ प्रसिद्ध कथाकार जैनेंद्र कुमार ने अनुवाद किया है। जैनेंद्र शब्द की मितव्ययिता के लिए जाने जाते हैं। उन्होंने सर्जनात्मक अनुवाद का प्रतिमान ही मानो इस अनुवाद में प्रस्तुत किया है। यह अत्यंत दिलचस्प और अद्भुत कहानी है जिसे जैनेंद्र बहुत पसंद करते रहे होंगे। 'कितनी जमीन?' का आरंभ देखिए, "दो बहनें थीं। बड़ी का कस्बे में एक सौदागर से विवाह हुआ था। छोटी देहात में किसान के घर ब्याही थी।

बड़ी का अपनी छोटी बहन के यहाँ आना हुआ। निबटकर दोनों जनी बैठीं तो बातों का सूत चल पड़ा। बड़ी अपने शहर के जीवन की तारीफ करने लगी, "देखो कैसे आराम से हम रहते हैं। फैन्सी कपड़े और ठाठ के सामान। स्वाद-स्वाद की खाने-पीने की चीजें और फिर तमाशे-थियेटर, बाग-बगीचे।' "

छोटी बहन को बात लग गई। अपनी बारी पर उसने सौदागर की जिंदगी को हेय बताया और किसान का पक्ष लिया। कहा, "मैं तो अपनी जिंदगी का तुम्हारे साथ अदला-बदली कभी न करूँ। हम सीधे-सादे रूखे से रहते हैं तो क्या, चिंता-फिकर से तो छूटे हैं। तुम लोग सजी-धजी रहती हो, तुम्हारे यहाँ आमदनी बहुत है। लेकिन एक रोज वह सब हवा भी हो सकता है, जीजी। कहावत है ही—हानि-लाभ दोनों जुड़वाँ भाई। अक्सर होता है आज जो अमीर है, कल वही टुकड़े को मोहताज है। पर हमारे गाँव के जीवन में यह जोखिम नहीं है। किसानी जिंदगी फूली और चीकनी नहीं दीखती तो क्या, उमर लंबी होती है और मेहनत से तंदुरुस्ती भी बनी रहती है। हम मालदार न कहलाएँगे, लेकिन हमारे पास खाने की कमी भी कभी न होगी।' (वही, भाग-3, पृष्ठ 101)

कहानी में छोटी-बड़ी बहनों में बहस-तर्क चलते हैं गाँव और शहर के जीवन पर बुनियादी विचार उभर रहे हैं। बड़ी बहन शहर की तारीफ के पुल बाँध रही है और छोटी गाँव की तारीफ के। "औरतों में फिर इधर की, उधर की, घर की और परिवार की सब बातचीत हुई। आखिर अलग होकर वे आराम करने लगीं। लेकिन वहीं कोने में शैतान दुबका बैठा था। उसने सब कुछ सुना। वह खुश था कि किसान की बीवी ने गाँव की बड़ाई करके अपने आदमी को ढींग पर चढ़ा दिया। देखो न, कहता था कि जमीन खूब हो तो फिर शैतान आ जाए तो परवाह नहीं। शैतान ने मन में कहा, अच्छा, हजरत यही फैसला सही। मैं तुमको काफी जमीन दूँगा और देखना है कि उसी से तुम मेरे चंगुल में होते हो कि नहीं।" (वही, भाग-3, पृ. 102) शैतान का करिश्मा शुरू हुआ। गाँव के पास जमींदारी की मालकिन की कोठी थी—उनके पास तीन सौ एकड़ जमीन। उनका कारिंदा घमंडी-फौज से निकला व्यक्ति। उसने लोगों पर जुर्माने ठोंगने शुरू कर दिए। दीना को जुर्माना उठाना पड़ता। फिर पता चला कि मालकिन ज़मीन बेच रही है और मुंशी इकराम अली से सौदे की बातचीत चल रही है। यह खबर पाकर किसान चौकन्ने हुए। सोचा मुंशी तो कारिंदे से ज्यादा जुर्माना करेगा—हमारी गुजर-बसर होगी कैसी? यह सोचकर किसान मालकिन के पास गए, प्रार्थना की कि मुंशी को जमीन न दीजिए, हम उसे बढ़ती कीमत पर लेने को तैयार हैं। मालकिन राज़ी हो गई, तब किसानों ने ग्राम-पंचायत से मिलकर सामूहिक जमीन लेनी चाही। इतने में दीना को पता चला कि एक

पड़ोसी पचास एकड़ जमीन ले रहा है और जमींदारिन राजी हो गई हैं। दीना ने अपनी स्त्री से कहा—हमें भी बीस एकड़ जमीन ले लेनी चाहिए। जीना वैसे भी भार हो रहा है। वह कारिंदा जुर्माने पर जुर्माना कर रहा है। विचार हुआ किस तरकीब से जमीन खरीदी जाए। सौ कलदार थे—बाकी कुछ पैसे स्त्री के भाई से लेकर चालीस एकड़ जमीन खरीदने का विचार बना। सौदा पट गया—दीना के पास निजी जमीन। वह जमीन जोतता-बोता। हरा-भरा देखकर प्रसन्न हो जाता। इस तरह दोनों खुशहाल। लेकिन दीना के खेतों में लोग गाय-बछड़े छोड़कर नुकसान करने लगे तो विवश दीना ने अदालत से उन पर जुर्माना करवाया। एक आदमी ने सात शीशम के पेड़ काट लिए। उसने सोचा यह काम घुन्नू का होगा। घुन्नू के पास गया—झगड़ा किया, पर नतीजा न निकला। इस बीच अफवाह उड़ी कि लोग गाँव छोड़कर जा रहे हैं। दोनों ने सोचा, यह अच्छा है, और जमीन खरीद लेंगे। इसी बीच एक परदेसी किसान ने दीना से कहा दरिया सतलज के पार बहुत काम है, वहाँ नई बस्ती बस रही है और हरेक को बीस एकड़ जमीन मुफ्त मिल रही है—उपजाऊ जमीन है, लोग मालामाल हो रहे हैं। दीना का मन मचलने लगा। उसने सब जमीन-जानवर बेंच डाले और सतलज के उस पार बसने का मन बनाया। दीना वहाँ पहुँचा और दावतें खाकर बस गया। सौ एकड़ जमीन ले ली, ढोरों को चरने का चरागाह भी मिल गया। लोग वहाँ संपन्न होकर रहने लगे—तीस साल निकल गए। दीना का लोभ बढ़ा—वह जमीन किराए पर लेने लगा। इस तरह पचड़ा बढ़ा लिया दीना ने एक किसान से एक हजार एकड़ जमीन खरीदी। एक सौदागर ने आकर बताया कि कुल पाँच सौ रुपए में उसने नर्मदा के किनारे पंद्रह सौ एकड़ जमीन खरीदी। फिर सौदागर ने कहा कि वहाँ बेहद उपजाऊ जीमन मुफ्त भाव में ले सकते हो। कितनी ही जमीन ले लो। वहाँ लोग भेड़ की तरह सीधे हैं। लोभी दीना एक आदमी को साथ लेकर यात्रा को निकल पड़ा। चलते-चलते सात रोज में वहाँ पहुँचे। वहाँ कोल लोगों की बस्ती। खाने-पीने की कमी नहीं -दारू-चाय की भरमार। जमीन सरदार के पास, वह सरदार आया—उसने कहा जो जमीन चाहो, चुन लो। दीना ने सोचा मनचाहा हो गया। सरदार ने कहा जमीन पक्की रजिस्ट्री से ले लो। कीमत एक दिन में एक हजार रुपए। एक दिन में जितनी जमीन पैदल चलकर नाप डालो वह सब तुम्हारी। मगर एक शर्त है अगर तुम उसी दिन उसी जगह आ गए, जहाँ से चले थे तो जमीन तुम्हारी होगी, नहीं तो जब्त समझी जाएगी।

दीना से सरदार ने कहा, "इस तरह जितनी जमीन तुम नाप लोगे—वह तुम्हारी।" दीना को रातभर नींद न आई, बेहद खुश था वह। रातभर जमीन नापने के सपने में सबेरे उठते ही दीना वहाँ जाकर जल्दी से चाय तक न पीकर कोलों के साथ

चल पड़ा। पहले धीमे चला। एक जगह गड्ढा किया, फिर तेज चल पड़ा। मीलों तेज चला। तकलीफ क्या, आराम जिंदगी भर कर लेंगे। इस तरह बहुत लंबी राह नापी। इतना चला कि टाँगें रह गईं—साँस फूलने लगी। सूरज डूबने लगा। दूर बैठा सरदार भी दिखाई दिया, सोचा—क्या ईश्वर भोगने देगा। दीना इतना भागा-दौड़ा कि मर गया। कोल दया और व्यंग्य से हँसने लगे। नौकर ने फावड़ा लिया और दीना के लिए कब्र खोदी और उसमें लिटा दिया। सिर से पाँव तक कुल छह फुट जमीन उसे काफी हुई।'

टॉल्सटॉय की इस अमर विश्वप्रसिद्ध कहानी में लालच का अंत छिपा हुआ है। किसान के मन में जमीन का लालच और जीवन का शैतान उसे कहाँ-से-कहाँ ले जाता है। अपने ध्वन्यार्थ में यह कहानी एक संदेश है—उपदेश है कि संतोष न करना आफत को निमंत्रण है। मानव-मन का लोभी कोना इस कहानी का यथार्थ है और कहानी कहने की कला का अद्‌भुत हुनर पाठक को बहुत पसंद आता रहा है।

टॉल्सटॉय की कहानी 'कितनी जमीन?' प्रसिद्ध कथाकार जैनेंद्र कुमार के द्वारा किया गया 'शब्दानुवाद' नहीं है। शब्दानुवाद की निकृष्ट अक्षमता से बचकर जैनेंद्र कुमार ने कहानी का भारतीयकरण करते हुए सर्जनात्मक अनुवाद किया है। शिल्प की सजग तराश के कारण यह अनुवाद सर्जनात्मक अनुवाद का 'प्रतिमान' सामने लाता है। भारत के स्थानीय नामों के कारण कहानी से रूस गायब हो जाता है, 'भारत' सामने नजर आता है। साथ ही टॉल्सटॉय की कहानी कला का अद्‌भुत गुण है—नाटकीयता। उस कला को बरकरार रखते हुए जैनेंद्र ने कथन को निखरे रूप में पाठक को मुग्ध कर लिया है।

यहाँ टॉल्सटॉय की नैतिक मूल्यों की प्रेरक नीतिपरक कहानियों का अनुवाद जैनेंद्र कुमार ने 'प्रेम में भगवान' शीर्षक देकर किया है। इस तरह सोलह कहानियाँ पाठक को मिली हैं, जिनके शीर्षक हैं, 'प्रेम में भगवान', 'खोखला ढोल', 'सूरत की बात', 'देर हो, अँधेर नहीं', 'धर्मपुत्र', 'दो साथी', 'जीवन-मूल', 'करीम', 'आदमी और जानवर', 'तीन जोगी', 'आम बराबर गेहूँ', 'काम, मौत और बीमारी', 'तीन सवाल', 'हमसे सयाने बालक', 'बदी छले, नेकी फले' तथा 'मूरखराज'। 'प्रेम में भगवान' एक मोची की कहानी है जो तंग कोठरी में रहता था—परिश्रमी और बात का पक्का। पत्नी मरी तो तीन साल का बालक छोड़ गई। बालक भी बारह वर्ष का होकर चल बसा। अकेला रह गया बूढ़ा मोची, मार्टिन। निराश मार्टिन ईश्वर की आस्था में जिया। प्रभु मसीह का ध्यान और इंजील की पुस्तक का शाम को अध्ययन-मनन। यह एक दयावान वृद्ध की कहानी है जो सभी से प्रेम करता है और प्रेम को ही प्रभु मानता है। 'खोखला ढोल' एक मजदूर इमेल्यान की कथा है, एक

सुंदर लड़की शादी के लिए उस गरीब के सामने यह कहकर आगे बढ़ी है कि आराम कम किया और मेहनत ज्यादा तो खाने-पहनने को सब कहीं हो जाएगा। वे शहर चले गए। वहाँ एक राजा उस सुंदरी पर रीझ गया और कहा कि गरीब किसान से शादी क्यों की, तुम रानी होने लायक हो। इतना कहकर राजा चला तो गया पर महल में उसको सपने आते रहे कि कैसे मिले वह परी। राजा ने आदमी भेजकर इमेल्यान को बुलाया, वह अकेला आया, औरत की जगह तो घर है। राजा ने दो आदमियों का काम दिया, उसने अकेले कर दिया। फिर चौगुना दिया। घर आकर इमेल्यान ने अपनी स्त्री के हाथ का खाना खाया, गरम पानी पिया और कहा कि 'काम ज्यादा देकर राजा मारना चाहता है।' औरत ने कहा, 'काम के बारे में झींकना अच्छा नहीं होता।' इमेल्यान चौगुना काम करने लगा-काम बढ़ाया जाता, वह पूरा करता। दुष्ट राजा ने कहा, 'एक दिन में मंदिर की इमरात तुम्हें खड़ी करनी है न तो सिर कलम।' इस हुकुम पर इमेल्यान ने मंदिर बना दिया। उसने राजा से अपनी बीबी को बचाया। 'सूरत की बात' एक आमिल फाजिल की कहानी है। 'देर हो, अँधेर नहीं' या 'धर्मपुत्र' कोई भी कहानी हो टॉल्सटॉय को अमीर, पुलिस और अफसर के अत्याचारों का बराबर ध्यान रहता है।

इन सभी नीति-प्रधान कहानियों में रूसी-जीवन का सामाजिक-यथार्थ मोची, किसान, मजदूर के माध्यम से सामने आया है। पूँजीपतियों, साहूकारों से पीड़ित समाज में नारी-देह पर निगाह है। राजा लोग सुंदर स्त्री को भोगने के लिए झूठ-मक्कारी का सहारा लेते हैं। इन सभी कहानियों की कथात्मक संवेदना में मौजूद मनुष्य बहुत जीवटवाला है। टॉल्सटॉय ने बाल-साहित्य में अनुपम योगदान किया है और उनके लिए लघुकथाएँ लिखी हैं। 'बालकों का विवेक' नाम से 'विजडम आफ चिल्ड्रन' का अनुवाद रामनाथ सुमन ने प्रस्तुत किया है। भूलना न होगा कि टॉल्सटॉय के तेरह संतानें थीं और उनका मन बालकों में रमता था। उन्होंने 'बचपन' शीर्षक उपन्यास से बड़ी ख्याति अर्जित की—यह विश्व साहित्य में अपने ढंग का क्लासिक है। यहाँ बालकों का विवेक में बाल-मन और लोक-मन से जुड़ी लघु आख्यानिकाएँ हैं, जिनके शीर्षक हैं, 'धर्म', 'युद्ध', 'मातृभूमि : स्वदेश-राज्य', 'टैक्स', 'निंदा', 'दया', 'नशा', 'मृत्युदंड', 'जेल', 'संपत्ति', 'अपनी हानि करनेवालों का प्यार करना', 'अखबार', 'पश्चात्ताप', 'कला', 'विज्ञान', 'मुकदमेबाजी', 'अपराध और दंड', 'निजी संपत्ति', 'बच्चे' तथा 'शिक्षा'। वास्तविकता यह है टॉल्सटॉय के 'संतमन' में 'धर्म' संपूर्ण मनुष्यता है। 'धर्म' का अर्थ केवल ईसाई-धर्म न होकर उसका अर्थ है—संपूर्ण मनुष्यता।

'धर्म' में माँ और बच्चे का निर्मल मन से उपजा संवाद है। बच्चा प्रश्न पूछ रहा

है कि माँ-दाई ने आज अच्छे-अच्छे कपड़े क्यों पहने हैं और मुझे यह नई कमीज क्यों पहनाई है ? माँ ने उत्तर दिया, 'इसलिए कि आज छुट्टी और त्यौहार का दिन है और हम लोग गिरिजाघर प्रार्थना करने जाएँगे।' बच्चे ने प्रश्न किया, 'आज कौन-सा त्यौहार है ?' माँ ने कहा, 'स्वर्गारोहण दिवस है।' बच्चे ने फिर पूछा, 'स्वर्णारोहण का क्या मतलब होता है—माँ'। माँ ने कहा, 'इसका मतलब यह है कि हमारे प्रभु ईसा मसीह स्वर्ग की ओर आरोहण कर गए।' कहना न होगा कि इस तरह के 'धर्म' से जुड़े विश्वासों से किसी भी जाति का जातीय अवचेतन निर्मित होता है और जातीय-स्मृति में रच-पचकर वे परंपरा की सर्जनात्मकता का विकास करते हैं। टॉल्सटॉय मानते थे कि धर्म के बिना आदमी भटक जाता है और वह धर्म के सहारे से ही जीवन जीने का मार्ग खोजता है। बचपन में नास्तिक मनवाले टॉल्सटॉय भीषण युद्धों के नरसंहार और अनाथों-श्रमिकों के जीवन को देखकर ईश्वर और धर्म की ओर लौटे हैं। बच्चा माँ से प्रश्न करता है, 'आरोहण से क्या मतलब है ?' माँ ने कहा, 'इसका मतलब है कि वे ऊपर की ओर चले गए।' बच्चे ने कहा, 'वे ऊपर कैसे गए माँ ? क्या डैनों से ?' माँ ने कहा, 'नहीं, डैनों नहीं हैं, वे यों ही ऊपर चले गए। क्योंकि वे ईश्वर हैं और ईश्वर सब कुछ कर सकता है।' बच्चे ने कहा, 'पर वे गए कहाँ है ? पिताजी तो मुझसे कह रहे थे आसमान सिर्फ खाली जगह है।' माँ ने कहा, 'हर आदमी हर बात नहीं समझ सकता। उसे श्रद्धा भी रखनी चाहिए।' अर्थात् ईश्वर श्रद्धा का विषय है—कपटी तर्कों का नहीं। हमें सच्चे धर्म में विश्वास करना चाहिए, विराट के आगे नमन। 'युद्ध' लघुकथा में बच्चे अपने देश से प्यार करने का पूरा संदर्भ समझ रहे हैं। हर आदमी अपनी पितृभूमि को, देश को प्यार करता है। 'मातृभूमि स्वदेश राज्य में स्वदेश की रक्षा के लिए लड़ाई में जाना ही पड़ता है। न जाओगे तो जबरदस्ती घसीटकर ले जाए जाओगे।' इस तरह टॉल्सटॉय ने देश-भक्ति, प्रेम, अहिंसा, धर्म आदि पर रोचक शैली में चर्चा की है।

टॉल्सटॉय ने 'बालकों का विवेक' जैसे बाल-आख्यान, बाल नाटक लिखे हैं और सामाजिक नाटकों के क्षेत्र में भी कई नाट्य प्रयोग किए हैं। 'कलवार की करतूत' शराब की बुराइयों पर प्रकाश डालनेवाला नाटक है। यह नाटक किसान-वेदना से जुड़ा है। खेत की जुताई करता किसान चैन से रोटी कहाँ खा पाता है—उसके प्राणों के हजार दुश्मन। अमीर को स्वर्ग और गरीब किसान को नरक की यातना। सबसे ऊँची जगह बैठता है—नरकलोक का सरदार। उसका मंत्री नीचे और संतरी खड़े रहते हैं। किसानों का दूत किसानों की रोटी चुराता है और किसान उसे गाली नहीं देता। वह किसानों का भक्त हो जाता है। अमीरों-व्यापारियों और स्त्रियों ने बुरा हाल कर दिया है—देश और किसानों का। किसान क्या करें ? गेहूँ से शराब

निकाल रहे हैं—उनका तन और धन बर्बाद हो रहा है। मजदूर-किसान शराब पी रहे हैं—वे व्यवस्था की विकृतियों के शिकार हैं। 'स्त्रियाँ-बच्चे सब शराब पीकर अपना नाश कर रहे हैं। टॉल्सटॉय के सामने का रूसी-समाज जिन विकृतियों का शिकार हुआ था टॉल्सटॉय ने उसी समाज को उजागर किया है। यहाँ टॉल्सटॉय की यह विचार दृष्टि भी सक्रिय है कि जब तक मनुष्य के पास आवश्यकता से कम धन रहता है उसके हृदय में मानव-प्रेम, ईश्वर भक्ति रहती है। ज्यादा धन आते ही वह धर्म-कर्म छोड़कर धन संग्रह में लग जाता है और विकृतियों का शिकार होकर समाज का नाश करता है।'

टॉल्सटॉय ने 'अँधेरे में उजाला' जैसा शिक्षाप्रद और मनोरंजक नाटक लिखा। इस नाटक में रूस का पूरा समाज—किसान, बढ़ई, पादरी, जनरल, कर्नल, संतरी, डॉक्टर, मरीज, अस्पताल, शराबी औरतें, विद्यार्थी, नाचनेवाले युवक-युवतियाँ, सैनिक, क्लर्क, सरकारी-अफसर सभी मौजूद हैं। नाटक का आरंभ मेरी नामक सुंदर अधेड़ स्त्री से होता है। एक जिद्दी और उसका पति पीटर, एक मोटा आदमी सब बैठे शराब पी रहे हैं। अलेक्जेंडरा कहती है—यही हाल रहा तो तुम सब भिखारी हो जाओगे। समाजवाद, हड़ताल, श्रमजीवियों के प्रश्नों का क्या होगा—ये सब सोचने के मुद्दे हैं। टॉल्सटॉय व्रत-उपवास-पूजा, धर्माचार्यों के पाखंडवाद में विश्वास नहीं रखते। यह नाटक इसी कथ्य पर केंद्रित है और बेहद प्रभावी। गिरिजाघर की धोखेबाजी का भंडाफोड़ भी इस नाटक में होता है। एक पूरे समाज का भ्रष्ट-तंत्र इस नाटक में अनेक व्यंजनाओं के साथ अभिव्यक्त हुआ है।

टॉल्सटॉय की कलाकृतियों से प्रभावित होकर तुर्गनेव ने कहा है कि 'मैं उनकी तुलना में क्या कहूँ? समकालीन यूरोपीय साहित्य में उनकी जोड़ का कोई नहीं है। उनकी कला में, कलम में वह जादू है कि वह जो कुछ लिखते हैं वह जी उठता है। और विस्मय-विमुग्ध करनेवाली बात तो यह है कि उनकी रचना-शक्ति का क्षेत्र कितना विविधतामय और विराट् है।' तुर्गनेव के इस कथन से हमारे कथा सम्राट् प्रेमचंद न केवल सहमति व्यक्त करते हैं—अपितु जोर देकर कहते हैं और इस कथन में रत्तीभर भी अतिशयोक्ति नहीं है। टॉल्सटॉय की रचना-शक्ति अद्भुत थी। जीवन का ऐसा कोई विभाग, ऐसा कोई अंग नहीं है जिस पर उनकी तेज आँखें न पड़ी हों। और उनके मस्तिष्क में जो चीज एक बार पहुँच जाती थी—वह अलौकिक हो जाती थी।' यह तो उनकी कला का ही कमाल था कि वे सूक्ष्म-से-सूक्ष्म की गहरी पकड़ रखते थे और समाज उनसे अपना पेट न छिपा सकता था। ऊँची-से-ऊँची या निकृष्ट-से-निकृष्ट सोसायटी का चित्रण वह समान बारीकी और सच्चाई से करते हैं। आपको कहीं कोई अस्वाभाविकता, कहीं कोई अनाड़ीपन न मिलेगा। अमीरों के

नाच और दावतों में सैनिकों की छावनियों और गरीबों की झोंपड़ियों में, ऐयासों के विलास और विहार में, त्यागियों की साधना और संयम में कहीं भी बंद नहीं है, कहीं भी वे अजनबी नहीं हैं, कहीं भी वे भटकते नहीं, और मानव-जीवन का ऐसा वैचित्र्य तो आपको साहित्य में कहीं मिल ही नहीं सकता। उनकी रचना 'वार एंड पीस' को ही लीजिए। हजारों चरित्र आए हैं—सब अपने-अपने व्यक्तित्व के साथ। बड़े-से-बड़ा वीर, बड़े-से-बड़ा कायर, सज्जन, दुर्जन, लुच्चे, शोहदे, साधु-संत सभी उनकी कलम के नीचे आकर सजीव हो जाते हैं, बोलने लगते हैं। आपको उनसे इतनी दिलचस्पी हो जाती है, मानो वे आपके घनिष्ठ हों, आप सम्मोहित हो जाते हैं।

ध्यान में रखना होगा कि उनकी पहली, 1952 में और आखिरी पुस्तक 1910 में छपी। उन्होंने उपन्यास, कहानी, नाटक, संस्मरण, आलोचना, जीवन-चरित्र, आत्मकथा, डायरी आदि न जाने कितनी विधाओं में लिखा है। इस पूरे सृजन और चिंतन पर उनके जीवनानुभवों की, चिंतनगत मनुष्यता की गहरी अमिट छाप है। उनके विचारों में विलासवाद से विद्रोह था और श्रम की आदत। वे 'रेवेलियन' थे और आग पर चलना उन्हें आता था। मखमली गद्दों को त्यागकर वे जीवन की कंकरीली कटैली राह पर चले और भ्रष्ट सत्तावाद के विरोध में निर्भय शेर की भाँति डटे रहे। इसलिए निर्भयता और क्रांति उनके रचना-कर्म में जज्ब हैं। देखा जाए तो बुद्ध, शंकर, दयानंद, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद और गांधी में श्रेणी के पहुँचे हुए मनुष्य थे। उनका सेवा-भाव, ज्ञान-तप-त्याग उनके भीतर की अंतरात्मा से फूटकर, निर्झर-सा बह निकला था। सच तो यह है कि वे अपने समय के साहित्यिक नीलकंठ थे और हर तरह का जहर पीकर भी मानव-प्रेम, अहिंसा तथा श्रम पर डरे रहते थे। वे आपदाओं से नहीं, आपदाएँ उनसे भयभीत रहती थीं।

साहित्य की सृष्टि तनाव-द्वंद्व-संघर्ष से होती है—फिर उनका समय तो वैचारिक अंधड़ों का समय था। नेपोलियन के आक्रमणों के बाद का विश्व नई-नई वैचारिक क्रांतियाँ कर रहा था। कहीं मार्क्स खड़े थे, कहीं न्यूटन, कहीं डार्विन। उन्नीसवीं शताब्दी के नवजागरण के प्रकाश में जीवित रहना एक खास तरह का अद्वितीय अनुभव था। समय की विकृत हवा में न बहकर टॉल्सटॉय नैतिक-मूल्यों की ओर झुके और कहा कि मनुष्य युद्ध से, हिंसा से बड़ा नहीं होता—उसे प्रेम-त्याग, अहिंसा, विनय से ही बड़ा किया जा सकता है। अपने यौवन काल की खिलती घड़ियों में ही वे धर्म विकृतियों, शोषण-अन्यायों, भ्रष्ट सामंतों-पूँजीपतियों से विद्रोह करने लगे थे। मसीही सिद्धांतों के पवित्रतावाद में उनकी आस्था थी और देश से अकूत देश-प्रेम। वे मानते थे कि दूसरों के श्रम पर जीनेवाला परजीवी वर्ग समाज का सबसे बड़ा शत्रु है। लेखक, वकील, डॉक्टर और कलाकार परजीवी हैं

और लुहार, बढ़ई, मोची, किसान तथा अन्य शिल्पकार ही समाज को चलाते हैं। कला वही है जो सामाजिक जागरण का अस्त्र बने। इस दृष्टि से प्रभावित होकर उन्होंने तमाम कहानियाँ लिखी हैं। मुझे यहाँ फिर प्रेमचंद को स्मरण करना चाहिए जो कहते रहे हैं, "आज भी संसार राष्ट्रों के संघर्ष की समस्या को हल करने का विपुल प्रयत्न कर रहा है। आज भी इसी उद्देश्य से लड़ाइयों की भीषणता चित्रित की जा रही है। उसका मनुष्य की मानसिक, बौद्धिक और चारित्रिक प्रकृतियों पर क्या प्रभाव पड़ता है, यह दिखाया जा रहा है, पर इस विषय का जितना सुंदर मार्मिक, यथार्थ चित्रण टॉल्सटॉय ने किया है—वह और किसी ने शायद ही किया हो।' (प्रेमचंद का अप्राप्त साहित्य, भूमिकाएँ, पृ. 391, कमल किशोर गोयनका)।

टॉल्सटॉय का सृजन और चिंतन उनके अनुभवों की कोख से फूटा है फलतः उसमें अनुभूति की गहराई और अनुभूति की प्रामाणिकता है। 'टॉल्सटॉय स्वयं' फौजी रहे, सेवास्टोपोल के युद्ध में हिस्सेदारी की और आत्मा की आवाज सुनने पर पाया कि युद्ध पाप-कर्म है, नाश-कर्म है, अधर्म है। ये अनुभव 'वार एंड पीस' की सर्जनात्मकता में भिदे हुए हैं। फिर 'अन्ना कैरेनिना' की रचना की और जीवन का नया सौंदर्य शास्त्र-समाज शास्त्र गढ़ा है। इसमें फैलाव कम है गहराई ज्यादा है। अन्ना अनुपम कृति है और धड़कते नारी-हृदय की दर्दनाक त्रासदी। नारी-मन में गूढ़-गहन रहस्यों को टॉल्सटॉय ने परकाय प्रवेश की योगी कला से प्रकाशित किया है। स्त्री के मनोभावों में परिवर्तन का गणित अद्‌भुत है। अन्ना का देह-विलास परपुरुष को पाकर गरमाता है। टॉल्सटॉय के रचनाकार ने इस स्त्री को कठोर दंड दिया है—आत्महत्या। हिंदी में जब छबिनाथ पांडेय ने 'अन्ना कैरेनिना' का अनुवाद किया तो प्रेमचंद ने इस अनुवाद का मुक्त मन से स्वागत किया और 'भूमिका' भी लिखी। इससे पहले 'जमाना, जून 1920' में काउंट टॉल्सटॉय और फन-ए-लतीफ' (सत्कला) शीर्षक से एक लेख लिखा। इस लेख में कहा, "काउंट टॉल्सटॉय ने जहाँ दीगर (अन्य) सिपाही (राजनीतिज्ञ), तमद्दुनी (सभ्यता) और मजहबी मसाइल (समस्याओं) पर अपने इंकलाब-अंग्रेज (क्रांतिकारी) खयालात (विचार) ज़ाहिर किए हैं वहाँ फ़नून-ए-लतीफा (सरकला) के मुतल्लिक भी इनके खयालात जिद्दत (नवीनता) से खाली नहीं। उनके मुबाहिसे (वाद-विवाद) एक खास वस्फ (विशेषता) यह है कि चाहे आप अमलन (अमल के तौर पर) उनके मुआफिक (अनुकूल) न हों, पर उसूलन आप उनके जरूर कायल हो जाते हैं। दुनिया आज भी मुसावात (समानता) और अखुव्वत (बंधुता) के मुद्दइयों (दावेदारों) से खाली नहीं है।" टॉल्सटॉय ने सरलता के पीछे समानता को अपनाकर अपनी संपत्ति लुटा दी और गरीब किसान का जीवन जिया। उनके मन में

क्रांति की धुन रही और प्रेम का ईश्वरीय जोश। पाखंड से नफरत करते हुए वे अवतारवाद की आस्था की ओर झुके रहे। उन्होंने तमाम तरह के शोषणों से पर्दा उठाया और इस दुनिया ने उन्हें 'भ्रष्ट-बुद्धि का पागल इंसान' कहा है।

गांधी जी ने 'एक हिंदू के नाम पत्र' की प्रस्तावना में लिखा है कि काउंट टॉल्सटॉय रूस के एक रईस हैं। वे सांसारिक सुखों का पर्याप्त उपभोग कर चुके हैं, स्वयं एक वीर योद्धा रहे हैं और यूरोप में लेखक के रूप में उनकी बराबरी करनेवाला कोई देखने में नहीं आता।' वे उन सभी धर्मों के विरुद्ध हैं जो मनुष्यता के विकास को बाधित करते हैं। उनका दृढ़ विश्वास—प्रेम एवं अहिंसा, ईश्वरभक्ति एवं विनय में है। 'फ्री हिंदुस्तान' के संपादक की हिम्मत टॉल्सटॉय के 'एक हिंदू के नाम पत्र' छापने की नहीं पड़ी, किंतु अनुमति लेकर गांधी जी ने 25-12-1909 में 'इंडियन ओपीनियन' में पत्र छापा है। इस पत्र की 'प्रस्तावना' में गांधी ने कहा, 'यदि हम चाहते हैं कि अंग्रेज भारत में न रहें, तो हमें उसकी कीमत चुकानी पड़ेगी। टॉल्सटॉय उसकी ओर इंगित करते हैं। गांधी जी यह प्रश्न उठाते हुए कहते हैं कि 'बीस करोड़ भारतीयों को मुट्ठी भर अंग्रेजों ने गुलाम बना लिया है—इसका रहस्य क्या है ? क्या इन आँकड़ों से स्पष्ट नहीं हो जाता कि भारतीयों को अंग्रेजों ने गुलाम नहीं बनाया, बल्कि वे स्वयं ही गुलाम बने हैं।' (संपूर्ण गांधी वाङ्मय, खंड-10) इसी विचार को गांधी ने 'हिंद-स्वराज' में विस्तार से प्रस्तुत किया है कि भारतीय स्वयं ही कैसे अंग्रेजों के गुलाम बने हैं।

टॉल्सटॉय के सृजन और चिंतन का प्रभाव आधुनिक हिंदी साहित्य के रचनाकारों पर चाहे प्रेमचंद हों या ज़ैनेंद्र, भवानीप्रसाद मिश्र हों या प्रभाकर माचवे—इन सभी पर बहुत दूर तक पड़ा है। और गांधी तो अपना प्रेरणा-गुरु टॉल्सटॉय को मानकर उनके चिंतन के सामने समर्पित रहे ही हैं। ऐसी स्थिति के कारण टॉल्सटॉय की प्रतिनिधि रचनाओं का यह तीसरा खंड पाठकों के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा।

1 नवंबर, 2009

कृष्णदत्त पालीवाल
प्रोफेसर एवं पूर्व विभागाध्यक्ष
हिंदी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

अनुक्रम

ईसा की सिखावन

अनुवादक

संतराम 'विचित्र'

कल्याण का मार्ग

ईसा ने अपने उपदेशों और अपने जीवन से मनुष्यों को यह दिखा दिया कि हर आदमी में परमात्मा की शक्ति का वास है।

ईसा के उपदेशों के अनुसार, मनुष्यों में सब बुराइयाँ इसलिए आती हैं, क्योंकि वे सोचते हैं कि उनके प्राण उनके शरीर में ही बसते हैं, परमात्मा की शक्ति में नहीं। इसी कारण वे एक-दूसरे के साथ लड़ते हैं, इसी कारण उनकी आत्माओं को क्लेश होता है और इसी कारण वे मृत्यु से डरते हैं।

परमात्मा की शक्ति प्रेम है। प्रेम ही परमात्मा है और हर आदमी की आत्मा में प्रेम का वास है।

जब लोग यह विश्वास करने लगेंगे कि उनका जीवन परमात्मा की शक्ति में अर्थात् प्रेम में ही है, तब न वैमनस्य होगा, न मानसिक उत्पीड़न और न मृत्यु से भय।

हर कोई अपना कल्याण चाहता है। ईसा के उपदेशों से मनुष्यों ने यह जाना कि प्रेम ही से कल्याण होता है और सभी को यह कल्याण सुलभ हो सकता है। इसीलिए ईसा की शिक्षा को धर्मोपदेशों का नाम दिया गया।

ईसा का उदय

1908 बरस हुए जब ईसा ने जॉसफ की पत्नी मेरी के गर्भ से जन्म लिया था।

तीस बरस की आयु तक वह अपनी माँ, अपने पिता और भाइयों के साथ नाज़रथ में रहे। जब उनके पिता बहुत बूढ़े हो गए तो वह बढ़ई का काम करके अपने पिता की सहायता करने लगे।

जब वह 30 बरस के हुए तो उन्होंने सुना कि लोग एक महात्मा के उपदेशों को सुनने के लिए जंगल में जाया करते हैं। उनका नाम था जॉन। सो वह भी जॉन के उपदेशों को सुनने के लिए औरों के साथ-साथ वहाँ गए।

जॉन कहते थे कि प्रभु के राज्य की वेला आ गई है। उस प्रभु-राज्य में हर कोई यह जान लेगा कि सब मनुष्य समान हैं, कोई भी किसी से ऊँचा नहीं है और न कोई किसी से छोटा है। सब मनुष्यों को प्रेम-पूर्वक रहना चाहिए और अपने पड़ोसियों के साथ सद्-व्यवहार करना चाहिए। उनका कहना था कि ऐसा समय निकट है; लेकिन ऐसा तभी होगा, जब लोग बुरे काम करने छोड़ देंगे।

जब सरल हृदय लोग उनसे पूछते, "मुझे क्या करना चाहिए?" तो जॉन उनसे कहते कि जिस किसी के पास दो पोशाकें हैं, उसे एक उस व्यक्ति को दे देनी चाहिए, जिसके पास एक भी नहीं है, और इसी प्रकार जिसके पास खाने को है, उसे उस व्यक्ति के साथ बाँट लेना चाहिए, जिसके पास बिल्कुल नहीं है। अमीरों से जॉन कहते कि उन्हें लोगों को लूटना नहीं चाहिए। सैनिकों से वह कहते कि दूसरों का माल मत छीनो। जो कुछ तुम्हें मिला है उसी में संतोष करो और गाली-गलौज मत करो। फरीसियों, सडूसियों और वकीलों से वह कहते कि उन्हें अपने जीवन में फेर-बदल और प्रायश्चित करना चाहिए। वह उनसे कहते, "मत सोचो कि तुम कोई खास किस्म के इंसान हो। अपने जीवनों में परिवर्तन करो और ऐसा परिवर्तन करो कि लोग तुम्हारे कामों से देखें कि तुममें परिवर्तन हो गया है। यदि तुम बदलोगे नहीं तो तुम्हारी वही गति होगी, जो उस पेड़ की होती है, जिस पर फल नहीं लगते। यदि एक पेड़ फल नहीं देता तो उसे ईंधन के लिए काट दिया जाता है। अगर तुमने अच्छी करनी न की तो तुम्हारे साथ भी यही व्यवहार होगा। यदि तुम अपनी जीवन में परिवर्तन नहीं करोगे तो तुम नष्ट हो जाओगे।"

जॉन ने हर किसी को प्रेरणा दी कि वह दयालु बने, न्यायप्रिय और नम्र बने, जो लोग अपने जीवन में परिवर्तन करने का वचन देते, उन्हें वह जीवन-परिवर्तन की निशानी के रूप में जार्डन नदी में स्नान कराते। जब स्नान करा चुकते तो कहते, "मैंने तुम्हें जल से पवित्र किया है, लेकिन तुम्हारी अंतरात्मा में जो प्रभु-शक्ति विद्यमान है, वही तुम्हें पूर्णतया पवित्र कर सकती है।"

जॉन के ये शब्द, कि लोगों को अपने जीवन में परिवर्तन करना चाहिए, जिससे प्रभु का राज्य आ सके, और कि केवल परमात्मा की शक्ति से ही मनुष्य पवित्र हो सकते हैं, ईसा के दिल में गहरे पैठ गए। जो कुछ उन्होंने जॉन से सुना था उस सब पर विचार करने के लिए ईसा घर लौटने की बजाय जंगल में ही रह गए। वहाँ वह कई दिन रहे। जॉन से उन्होंने जो कुछ सुना था, उस पर विचार करते रहे।

पवित्र जीवन

जॉन ने कहा था कि प्रभु-राज्य के उदय के लिए लोगों को प्रभु की शक्ति द्वारा पवित्र बनना होगा।

'प्रभु की शक्ति द्वारा पवित्र होने के अर्थ क्या है?' ईसा ने सोचा। यदि परमात्मा की शक्ति से पवित्र होने का मतलब यह है कि किसी को भी केवल अपने ही लिए नहीं, प्रत्युत परमात्मा के आदेशानुसार जीना चाहिए, तो निश्चय ही प्रभु-राज्य का उदय हो सकता है। यदि सब मनुष्य उसी भावना के अनुसार रहने लगें तो वे सब एक हो जाएँगे और वही प्रभु का राज्य होगा। लेकिन मनुष्यों को अपने शरीरों और साथ-ही-साथ अपनी आत्मा के लिए भी जीना होगा। अगर वह निजी शरीरों और केवल निजी शरीरों की सेवा करने के लिए ही जीते हैं और उसी को मुख्य कर्म बना लेते हैं तो वे सब जुदा-जुदा होकर रहने लगेंगे, जैसाकि वे इस समय करते हैं। उस दशा में प्रभु-राज्य का कभी उदय नहीं होगा। 'तो फिर क्या किया जाए?' ईसा के मन में विचार उठा। केवल आत्मा के लिए जीना तो असंभव है और सांसारिक लोगों की तरह केवल तन के लिए जीना भी भूल है। अगर हम इसी तरह जिएँगे तो हम सब जुदा-जुदा रहेंगे और प्रभु-राज्य का कभी उदय नहीं होगा। तो फिर क्या किया जाए? इससे भी काम नहीं चलेगा कि एक मनुष्य अपने तन को खत्म कर डाले, क्योंकि जीव परमात्मा की इच्छा से ही शरीर में वास करता है, इसलिए किसी का निज की हत्या करना परमात्मा की इच्छा के विपरीत जाना हुआ।

यह विचार कर, ईसा ने अपने-आपसे कहा, "तो इसका मतलब यह है कि हम केवल आत्मा के लिए नहीं जी सकते, क्योंकि आत्मा तो शरीर में वास करता है। और हमें केवल शरीर के लिए ही उसकी सेवा करते हुए नहीं जीना चाहिए, जैसाकि बहुधा लोग करते हैं। न हम अपने-आपको शरीर से स्वतंत्र कर सकते हैं, क्योंकि आत्मा परमात्मा की इच्छा से शरीर में वास करता है। तो फिर किया क्या जा सकता है? केवल एक उपाय है, और वह यह कि हम परमात्मा की इच्छानुसार शरीर में वास कर सकते हैं, लेकिन शरीर में रहते हुए हमें उसकी नहीं, बल्कि परमात्मा की सेवा करनी होगी।"

इस निष्कर्ष पर पहुँचने के बाद, ईसा जंगल से रवाना हो गए और अपने उपदेशों का प्रचार करने के लिए नगरों और ग्रामों में गए।

अंतः-खोज

कुछ ही समय में ईसा की चर्चा चारों ओर फैल गयी और बहुत से लोग उनके प्रवचनों को सुनने के लिए उनके पास आने लगे।

उन्होंने लोगों से ये शब्द कहे—

"आप लोग जॉन के प्रवचनों को सुनने के लिए जंगल में गए थे। आप क्यों गए थे? कोई सुंदर-सुंदर वस्त्र-धारी लोगों को देखने जाता है, लेकिन ऐसे लोग तो राजमहलों में रहते हैं। उस जंगल में तो ऐसा कुछ भी नहीं था। फिर आप जॉन के पास जंगल में क्यों गए? आप एक ऐसे आदमी की बातें सुनने गए, जिसने आपको सिखाया कि क्यों-कर अच्छा जीवन बिताया जा सकता है। उन्होंने आपको क्या शिक्षा दी? उन्होंने आपको सिखाया कि फिर से प्रभु-राज्य का उदय होगा, लेकिन उसके उदय के लिए—और इसलिए कि इस संसार में कोई बुराई न रहे, यह आवश्यक है कि मनुष्य जुदा-जुदा न रहें, हर कोई अपने-आपके लिए न जिए, बल्कि सब एक हो जाएँ, और सब एक-दूसरे के साथ प्रेम-पूर्वक रहें। इसका मतलब यह हुआ कि प्रभु-राज्य के उदय के लिए सबसे पहले आपको अपने जीवने में परिवर्तन करना होगा। प्रभु-राज्य का आप-से-आप उदय नहीं होगा, परमात्मा स्वतः उस राज्य की स्थापना नहीं करेंगे। लेकिन उस प्रभु-राज्य की स्थापना तो आपको करनी होगी। यह आप कर सकते हैं, लेकिन तभी जब आप अपने जीवन के ढंग में परिवर्तन करने की चेष्टा करेंगे।

"यह न समझिए कि प्रत्यक्ष रूप में प्रभु-राज्य प्रकट होगा। प्रभु-राज्यों को आँखों से नहीं देखा जा सकता। अगर कोई आपको बतलाता है कि यह यहाँ अथवा वहाँ है, तो उस पर विश्वास न करो और न उसकी खोज करो। प्रभु-राज्य किसी समय-विशेष या स्थान-विशेष में नहीं है। वह सर्वत्र है और कहीं भी नहीं है, क्योंकि वह स्वतः आपके अंदर है, आपकी निजी आत्मा में है।"

सत्य-आचरण

ईसा ने अधिकाधिक स्पष्टतापूर्वक अपने उपदेशों की व्याख्या की। एक बार जब उनके पास बहुत-से लोग आए तो उन्होंने उन्हें बताया कि प्रभु-राज्य के उदय के लिए मनुष्यों को किस प्रकार जीवन बिताना चाहिए।

उन्होंने कहा—

"प्रभु का राज्य सांसारिक राज्यों से सर्वथा भिन्न होता है। प्रभु के राज्य में अहंकारी और अमीर प्रविष्ट नहीं होंगे। अहंकारी और अमीर इस समय शासन करते हैं, वे अपने-आपको सुखी रखते हैं, हर कोई उनकी प्रशंसा और उनकी इज्जत करता है; लेकिन जब तक वे अहंकारी और अमीर हैं और उनकी आत्माओं में प्रभु-राज्य नहीं है, वे प्रभु-राज्य में प्रविष्ट नहीं होंगे। प्रभु-राज्य में अहंकारी नहीं, बल्कि नम्र प्रविष्ट होंगे, अमीर नहीं बल्कि ग़रीब प्रविष्ट होंगे। लेकिन नम्र और ग़रीब भी उसमें तभी प्रवेश पा सकेंगे, जब तक कि वे नम्र और गरीब हैं, क्योंकि ऐसे होने पर ही वे बड़े और अमीर बनने के लिए गुनाह नहीं करेंगे, केवल इसीलिए नहीं कि वे अमीर और बड़े बनने के लायक नहीं हैं। अगर आप केवल इसलिए गरीब हैं कि आप संपत्ति प्राप्त करने के अयोग्य हैं तो आप उस नमक के समान हैं, जिसका कोई स्वाद नहीं। वह नमक बिल्कुल बेकार है, जिसमें नमकीन स्वाद नहीं। अगर वह नमकीन नहीं है तो वह किसी भी काम का नहीं और उसे फेंक दिया जाता है।

"यही दशा आपकी है। अगर आप केवल इसलिए गरीब हैं कि आपको यह पता नहीं था कि अमीर कैसे बना जाता है तो आप भी किसी लायक नहीं—न तो ग़रीब होने लायक और न अमीर होने लायक।

"इसलिए दूसरी सब बातों से पहले यह आवश्यक है कि प्रभु-राज्य में प्रवेश पाया जाए। प्रभु-राज्य और उसकी सत्यता की खोज करो, आपकी सब आवश्यकताएँ पूरी हो जाएँगी।

"यह मत सोचो कि मैं आपको किसी नई बात की शिक्षा दे रहा हूँ। सब बुद्धिमान और संत पुरुषों ने जो सिखाया था, वही मैं आपको सिखाता हूँ। मैं तो आपको केवल यही बतलाता हूँ कि उन्होंने जो शिक्षा दी थी, उसे आप कैसे पूरा कर सकते हैं। उसे पूरा करने के लिए आपको परमात्मा के आदेशों का पालन करना होगा—झूठे उपदेशकों की तरह केवल उनकी चर्चा करके नहीं, बल्कि उन पर अमल करके, क्योंकि केवल वही, जो परमात्मा के आदेशों पर अमल करता है और अपने आचरण से दूसरों को उन पर अमल करना सिखाता है, स्वर्ग के राज्य में प्रविष्ट होगा।"

धर्मादेश

ईसा ने कहा—

"पहला आदेश यह है—पुराने 'धर्म-ग्रंथ' में कहा गया था, "किसी की हत्या न करो" और जो कोई हत्या करता है, वह गुनहगार है।"

"लेकिन मैं आपको बतलाता हूँ कि अगर एक आदमी अपने भाई पर गुस्सा करता है तो वह परमात्मा की दृष्टि में गुनहगार है और उस हालत में तो वह और भी ज्यादा गुनहगार है, जबकि वह अपने भाई को गालियाँ देकर कड़वी बातें कहता है। इसलिए अगर आप प्रार्थना करना शुरू करते हैं और आपको याद आता है कि आप अपने भाई के साथ गुस्सा हैं तो पहले जाकर उसके साथ सुलह कीजिए। या अगर आप किसी कारण वैसा नहीं कर सकते तो आपके दिल में उसके प्रति जो गुस्सा है, उसे दूर कर दीजिए।

"यह है पहला आदेश।

"दूसरा आदेश यह है—पुराने 'धर्म-ग्रंथ' में कहा गया था, "व्यभिचार मत करो, और अगर आप अपनी पत्नी से अलग होते हैं तो उसे तलाक दीजिए।"

"लेकिन मैं आपसे कहता हूँ कि न केवल मनुष्य को व्यभिचार नहीं करना चाहिए, बल्कि अगर वह किसी स्त्री को अपने मन में बुरे विचार रखकर देखता है तो परमात्मा के समक्ष तो वह गुनहगार है ही। और तलाक के विषय में मैं आपको बतलाता हूँ कि जो आदमी अपनी पत्नी को तलाक देता है, वह खुद व्यभिचार करता है, और अपनी पत्नी से भी वैसा कराने का कारण बनता है, साथ ही उसे भी गुनहगार बनाता है, जो तलाक दी हुई स्त्री के साथ ब्याह करता है।

"यह है दूसरा आदेश।

"तीसरा आदेश यह है—पुराने 'धर्म-ग्रंथ' में आपको बताया गया था, "कसम न खाओ, किंतु परमात्मा के समक्ष अपनी प्रतिज्ञाओं पर स्थिर रहो।"

"लेकिन मैं कंहता हूँ कि आपको हरगिज कसम नहीं खानी चाहिए, लेकिन अगर आपसे किसी बारे में पूछा जाए तो 'हाँ' कहिए, बशर्ते कि वह 'हाँ' है, और 'न' कहिए, बशर्ते कि वह 'न' है। आपको किसी भी बात के लिए कसम नहीं खानी चाहिए। मनुष्य सर्वथा परमात्मा की शक्ति के अधीन है और वह पहले से उस कर्म के लिए वचन नहीं दे सकता, जिसके लिए उसकी प्रतिज्ञा उसे बाँधती है।

"यह है तीसरा आदेश।

"चौथा आदेश यह है—पुराने 'धर्म-ग्रंथ' में कहा गया था, "आँख के बदले आँख फोड़ दो और दाँत के बदले दाँत तोड़ दो।"

"लेकिन मैं कहता हूँ कि आपको बुराई के बदले बुराई नहीं करनी चाहिए और आँख के बदले आँख या दाँत के बदले दाँत नहीं तोड़ना चाहिए। अगर कोई आपके एक गाल पर चांटा मारे तो चांटे का जवाब चांटे से देने की बजाय यह बेहतर है कि उसमें सामने दूसरा गाल कर दो। अगर कोई आपसे आपका कुरता छीनना चाहता है तो बेहतर है कि आप उसके दुश्मन बनने और अपने भाई के साथ लड़ने की बजाय

उसे अपना कोट भी दे दें। आपको बुराई का सामना बुराई से नहीं करना चाहिए।

"यह है चौथा आदेश।

"पाँचवाँ आदेश यह है—आपके पुराने 'धर्म-ग्रंथ' में यह कहा गया था, "अपनी ही जाति के लोगों से प्रेम करो और दूसरी जातियों के लोगों से नफ़रत।"

"लेकिन मैं आपसे कहता हूँ कि आपको हर किसी के साथ प्रेम करना चाहिए। अगर मनुष्य अपने-आपको आपके शत्रु समझते हैं तब भी आपको उनसे प्रेम करना चाहिए और उनके कल्याण की कामना करनी चाहिए। सारे मनुष्य एक ही पिता के पुत्र हैं, सब भाई-भाई हैं, और इसलिए आपको हर-एक के साथ समान-भाव से प्रेम करना चाहिए।

"यह है पाँचवाँ और आखिरी आदेश।"

पारस्परिक प्रेम

और ईसा ने उन सबको, जो उनकी बातें सुन रहे थे, आगे बताया कि यदि वे उसके आदेशों का पालन करेंगे तो क्या होगा।

उन्होंने कहा, "यह न सोचिए, कि अगर आप लोगों के साथ गुस्सा नहीं करते, सबके साथ शांतिपूर्वक रहते हैं, पत्नी-व्रत पालन करते हैं, कसम नहीं खाते, जो आपको हानि पहुँचाते हैं उनसे अपनी रक्षा नहीं करते, जो कुछ आपसे पूछा जाता है, उसे सच्चे दिल से कह देते हैं, और अपने दुश्मनों से प्यार करते हैं और इस ढंग से जीवन चलाते हैं, तो आपकी ज़िंदगी वर्तमान की अपेक्षा अधिक मुश्किल और बुरी हो जाएगी। आपका जीवन वर्तमान की अपेक्षा बुरा नहीं होगा, बल्कि उससे बेहतर ही होगा। हमारे दैवी पिता ने हमें यह नियम इसलिए दिया है कि हम अपने जीवन को बुरा न बनाएँ, बल्कि इसलिए कि हमारा जीवन सच्चा जीवन हो।

"इस शिक्षा के अनुसार रहो, प्रभु-राज्य का उदय हो जाएगा और आपकी सब आवश्यकताएँ पूरी जाएगी।

"परमात्मा ने पंछियों और जंगली जानवरों के लिए नियम बना दिए हैं और जब वे उन नियमों के अनुसार रहते हैं तो उनका सिलसिला ठीक चलता है। आपका भी सिलसिला ठीक चलता रहेगा बशर्ते कि आप परमात्मा के नियम का पालन करें। मैंने जो कुछ कहा है, वह अपनी ओर से नहीं कहा, बल्कि यह परमात्मा का नियम ही बताया है, जो सब मनुष्यों के दिलों में अंकित है। अगर इस नियम से मनुष्यों का

कल्याण न होता तो परमात्मा ने उसे बनाया ही न होता।

"संक्षेप में, वह नियम यह है कि हमें परमात्मा और अपने पड़ोसी को अपनी जान की तरह प्यार करना चाहिए। जो कोई इस नियम का पालन करता है, वह दूसरों के साथ वही बरताव करता है, जो वह चाहता है कि वे लोग उसके साथ करें।

"इसलिए हर-कोई, जो मेरे इन शब्दों को सुनता और उन पर अमल करता है, उस मनुष्य के समान कर्म करता है जो अपना मकान एक चट्टान पर बनाता है। ऐसा मनुष्य न तो वर्षा से, न बाढ़ों से, और न तूफानों से डरता है, क्योंकि उसका मकान चट्टान पर बना हुआ है। लेकिन हर-कोई, जो मेरे शब्दों को सुनता है और उन पर अमल नहीं करता, उस विचारहीन मनुष्य के समान कर्म करता है, जो अपना मकान बालू पर बनाता है। ऐसा मकान वर्षा या तूफानों का मुकाबला नहीं कर सकेगा और गिरकर तहस-नहस हो जाएगा।"

जब महात्मा ईसा सब बातें कह चुके तो लोग उनके उपदेशों को सुनकर विचार में पड़ गए।

कर्म-मार्ग

इसके बाद ईसा ने लोगों को मिसालें दे-देकर प्रभु-राज्य के अर्थ समझाने शुरू किए।

उन्होंने जो पहली मिसाल दी वह इस प्रकार है—

"जब एक आदमी अपने खेत में बीज बोता है तो वह उसी की चिंता में नहीं डूब जाता, बल्कि वह रात को सोता है और सबेरे उठकर अपना कारबार करता है; वह कतई परेशान नहीं होता कि कैसे बीज फूटेंगे और बढ़ेंगे। समय पाकर बीच फूटते हैं और फूलते हैं, हरियाली दिखाई देती है, डंठल बनते हैं, बालें निकलती हैं और अनाज भर जाता है। और जब अनाज पक जाता है, तभी मालिक उसे काटने के लिए मजदूरों को वहाँ भेजता है।

"इसी तरह परमात्मा भी अपनी शक्ति से मनुष्यों में 'स्वर्ग-राज्य' की स्थापना नहीं करते, बल्कि लोगों पर छोड़ देते हैं कि वे स्वतः उसकी स्थापना करें।"

ईसा ने उन्हें एक दूसरी मिसाल यह समझाने के लिए दी कि जिनकी अंतरात्मा में 'स्वर्ग-राज्य' नहीं है, उन्हें परमात्मा अपने राज्य में शामिल नहीं करता। उन्हें वह इसी संसार में छोड़ देता है, जिससे वे अपने-आपको 'प्रभु-राज्य' में प्रविष्ट होने के योग्य बनाएँ।

उन्होंने कहा—

''स्वर्ग का राज्य' एक मछिहारे के समान है, जो अपना जाल समुद्र में फेंकता है और सब तरह की मछलियाँ पकड़ लेता है। उन्हें पकड़ लेने के बाद वह उन्हें छाँटता है। जिनकी उसे आवश्यकता होती है, उन्हें वह रख लेता है और जो उसके काम की नहीं होतीं उन्हें वह फिर-से समुद्र में फेंक देता है।''

इसी बात के लिए उन्होंने एक तीसरी मिसाल दी—

''एक किसान-मालिक ने अपने खेत में बड़ा अच्छा बीज बोया था, लेकिन जब चीजल उगने लगे तो उनके साथ-साथ घास भी उग आई। इस पर मजदूर आए और उन्होंने मालिक से कहा, क्या आपने खराब बीज बोया था? आपके खेत में तो बहुत-सी घास उग आई है। हमें आज्ञा दीजिए, हम जाकर उसे उखाड़ डालेंगे।' लेकिन मालिक ने जवाब दिया, 'नहीं, बेहतर तो यही है कि आप लोग न जाएँ, वरना घास को उखाड़ते हुए गेहूँ भी आप लोगों के पाँवों तले मसल जाएँगे। उन्हें साथ-साथ ही उगने दो और फसल-कटाई के समय कटाई करनेवालों से कह दूँगा कि गेहूँ तो जमा कर लें और घास को निकाल फेंकें।'

''इसी प्रकार परमात्मा भी लोगों को इस बात की इजाज़त नहीं देता कि वे दूसरों के जीवन में दखल दें। वह खुद भी दखल नहीं देता। केवल अपने निजी यत्नों से ही हर आदमी परमात्मा तक पहुँच सकता है।''

प्रभु-राज्य

इन मिसालों के अलावा, ईसा ने 'स्वर्ग के राज्य' के बारे में एक और मिसाल दी।

उन्होंने कहा—

''जब एक खेत में बीज बोए जाते हैं तो सब-के-सब एक से नहीं उगते। होता प्रायः इस प्रकार है—कुछ बीज रास्ते पर गिर जाते हैं और पंछी आकर उन्हें चुग जाते हैं। कुछ पथरीली धरती पर गिरते हैं और अगर्चे वे उगते तो हैं, लेकिन थोड़े ही समय के लिए उगते हैं, क्योंकि उनके आस-पास इतनी मिट्टी नहीं होती कि उसमें वह अपनी जड़ों को जमा लें और इसलिए उनके अंकुर जल्दी ही सूख जाते हैं। कुछ बीज कांटों पर गिरते हैं और कांटे उन्हें दबा लेते हैं। लेकिन कुछ ऐसे भी होते हैं, जो अच्छी ज़मीन पर गिरते हैं, पैदा होकर बड़े हो जाते हैं और एक-एक दाने से तीस या साठ दाने फलते हैं।

''यही दशा आदमियों की है। कुछ ऐसे हैं, जो अपने दिलों में 'स्वर्ग का राज्य'

—

प्राप्त नहीं करते, उन्हें बाहरी प्रलोभन आ घेरते हैं और जो बोया था उसे चुरा लेते हैं। ये वे बीज हैं जो रास्ते पर बोए गए थे। इसके बाद वे आदमी हैं, जो पहले तो खुशी-खुशी उपदेशों को स्वीकार करते हैं; लेकिन जब उनका अपमान होता है और उसके लिए उन्हें पीड़ा दी जाती है, तो वे उससे विमुख हो जाते हैं। ये वे बीज हैं, जो पथरीली ज़मीन पर बोए गए थे। इसके बाद वे लोग हैं, जो 'स्वर्ग के राज्य' के अर्थ समझते हैं, लेकिन उनके भीतर का संसारी मोह और संपत्ति का लोभ उन्हें दबा लेता है। ये वे बीज हैं जो कांटों में बोए गए थे। लेकिन वे बीज, जो अच्छी धरती पर बोए गए थे, वे हैं, जो 'स्वर्ग के राज्य' के अर्थ समझते हैं और उसे अपने दिलों में जगह देते हैं। ये लोग फूलते-फलते हैं—कुछ तो तीस-गुना और कुछ साठ-गुना और कुछ सौ-गुना।

"मतलब यह कि जिसे जो दिया गया था, उसने वह संभाल रखा है, तो उसे और भी ज्यादा मिलेगा, लेकिन उस व्यक्ति से सब-कुछ छीन लिया जाएगा, जिसने दिए हुए को संभालकर नहीं रखा। इसलिए 'स्वर्ग के राज्य' में प्रवेश करने के लिए अपनी सारी शक्ति के साथ यत्न करो। अगर आप उसमें प्रविष्ट हो सकते हैं, तो और किसी भी बात के लिए ईर्ष्या मत करो।

"उस आदमी की तरह काम करो, जिसे, जब यह पता चल गया कि अमुक खेत में बड़ा भारी खजाना दबा पड़ा है, तो उसने जो कुछ उसके पास था सब बेचकर उस खेत को खरीद लिया और अमीर बन गया। आपको भी वैसा ही करना चाहिए।

"सदा याद रखो कि जिस प्रकार एक छोटा-सा बीज बढ़कर एक बड़ा पेड़ हो जाता है, उसी तरह 'स्वर्ग के राज्य' के लिए थोड़े-से यत्न का बहुत-बड़ा परिणाम मिलता है।

"हर-कोई अपने निजी यत्न से 'प्रभु-राज्य' प्राप्त कर सकता है, क्योंकि 'प्रभु-राज्य' आपके भीतर विद्यमान है।"

आत्मिक बल

इन शब्दों को सुनने के बाद निकोडमस नाम का एक फरीसी ईसा के पास आया और उसने पूछा कि 'प्रभु-राज्य' हमारे भीतर है, यह कैसे समझ में आ सकता है? ईसा ने कहा, "प्रभु-राज्य हमारे भीतर है, इसका अर्थ यह है कि उसमें प्रविष्ट होने के लिए हमें फिर से जन्म लेना होगा।"

तब निकोडमस ने पूछा, "मनुष्य फिर से कैसे पैदा हो सकता है? क्या मनुष्य

अपनी माता के गर्भ में लौट सकता है और फिर से जन्म ले सकता है ?"

ईसा ने जवाब में कहा, "फिर से जन्म लेने का यह अर्थ नहीं कि जिस प्रकार एक हाड़-मांस का बच्चा अपनी माँ के गर्भ से जन्म लेता है, उसी तरह जन्म लिया जाए; बल्कि इसका मतलब यह है कि उस शक्ति का उदय हो जाए। शक्ति के उदय होने का अर्थ यह समझ लेना है कि मनुष्य में परमात्मा की शक्ति का वास है। जिस प्रकार प्रत्येक मनुष्य अपनी माता के गर्भ से जन्म लेता है, उसी प्रकार परमात्मा की शक्ति से भी जन्म लेता है। जो कुछ शरीर में से जन्मता है, वह शरीर का ही अंश है। उसे यातना अनुभव होती है और मरता भी है। जो कुछ शक्ति में से जन्मता है, वह शक्ति का अंश होता है, और वह जीवित रहता है। न तो उसे यातना हो सकती है और न वह मरता है।

"परमात्मा ने मनुष्यों में अपनी शक्ति इसलिए उत्पन्न नहीं की कि वे पीड़ित हों और मर जाएं, बल्कि इसलिए कि उनका जीवन सुखद और चिरस्थायी हो। प्रत्येक मनुष्य उस जीवन को प्राप्त कर सकता है। ऐसा जीवन 'स्वर्ग का राज्य' है।

"इसलिए प्रभु-राज्य का यह अर्थ नहीं समझना चाहिए कि किसी समय-विशेष और स्थान-विशेष में हर-किसी के लिए 'प्रभु-राज्य' का उदय होगा; बल्कि यह कि यदि लोग अपने अंदर की परमात्मा की शक्ति को जान लेंगे और उसके अनुसार आचरण करेंगे, तभी वे 'स्वर्ग के राज्य' में प्रविष्ट होंगे और उन्हें यातना अथवा मृत्यु सहन नहीं करनी होगी। लेकिन अगर लोग अपने अंदर की शक्ति का अनुभव नहीं करते और अपने शरीरों के लिए ही जीते हैं, तब वे यातना सहेंगे और मरेंगे।"

सबसे प्रेम करो

अधिकाधिक लोग ईसा के अनुयायी बनते गए और उनके उपदेशों को सुनने लगे, लेकिन फरीसियों को यह पसंद नहीं था। उन्होंने यह सोचना शुरू किया कि लोगों की नज़रों में ईसा को कैसे दोषी ठहराया जा सकता है ?

एक शनिवार को ईसा और उनके शिष्य खेतों में से होकर निकल रहे थे। शिष्यों ने अनाज की बालियाँ तोड़ लीं, उन्हें दोनों हाथों से मसला और अनाज के दाने खा लिए। यहूदियों की शिक्षा के अनुसार परमात्मा ने मूसा के साथ समझौता किया था कि लोग शनिवार के दिन कोई काम नहीं करेंगे और केवल परमात्मा की ही पूजा किया करेंगे। फरीसियों ने यह देखकर कि ईसा के शिष्यों ने शनिवार के दिन अनाज

की बालियों को मसला है, उन्हें रोका और कहा—

"आपको शनिवार के दिन ऐसा नहीं करना चाहिए था। शनिवार के दिन तो कोई काम नहीं करना चाहिए, लेकिन आप लोग अनाज निकाल रहे हैं। नियम में कहा गया है कि जो लोग शनिवार को काम करेंगे उन्हें मार डाला जाएगा।"

ईसा ने यह सुना और वे बोले, "नबी ने कहा था कि परमात्मा तो प्रेम चाहते हैं, बलि नहीं। अगर आप लोगों ने उन शब्दों को समझ लिया है तो मेरे शिष्यों की निंदा नहीं करनी चाहिए। शनिवारों की अपेक्षा मनुष्य अधिक महत्त्वपूर्ण है।" फरीसियों से इसका कोई उत्तर न बन पड़ा और वे चुप हो गए।

एक और दिन की बात है। कुछ फरीसियों ने ईसा को मती के घर में दाखिल होते देखा। मती तहसीलदार था। ईसा ने उसके घर के लोगों के साथ बैठकर भोजन किया। जिन लोगों के साथ उन्होंने भोजन किया था, फरीसी उन्हें गुनहगार समझते थे। इस कारण उन्होंने ईसा पर यह दोष लगाया कि गुनहगारों के साथ भोजन करना नियम के खिलाफ है।

लेकिन ईसा ने कहा, "मैं उन लोगों को सत्य का उपदेश देता हूँ, जो उसके इच्छुक हैं। आप लोग अपने को ईमानदार समझते हैं और सोचते हैं कि आपको सत्य का ज्ञान है, इसलिए आपके सीखने को और कुछ भी बाकी नहीं रहा। इसका मतलब यह है कि जो लोग ईमानदार नहीं हैं, केवल उन्हीं को शिक्षा दी जा सकती है और अगर हम उन लोगों के साथ हेल-मेल नहीं करेंगे तो वे सच्चाई सीखेंगे कैसे?"

इस पर जब फरीसियों से इसका कोई जवाब न बन पड़ा तो उन्होंने ईसा के शिष्यों को बिना हाथ धोए खाने के लिए भला-बुरा कहना शुरू कर दिया। वे स्वतः अपने हाथ और अपनी तश्तरियाँ धोने की निजी परंपरा का बड़ी कड़ाई के साथ पालन करते थे और बाज़ार से आई किसी भी चीज को धोए बिना नहीं खाते थे।

इस बारे में ईसा ने उत्तर दिया, "आप लोग हमें इसलिए भला-बुरा कहते हैं कि हम खाने से पहले हाथ धोने की परंपरा को नहीं मानते, लेकिन यह चीज ऐसी नहीं है जो मनुष्य के शरीर में प्रविष्ट हो जाए और उसे अपवित्र कर दे। मनुष्य की आत्मा में से निकलनेवाली और उसे अपवित्र बनानेवाली बुराइयाँ तो हैं—व्यभिचार, हत्या, चोरी, तृष्णा, क्रोध, बेईमानी, निर्लज्जता, दुश्मनी, निंदा, अहंकार वग़ैरा। ये सब बुराइयाँ मनुष्य की आत्मा से निकलती हैं और केवल बुराई से ही मनुष्य अपवित्र हो सकता है। आपकी आत्मा में अपने भाइयों के लिए प्रेम होना चाहिए और तब प्रत्येक वस्तु पवित्र होगी।"

प्रार्थना-मार्ग

एक बार ईसा अपने शिष्यों से जुदा हो गए और प्रार्थना करने लगे। जब उन्होंने प्रार्थना कर ली तो शिष्य उनके पास गए और बोले, ''स्वामी, हमें प्रार्थना करने की सीख दीजिए।''

ईसा ने उनसे कहा—

''सबसे पहली बात तो यह है, आप लोगों को वैसे प्रार्थना नहीं करनी चाहिए जैसे कि अक्सर की जाती है, यानी कि लोग आपको प्रार्थना करते हुए देखें और उसके लिए आपकी तारीफ़ करें। अगर यह इस ढंग से की जाती है तो यह मनुष्यों के लिए की जाती है, और इसके बदले मनुष्य ही इनाम देते हैं। आत्मा को इस तरह की प्रार्थनाओं से कोई लाभ नहीं होता। लेकिन अगर आप प्रार्थना करना चाहते हैं तो ऐसे स्थानों पर जाइए जहाँ आपको कोई न देखे और वहाँ अपने प्रभु के चरणों में प्रार्थना कीजिए। प्रभु आपको आपकी आत्मा की जो आवश्यकता होगी, प्रदान करेंगे।

''जब आप प्रार्थना करें तो बहुत-सी बातें न कहिए। परमात्मा को आपकी आवश्यकताओं का ज्ञान है, यहाँ तक कि अगर आप कुछ भी न माँगे, तो भी वह आपकी आत्मा की सब आवश्यकताओं की पूरी करेंगे।

''सबसे पहले आपको यह प्रार्थना करनी चाहिए कि हमारे अंदर परमात्मा की जो शक्ति है, वह पवित्र हो; अर्थात् हमारी आत्मा में 'स्वर्ग के राज्य' का उदय हो; हम अपनी इच्छा के अनुसार नहीं वरन परमात्मा की इच्छानुसार जीवन बितावें; हम अधिक के लिए इच्छा न करें बल्कि केवल अपने प्रतिदिन के भोजन की इच्छा रखें; परमात्मा इस बात में हमारी सहायता करें कि हम अपने भाइयों के गुनाहों को माफ करें और प्रलोभनों तथा बुराइयों से बचने में वे हमारी सहायता करें।

''आप लोगों की प्रार्थना यह होनी चाहिए—

''हे प्रभु, तेरा वास स्वर्ग में है। तेरा नाम पावन हो। तेरे राज्य का उदय हो। स्वर्ग के समान ही धरती पर भी तेरी इच्छा पूर्ण हो। प्रति दिन के समान आज भी हमें रोटी दे। हमें हमारे गुनाहों के लिए माफ कर, जैसे कि हम अपने प्रति गुनाह करनेवालों को माफ करते हैं। हमें प्रलोभन तथा बुराई से बचा।

''यह है प्रार्थना करने का ढंग; लेकिन अगर आप प्रार्थना करना चाहते हैं तो पहले यह विचार करो कि आपके दिल में किसी के प्रति क्रोध तो नहीं है। यदि आपको स्मरण हो कि क्रोध है तो पहले जाकर उसके साथ सुलह करो, अथवा अगर उस आदमी को पा ना सकें तो आपके दिल में उसके प्रति जो क्रोध है, उसे निकाल दें और उसके बाद प्रार्थना शुरू करें। तभी आपकी प्रार्थना आपके लिए उपयोगी होगी।''

पश्चात्ताप से पवित्रता

एक बार की बात है कि ईसा एक फरीसी के यहाँ भोजन करने गए। जब वह वहाँ थे तो शहर की एक औरत भीतर आई। वह एक बदनाम औरत थी। उसने सुना था कि ईसा फरीसी के मकान में हैं और वह वहाँ जा पहुँची। उसके पास एक इत्र की बोतल थी। वह ईसा के चरणों में जा झुकी और रोई। उसके आँसू ईसा के पाँवों पर गिरे। उसने उन्हें अपने बालों से साफ कर दिया और उन पर अपनी बोतल में से इत्र उड़ेल दिया।

यह देखकर फरीसी परेशान-सा हुआ और उसने सोचा कि अगर ईसा वस्तुतः नबी हैं तो उन्हें यह मालूम हो जाना चाहिए था कि यह औरत बदनाम है और गुनहगार है इसलिए उसे अपने को छूने की आज्ञा नहीं देनी चाहिए थी।

फरीसी के विचारों को ईसा ने भाँप लिया और उसे संबोधित करके उन्होंने कहा—

''क्या मैं आपको बताऊँ कि मैं क्या सोच रहा हूँ ?''

''हाँ, बताइए,'' फरीसी ने कहा

ईसा ने कहा—

''एक अमीर आदमी के दो व्यक्ति ऋणी थे। एक पचास पौंड का कर्जदार था, दूसरा पाँच पौंड का। दोनों में से किसी के पास भी देने को कुछ नहीं था। उस अमीर आदमी ने उन दोनों को माफ़ कर दिया। अब आप बताइए कि दोनों में से उस अमीर आदमी को कौन अधिक प्यार करेगा और मान देगा ?''

फरीसी ने कहा—

''निश्चय ही जो ज्यादा कर्ज़दार था।''

इस पर ईसा ने उस औरत की ओर संकेत करते हुए कहा—

''यही दशा आपकी और इस औरत की है। आप अपने को सही समझते हैं, और इसलिए परमात्मा के प्रति बहुत देनदार नहीं। यह औरत अपने-आपको गुनहगार समझती है, इसलिए परमात्मा के प्रति इसकी देनदारी बहुत है। जब मैं आपके मकान में आया था तो आपने मुझे पाँव धोने के लिए किसी तरह का पानी नहीं दिया था; लेकिन इस औरत ने उन्हें आँसुओं से धोया और उन्हें अपने बालों से सुखाया। आपने मुझे चूमा नहीं, लेकिन उसने मेरे पाँवों को चूमा। आपने सिर पर लगाने के लिए किसी तरह का तेल नहीं दिया, किंतु इसने मेरे पाँवों में महँगा इत्र उड़ेला। वह अपने-आपको गुनहगार समझती है और इसलिए लोगों से प्यार करना उसके लिए आसान है। लेकिन आप अपने-आपको सही समझते हैं और इसलिए

लोगों के साथ प्रेम करना आपके लिए कठिन है। लेकिन जो बहुत प्रेम करता है, उसके सब गुनाह माफ हो जाते हैं।"

जीवन-तत्त्व

एक दूसरे दिन की बात है। ईसा समरिया से होकर जा रहे थे। एक कुएँ पर बैठ गए। इस बीच उनके शिष्य नगर में रोटी खरीदने चले गए। एक औरत गाँव से पानी लेने के लिए वहाँ आई और ईसा ने उसे पानी पिलाने को कहा। उस औरत ने उनसे कहा, "क्यों पिलाऊँ, तुम यहूदी लोगों का हम समरियों से कोई वास्ता नहीं। फिर तुम मुझे पानी पिलाने के लिए कैसे कह सकते हो?" ईसा ने उत्तर दिया, "अगर तुम मुझे और जो मैं उपदेश करता हूँ, उसे जानतीं, तो तुम ऐसा कभी न कहतीं, बल्कि मुझे पानी पिलातीं और मैं तुम्हें जीवन का तत्त्व बतलाता।"

वह औरत ईसा की बात को नहीं समझी और बोली, "तुम्हें यहाँ दूसरी जगह कहाँ पानी मिलेगा? यहाँ हमारे पिता जैकब के इस कुएँ के पानी के सिवाय कहीं पानी नहीं है।"

ईसा ने उससे कहा, "जो कोई इस कुएँ का पानी पिएगा, वह दोबारा भी पीना चाहेगा, लेकिन जो-कोई मेरे दिए पानी को पी लेता है, वह हमेशा के लिए संतुष्ट हो जाएगा और वह उसमें से दूसरों को भी पिलाएगा।"

उस औरत ने समझा कि ईसा दैवी बातों की चर्चा कर रहे हैं। वह बोली, "लेकिन मैं तो समरियावासी हूँ तुम यहूदी हो। इसलिए तुम मुझे शिक्षा नहीं दे सकते। हमारे लोग इस पहाड़ पर प्रार्थना करते हैं, और तुम यहूदियों का कहना है कि परमात्मा का घर केवल यरूसलम में है।"

ईसा ने कहा, "ऐसा कहा ज़रूर जाता था, लेकिन अब वक्त आ गया है कि मनुष्य परमात्मा की पूजा इस पहाड़ पर या यरूसलम में नहीं करेंगे, न इस या उस जगह पर, बल्कि हर कोई उस परमात्मा की पूजा शक्ति और सत्य में करेगा। परमात्मा एक शक्ति है और शक्ति और सत्य में ही उसकी पूजा करनी होगी।"

ईसा ने उस औरत से जो कहा उसे वह समझी नहीं, और उसने उत्तर दिया, "मैंने सुना है कि परमात्मा का दूत आएगा और तब हर बात साफ हो जाएगी।'

ईसा ने कहा, "भली औरत, जो मैंने बताया है उसे समझने की कोशिश कर और इससे ज्यादा की इंतज़ार मत कर।"

अमल करो

ईसा ने अनेक नगरों और ग्रामों में उपदेश किए, और उसने अपने शिष्यों को उन जगहों में भेजा, जहाँ उनकी जाने की इच्छा थी। उन्होंने उनसे कहा—

"बहुत से लोग वास्तविक जीवन के वरदान को नहीं जानते। मुझे उन सब पर दया आती है और मेरी इच्छा है कि जो मैं जानता हूँ, उन्हें बतलाऊँ। जिस प्रकार एक किसान अपने खेत का अकेला ही प्रबंध नहीं कर सकता, बल्कि फसल-कटाई के लिए मज़दूरों को बुलाता है, इसी तरह मैं भी बुलाता हूँ। भिन्न-भिन्न नगरों में जाओ और प्रभु-राज्य के बारे में जो उपदेश हैं उनकी सब जगह चर्चा करो। लोगों को प्रभु-राज्य के आदेश बतलाओ और हर बात में उन आदेशों को खुद भी पालन करो।

"मैं तुम्हें भेड़ियों के बीच एक भेड़ के समान भेज रहा हूँ। साँपों के समान अक्लमंद और फाख्ता की तरह पवित्र बनो। सबसे पहले अपना निजी सामान कुछ भी न रखो, अपने साथ कुछ भी न लो—न थैला, न रोटी, न धन। केवल तन पर कपड़े और पाँव में जूते हों। लोगों के बीच भेदभाव मत करो। अपने ठहरने के लिए किसी मकान को चुनो नहीं, बल्कि जो मकान पहले पड़े उसी में ठहर जाओ। जब आप उसमें दाख़िल हों, तो उसमें रहनेवालों को नमस्कार करो। यदि वे आपका स्वागत करें तो भीतर जाओ, नहीं तो अगला मकान देखो।

"लोग आपकी बातों को सुनकर आपसे नफरत करेंगे और हमला करेंगे। वे एक से दूसरी जगह आपको खदेड़ेंगे, लेकिन निराश होने जैसी कोई बात नहीं। जब आपको एक गाँव से खदेड़ दिया जाए तो दूसरे में जाओ। वहाँ से भी निकाल दें तो तीसरे में जाओ। जिस प्रकार भेड़िए भेड़ का पीछा करते हैं, आपका पीछा किया जाएगा। आपको पीटा जाएगा और आपको शासकों के सामने पेश किया जाएगा ताकि आप अपने-आपको न्यायपूर्ण सिद्ध कर सकें। जब आप न्यायाधीशों और शासकों के सामने पेश किए जाएँ, तो जो कुछ आप कहने जा रहे हों, उसके बारे में सोचो नहीं, बल्कि आपको मालूम होना चाहिए कि आपके भीतर परमात्मा की शक्ति वास करती है और जो आवश्यक होगा वही वह कहेगा।

"लोग आपके तन को मार सकते हैं; लेकिन आपकी आत्मा का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। इसलिए मनुष्यों से डरो नहीं। अगर आप परमात्मा की इच्छा को पूरा नहीं करते तो अपने तन के साथ अपनी आत्मा की हत्या करने से ही डरो। इसी से आपको डरना चाहिए। परमात्मा की इच्छा के बिना चींटी भी नहीं मरती। उसकी इच्छा के बिना आपके सिर का एक बाल भी बांका नहीं हो सकता, और अगर आप उसकी रखवाली में हैं, तो आपको डर किसका है?"

आत्मा अमर है

जिन शिष्यों को ईसा ने भेजा था वह तो एक ओर चले गए और ईसा दूसरे शिष्यों के साथ ग्रामों और बस्तियों से निकलते हुए दूसरी ओर चले गए। एक बार वे एक गाँव में पहुँचे। वहाँ मार्था नाम की एक स्त्री ने उन्हें अपने घर पर आमंत्रित किया। वे उसके घर में गए और भीतर जाकर उन्होंने उपदेश करना शुरू कर दिया। मार्था की बहन मेरी उनके चरणों में बैठकर उपदेश सुनने लगी। इसी बीच मार्था भोजन की तैयारी करने में व्यस्त हो गई।

मार्था ने देखा कि उसकी बहन ईसा के चरणों में बैठी उनके उपदेशों को सुन रही है तो वह ईसा के पास आई और बोली, "मैं अकेली ही सारा काम कर रही हूँ और मेरी बहन बैठी-बैठी आपके उपदेश सुन रही है! उससे कहिए कि वह उठे और मेरे साथ काम करे।"

यह सुनकर ईसा ने कहा—

"मार्था, तुम बड़ी व्यस्त हो और कितनी ही बातों की तुम्हें चिंता है, लेकिन केवल एक ही चीज़ तो आवश्यक है। मेरी ने उसी एक आवश्यक वस्तु को चुन लिया है। उसे कोई भी उससे नहीं ले सकता। सच्चे जीवन के लिए आत्मा के भोजन की दरकार होती है, शरीर के भोजन की नहीं।"

और इसके बारे में उन्होंने एक मिसाल दी—

"एक बार एक आदमी के खेत में बहुत अच्छी फसल हुई। उसने सोचा, अब तो मैं अपने खलिहानों को फिर से बनाऊँगा और वे पहलों से बड़े भी होंगे। अपना सारा सामान जमा करके मैं उनमें रखूँगा। मैं अपनी आत्मा से कहूँगा, 'ओ मेरी आत्मा, अब तो मेरे यहाँ हर वस्तु की बहुतायत है। सुख से रहो, खाओ, पियो और मौज की ज़िंदगी बसर करो।" लेकिन परमात्मा ने उससे कहा, "अरे मूर्ख, आज ही रात को तुम्हारी आत्मा तुमसे छीन ली जाएगी और जो कुछ तुमने जमा किया है दूसरों का हो जाएगा।

"यही दशा उन सबकी होती है, जो शारीरिक जीवन की तैयारियाँ करते हैं और आत्मा के लिए नहीं जीते।

"जो अपनी निजी इच्छा को तजकर हमेशा परमात्मा की इच्छानुसार चलता है, उसी का जीवन वास्तविक जीवन है; लेकिन जो अपने शारीरिक जीवन की चिंता करता है, वह अपने वास्तविक जीवन को नष्ट कर लेता है।"

आत्मिक जीवन

ईसा ने एक बार कुछ लोगों को चर्चा करते सुना कि किस प्रकार पाइलेटों ने कुछ गलीलियों को मार डाला और साथ ही किस प्रकार एक मीनार गिरी और उससे अठारह आदमी कुचल गए। तब ईसा ने लोगों से कहा—

"क्या आप यह समझते हैं कि वे आदमी किसी बात के लिए खासतौर पर दोषी थे? नहीं, हम सब जानते हैं कि वे हम लोगों की निस्बत कोई बुरे नहीं थे। जो कुछ उनके साथ बीती वह किसी भी क्षण हमारे साथ बीत सकती है। हम सब आज अथवा कल ही मर सकते हैं। हम मौत से बच नहीं सकते, इसलिए अपने सांसारिक जीवन के लिए हमें चिंता करने की आवश्यकता नहीं। हम मानते हैं कि जल्दी ही इसका अंत हो जाएगा। हमें उसकी चिंता करनी चाहिए कि जो मरता नहीं, और वह है आत्मिक जीवन।"

उन्होंने इस बात को एक मिसाल देकर समझाया—

"एक मालिक के बाग में सेब का एक पेड़ था, जिस पर कभी फूल नहीं लगे थे। उसने अपने माली से कहा, "अब की मैं तीन बरस बाद आया हूँ। आशा थी कि यह पेड़ फल गया होगा, लेकिन आश्चर्य है कि अभी तक इस पर फल नहीं आए। इसे तो अब काट ही देना चाहिए, क्योंकि बेकार इसने जगह घेर रखी है।' लेकिन माली ने कहा, 'मालिक, हमें कुछ दिन और प्रतीक्षा कर लेनी चाहिए। मैं इसके चारों ओर गड्ढा खोदकर उसमें खाद डालूँगा। शायद अगली गरमियों में फल जाए। अगर अगले बरस भी फल नहीं देगा तो इसे काट दिया जाएगा।

"यही हालत हमारी है। जब हम केवल तन में ही रहते हैं और आत्मिक शक्ति को फलने नहीं देते तो हमारा स्वामी हमें काटता नहीं, हमें मृत्यु का ग्रास नहीं बनाता; क्योंकि वह हमसे फल, अर्थात् आत्मिक जीवन की आशा करता है। लेकन यदि हम फलते नहीं तो हम विनाश से बच नहीं सकते। इस बात को समझने के लिए कोई अक्लमंदी की ज़रूरत नहीं। हर कोई स्वत: ही इसका अनुभव कर सकता है; क्योंकि हम न केवल घरेलू मामलों के बारे में, बल्कि कुदरत की बातों के विषय में भी तर्क करना जानते हैं और अनुमान कर सकते हैं कि क्या होगा। जब हवा पश्चिम से चलती है, हम कहते हैं कि वर्षा होगी; जब दक्षिणी हवा चलती है तो हम कहते हैं कि मौसम अच्छा होगा, और यही होता है। यह कितने आश्चर्य की बात है कि हम मौसम को तो पहले से ही बता सकते हैं, लेकिन हम पहले से यह नहीं कह सकते कि हम सबको कब मरना होगा? हमें अपने नाशवान सांसारिक जीवन की नहीं, बल्कि अमर आत्मिक-जीवन की रक्षा करनी होगी।"

कर्म ही प्रधान है

एक और अवसर पर ईसा ने एक मिसाल देकर लोगों को समझाया कि मनुष्य का जीवन कैसा है। उन्होंने कहा—

''एक अमीर आदमी था। एक बार उसे घर से बाहर जाना पड़ा। रवाना होने से पहले उसने अपने दोस्तों को बुलाया और उन्हें दस पौंड चाँदी दी। हर एक को एक-एक पौंड देकर उसने कहा, ''जितने दिन मैं बाहर रहूँ तुममें से हर एक को मेरी दी हुई चाँदी से काम करते रहना चाहिए।' इतना कहकर वह अपनी यात्रा पर चल पड़ा। जब वह चला गया तो दासों को आज़ादी मिल गई। वे मनमानी करते रहे। लेकिन जब मालिक लौटकर आया तो उसने दासों को बुलाया और प्रत्येक से पूछा कि उसने चाँदी से क्या-क्या काम किया है। पहला आया और बोला, 'आपकी एक पौंड चाँदी से मैंने दस पौंड चाँदी की कमाई की है।' मालिक ने उससे कहा, 'भलेमानस, तुमने बहुत अच्छा काम किया। तुमने एक छोटी-सी वस्तु के लिए ईमानदारी प्रकट की है, इसलिए अब मैं तुम्हें बड़ी वस्तुओं के प्रबंध की ज़िम्मेदारी सौंपूँगा। अब से तुम भी मेरे ही समान हो और मेरी सारी संपत्ति के भागीदार हो।'

''दूसरा दास आया और बोला, 'मालिक, आपकी एक पौंड चाँदी से मैंने पाँच चाँदी कमाई है।' मालिक ने उससे कहा, ''तुमने बहुत ठीक किया है। तुम भी मेरी ही तरह मेरी सारी जायदाद के भागीदार हो।'

''इसके बाद तीसरा दास आया और बोला, 'मालिक, यह लीजिए अपनी एक पौंड चाँदी। मैंने एक रूमाल में लपेटकर इसे संभालकर रखा था, क्योंकि मैं आपको जानता हूँ कि आप बहुत ही सख्त आदमी हैं। जहाँ आप कुछ भी रखते नहीं, वहाँ से आप लेते हैं, और जहाँ आप कुछ बोते नहीं वहाँ से आप काटते हैं, तो मुझे तो आपका बहुत ही डर था।' मालिक ने कहा, 'अरे मूरखचंद, मैं तुम्हारे ही शब्दों से तुम्हारा न्याय करूँगा। तुम कहते हो कि मेरे डर के कारण तुमने मेरी चाँदी को रख छोड़ा और उसका उपयोग नहीं किया। अगर तुम यह जानते थे कि मैं बड़ा सख्त आदमी हूँ और वहाँ से भी लेता हूँ जहाँ मैंने कुछ रखा नहीं तो फिर तुमने मेरे हुक्म के अनुसार क्यों नहीं किया? अगर तुमने मेरी चाँदी का उपयोग किया होता तो मेरी संपत्ति की वृद्धि होती और तुमने मेरे कहे हुए को पूरा किया होता। लेकिन अब तो तुमने वही काम नहीं किया, जिसके लिए मैंने तुम्हें चाँदी दी थी, इसलिए वह तुम्हारे पास नहीं रहेगी।'

''मालिक ने उन्हें आज्ञा दी कि जिसने चाँदी का उपयोग नहीं किया, उससे चाँदी ले ली जाए और उसने वह चाँदी उन लोगों को दे दी, जिन्होंने उसका बढ़िया

उपयोग किया था। इस पर नौकरों ने मालिक से कहा, ''मालिक, उनके पास तो पहले ही बहुत है।' लेकिन मालिक ने कहा, 'जिन्होंने उससे बहुत कमाई की है, उन्हीं को दे दो, क्योंकि जो दिए हुए का उपयोग करते हैं, उन्हें अधिक मिलेगा। जो उसका उपयोग नहीं करते, उनसे प्रत्येक वस्तु छीन ली जाएगी।'

''यही अवस्था मनुष्य-जीवन की है,'' ईसा ने कहा। ''अमीर मालिक परमात्मा है। मनुष्य उसके दास हैं। मनुष्य में परमात्मा की जो शक्ति है, वह चाँदी। जिस तरह मालिक ने खुद अपनी चाँदी से कोई काम नहीं लिया और उसने हर एक को सौंपी हुई चाँदी से काम करने का आदेश किया, इसी तरह परमात्मा ने मनुष्यों को अपनी शक्ति प्रदान की है और आदेश किया है कि वे अपने भीतर उसकी वृद्धि करें और जो कुछ उन्हें दिया गया है उसका उपयोग करें। अक्लमंद आदमी समझते हैं कि आत्मिक-जीवन उन्हें परमात्मा की इच्छा पूरी करने के लिए दिया गया है और वे अपने अंदर आत्मिक-जीवन की वृद्धि करते हैं और परमात्मा की शक्ति के भागीदार बन जाते हैं। लेकिन, मूर्ख दास के समान, बुद्धिहीन लोग अपने शारीरिक-जीवन के नाश से डरते हैं और परमात्मा की इच्छानुसार नहीं बल्कि अपनी ही मर्जी से काम करते हैं। इसलिए वे सच्चे जीवन को खो बैठते हैं।

''ऐसे लोग जीवन-शक्ति को नष्ट कर लेते हैं, जो सबसे ज्यादा कीमती है। जो कोई आत्मिक-शक्ति की बजाय शारीरिक-जीवन को असली जीवन समझता है, उससे बढ़कर उसकी कोई भूल नहीं हो सकती। हर-किसी को जीवन-शक्ति के साथ एकाकार हो जाना चाहिए। जो उसके साथ एकाकार नहीं होता, वह उसके विरुद्ध है। हर-किसी को जीवन-शक्ति का अनुपालन करना चाहिए, निजी शरीर का नहीं।''

विकारों से बचो

एक दिन ईसा के पास कुछ बच्चे आए। उनके शिष्यों ने उन्हें भगाना शुरू कर दिया, लेकिन ईसा ने यह देखा तो बोले—

''तुम्हें बच्चों को वापस नहीं लौटाना चाहिए। बच्चों को भगाना नहीं चाहिए, बल्कि हमें उनसे सीखना चाहिए; क्योंकि वे वयस्क लोगों की अपेक्षा प्रभु-राज्य के अधिक निकट हैं। बच्चे बुरी-बुरी गालियों का प्रयोग नहीं करते, वे ईर्ष्या नहीं करते, व्यभिचार नहीं करते, कसमें नहीं खाते, किसी के साथ मुकदमेबाजी नहीं करते, और अपनी निजी जाति और दूसरी जातियों में किसी तरह का भेद-भाव भी

नहीं करते। बड़े लोगों की निबस्त बच्चे 'स्वर्ग के राज्य' के अधिक निकट हैं। किसी को भी बच्चों को नहीं खदेड़ना चाहिए, बल्कि इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे प्रलोभन में न फँसें।

''प्रलोभन कल्याण और अच्छाई का जामा पहनकर मनुष्यों को बहुत ही बुरे-बुरे काम करने के कारण बनकर उन्हें नष्ट कर देते हैं। यदि मनुष्य प्रलोभन में फँसता है तो वह अपनी शरीर और अपनी आत्मा दोनों का ही नाश करता है। इसलिए प्रलोभन में फँसने की बजाय शारीरिक यातना सहन करना बेहतर है। जिस प्रकार एक लोमड़ी अपने पंजे को जाल में फँसा लेने पर छुटकारे के लिए उसे नोचती है, इसी तरह हर मनुष्य के लिए यह कहीं बेहतर है कि वह प्रलोभनों के आगे झुकने की बजाय अपने शरीर की यातना को सहन करे। बुराई का आदी बनने और उसे निरंतर बढ़ने देने के बजाय न केवल एक हाथ या एक पाँव को ही, बल्कि समूचे शरीर तक को मार डालना बेहतर है। प्रलोभनों से संसार में दुख उत्पन्न होते हैं। दुनिया में सारी बुराइयों की जड़ प्रलोभन है।''

सबसे बुरा क्रोध

ईसा ने यह भी कहा कि सब प्रलोभनों में क्रोध सबसे बुरा है।

''एक मनुष्य अपने भाई से उसके गुनाहों के लिए क्रोध करता है और सोचता है कि क्रोध करने से वह अपने भाई को उसके गुनाहों से मुक्त कर सकता है। लेकिन वह भूल जाता है कि हममें से एक भी ऐसा नहीं जो अपने भाई का न्याय कर सके, क्योंकि हममें से हर एक गुनाहों से भरा हुआ है और अपने भाई को ठीक करने से पहले हमें अपने-आपको ठीक करना होगा—अन्यथा हम अपने भाई की आँखों के एक छोटे-से तिल को तो देख लेंगे और अपनी आँखों के ताड़ की ओर ध्यान नहीं देंगे। इसी तरह अगर आपका यह विचार है कि आपके भाई ने बुरा काम किया है तो उसके साथ अकेले में बात कर सकने के लिए कोई समय और स्थान निश्चित करो और उसके विरुद्ध जो कुछ आपके मन में है, उसे प्यार से बताओ। अगर वह आपका दुश्मन होने की बजाय आपकी बातों पर ध्यान देता है तो वह आपका मित्र बन जाएगा। लेकिन अगर वह आपकी बातों पर ध्यान नहीं देता, तो उसके लिए दुख प्रकट करो और उसे अकेला छोड़ दो।''

तब एक शिष्य ने पूछा, ''लेकिन अगर वह मेरी बात नहीं सुनता और मेरा अपमान करता है तो भी क्या मुझे उसे माफ कर देना चाहिए? अगर वह बार-बार

मेरा अपमान करता है, तो क्या इतने पर भी मुझे उसे माफ कर देना चाहिए?''

ईसा ने उत्तर दिया, ''हमें न केवल बार-बार, बल्कि हमेशा उसे माफ कर देना चाहिए; क्योंकि जिस तरह हमारे पश्चाताप करने पर परमात्मा हमें हमारे सब गुनाहों के लिए माफ कर देता है, उसी तरह हमें भी अपने भाइयों को हमेशा माफ करना चाहिए।''

सम-भाव

इस बात को स्पष्ट करने के लिए ईसा ने उन्हें यह मिसाल दी—

''एक अमीर आदमी ने अपने कर्ज़दारों के साथ हिसाब करना शुरू किया। एक कर्जदार को उसके सामने पेश किया गया, जो एक हजार पौंड का उसका ऋणी था; लेकिन उसके पास चुकाने को एक कौड़ी भी नहीं थी। वह अमीर आदमी कर्जदार की जायदाद, उसके बीवी-बच्चों और खुद उस आदमी तक को नीलाम कर सकता था। लेकिन उस ऋणी ने दया की याचना की और अमीर आदमी को उस पर तरस आ गया। उसने उसका सारा ऋण माफ कर दिया। जब उसे माफी दे दी गई तो उसके पास एक गरीब आदमी आया। यह गरीब आदमी कुछ थोड़े-से का ही उसका कर्जदार था। उसने अपने ऋण को माफ कराना चाहा। लेकिन जिस कर्जदार को सारे कर्ज की माफी दी जा चुकी थी वह उस गरीब आदमी के ऋण को माफ नहीं करना चाहता था, बल्कि उसने उससे फौरन भुगतान की माँग की। तंग होने के कारण गरीब आदमी ने बहुत हाथ-पाँव जोड़े, पर उसने उस पर तरस नहीं खाया और उसे जेल भिजवा दिया। यह चर्चा सब जगह फैल गई, लोग उस अमीर आदमी के पास आए और उसे बतलाया कि उसके कर्जदार ने क्या किया है। इस पर अमीर आदमी ने अपने कर्जदार को वापस बुलाया, और बोला, 'तुम्हारे कहने पर मैंने तुम्हारा सारा ऋण माफ कर दिया था। तुम्हें भी मेरी ही तरह अपने कर्जदार का कर्जा माफ कर देना चाहिए था। लेकिन तुमने यह क्या किया है?' इसके बाद उस अमीर आदमी ने अपने कर्जदार के खिलाफ मुकदमा दायर कर दिया।

''जो लोग हमारे प्रति दोषी हैं, हम अगर उन्हें दिल से माफ नहीं करते तो ऐसा ही कुछ हमारे साथ ही होता है। अपने भाई के साथ हमारा हर झगड़ा हमें बंधन में डालता जाता है और हमें परमात्मा से दूर-ही-दूर करता जाता है। इसलिए परमात्मा से दूर न हो जाने के लिए हमें अपने भाइयों को माफ कर देना होगा और सब मनुष्यों के साथ शांतिपूर्वक और प्रेमपूर्वक रहना होगा।''

पत्नीव्रत पालन

एक बार कुछ फरीसी ईसा के पास आए और उनसे पूछा कि अगर एक आदमी अपनी पत्नी को त्याग दे और दूसरी कर ले तो आपके क्या विचार हैं ? ईसा ने उत्तर दिया—

"आप जानते हैं कि केवल एक पिता-माता से ही एक बच्चे का जन्म हो सकता है। परमात्मा का यही नियम है और परमात्मा ने जो नियम बनाया है, उसे मनुष्य को भंग नहीं करना चाहिए। अगर एक आदमी परमात्मा के बनाए नियम को भंग करता है और अपनी पत्नी को त्यागकर दूसरी कर लेता है, तो वह तिहेरा गुनाह करता है—पहले तो वह अपने प्रति गुनहगार है, दूसरे अपनी पत्नी के प्रति, और तीसरे अन्य लोगों के प्रति। वह अपने-आपको हानि पहुँचाता है, क्योंकि वह अपने को विषय-वासना का आदी बनाता है। वह अपनी पत्नी को हानि पहुँचाता है, क्योंकि वह उसे त्यागकर उसे बुराई करने के लिए विवश करता है। वह दूसरे लोगों को हानि पहुँचाता है, क्योंकि वह उनके सामने व्यभिचार का उदाहरण उपस्थित करके उन्हें प्रलोभन देता है।"

तब शिष्यों ने ईसा से कहा, "केवल एक ही पत्नी के साथ जीवन बिताना तो बहुत कठिन है। अगर एक आदमी को मृत्यु-पर्यंत एक स्त्री के साथ, यह सोचे बिना कि वह कैसी है, रहना ही होगा, तो सबसे अच्छा तो यह है कि ब्याह ही न किया जाए।"

ईसा ने उन्हें उत्तर दिया, "कोई चाहे तो ब्याह नहीं भी कर सकता। लेकिन अगर एक आदमी पत्नी के बिना रहना चाहता है तो उसे सर्वथा पवित्र रहना होगा और स्त्रियों के बारे में सोचना भी नहीं होगा। अगर कोई आदमी ऐसा कर सकता है तो बहुत ही अच्छा है, लेकिन अगर कोई आदमी ऐसा जीवन न बिता सके तो उसे ब्याह कर लेना चाहिए और मृत्यु-पर्यंत एक पत्नी के साथ रहना चाहिए—उसे अपने-आपको दूसरी स्त्रियों के साथ मोह-जाल में नहीं फँसने देना चाहिए।"

नियमों में दृढ़ता

एक दिन गिरजाघर के लिए कर वसूली करनेवाले पतरस के पास आए और उससे कहा, "क्या तुम्हारे स्वामी देनदारी का भुगतान करेंगे ?" पतरस ने कहा कि जरूर। ईसा ने यह सुनकर पतरस से पूछा, "तुम्हारे राय में, राजा करो को किससे वसूल

करता है—अपने बेटों से या मुसाफिरों से?" पतरस ने कहा, "मुसाफिरों से।" इस पर ईसा ने कहा, "अगर हम परमात्मा के पुत्र हैं तो हमें दशमाँश अदा करने की जरूरत नहीं। लेकिन मनुष्यों को प्रलोभन में न फँसने देने के लिए, उन्हें अदा कर दो, इसलिए नहीं कि हम पर यह देनदारी है, बल्कि इसलिए कि उन्हें प्रलोभन में न फँसने दिया जाए।"

एक दूसरे दिन की बात है कि कुछ फरीसियों ने बादशाह के अफसरों के साथ एक समझौता किया और वे ईसा के पास आए। उनकी कोशिश थी कि ईसा को उन्हीं के शब्दों के आधार पर फाँसा जाए और उनको यह भी देखना था कि वह बादशाह के प्रति अपनी जिम्मेदारी को मानता है या नहीं। उन्होंने ईसा से कहा, "तुम हर बात की सच्चाई के साथ शिक्षा देते हो। इसलिए हमें बताओ, क्या हमें बादशाह को कर अदा करने चाहिए?" ईसा ने कहा, "मुझे वह वस्तु दिखाओ जिसके द्वारा आप बादशाह को कर अदा करते हैं।" उन्होंने उन्हें एक सिक्का दिखाया। उस सिक्के पर बादशाह के सिर की मोहर लगी थी। ईसा ने उसकी ओर इशारा किया और कहा, "जो बादशाह का है, वह बादशाह को दो; लेकिन जो परमात्मा का है यानी आपकी आत्मा—वह सिवाय परमात्मा के किसी दूसरे को मत दो। आपका धन, संपत्ति, काम—हर चीज जो कोई भी तुमसे माँगे, उसे दे दो; लेकिन परमात्मा के नियमों के जो विरुद्ध हो, वह किसी के लिए भी मत करो।"

नाश नहीं, रक्षा

एक दिन ऐसा हुआ कि ईसा के शिष्य एक गाँव में आए और उन्होंने रात वहीं बिताने की स्वीकृति चाही, लेकिन कोई भी उन्हें अपने घर में ठहराने को तैयार न था। तब शिष्य ईसा के पास आए और उन्हें इस बारे में बतलाते हुए बोले, "ऐसे नीच लोग यहाँ रहते हैं—वे तो इस काबिल हैं कि उन पर बिजली गिरे और वे मर जाएँ।"

ईसा को यह सुनकर दु:ख हुआ। वे बोले, "तुम लोग यह नहीं समझते कि तुम में कौन-सी शक्ति है। मैं इस बात की शिक्षा नहीं देता कि नाश कैसे किया जाता है, बल्कि यह कि लोगों को बचाया कैसे जाता है। यह कैसे हो सकता है कि कोई अपने पड़ोसी के लिए बुरा सोचे? हर आदमी में आप ही के समान परमात्मा की शक्ति का वास है और आपको अपने भीतर की उस शक्ति के लिए बुरा नहीं सोचना चाहिए।"

एक दूसरे समय में मती और फरीसी ईसा के पास एक औरत लाए, जो

व्यभिचार में पकड़ी गई थी। उन्होंने उसे पेश करते हुए कहा, "मालिक, यह औरत व्यभिचार में पकड़ी गई है और हजरत मूसा के नियमानुसार ऐसी औरत को पत्थरों से मार डालना चाहिए। आपको इस विषय में क्या कहना है ?"

ईसा को ललचाने के लिए उन्होंने वैसा कहा था। अगर वे यह कहते कि उसे पत्थरों से मारना चाहिए तो ऐसा कहना उनके इस उपदेश के विपरीत होता कि सबके साथ प्रेम करो। लेकिन अगर उन्होंने यह कहा होता कि ऐसा नहीं करना चाहिए तो उनका यह कथन हजरत मूसा के नियम के विरुद्ध होता। जो हो, ईसा ने कोई उत्तर नहीं दिया, लेकिन गर्दन नीचे झुका ली और रेत में अपनी अंगुली से लिखने लगे।

उन्होंने दोबारा उनसे वही बात पूछी। तब उन्होंने सिर उठाया और बोले, "आप कहते हैं कि नियमानुसार उसे पत्थरों से मारना चाहिए—तो वैसा ही करो। लेकिन पहले उस आदमी को उसके पत्थर मारना होगा कि जो खुद बेगुनाह हो।" इतना कहकर उन्होंने फिर अपना सिर झुका लिया और फिर धरती पर लिखने लगे। ईसा की बात सुनकर शिकायत करनेवाले एक-एक करके खिसकने शुरू हो गए और ईसा उस औरत के साथ वहाँ अकेले रह गए।

इसके बाद ईसा ने सिर उठाया और उस औरत के सिवाय और किसी को न देखकर उन्होंने उससे कहा, "जान पड़ता है कि किसी ने भी तुम्हें सज़ा नहीं दी ?" उसने उत्तर दिया, "किसी ने भी नहीं, प्रभु!"

"तो फिर मैं भी तुम्हें सज़ा नहीं देता," ईसा ने कहा। "जाओ, आइंदा गुनाह न करना।"

सहानुभूति और प्रेम

ईसा ने लोगों को शिक्षा दी कि सब मनुष्य परमात्मा की ही संतान हैं। इसलिए परमात्मा का आदेश है कि उसे और अपने पड़ोसी से प्रेम करो।

जब एक कानूनदां ने यह सुना तो उसने सोचा कि ईसा को उसी के शब्दों में झूठा साबित करना चाहिए। उन्हें यह जतलाने के लिए कि सब मनुष्य समान नहीं हैं, और यह भी कि भिन्न जातियों के मनुष्य समान रूप में परमात्मा के पुत्र नहीं हो सकते, उसने ईसा से पूछा, "आप हमें अपने पड़ोसी के साथ प्रेम करने की शिक्षा देते हैं। लेकिन मेरा पड़ोसी कौन है ?"

ईसा ने उसे एक मिसाल देकर उत्तर दिया—

"एक अमीर यहूदी था। एक बार ऐसा हुआ कि जब वह घर वापस आ रहा था

तो उस पर चोरों ने हमला करा दिया। चोरों ने उसे पीटा, लूटा, और सड़क के किनारे छोड़ कर चल दिए। एक यहूदी पुरोहित उधर से निकला। उसने उस घायल आदमी को देखा, लेकिन वह रुका नहीं और आगे निकल गया। इसके बाद एक और यहूदी वहाँ से गुजरा और उसने भी घायल आदमी को देखा और चला गया। इसके बाद दूसरी जाति का एक आदमी उस सड़क पर से निकला। वह समरिया का रहनेवाला था। उसने घायल आदमी को देखा और यह खयाल किए बिना कि यहूदी समरियावालों को अपना पड़ोसी नहीं समझते, बल्कि उन्हें विदेशी तथा शुत्र मानते हैं—उसने यहूदी पर तरस खाया, उसे उठाया और अपने गधे पर रखकर उसे एक सराय में ले गया। वहाँ उसने उसके घावों को साफ किया और मरहम-पट्टी की। उसके लिए सराय के मालिक को भाड़ा दिया और जब उसकी ज़रूरत न रही, तब वह वहाँ से गया।

''आप पूछते हैं, कौन किसका पड़ोसी है ?'' ईसा ने कहा, ''जिसके हृदय में प्रेम है वह प्रत्येक मनुष्य को अपना पड़ोसी मानता है, भले ही वह किसी भी जाति का क्यों न हो।''

बुराई से बुराई दूर नहीं होती

ईसा के उपदेश अधिकाधिक फैलते गए और फरीसी उसने उतने ही ज्यादा नाराज होते गए। उन्होंने लोगों से कहा, ''उसकी बातें मत सुनो। वह तुमको धोखा दे रहा है। अगर तुम लोग उसके आदेशों पर चलोगे तो दुनिया में वर्तमान से भी ज्यादा बुराई हो जाएगी।''

ईसा ने यह सुना और उन्होंने उनसे कहा—

''आप कहते हैं कि अगर मैं लोगों को यह शिक्षा देता हूँ कि धन-दौलत की चाह न करो, बल्कि गरीबी से रहो; क्रोध न करो, आँख के बदले आँख और दांत के बदले दांत की माँग न करो, बल्कि सब बातों को सहन करो और हरेक से प्रेम करो। मैं भलाई के द्वारा बुराई को दूर करता हूँ और आप कहते हैं कि यदि लोगों ने मेरे उपदेशों पर अमल किया तो उनका जीवन पहले से भी ज्यादा बुरा हो जाएगा। पुरानी बुराई की जगह एक नई बुराई हो जाएगी। यह सच नहीं है। मैं एक बुराई की जगह दूसरी बुराई नहीं पैदा करता; लेकिन आप लोग हैं कि जो बुराई को बुराई से खदेड़ना चाहते हैं। आप लोग बुराई का नाश धमकियों, फांसियों, कसमों और हत्याओं से करना चाहते हैं। लेकिन तब भी बुराई का नाश नहीं हो पाता। यह इस तरह नष्ट भी नहीं हो सकती, क्योंकि कोई भी शक्ति अपने-आपको नष्ट नहीं कर सकती। मैं

ऐसे साधनों से बुराई को दूर नहीं करता, जिनका आप उपयोग करते हैं। मैं अच्छाई से बुराई का नाश करता हूँ। मैं मनुष्यों को उन आदेशों पर अमल करने का आह्वान करके बुराई का नाश करता हूँ, जो उन्हें सब बुराइयों से बचाएँगे।''

आध्यात्मिक जीवन

एक दिन ईसा के पास उसकी माँ और उसके भाई आए। ईसा के चारों ओर इतने लोग थे कि वे उन तक नहीं पहुँच सकते थे। एक आदमी ने इस बात को देखा और वह ईसा के पास आया, बोला, ''आपके संबंधी—आपकी माँ और आपके भाई— बाहर खड़े हैं और आपसे मिलना चाहते हैं।''

ईसा ने कहा, ''जो परम-पिता की इच्छा को जानते हैं और उसकी इच्छा का पालन करते हैं, वे ही मेरी माँ और मेरे भाई हैं।

''हर आदमी के लिए अपने पिता, अपनी माँ, अपनी पत्नी, अपने बच्चों, अपने भाइयों, अपनी बहनों, अपनी सारी जायदाद अथवा अपने शारीरिक जीवन तक से परम-पिता की इच्छा अधिक महत्त्वपूर्ण होनी चाहिए।

''सांसारिक मामलों में हर समझदार आदमी कोई काम करने से पहले इस बात का हिसाब लगा लेता है कि जो कुछ वह करने जा रहा है उससे उसे लाभ भी होगा या नहीं? अगर वह लाभदायक है तो उसे करता है। अगर नहीं तो उसे नहीं करता। अगर एक आदमी मकान बनाना चाहता है तो वह शुरू करने से पहले यह विचार करता है और गिनती करता है कि उसे कितने रुपए की आवश्यकता होगी। उसके पास कितने रुपए हैं? मकान पूरा करने के लिए काफी होंगे या नहीं? ऐसा तो नहीं होगा कि जो मकान शुरू किया वह पूरा ही न हो और शक्ति और समय बर्बाद हो। इसी तरह हर बादशाह, अगर वह लड़ाई करना चाहता है, पहले यह सोचता है कि दस हजार आदमियों से वह बीस हज़ार आदमियों के साथ लड़ सकता है या नहीं। अगर वह हिसाब लगाता है कि वह नहीं लड़ सकता तो सुलह के लिए दूत भेज देता है और लड़ता नहीं।

''इसी तरह हर आदमी को यह समझ लेना चाहिए कि जिस सब-कुछ को वह अपना समझता है—अपना परिवार, अपनी जायदाद और अपना खुद का शारीरिक जीवन—वह आज या कल उससे छिन जाएगा और एक वस्तु जो उसकी अपनी है और जो कभी भी उससे नहीं छिनेगी, वह है उसका आध्यात्मिक जीवन और केवल उसी की वह चिंता कर सकता है और उसे करनी भी चाहिए।''

यह सुनकर एक आदमी बोला, ''यह तो ठीक ही है कि आध्यात्मिक जीवन होना चाहिए, लेकिन यह मुनासिब कैसे हो सकता है कि हम सर्वस्व ही त्याग दें और इस तरह का जीवन ही न रहे ?''

ईसा ने उत्तर दिया—

''हर कोई जानता है कि आध्यात्मिक जीवन का अस्तित्व है और केवल यही नहीं मरता है। आप सब इसे जानते हैं, लेकिन जो आप जानते हैं, उस पर अमल नहीं करते—इसलिए नहीं कि आप उस पर संदेह करते हैं, बल्कि इसलिए कि आप झूठी चिंताओं के कारण वास्तविक जीवन से विमुख हैं।''

और उन्होंने उन्हें यह कथा सुनाई—

''एक मालिक ने एक भोज देने की तैयार की। उसने मेहमानों को न्यौता देने के लिए अपने नौकरों को भेजा, लेकिन मेहमानों ने आने से इनकार कर दिया। एक ने कहा, 'मैंनें कुछ जमीन खरीदी है, इसलिए मुझे वहाँ जाना है।' दूसरे ने कहा, 'मैंने कुछ जानवर खरीदे हैं और मुझे खेतों में हल चलाना है।' तीसरे ने कहा, ''मैंने ब्याह किया है, और आज मेरा विवाह-भोज है।' नौकर खाली लौट आए और उन्होंने मालिक को बताया कि कोई नहीं आएगा। इसके बाद मालिक ने भिखारियों को न्यौतने के लिए भेजा। भिखारियों ने आने से इनकार नहीं किया और उन्होंने दावत खाई।

''इसी तरह, जब मनुष्य शारीरिक चिंताओं से मुक्त होते हैं, तभी वे आध्यात्मिक जीवन को जान सकते हैं।''

अच्छा जीवन

एक बार एक नौजवान ईसा के पास आया और उनके सामने घुटने टेककर बोला, ''मेरे अच्छे मालिक, मुझे बताओ, अमर-जीवन प्राप्त करने के लिए मुझे क्या करना होगा।''

ईसा ने उत्तर दिया, ''तुम मुझे अच्छा क्यों कहते हो ? सिवाय परमात्मा के कोई अच्छा नहीं। तुम उसके सब आदेशों को जानते हो। उन पर अमल करो।''

नौजवान ने पूछा, ''कौन से आदेशों का ? आदेश तो बहुत-से हैं।''

ईसा ने उत्तर दिया, ''हत्या न करो, व्यभिचार न करो, झूठ न बोलो, चोरी न करो, किसी का जी न दुखाओ और अपने माँ-बाप की इज्जत करो।''

उस आदमी ने कहा, ''बचपन से ही मैं इन आदेशों पर अमल करता आया हूँ।''

ईसा ने उसकी ओर देखा और उन्हें वह भला लगा। उन्होंने कहा, "अब भी तुममें एक बात की कमी है। जाओ, अपना सब कुछ बेच डालो और उसे गरीबों में बाँट दो।"

नौजवान को यह सुनकर दु:ख हुआ और वह बिना जवाब दिए चला गया, क्योंकि वह बहुत अमीर था।

ईसा ने अपने शिष्यों से कहा—

"तुम देखते हो कि एक अमीर आदमी के लिए 'स्वर्ग के राज्य' में प्रवेश करना कितना मुश्किल है!" ये शब्द सुनकर शिष्यों को निराशा हुई, लेकिन ईसा ने उन्हें दोहराया और कहा, "हाँ, बच्चो, अमीर आदमी के लिए प्रभु-राज्य में दाख़िल होना बेहद मुश्किल है।

"एक ऊँट का सुई के छेद में से निकलना सहज है; लेकिन एक अमीर के लिए 'स्वर्ग के राज्य' में प्रवेश करना आसान नहीं।" ये शब्द सुनकर उन्हें और भी निराशा हुई, और उन्होंने, परस्पर कहा, "अगर एक आदमी के पास कुछ भी न हो तो वह क्यों-कर जिंदगी बसर करेगा? वह जड़ हो जाएगा और भूखों मरेगा।" लेकिन ईसा ने कहा, "केवल भौतिक मनुष्य को ही यह डरावना लगता है, लेकिन आध्यात्मिक व्यक्ति के लिए यह सहज है। जो इस पर यकीन करेगा और अमल करेगा, उसे पता हो जाएगा कि यह सच है।"

स्वर्ग और नरक

ईसा ने यह भी कहा, "आप एक ही वक्त में दो मालिकों—परमात्मा और दौलत की सेवा नहीं कर सकते। अर्थात् परमात्मा की इच्छा और अपनी निजी इच्छा एक साथ नहीं साध सकते। आपको दोनों में से एक को चुनना होगा और दोनों में से एक की सेवा करनी होगी।"

फरीसियों ने, जो दौलत को प्यार करते थे, यह सुना। वे ईसा के इन शब्दों पर हँसे। ईसा ने उनसे कहा, 'आप समझते हैं कि आप दर-असल इज्जत के काबिल हैं, क्योंकि मनुष्य आपकी दौलत के कारण आपकी इज्जत करते हैं?

"ऐसा नहीं है, परमात्मा बाहरी वस्तुओं को नहीं देखता, बल्कि वह तो जो दिल में है उसे देखता है। मनुष्य जिन वस्तुओं को बहुमूल्य समझता है, परमात्मा की नजर में वे मूल्यहीन हैं। 'स्वर्ग के राज्य' में अमीर नहीं, बल्कि गरीब प्रवेश पाते हैं।"

ईसा जानते थे कि फरीसियों का यह विश्वास है कि मृत्यु के बाद कुछ लोग

नरक में जाते हैं और कुछ स्वर्ग में, उन्होंने दौलत के बारे में उन्हें यह मिसाल दी—

"एक आदमी था, जो बेहद अमीर था। वह खूब खाता-पीता, बढ़िया-से-बढ़िया कपड़े पहनता, और हर रोज मौज करता। उसी जगह एक अपाहित भिखारी रहता था, जिसका नाम लाजरस था। लाजरस अमीर आदमी के सहन में इस आशा से आया कि उसे उसके भोजन को बची-खुची जूठन मिल जाएगी। लेकिन उसे कुछ भी न मिला, क्योंकि अमीर आदमी के कुत्ते जूठन को चट कर गए थे और वे लाजरस के जख्मों को भी चाटते थे। वह अमीर आदमी और लाजरस दोनों मर गए और दोज़ख में पड़े। अमीर आदमी ने कुछ ही फासले पर अब्राहीम और उसके साथ अपाहिज लाजरस को देखा, यह बोला—

"परम-पिता अब्राहीम, मैं आपको कष्ट देने का साहस नहीं करता, लेकिन मैं आपके साथ अपाहित लाजरस को देख रहा हूँ। वह मेरे फाटक के बाहर पड़ा रहता था। उसे मेरे पास भेजो और उसे अपनी अंगुली पानी में डुबोकर मेरा गला ठंडा करने दो, क्योंकि मैं आग में जला जा रहा हूँ।" लेकिन अब्राहीम ने कहा, "मैं लाजरस को लपटों में तुम्हारे पास क्यों भेजूँ? भौतिक संसार में जो कुछ तुम्हें चाहिए था, सब तुम्हारे पास था और लाजरस के पास सिवाय दुःख के कुछ भी नहीं था। जो कुछ तुम कहो मैं करने को तैयार हूँ, लेकिन यह नहीं कर सकता, क्योंकि तुम्हारे और हमारे बीच आवागमन नहीं।" इस पर अमीर आदमी ने कहा, "परम-पिता अब्राहीम, अगर यह ऐसा ही है तो कम-से-कम लाजरस को मेरे घर ही भेज दो। मैं पाँच भाइयों को छोड़ आया था और मैं उनके लिए परेशान हूँ। उसे उनको बता आने दो कि दौलत से कितनी बुराइयाँ होती हैं, अन्यथा उन्हें भी मेरी ही तरह यातना सहनी पड़ेगी।" अब्राहीम ने कहा, "वे यह जानते हैं। हजरत मूसा और सब नबियों ने इसकी चर्चा की है।" अमीर आदमी ने उत्तर दिया, "इस पर भी अगर कोई मुर्दों में से उठकर उनके पास जाए तो यह अच्छा ही होगा। इससे उनको अपने-आप पर विचार करने का मौका मिलेगा।" लेकिन अब्राहीम ने उत्तर दिया, "अगर वे हजरत मूसा और नबियों की नहीं सुनते तो वे मुर्दों में से उठनेवाले किसी को भी नहीं सुनेंगे।"

परमात्मा सर्वत्र है

इसके बाद ईसा गैलिली में गए और अपने माँ-बाप के साथ वहाँ रहे। जब यहूदियों की फ़सल-कटाई की दावत का दिन आया तो ईसा के भाई उसमें जाने के लिए तैयार हुए। उन्होंने ईसा से भी भोज में चलने को कहा। वे उनके उपदेशों में विश्वास

नहीं करते थे। उनसे बोले, ''तुम कहते हो कि यहूदियों की पूजा-विधि गलत है और तुम परमात्मा की पूजा के सही ढंग को जानते हो। अगर तुम दर-असल यह समझते हो कि दूसरों को जो पता नहीं उसे तुम जानते हो तो हमारे साथ दावत में चलो। वहाँ बहुत-से लोग आए होंगे और तुम उन सबके सामने अपने उपदेशों का ऐलान कर सकोगे। अगर वे सब तुम्हारा यकीन कर लेंगे तो तुम्हारे शिष्यों को पता लग जाएगा कि तुम ठीक हो। तुम अपने को छिपाते क्यों हो? तुम पूजा के सही ढंग को जानते हो, तो फिर सभी को वह ढंग बताओ!''

ईसा ने उनसे कहा, ''हर बात के लिए एक समय होता है। मैं वक्त आने पर जाऊँगा।'' इस तरह उनके भाई चले गए, लेकिन वे घर पर ही रहे।

दावत में बहुत-से लोग शामिल हुए थे। ईसा के उपदेशों के बारे में उनकी बहस होने लगी। कुछ कहते थे कि उसके उपदेश सच्चे हैं, दूसरे कहते थे कि उससे लोग महज परेशान होते हैं। जब आधी दावत हो चुकी तो ईसा खुद यरूसलम में आए और गिरजाघर में गए। गिरजाघर की ड्यौढ़ी में गौएँ और बैल, भेड़ें और पिंजरों में बंद कबूतर आदि जानवर थे। वहीं रुपए-पैसों की दुकान लगाकर दुकानदार भी बैठे थे। इस सब की परमात्मा के सामने चढ़ावे के लिए आवश्यकता थी। लेकिन ईसा ने, गिरजा में प्रवेश करते हुए और बहुत-से लोगों को वहाँ देखकर, सबसे पहले सारे पशुओं को गिरजा से बाहर हाँक दिया और कबूतरों को उड़ा दिया। उन्होंने दुकानदारों की मेजें पलट दीं और उसके बाद लोगों से कहा—

''ईसाइया नबी ने कहा था, 'परमात्मा का घर यरूसलम के गिरजे में नहीं है, बल्कि भगवत्‌जनों का सारा संसार ही उसका घर है।' और जरमिया नबी ने भी कहा था, ''इस झूठी कहावत पर विश्वास मत करो कि यह 'अमरत्व' का घर है। इस पर यकीन मत करो, लेकिन अपने जीवनों में परिवर्तन करो और झूठे तरीके से परीक्षा न करो, न मुसाफिर, विधवा, और अनाथ को दुख दो। बेगुनाहों का खून मत बहाओ और परमात्मा के घर में यह कहने के लिए मत जाओ, ''अब हम निडर होकर बुराई कर सकते हैं।' मेरे घर को चोरों का अड्डा मत बनाओ। मैं, परमात्मा, तुम्हारी बलियों से खुश नहीं होता। मैं एक-दूसरे के साथ तुम्हारे प्रेम को देखकर खुश होता हूँ।'' समझा लो कि नबी के इन शब्दों का अर्थ यह है, ''जब लोग एक-दूसरे के साथ प्रेम करते हैं तो उनकी यह सारी दुनिया ही जीवित गिरजाघर है। हमें गिरजा में ही परमात्मा की पूजा नहीं करनी, प्रत्युत उसकी शक्ति में वास करते हुए और अच्छे कर्मों द्वारा उसकी पूजा करनी है।''

सब लोगों ने उनके शब्दों को सुना और उन पर उन्हें आश्चर्य हुआ। उन्होंने एक-दूसरे से कहा, ''बिना किसी प्रकार की शिक्षा के इन्हें इस सबका कैसे ज्ञान

है ?'' ईसा को पता था कि हर कोई उनके शब्दों को सुनकर हैरान है। वह बोले, ''मेरे उपदेश मेरे-अपने नहीं, लेकिन उसके हैं, जिसने मुझे भेजा है, क्योंकि जो उपदेशों की खुद रचना करता है, वह मनुष्यों से ख्याति चाहता है। जो उसकी इच्छाओं की खोज करता है, जिसने उसे भेजा है, वही सत्य है, और उसमें झूठापन नहीं होता। मैं तो आपको केवल यही उपेदश करता हूँ कि परमात्मा की इच्छा को पूर्ण करो। अगर आप परमात्मा की इच्छा पूरी करेंगे तो आपको मालूम हो जाएगा कि जो मैं कहता हूँ उसकी मैंने खोज नहीं की, बल्कि ये उपदेश तो परमात्मा के ही हैं।''

बहुतों ने कहा ''लोग कहते हैं वह झूठा नबी है, लेकिन यहाँ वह सब के सामने खुलेतौर पर बोला है और कोई भी उसके विरुद्ध कुछ भी नहीं कहता। केवल एक बात है जो हमें उसके मसीहा होने में विश्वास नहीं करने देती, और वह यह है, 'यह लिखा है कि जब मसीहा आएगा तो किसी को भी यह मालूम नहीं होगा कि वह कहाँ से आया है; लेकिन हम इस आदमी और उसके सारे परिवार को जानते हैं।'

इसके बाद ईसा ने उनसे कहा, ''आप मुझे जानते हैं। और यह भी जानते हैं कि कहाँ से मैं इस शरीर में आया हूँ, लेकिन आप यह नहीं जानते कि आत्म-शक्ति में मैं कहाँ से आया हूँ। आप यह भी नहीं जानते कि किसके द्वारा मैं आत्म-शक्ति में आया हूँ, यद्यपि केवल वही परम-पिता है, जिसे जानने को आपको जरूरत है। अगर आपको बताया जाता कि मैं मसीहा हूँ तो आपको मुझ मनुष्य में विश्वास होता, लेकिन आपको परम-पिता में विश्वास नहीं, जो कि मुझमें और आप में है। आपको केवल परम-पिता में ही विश्वास करना चाहिए।''

सत्योपदेश से प्रकाश

बहुत से लोगों ने, यह सब देखकर और उनकी बातें सुनकर, कहा, ''वह दरअसल ही नबी है।'' दूसरों ने कहा, ''यही मसीहा है।'' लेकिन कुछ ने कहा, ''क्या मसीहा गैलिली में जन्म ले सकता है? धर्मग्रंथों में कहा गया है कि मसीहा बैथलेहम में, जहाँ दाऊद ने जन्म लिया था, दाऊद के बीज से जन्म लेगा।''

ईसा के बारे में विवाद उत्पन्न हो गया और लोगों में हलचल पैदा हो गई।

इसके बाद राज-पुरोहितों ने ईसा को पकड़ने के लिए आदमियों को भेजा; लेकिन वे ऐसा करने का इरादा न कर सके। जब वे राज-पुरोहितों और फरीसियों के पास वापस आए तो उन्होंने उनसे पूछा, ''तुम उसे लाए क्यों नहीं?'' उन्होंने उत्तर दिया, ''इस आदमी के समान कभी किसी ने बातें नहीं कीं।''

फरीसियों ने उनसे कहा, "क्या तुम भी भटक गए हो ? शासकों और फरीसियों में से भी कोई क्या उस पर विश्वास करता है ? केवल शाप पाए हुए ही उस पर विश्वास करते हैं। वे कानून को नहीं जानते।"

वे सब अपने घर को लौट आए।

लेकिन ईसा जैतून के पहाड़ पर गए और अपने शिष्यों के साथ वहाँ उन्होंने रात बिताई। सबेरे वह फिर गिरजे में आए। बहुत-से लोग उनकी बातें सुनने आए। उन्होंने उन्हें फिर यह शिक्षा दी, "मेरे उपदेश संसार को प्रकाश देते हैं। जो उन पर अमल करता है वह अंधेरे में नहीं रहेगा, बल्कि वह साथ-साथ यह भी देखेगा कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। मैं हर आदमी को वही शिक्षा देता हूँ कि जो परम-पिता परमात्मा देते हैं, जिन्होंने मुझे भेजा है।"

उन्होंने उनसे पूछा, "तुम्हारे परम-पिता कहाँ हैं ?"

उन्होंने उत्तर दिया, "अगर आप मुझे जानते हैं तो आप मेरे परम-पिता को भी जान जाएँगे।"

उन्होंने उनसे पूछा, "तुम कौन हो ?"

उन्होंने कहा, "मैं वह शक्ति हूँ, जिसका न तो आदि था और न अंत होगा। मैं मानव-पुत्र हूँ, लेकिन परमात्मा की शक्ति को ही मेरा पिता मंजूर करो। जब आप लोग अपने-आप में मानव-पुत्र को जागृत कर लेंगे तब आप जान जाएँगे कि मैं कौन हूँ और समझ लेंगे कि मैं खुद-ब-खुद न कुछ करता हूँ और न कहता हूँ। मैं केवल वही करता और कहता हूँ, जो परम-पिता ने मुझे सिखाया है।"

अमर जीवन

यहूदियों ने ईसा को घेर लिया और कहा,"ये सब जो तुम कहते हो समझना मुश्किल है और हमारे धर्म-ग्रंथों के साथ भी मेल नहीं खाता। हमें सताओ नहीं, साफ-साफ बतलाओ, "क्या तुम वही मसीहा हो, जिसे हमारे धर्मग्रंथों के अनुसार संसार में आना है ?"

ईसा ने उन्हें उत्तर दिया, "मैं पहले ही तुम्हें बता चुका हूँ कि मैं कौन हूँ, लेकिन तुम विश्वास नहीं करते। जो मैं कहता हूँ, उस पर अमल करो और तब तुम्हें मालूम हो जाएगा कि मैं कौन हूँ और मैं क्यों आया हूँ। वह, जो मेरा अनुसरण करता है और जो मैं कहता हूँ उस पर अमल करता है—वह, जो मेरे उपदेशों को समझ लेता है और उन्हें पूरा करता है—मेरे परम-पिता के साथ है। मैं और परम-पिता एक हैं।"

यहूदी इन शब्दों को सुनकर चिढ़ गए और उन्होंने उन्हें मार डालने के लिए पत्थर उठा लिए।

इस पर ईसा ने उनसे कहा, "आप लोग मुझे क्यों मार डालना चाहते हैं?"

उन्होंने जवाब दिया, "इसलिए कि तुम, जो एक मनुष्य हो, अपने-आपको परमात्मा बताते हो।"

ईसा ने जवाब दिया, "मैंने कहा था कि मैं परमात्मा का पुत्र हूँ, और जब मैं परम-पिता की इच्छा का पालन करता हूँ तो मैं उसके साथ एकाकार हूँ। वह, जो अपने-आपको परमात्मा का पुत्र मानता है, दास नहीं रह जाता, और अजर-अमर जीवन प्राप्त कर लेता है। एक दास अपने मालिक के घर में हमेशा नहीं रहता, लेकिन मालिक के पुत्र सदा वहाँ रहते हैं। एक मनुष्य, जिसमें परमात्मा की शक्ति का वास है, परम-पिता में मिल जाता है और अमरत्व प्राप्त कर लेता है। मैं आप लोगों को सच्चाई से कहता हूँ कि जो मेरे शब्दों पर अमल करता है, वह कभी मरेगा नहीं।"

इस पर यहूदियों ने उनसे कहा, "अब हमें मालूम हो गया है कि तुम्हारे अंदर शैतान रहता है। अब्राहीम मर गया और सब नबी मर गए, इतने पर भी तुम कहते हो कि जो तुम्हारे शब्दों पर अमल करेगा वह कभी मरेगा नहीं। क्या तुम हमारे परम-पिता अब्राहीम से भी बड़े हो?"

ईसा ने कहा, "मैं आपको सच्चाई से कहता हूँ कि अब्राहीम हुआ उससे भी पहले से मैं हूँ।"

ईसा परमात्मा की उस शक्ति के बारे में कह रहे थे, जो उनमें थी, हर आदमी में वास करती है और जिसका न आदि है और न अंत, लेकिन वे उसे समझे नहीं।

यहूदी यह नहीं समझ सके कि उनका क्या किया जाए। इससे उनको सजा भी नहीं दिला सकते थे। तब ईसा जॉर्डन नदी के उस पार चले गए और वहाँ रहने लगे।

सेवा करो

एक बार, जब ईसा यरूसलम से लौट रहे थे, उनके शिष्यों में से दो, जेम्स और युहन्ना, उनके पास आए और बोले, "मालिक, हमें वचन दो कि जो हम कहेंगे वही आप करेंगे।"

ईसा ने कहा, "तुम क्या चाहते हो?"

उन्होंने उत्तर दिया, "आप ही के समान हमारा दर्जा हो जाए।"

ईसा ने कहा, "तुम लोग खुद नहीं जानते कि तुम क्या कह रहे हो। हर कोई अपने निजी यत्नों से 'स्वर्ग के राज्य' में प्रवेश कर सकता है, लेकिन कोई भी दूसरे के लिए यह नहीं कर सकता।"

तब ईसा ने अन्य शिष्यों को अपने पास बुलाया और कहा, "सांसारिक मनुष्य सोचते हैं कि कौन उनमें ऊँचा और कौन नीचा है; लेकिन तुम लोगों को किसी को भी ऊँचा या नीचा नहीं समझना चाहिए। तुममें से जो अव्वल बनना चाहता है उसे अपने-आपको अंतिम मानना चाहिए; क्योंकि यह परम-पिता की इच्छा है कि 'मानव-पुत्र' का जीवन सेवा कराने के लिए नहीं, बल्कि हरेक की सेवा करने के लिए होना चाहिए और उसे अपने शारीरिक जीवन का शक्ति के जीवन के लिए उत्सर्ग करना चाहिए।"

सबको समान मिलेगा

इस विषय में ईसा ने उन्हें एक मिसाल दी। कहा—

"एक दिन एक मालिक बहुत सवेरे अपने अंगूर के बगीचे के लिए किराए पर मज़दूरों को लेने गया। एक शिलिंग प्रतिदिन मज़दूरी तय करके उसने उन्हें बगीचे में भेज दिया। इसके बाद नाश्ते के समय वह फिर बाहर गया और उसने कुछ और आदमी देखे, जिन्हें काम नहीं मिला था। उनसे वह बोला, 'तुम लोग भी मेरे बगीचे में जा सकते हो। जो ठीक होगा, तुम्हें दे दूँगा।' वे सब बगीचे में चले गए। उसने यही फिर दोपहर के खाने के समय, और दोपहर बाद भी किया। जब शाम हो चुकी तो उसने फिर बिना काम के आदमियों को देखा। उनसे उसने कहा, 'तुम लोग बिना काम के यहाँ दिन भर क्यों खड़े रहते हो?' उन्होंने कहा, 'हमें किसी ने काम पर नहीं बुलाया। मालिक बोला, 'तुम भी मेरे बगीचे में चले जाओ और जो ठीक होगा तुमको दे दिया जाएगा।'

"मज़दूरी देने का समय आया तो बगीचे के मालिक ने अपने मुनीम से कहा, 'सब मज़दूरों को बुलाओ और आखिर से शुरू करके पहले तक सबको समान मजूरी दे दो।' जो आखिर लोग शाम को आए थे उन्हें भी एक-एक शिलिंग मिल गया।

"जिन लोगों को पहले काम पर लगाया गया था उन्होंने सोचा था कि उन्हें ज्यादा मज़दूरी मिलेगी, लेकिन उन्हें भी एक-ही-एक शिलिंग मिला। इसके बाद जो पहले आए थे, वे बगीचे के मालिक पर यह कहते हुए बिगड़ने लगे, 'इन आदमियों ने केवल घंटे भर काम किया है, लेकिन हम लोगों ने सुबह से लेकर सारा

दिन काम किया, और आपने उन्हें भी हमारे ही बराबर बना दिया।'

''मालिक ने उनसे कहा, 'तुमको झींकना नहीं चाहिए। क्या तुमने एक शिलिंग पर काम करना मंजूर नहीं किया था? जो तुम्हारा वाजिब है, वह ले लो और जाओ। अगर मैं पहले के समान ही आखिरी को भी देना चाहता हूँ तो क्या मैं अपनी निजी इच्छा से वैसा कर नहीं सकता? मेरी दयालुता तुमको बुरी लगी है और तुम अपने भाइयों के साथ ईर्ष्या रखते हो। यह ठीक नहीं है।'

''यह हालत सब मनुष्यों की है। परमात्मा का इच्छित कार्य भले ही कोई जल्दी ही करे या देर में, मिलेगा सबको समान ही। जो पहले को मिलेगा वही आखिरी को भी।''

पुनर्जीवन

ईसा ने एक और मिसाल देकर इसे स्पष्ट किया। उन्होंने कहा—

''एक आदमी के दो पुत्र थे। छोटा अपने पिता से अलग हो जाना चाहता था। वह बोला, 'पिताजी, मुझे जायदाद का मेरा हिस्सा दे दो।' उसके पिता ने वैसा ही किया। इसके बाद छोटे बेटे ने अपना हिस्सा लिया और विदेश चला गया। वहाँ उसने अपना सब-कुछ बर्बाद कर दिया और एकदम गरीब हो गया। वह इतना नीचे गिरा कि उसे सूअरों की देख-भाल करनी पड़ी। उसके पास सूअरों को दिए जानेवाले जैतून के फलों के सिवाय कुछ भी खाने को नहीं था। उसने अपनी जिंदगी पर विचार किया और मन-ही-मन सोचा, 'अपने पिता को छोड़ना मेरी भूल थी। मेरे पिता के घर में हर चीज की बहुतायत थी, यहाँ तक कि उनके मजदूरों के खाने को भी काफी होता है, जबकि मैं यहाँ सूअरों का खाना खाता हूँ। बेहतर यही है कि मैं अपने पिता के पास चला जाऊँ, उनके चरणों में नत-मस्तक होऊँ और कहूँ— पिताजी, मैंने आपके साथ बड़ा भारी गुनाह किया है, मैं आपका पुत्र कहलाने योग्य नहीं हूँ। मुझे एक मजदूर की तरह अपने यहाँ रख लो।'

''यह विचारकर , वह अपने पिता के पास वापस गया। जब वह मकान के पास आया तो उसके पिता ने उसे देखा उससे मिलने के लिए बाहर गया और उसे अपनी छाती से लगाकर प्यार किया।

''पुत्र बोला, पिताजी, मैंने आपके साथ बड़ा अन्याय किया है। मैं आपका पुत्र होने लायक नहीं हूँ। पिता ने इन शब्दों का उत्तर न दिया; लेकिन उसने अपने नौकरों को बढ़िया कपड़े और जूते लाने की आज्ञा दी, और अपने पुत्र से उन्हें पहनने को

कहा। उसने एक नौकर को मोटा-ताजा बछड़ा मारने की भी आज्ञा दी। जब सब कुछ तैयार हो गया तो पिता ने अपने घर के सब लोगों से कहा, 'मेरा यह पुत्र मर गया था, और अब पुनः जी गया है, वह खो गया था, अब मिल गया है। इस खुशी के उपलक्ष में हम यह भोज करते हैं।'

"जब सब खाने की मेज पर बैठ गए तो बड़ा बेटा खेतों पर से वापस आया। देखता क्या है कि घर में दावत हो रही है। एक मजदूरों को बुलाकर उसने पूछा, 'हमारे यहाँ दावत क्यों हो रही है?' मजदूर ने उत्तर दिया, 'क्या आपने सुना नहीं कि आपका भाई लौट आया है और आपके पिता खुशी मना रहे हैं।'

"बड़े भाई को यह बुरा लगा। वह मकान में दाखिल नहीं हुआ। लेकिन उसका पिता उसके पास बाहर आया और उसे बुलाया। इस पर बड़ा बेटा भीतर नहीं आया। उसने अपने पिता से कहा, 'कई बरसों तक मैंने आपके लिए काम किया और कभी आपकी आज्ञाओं का उल्लंघन नहीं किया। इतने पर भी आपने मेरे लिए तो मोटा-ताजा बछड़ा कभी नहीं मारा। लेकिन मेरा छोटा भाई घर छोड़ गया और उसने अपनी सारी संपत्ति पियक्कड़ों के साथ नष्ट कर दी, तब भी आप उसके लिए इतनी बड़ी दावत कर रहे हैं।"

यह सुनकर पिता ने बड़े पुत्र को जवाब दिया, 'तुम हमेशा मेरे साथ रहे हो और जो मेरा है वह सब तुम्हारा है। लेकिन तुम्हें दुखी नहीं होना चाहिए, बल्कि खुश होना चाहिए कि तुम्हारा जो भाई मर चुका था, अब वह फिर जिंदा हो गया है, खो जाने के बाद अब वह फिर मिल गया है।'

"परमात्मा इसी तरह सबका स्वागत करते हैं, जब वे परमात्म का के पास— जल्दी या देर में—वापस लौटते हैं और 'स्वर्ग के राज्य' में प्रवेश करते हैं।"

अंतर्दृष्टि

एक दिन ईसा ने अपने शिष्यों से कहा, "मुझे बताओ कि लोग मेरे उपदेशों को कैसा समझते हैं।" उन्होंने जवाब दिया, "कुछ का विचार है कि जॉन ने जो शिक्षा दी थी, वही आप देते हैं। दूसरे कहते हैं कि जो ईसाइयों ने सिखाया था वही आप सिखाते हैं। कुछ कहते हैं कि आपके उपदेश जरमियाँ जैसे हैं और आप नबी हैं।"

ईसा ने कहा, 'ठीक, लेकिन तुम लोग मेरे उपदेशों को कैसा समझते हो?"

साइमन पतरस बोला, 'मेरे विचार में आप यह शिक्षा देते हैं कि प्रत्येक मनुष्य में परमात्मा की शक्ति विद्यमान है और इसलिए हर आदमी परमात्मा का पुत्र है।"

ईसा ने उसे कहा, ''साइमन, तुम खुशकिस्मत हो कि तुमने यह समझा। कोई भी आदमी तुम्हें यह नहीं दिखा सकता था; लेकिन तुमने जान लिया क्योंकि परमात्मा तुममें विद्यमान है। वह मैं नहीं हूँ जिसने अपने शब्दों से तुम्हें यह दिखाया है, बल्कि परमात्मा ने अपने-आप ऐसा किया है।''

इस बार ईसा ने अपने मनुष्यों को बताया कि यरूसलम में वह उन लोगों के हमलों और अपमानों से नहीं बच सके, जो उनके उपदेशों में विश्वास नहीं करते। लेकिन अगर वे उन्हें मार भी डालते तो वे केवल उनके शरीर को ही मार डालते, परमात्मा की उस शक्ति को नहीं, जो उनमें वास करती है।

इन शब्दों को सुनकर पतरस को बहुत दु:ख हुआ। उसने ईसा का हाथ पकड़ लिया और बोला, ''अब से आप यरूसलम में न जाना।''

ईसा ने जवाब दिया, ''ऐसा न कहो। अगर तुम मेरी तकलीफों मृत्यु से डरते हो तो जान पड़ता है कि तुम दैवी इच्छा क्या है, इसे नहीं, बल्कि केवल मानवी इच्छा को ही समझते हो। 'प्रभु-राज्य' के लिए जो लोग इस तरह का जीवन बिताते हैं उन्हें तकलीफें होंगी, क्योंकि संसार अपने निज को प्यार करता है और जो दैवी है, उससे नफरत करता है। संसार के मनुष्यों ने हमेशा उन लोगों को दुखी किया है, जिन्होंने परमात्मा की इच्छा को पूरा किया।''

इस पर लोगों तथा अपने शिष्यों को बुलाकर ईसा ने कहा, ''जो मेरे उपदेशों के अनुसार जीना चाहता है उसे अपने शारीरिक जीवन को त्याग देना चाहिए और तकलीफें सहने को तैयार हो जाना चाहिए, क्योंकि जो अपने शारीरिक जीवन के लिए भयभीत है वह अपना सच्चा जीवन खो देता है, लेकिन जो अपना शारीरिक जीवन उत्सर्ग कर देगा, वह अपने सच्चे जीवन को बचा लेगा। जो मेरे उपदेशों को पूरा करना चाहता है, उसे शब्दों में नहीं, बल्कि अमल में उन्हें पूरा करना होगा।''

इसके बाद उन्होंने यह मिसाल दी—

''एक आदमी के दो बेटे थे। पहले से उसने कहा, 'जाओ, मेरे बाग में काम करो।' पुत्र ने कहा, 'मैं नहीं जाऊँगा!' लेकिन बाद में वह पछताया और चला गया। पिता फिर दूसरे पुत्र के पास गया और उससे भी वही कहा। दूसरे बेटे ने जवाब दिया, 'मैं अभी जाता हूँ।' पर वह गया नहीं। दोनों में किसने अपने पिता की इच्छा को पूरा किया?''

शिष्यों ने कहा, ''पहले ने।''

ईसा ने कहा, ''और मैं आपको बताऊँ कि जो लोग चर्चा करते हैं, लेकिन अमल नहीं करते, कलाल और व्यभिचारी उनसे पहले 'स्वर्ग के राज्य' में प्रवेश करेंगे।''

फल की आशा न करो

अनंतर शिष्यों ने ईसा से कहा, ''आपकी शिक्षा काफी मुश्किल है। हमारे इस विश्वास में वृद्धि कीजिए कि अगर हम आपकी शिक्षा के अनुसार जीवन बसर करते हैं तो हमारा जीवन सुखी होगा।''

वह समझ गए कि वे यह जानना चाहते हैं कि नेक जीवन बिताने के बदले उन्हें क्या पुरस्कार मिलेगा।

ईसा ने उनसे कहा—

''पुरस्कारों में विश्वास करने से धारणा नहीं बनती। यह तो जीवन के विषय में स्पष्ट जानकारी का प्रश्न है। अगर आप स्पष्टतया समझते हैं कि आपका जीवन परमात्मा की शक्ति में है, तो आप किसी भी पुरस्कार की आशा नहीं करेंगे। कोई मालिक अपने नौकर के कर्तव्य-पालन पर उसे धन्यवाद नहीं देता। और एक नौकर, अगर वह समझता है कि वह एक नौकर है तो इससे परेशान नहीं होता, बल्कि अपना काम करता है और जानता है कि जो उसका वाजिब है, वह उसे मिलेगा ही। इसी तरह तुमको भी परमात्मा की इच्छा पूरी करनी चाहिए और समझना चाहिए कि तुम नौकर हो और कर्तव्यपालन के बदले पुरस्कार की आशा नहीं करनी चाहिए, बल्कि जो मिले उसी में संतोष करना चाहिए। हमें पुरस्कार पाने के लिए उत्सुक नहीं रहना चाहिए। हमें इस बात के लिए उत्सुक रहना चाहिए कि हम इस जीवन को, जो हमें परमात्मा की इच्छा पूर्ण करने योग्य बनाता है, नष्ट न करें। इसलिए उन नौकरों के समान सदा तैयार रहो, जो अपने मालिक को आशाभारी नजर से देखते हैं। नौकरों को यह पता नहीं होता कि मालिक जल्दी या देर में लौटेगा, बल्कि उन्हें तो सदा ही तत्पर रहना होता है।

''और यही हालत इस जीवन की है। हमेशा और प्रति क्षण, हर किसी को परमात्मा की इच्छा पूरी करनी चाहिए, किसी को भी अपने-आपसे यह नहीं कहना चाहिए, 'मैं अमुक काम तब या वहाँ कर लूँगा।'

''इसलिए हमेशा उस शक्ति में और वर्तमान में ही वास करो। जीवन-शक्ति के लिए समय जैसी कोई वस्तु नहीं है। सदा सावधान रहो कि तुम चिंताओं के बोझ के नीचे न दब जाओ। अत्यधिक खान-पान या चिंताओं में न पड़ो और परमात्मा की शक्ति का ही सदा अपने पर शासन करने दो।''

जीवन का लक्ष्य

इसके बाद ईसा ने उन्हें एक और मिसाल यह जताने के लिए दी कि लोगों को जीवन कैसे बिताना चाहिए। उन्होंने कहा—

''एक मालिक ने एक बाग लगाया, उसने उसे खोदा और संवारा। उसने बाग को यथासंभव अधिक-से-अधिक फल प्राप्ति के योग्य बनाने के लिए सब-कुछ किया। फिर उसने मजदूरों को बाग में काम करने के लिए भेजा कि फल जमा करें और समझौते के अनुसार भुगतान करें। जब समय आया तो मालिक ने वसूली के लिए एक नौकर को भेजा; लेकिन मजदूर यह भूल गए थे कि बाग को उन्होंने नहीं लगाया और संवारा भी उन्होंने नहीं। वे तब आए थे जब बाग तैयार था। सो उन्होंने मालिक के आदमी को खाली हाथ लौटा दिया और उस बाग में ऐसे रहने लगे, जैसे वे ही मालिक हैं। उन्होंने यह नहीं सोचा कि बाग उनका नहीं और वे मालिक की इजाजत से ही उसमें रहते हैं। इस पर मालिक ने मजदूरों को यह याद कराने के लिए अपने कारिंदे को भेजा कि भुगतान का समय हो चुका है; लेकिन उन्होंने उसे भी भगा दिया। इसके बाद उसने अपने बेटे को भेजा। मज़दूरों ने सोचा कि अगर वे बेटे को मार डालते हैं तो वे खुद-ब-खुद मालिक बन जाएँगे। यह सोचकर उन्होंने उसे मार डाला।

''तब मालिक क्या करता? वह केवल उन मजदूरों को हटाकर उनकी जगह दूसरों को भेज सकता था।

''परमात्मा यह मालिक है, यह संसार बाग है, मनुष्य मजूदर हैं; आत्मिक जीवन भुगतान है; धर्मात्मा मनुष्य मालिक के दूत हैं, जो लोगों को याद कराते हैं कि उन्हें अपने शरीर के लिए नहीं, बल्कि आत्मा के लिए जीना चाहिए।

''जो लोग भटक गए हैं वे कल्पना करते हैं कि शारीरिक कल्याण के लिए ही उन्हें जीवन दिया गया है, परमात्मा की इच्छा-पूर्ति के लिए नहीं, और वे अपनी आत्म-शक्ति को मार डालते हैं और इस तरह अपने असली जीवन को खो देते हैं।''

शिक्षक न बनो

इसके बाद ईसा फिर यरूसलम में आए और फरीसियों के बुरे जीवन के विषय में लोगों के सामने गिरजे में बोले, 'स्क्रीबियों के उपदेशों के सावधान रहो, जो अपने को सच्चे धर्म का शिक्षक कहते हैं। उनसे सावधान रहो, क्योंकि उन्होंने असली शिक्षकों—नबियों की जगह ले ली है। उन्होंने स्वत: ही मनुष्यों को प्रभु-इच्छा की

शिक्षा देने का अधिकार ले लिया है। वे बातें बनाते हैं, लेकिन जो शिक्षा वे देते हैं उस पर अमल नहीं करते। वे शिक्षक बनना चाहते हैं और इसलिए दिखावा करने की कोशिश करते हैं। वे पहरावा बदल लेते हैं, अपने-आपको उपाधियाँ दे लेते हैं; लेकिन लाभकारी काम कोई नहीं करते। उन पर विश्वास मत करो। याद रखो कि किसी को भी खुद को 'शिक्षक'' नहीं कहना चाहिए। ये बने हुए, सच्चाई के ठेकेदार शिक्षक समझते हैं कि मनुष्यों को रीति-रिवाजों और प्रतिज्ञाओं के सहारे परमात्मा तक पहुँचाया जा सकता है। वे यह नहीं देखते कि बाहरी बातों के तो कोई मानी ही नहीं, लेकिन जो सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है, वह मनुष्य की आत्मा है। जो बाहरी और सहज है उसे वे पूरा करते हैं; लेकिन जो दर-असल आवश्यक और कठिन है, (प्रेम, दया, और सच) उसे वे बिल्कुल छोड़ देते हैं। वे बाहरी नियमों को स्थिर रखने की चिंता करते हैं और बाहरी साधनों द्वारा उसे दूसरों से स्वीकार कराते हैं। फलत: वे मुर्दों दके उस पुते हुए बक्से के समान हैं, जो बाहर से तो साफ है, लेकिन भीतर से घिनौना।

''बाहर से वे संतों और शहीदों का मान करते हैं; लेकिन दर-असल ये ही वे लोग हैं, जिन्होंने संतों को दुखी किया और मारा। जो भी अच्छाई है, उसके वे दुश्मन थे और हैं। संसार में सारी बुराई उन्हीं से आती है, क्योंकि जो अच्छाई है उसे वे छिपाते हैं और बुराई को अच्छाई बताते हैं। यही बात है, जिससे हमें सबसे ज्यादा डरना चाहिए, क्योंकि, तुम स्वयं जानते हो कि कोई भी गलती ठीक की जा सकती है; लेकिन जब तक मनुष्य अच्छाई क्या है, इस विषय में भूल करते रहते हैं, वे अपनी भूलों को ठीक नहीं कर सकते। बिल्कुल यही हालत है इन बने-हुए पादरियों की।''

इसके बाद ईसा ने कहा, ''मैं यहाँ यरूसलम में सब मनुष्यों का एका करना चाहता था, जिससे वे एक-दूसरे के साथ प्रेम करते हुए और एक-दूसरे की सेवा करते हुए जीवन बिताएँ, लेकिन ये लोग तो उन लोगों को मार डालना चाहते हैं, जो इस बात की शिक्षा देते हैं कि अच्छाई क्या है।''

इतना कहकर वह गिरजाघर से चले गए।

ईसा ने कहा, ''मैं तुम्हें सच कहता हूँ कि यह गिरजा अपना सारी सजावट के साथ गिरकर नष्ट हो जाएगा और इसका नामोनिशां भी नहीं रहेगा। लेकिन प्रभु का एक मंदिर (गिरजा) है—और वह उन लोगों के दिल में है, जो एक-दूसरे से प्रेम करते हैं।''

तब लोगों ने उनसे पूछा, ''वह मंदिर बनेगा कब?'' ईसा ने जवाब दिया, ''अभी तो नहीं। चिरकाल तक लोग दूसरों को धोखा देने के लिए मेरे उपदेशों का

उपयोग करेंगे और इससे युद्ध और अशांति होगी। सभी जगह बहुत ज्यादा अशांति होगी और प्रेम कम।'

"लेकिन जब हर कोई सत्य-उपदेशों को समझ लेगा तो बुराई और प्रलोभनों का अंत हो जाएगा।"

सच्चा निर्भयी है

स्क्रीबियों और फरीसियों ने ईसा को नष्ट करने के लिए जितनी भी कोशिशें हो सकती थीं, की। वे एक सभा में जमा हुए और उनका अंत कैसे लाया जाए, इस पर विचार शुरू हुआ। उन्होंने कहा, "इस आदमी को रोकना ही होगा। वह अपने उपदेशों को इतने प्रेरणात्मक ढंग से कहता है कि अगर उसे बढ़ने दिया गया तो हर कोई उसी पर विश्वास करेगा और हमारे धर्म को त्याग देगा। आधे लोग उस पर विश्वास भी करने लगे हैं और अगर हर कोई उसके इस उपदेश पर विश्वास कर लेगा सब मनुष्य भाई-भाई हैं और एक परमात्मा के पुत्र हैं और हमारे यहूदी लोग अन्य जातियों से अलग नहीं हैं, तो सभी चढ़ आएँगे और हमें जीत लेंगे और फिर यहूदी राज्य का अस्तित्व नहीं रहेगा।"

स्क्रीबियों और फरीसियों ने बहुत देर तक इस प्रश्न पर विचार किया। वे ईसा से पिंड छुड़ाने के लिए उन्हें मार डालना चाहते थे; लेकिन लोगों से उन्हें डर लगता था और वैसा करने की हिम्मत नहीं करते थे।

इस पर उनके लाट पादरी ने, जिनका नाम काइयाफस था, कहा, "आपको इतनी डरने की आवश्यकता नहीं। समूचे समुदाय की रक्षा के लिए कभी-कभी एक मनुष्य को मार भी डालना पड़ता है। अगर हम इस आदमी का अंत नहीं करते तो सारी जाति नष्ट हो जाएगी, अथवा अगर वह नष्ट नहीं होती तो वह बिखर जाएगी और हमारे एकमात्र सच्चे धर्म को त्याग देगी। इसलिए हमें ईसा को मार डालने में संकोच नहीं करना चाहिए।"

जब काइयाफस ने यह कहा, सब उसके साथ सहमत हो गए और उन्होंने ईसा को मार डालने का फैसला किया। अगर ईसा यरूसलम में होते तो वे उन्हें तत्काल पकड़ लेते और मार डालते, लेकिन उन दिनों वे कहाँ हैं, इसका उन्हें पता न था।

लेकिन जब पासओवर[1] के भोज का दिन नजदीक था तो लाट पादरी ने सोचा

---

1. यहूदियों का एक त्यौहार।

कि ईसा निश्चय ही दूसरे लोगों के साथ भोज में आएँगे। उन्होंने अपने नौकरों से कह दिया कि यदि कोई ईसा को देखे तो वह उन्हें उसके पास ले आवे।

और सचमुच ही, पासओवर से छह दिन पहले ईसा ने अपने शिष्यों से कहा, "चलो, अब हम यरूसलम चलें।" लेकिन शिष्यों को मालूम था कि लाट पादरी ईसा को मार डालना चाहते हैं, तो उन्होंने ईसा से यरूसलम न जाने की प्रार्थना की। उन्होंने कहा, "लाट पादरियों ने आपको पत्थरों से मार डालने का फैसला किया है। अगर आप वहाँ जाएँगे तो निश्चय ही वे आपको मार डालेंगे।"

ईसा ने जवाब दिया, "केवल वही, जो अंधेरे में चलता है, लड़खड़ाता और गिरता है, लेकिन जो सूर्य के प्रकाश में चलता है, वह लड़खड़ाता नहीं। वह मनुष्य गलती नहीं कर सकता तो परमात्मा की इच्छा के प्रकाश में वास करता है और जो प्रभु की इच्छानुसार आचरण करता है। ऐसा आदमी डर नहीं सकता। आओ, यरूसलम चलें।"

. वे तैयार हो गए और वहाँ गए।

षड्यंत्र

जब लोगों ने यरूसलम में सुना कि ईसा आ रहे हैं तो वे उनसे आगे बढ़कर मिलने गए, उन्हें घेर लिया, उन्हें गधे पर बैठाया, उनके आगे-आगे दौड़ने लगे और पेड़ों से टहनियाँ तोड़कर सड़क पर बिछा दीं। उन्होंने नारे लगाए, "यह है हमारा सच्चा बादशाह! इन्होंने हमें सच्चे प्रभु के विषय में बताया है।" इस तरह ईसा गधे पर सवार होकर यरूसलम में गए। लोगों ने पूछा कि वह कौन है ? तो जो उन्हें जानते थे उन्होंने कहा, "यह ईसा हैं, यह नबी हैं, जो गैलिली में नाजरथ से प्रकट हुए हैं।"

जब वह गिरजाघर के पास पहुंचे तो गधे से उतरे। वह गिरजे में दाखिल हुए और लोगों को उपदेश देने लगे। फरीसियों और पादरियों ने उन्हें देखा, एक-दूसरे से बोले, "द्रेखो, यह आदमी क्या कर रहा है। सब लोग उसी के पीछे चले जा रहे हैं।"

वे उसे फौरन पकड़ लेना चाहते थे, लेकिन हिम्मत नहीं थी, क्योंकि वे लोगों से डरते थे। तब उन्होंने योजना बनाई कि लोगों को उत्तेजित किए बिना यह कैसे किया जाए।

इधर ईसा लोगों को बिल्कुल स्थिर-भाव से शिक्षा देते रहे। यहूदियों के अलावा गिरजे में प्राचीन यूनानी भी थे। यूनानियों ने सुना था कि ईसा के उपदेश

केवल यहूदियों के लिए ही नहीं, बल्कि सब मनुष्यों के लिए हैं। वे उनके उपदेश सुनना चाहते थे। उन्होंने यह बात फिलिप को बताई और फिलिप ने एँड्रयू को।

ईसा और यूनानियों का मेल कराने से ईसा के शिष्य डरते थे। उन्हें डर था कि यहूदियों और दूसरी जातियों में भेद न करने से लोग ईसा के साथ नाराज होंगे। पहले तो वे उन्हें यह बताने का इरादा न कर सके कि यूनानी क्या चाहते हैं; लेकिन आखिर उन्होंने ईसा को यह बता दिया।

यह सुनकर कि यूनानी उनके शिष्य बनना चाहते हैं, ईसा पहले तो भौंचक्के रह गए। वह जानते थे कि उन्होंने यहूदियों और प्राचीन यूनानियों के बीच भेद नहीं रखा, इससे यहूदी उनसे नाराज़ होंगे। लेकिन जल्दी ही वह संभले और बोले, ''यहूदियों और यूनानियों में कोई अंतर नहीं, सब मनुष्यों में वही 'परम मनुष्य' है। यद्यपि मैं उसके लिए मरना चाहता हूँ,'' फिर भी उस 'परम-पुरुष' यानी सब मनुष्यों में एक प्रभु-शक्ति को स्वीकार करने का समय आ गया है। गेहूँ का एक दाना केवल तभी फलता है जब उसका निजी अस्तित्व नहीं रहता। मनुष्य केवल तभी पूर्ण होता है जब वह प्रभु-इच्छा की पूर्ति के लिए अपना जीवन दे देता है। जो अपने शारीरिक जीवन से प्यार करता है वह अपने आध्यात्मिक जीवन को नष्ट कर लेता है; लेकिन जो अपने शारीरिक जीवन का परित्याग करने को तैयार है वह आध्यात्मिक जीवन प्राप्त करता है।

''मेरी आत्मा में इस समय यह संघर्ष है: क्या मुझे अपने अस्थायी जीवन के प्रलोभन में फँसना है, या परम-पिता की इच्छा को पूरा करना है? जब वह समय आ गया है जबकि मुझे वही करना चाहिए, जिसके लिए मुझे संसार में भेजा गया था। क्या मैं यह कह सकता हूँ, ''हे परम-पिता, मुझे जो करना चाहिए, उससे मुझे मुक्त कर दे?'' मैं ऐसा कदापि नहीं कह सकता। मुझे केवल यही याचना करनी है, ''हे परम-पिता! अपने अंतस् में मैं आपका अनुभव करूँ, मैं 'परम-पुरुष' को प्रकाशित करूँ और सब मनुष्यों को परस्पर मिला दूँ।''

यहूदियों ने इसका उत्तर दिया, ''हमें मालूम है कि ईसा अवश्य आएगा, लेकिन 'परम-पुरुष' को प्रकाशित करने के तुम्हारे आशय को हम नहीं समझ सके।''

ईसा ने इसका उत्तर दिया, ''परम-पुरुष को प्रकाशित करने का अर्थ है आध्यात्मिक प्रकाश में रहना। हम सबके अंदर आध्यात्मिक प्रकाश मौजूद है। संपूर्ण अंतरिक्ष में व्याप्त 'परम पुरुष' को प्रकाशित करने का मतलब इस बात में विश्वास करना है कि हर मनुष्य में प्रभु-शक्ति विद्यमान है। जो मेरे उपदेशों में विश्वास करता है, वह मुझमें नहीं, बल्कि प्रभु-शक्ति में विश्वास करता है, और प्रभु-शक्ति

संसार को जीवन प्रदान करती है। आप में से हरेक में वह मौजूद है। जो मेरे उपदेशों को समझता है वह उस शक्ति को जानता है, क्योंकि वह शक्ति उसमें वास करती है और संसार को जीवन प्रदान करती है। अगर कोई मेरी बातों को सुनता है और उन्हें समझता नहीं है तो मैं उसे दोष नहीं देता, क्योंकि मैं दोष देने नहीं, बल्कि रक्षा करने आया हूँ। जो मेरे शब्दों को समझता नहीं, वह प्रभु-शक्ति में विश्वास नहीं करता, क्योंकि मैं जो कहता हूँ वह अपनी ओर से नहीं, बल्कि परम-पिता की शक्ति से कहता हूँ। परमात्मा की वही शक्ति मेरे अंदर है। जो मैं कहता हूँ, वह उस शक्ति ने ही मुझे बताया है।''

इतना कहकर, ईसा चले गए और लाट पादरी की आँखों से ओझल हो गए।

विश्वासघात

जिन्होंने इन प्रवचनों को सुना उनमें से अनेक अमीर और शक्तिशाली व्यक्ति ईसा के उपदेशों पर विश्वास करते थे; लेकिन वे फरीसियों के सामने इसे स्वीकार करने से डरते थे, क्योंकि एक भी फारसी उन उपदेशों को नहीं मानता था। वे इन उपदेशों की सच्चाई को स्वीकार नहीं करते थे, क्योंकि वे मानवी उपदेशों में विश्वास करने के आदी हो गए थे और परमात्मा के आदेशों को नहीं मानते थे।

उसके बाद लाट पादरियों और स्क्रीबियों ने काइयाफस के दरबार में सभा की और इस बात पर विचार किया कि ईसा को मार डालने के लिए उसे चोरी से कैसे पकड़ा जा सकता है? वे उसे खुले आम पकड़ने से डरते थे। ईसा के सबसे पहले शिष्यों में से एक, यहूदा, इस्क्रूती, उनकी सभा में आया और बोला, ''अगर लोगों के सामने आप ईसा को पकड़ने से डरते हैं तो मैं ऐसा मौका देखूँगा जब बहुत थोड़े लोग उनके साथ हों। मैं आपको बतला दूँगा कि वह कहाँ हैं और तब आप उन्हें पकड़ सकते हैं। आप लोग इसके बदले में मुझे क्या देंगे?'' इस पर उन्होंने उसे चाँदी के तीस टुकड़े देने का वचन दिया। यहूदा सहमत हो गया और तब से लेकर वह ईसा को लाट पादरियों के हवाले करने के मौके की तलाश में रहने लगा।

इसी बीच ईसा फिर यरूसलम से चले गए और अपने शिष्यों के साथ एकांत में रहने लगे। जब बिना खमीर की रोटी के भोज का पहला दिन आया तो शिष्यों ने उनसे पूछा, ''हम पासओवर का भोज कहाँ करेंगे?'' ईसा ने कहा, ''किसी एक गाँव में जाओ और जो पहला मकान पड़े उसी में प्रवेश करो और कहो कि पासओवर के भोज की तैयारी के लिए हमारे पास समय नहीं है; लेकिन हमें यहाँ भोज कर

लेने की स्वीकृति चाहिए।''

शिष्यों ने उनके कहे अनुसार किया और वे एक गाँव में गए। वहाँ सबसे पहले पड़नेवाले मकान में वे गए और मकान के मालिक ने उन्हें भीतर आने की स्वीकृति दे दी।

जब से सब आ गए—ईसा और उनके बारह शिष्य, जिनमें यहूदा इस्क्रूती भी था—तो वे पासओवर के भोज के लिए एक मेज पर बैठ गए। ईसा ने भाँप लिया कि यहूदा ने मार डालने के लिए उन्हें फरीसियों के हवाले करने का वचन दिया है; लेकिन वह यहूदा के साथ बुराई के एवज में बुराई नहीं करना चाहते थे और सब शिष्यों के सामने उस पर दोष नहीं लगाना चाहते थे। जिस प्रकार वह हमेशा अपने शिष्यों को प्रेम करने की शिक्षा देते थे, उसी तरह अब भी वह प्रेम से यहूदा के दिल को कोमल बनाना चाहते थे।

जब वह और उनके बारहों शिष्य मेज पर बैठे थे, ईसा ने थोड़ी-सी रोटी ली। उसके बारह टुकड़े किए और उनमें से हरेक को यह कहते हुए एक-एक टुकड़ा दिया, ''यह मेरा जिस्म है, इसे लो, और खाओ।'' इसके बाद उन्होंने एक प्याले में शराब उड़ेली और उसे शिष्यों के हवाले किया, और कहा, ''इस प्याले में से तुम सब पियो। यह मेरा खून है।''

इस तरह जब-एक करके उन्होंने प्याले में से शराब पी ली तो उसके बाद ईसा ने कहा, ''हाँ, यह मेरा खून है, जिसे मैं दुनिया के गुनाहों के लिए बहा रहा हूँ।'' इतना कह चुकने के बाद ईसा मेज पर से उठे, उन्होंने अपना चोगा उतार दिया, उन्होंने कमर में अँगोछा बाँधा, पानी का एक लोटा लिया, और बोले, ''अब मैं सब शिष्यों के पाँव धोऊँगा।'' पहले वह पतरस के पास आए; लेकिन पतरस वहाँ से यह कहता हुआ हट गया कि क्या एक गुरु शिष्यों के पाँव धो सकता है ? ईसा ने कहा, ''आप लोगों को यह विचित्र लगता है कि मैं आपके पाँव धोना चाहता हूँ, लेकिन जल्दी ही आप जान लेंगे कि मैं यह क्यों करता हूँ। मैं यह इसलिए करता हूँ कि यद्यपि आप लोग पवित्र हैं, तथापि आप में हर कोई पवित्र नहीं है।''

ईसा ने जब यह कहा तो वह यहूदा के बारे में सोच रहे थे।

तब ईसा ने यहूदा सहित सब शिष्यों के पाँव धोए। इसके बाद अपना चोगा पहनकर वह अपने सब शिष्यों को उपदेश देते हुए बोले—

''क्या आपको मालूम हुआ कि मैंने यह क्यों किया ? मैंने यह इसलिए किया है कि आपको भी हमेशा एक-दूसरे के साथ यही करना होगा। मैं, जो आप सबका गुरु हूँ, आप लोगों को यह सिखाने के लिए करता हूँ कि जो आपको तकलीफ दे उसके साथ आप कैसा बर्ताव करें। अगर आप यह जान लेंगे और इसी के अनुसार

अमल करेंगे तो इससे हमेशा आपका कल्याण ही होगा।''

इतना कहकर, ईसा उदास हो गए और आगे बोले, ''हाँ-हाँ, जिन सबके मैंने पाँव धोए हैं, उनमें से एक मुझे धोखा देगा।''

शिष्यों ने एक-दूसरे की ओर देखा। उन्हें पता नहीं था कि वह किसके बारे में कह रहे हैं। एक शिष्य ईसा के करीब ही बैठा था। साइमन पतरस ने उसे इशारा किया कि वह ईसा से पूछे कि वह किसके बारे में ऐसा कह रहे हैं। उसने पूछा। ईसा ने कहा, ''जिसे मैं रोटी का टुकड़ा दूँगा, वही वह शिष्य है।'' उन्होंने यहूदा इस्क्रूती को रोटी का एक टुकड़ा दिया, और कहा, ''जो कुछ तुम करना चाहते हो, उसे जल्दी से कर लो!'' पहले तो कोई भी न समझा कि ईसा के कहने का मतलब क्या है; लेकिन यहूदा समझ गया। जैसे ही उसने रोटी का टुकड़ा लिया वह उठा और बाहर निकल गया। जब तक और शिष्य समझें कि यह क्या हो रहा है तब तक उसे पकड़ने की कोशिश करने में काफी देर हो चुकी थी, क्योंकि रात अंधेरी थी।

जब यहूदा चला गया, ईसा ने कहा, ''बच्चो, मैं बहुत दिन तक तुम लोगों के साथ नहीं रहूँगा। मेरे उपदेशों के बारे में तर्क न करना, लेकिन, जैसाकि मैंने फरीसियों से कहा था, 'जो मैं कहता हूँ' वही करो। मैं तुम्हें एक नया आदेश देता हूँ—जैसे मैंने तुम सबसे अखीर तक प्यार किया है, इसी तरह तुम भी, अखीर तक एक-दूसरे के साथ, और सब मनुष्यों से प्रेम करो। इस एक आदेश में मेरे सारे उपदेश समा जाते हैं। केवल इसी एक आदेश का पालन करने से तुम मेरे सच्चे शिष्य बन सकते हो। एक-दूसरे से प्रेम करो और सब मनुष्यों से प्रेम करो।''

परमात्मा के साथ एकाकार

उन्होंने अपने शिष्यों से आगे कहा, ''प्रभु की पूर्णता के अधिकाधिक निकट आना ही जीवन है। वही एक मार्ग है। मैं इसका अनुसरण करता हूँ और आप इस मार्ग को जानते हैं।''

इस पर टॉमस ने उनसे कहा, ''नहीं, हम नहीं जानते कि आप कहाँ जा रहे हैं और इसलिए हम उस मार्ग को नहीं जान सकते।''

ईसा ने जवाब दिया, ''मैं परम-पिता के पास जा रहा हूँ, और मेरे उपदेश उस तक पहुँचने का मार्ग है। मेरे उपदेशों की राह के सिवाय कोई भी अपने जीवन को परम-पिता के साथ एकाकार नहीं कर सकता। प्रेम के बारे में मेरे उपदेशों को पूर्ण करो और आपको परम-पिता का ज्ञान हो जाएगा।''

फिलिप ने कहा, "हमें परम-पिता के दर्शन कराइए।"

ईसा ने जवाब दिया, "यह कैसी बात है कि आप परम-पिता को नहीं जानते! मेरा उपदेश है कि मैं परम-पिता में हूँ और परम-पिता मुझमें हैं। जो मेरे उपदेशों के अनुसार आचरण करता है और मेरे आदेशों को पूर्ण करता है वह परम-पिता को जान लेगा। मैं मर जाऊँगा और सांसारिक मनुष्य मुझे नहीं देखेंगे, लेकिन मेरी आत्म-शक्ति नहीं मरेगी और आप उससे जीवन प्राप्त करेंगे। तभी समझ सकेंगे कि मैं परम-पिता में हूँ और परम-पिता मुझमें हैं।"

इस पर यहूदा (इस्क्रूती नहीं बल्कि अन्य) ने पूछा, "क्या आपकी आत्म-शक्ति सब मनुष्यों में नहीं और केवल हममें ही प्रवेश करेगी?"

ईसा ने जवाब में कहा, "जो मेरे उपदेशों को पूरा करता है, उसे परम-पिता करते हैं और मेरी आत्म-शक्ति उसमें वास करती है। लेकिन परम-पिता उसे प्रेम नहीं करते, जो मेरे उपदेशों को पूरा नहीं करता और मेरी आत्म-शक्ति भी उस मनुष्य में वास नहीं करती। मेरे उपदेश मेरे निजी नहीं हैं, बल्कि परम-पिता के हैं।

"बस इतना ही इस समय मैं आपको बता सकता हूँ। लेकिन मेरी आत्म-शक्ति यानी सत्य की शक्ति बाद में आप लोगों में जगेंगी और तब मैंने जो आपको बताया है उसकी याद आएगी और वह अधिकांश समझ में आ जाएगा। जब आप इसे समझ लेंगे तो आप शान्ति अनुभव करेंगे—ऐसी शांति नहीं, जैसी सांसारिक लोगों को प्राप्त होती है; बल्कि ऐसी शांति कि आप किसी से भी नहीं डरेंगे।

"आप इस बात से दुखी क्यों हैं कि मैं आप सबको छोड़ रहा हूँ? मैं परम-पिता के पास जा रहा हूँ और उससे आप लोगों के पास सत्य की शक्ति के रूप में लौटकर आऊँगा, आप लोगों के दिलों में प्रवेश करूँगा। आपको मेरी मृत्यु पर दुखी नहीं, बल्कि खुश होना चाहिए; क्योंकि मेरी जगह—मेरे शरीर की जगह—आप लोग अपने दिलों में मेरी आत्म-शक्ति को पा जाएँगे और वह आप लोगों के लिए सुखकर है।"

प्रेम ही परमात्मा है

"अगर मेरे प्रेम के नियम से आप लोगों का पथ-निर्देश होगा और आप उस कानून का पालन करेंगे तो आपको आपकी इच्छानुसार सब कुछ प्राप्त होगा; क्योंकि यह परम-पिता की इच्छा है कि जिसकी तुम चाह करो, तुम्हें प्राप्त हो। चूँकि परम-पिता परमात्मा ने, जो अच्छा है, वही मुझे दिया है, इसलिए जो अच्छा है वह मैं

आपको देता हूँ। जैसे मैं परम-पिता का आदेश पूरा करता हूँ, उसी तरह अगर आप मेरा आदेश पूरा करेंगे तो आप धन्य हो जाएँगे। मेरा आदेश है कि जैसे मैं आपसे प्रेम करता हूँ आप भी एक-दूसरे से प्रेम करें, अर्थात् आप प्रेम के लिए अपना शारीरिक जीवन उत्सर्ग कर देने को तैयार रहें। मैंने जो आपको सिखाया है अगर आप उसके अनुसार आचरण करते हैं तो आप भी मेरे ही समान हैं। मैं आपको दास नहीं समझता, बल्कि अपने समान ही समझता हूँ, क्योंकि जो मैंने परमात्मा से समझा था वह सब आपको बता दिया है, और जो मैं करता हूँ उसे आप भी कर सकते हैं। मैंने आपको केवल सच्चा उपदेश दिया है और केवल वही उपदेश सच्चा कल्याण प्रदान करता है।

''एक-दूसरे से प्रेम करना ही संपूर्ण उपदेश है। अगर दुनिया आपसे नफरत करती है और आपको दंड देती है तो आश्चर्य न करो, क्योंकि मेरे उपदेश संसार के लिए घृणापूर्ण हैं। अगर आप दुनिया का साथ देते हैं तो वह आपसे प्रेम करेगी। लेकिन मैंने आपको दुनिया से अलग कर दिया है और इसलिए वह आपसे घृणा करेगी और आपको सज़ा देगी। अगर वे मुझे दंड देते हैं तो वे आपको भी दंड देंगे। वे ऐसा करने के लिए लाचार हैं, क्योंकि वे परमात्मा को नहीं जानते। मैंने उन्हें बताया है कि उनका परमात्मा कौन है, लेकिन वे मेरी बात नहीं सुनते। उन्होंने मेरे उपदेश को समझा नहीं। मैंने परमात्मा के बारे में उन्हें जो बताया था, वे उसे समझे नहीं। इस कारण उन्होंने मुझसे और भी ज्यादा नफरत की।

''मैं आपको इससे कहीं अधिक कहूँगा, लेकिन इस समय आपके लिए उसे समझना कठिन होगा। जब सत्य की शक्ति प्रवेश पा जाएगी तो वह आपको संपूर्ण सत्य प्रकट कर देगी, क्योंकि वह आपको कोई नई या अपना निजी कुछ नहीं बताएगी, बल्कि वह तो आपको प्रभु का आदेश ही बातएगी और आपके जीवन की सभी घटनाओं में आपको मार्ग दिखाएगी। आपके अंदर की यह शक्ति आपको वही बताएगी, जो मैं आपको बताता हूँ।''

सत्य-जीवन

इसके बाद ईसा ने अपनी दृष्टि ज़न्नत की ओर उठाई, और बोले, ''मेरे परम-पिता, आपने अपने पुत्र को जीवन की स्वतंत्रता प्रदान की है, जिससे वह सत्य-जीवन को प्राप्त कर सके। सत्य-प्रभु को जान लेना ही सत्य-जीवन है और मैंने मनुष्यों को आपका दर्शन कराया है। आपने मुझे जो करने की आज्ञा दी थी मैंने वह किया है। वे

पहले भी आपके थे, लेकिन आपके आदेशानुसार मैंने उन्हें सत्य प्रकट किया है कि आप उनके अंदर हैं और उन्होंने आपको पहचान लिया है। वे समझ गए हैं कि जो कुछ मुझमें है वह उनके भी अंदर है, और वह सब आप ही से आता है। वे समझ गए हैं कि यह सब जो मेरा है वह आपका है, और यह सब जो आपका है वह मेरा है। अब मैं संसार का नहीं रहा, बल्कि मैं आपके पास आ रहा हूँ; लेकिन वे तो संसार में रहेंगे और इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, हे पिता, उन्हें सत्य-पथ में बनाए रखना। मैं यह प्रार्थना नहीं करता कि आप उन्हें संसार से उठा लें, लेकिन यह प्रार्थना करता हूँ कि आप उन्हें उनके असत्य के लिए क्षमा करें, वे सब एक होकर रहें—जैसे आप मुझमें हैं और मैं आप में हूँ, और साथ ही यह भी कि वे हम में भी रहें। सब-के-सब मिलकर एक हों और सब यह समझें कि वे अपनी निजी इच्छा से नहीं जन्में, बल्कि आपने, उन्हें प्रेम करते हुए, इस संसार में भेजा है, जैसे कि आपने मुझे भेजा था।

'हे सत्य-पिता, यह संसार अभी आपको नहीं जानता, लेकिन मैं आपको जानता हूँ। वे मेरे द्वारा आपको जानना सीख गए हैं। मैंने उन्हें समझा दिया है कि आपने उन्हें प्रेम करते हुए जीवन प्रदान किया है और आपका यह प्रेम उनसे आपको ही लौटना चाहिए।''

अहंकार मत करो

इसके बाद ईसा उठे और अपने शिष्यों के साथ जैतून के पहाड़ पर गए। रास्ते में वह उनसे बोले, ''हाँ, जैसाकि धर्म-ग्रंथ में कहा है, वह समय आ गया है जब चरवाहा मार डाला जाएगा और भेड़ें बिखर जाएँगी। यही दशा आपकी होगी। मैं पकड़ा जाऊँगा और आप लोग भाग जाओगे।''

पतरस ने कहा, ''नहीं, मैं नहीं भागूँगा, हालांकि और सब भाग जाएँगे, लेकिन मैं आपको कदापि नहीं छोड़ूँगा। आपके साथ तो मैं कहीं भी जाने को तैयार हूँ—जेल या मृत्यु तक के लिए भी!''

लेकिन ईसा ने कहा, ''जो आपको करना हो, करोगे। उसके बारे में पहले से शेखी से बघारो।-संभव है, आज रात को, मुर्गे से बांग देने से पहले ही, आप एक बार नहीं, बल्कि तीन बार मेरा साथ छोड़ दें।''

''मैं ऐसा कभी नहीं करूँगा,'' पतरस ने कहा और दूसरे शिष्यों ने भी यही कहा।

जब वे गेट्समेन के बाग में पहुँचे तो ईसा ने उनसे कहा, ''थोड़ी देर यहाँ

विश्राम कर लो। मैं प्रार्थना करना चाहता हूँ।'' वह पतरस और ज़बेदी के दो बेटों को साथ ले गए, और उनसे बोले, ''मैं दुखी हूँ। मेरे साथ रहो।''

फिर वह उनसे कुछ परे चले गए और भूति पर लेट गए और प्रार्थना करने लगे, यह कहते हुए, ''मेरे परम-पिता, जो मेरे साथ होनेवाला है उससे मुझे मुक्त कर!'' इसके बाद वह थोड़ी देर तक चुप रहे फिर आगे बोले, ''लेकिन इसके साथ ही मेरी नहीं बल्कि आपकी इच्छा पूरी हो, और वह मेरी नहीं, बल्कि आपकी इच्छा के अनुसार ही।''

इसके बाद वह उठे औंर अपने शिष्यों के पास गए, लेकिन वे सब गहरी नींद में सोए पड़े थे। ईसा ने उन्हें जगाया और कहा, ''अपनी आत्मा में साहस उत्पन्न करो। केवल आत्म-शक्ति ही बलवान है, यह मांस का पुतला तो दुर्बल है।''

ईसा फिर वहाँ से चले गए और उन्होंने पुनः प्रार्थना शुरू की, कहा, 'हे मेरे परम-पिता! आपकी इच्छा पूर्ण हो, मेरे अनुसार नहीं बल्कि आपकी इच्छानुसार।''

यह कहकर वह अपने शिष्यों के पास लौट आए और देखा कि वे फिर से सो गए हैं। वह तीसरी बार उनके पास से चले गए और फिर बोले, ''हे मेरे परम-पिता, मेरी नहीं, बल्कि आपकी इच्छा पूर्ण हो!''

इसके बाद वह शिष्यों के पा लौट आए और उनसे बोले, ''अब आओ चलें, मैं अपने को सांसारिकता के हाथों में उत्सर्ग करने जा रहा हूँ।''

गिरफ्तारी

जैसे ही उन्होंने यह कहा यहूदा इस्क्रूती वहाँ आ पहुँचा। उसके साथ लाट पादरियों के हथियार-बंद फौजी तथा रोशनी लिए नौकर थे। यहूदा एकाएक ईसा के पास गया और उसने उन्हें नमस्कार किया और उन्हें चूमा।

ईसा ने उससे पूछा, ''मित्र, तुम क्यों आए हो?''

तुरंत ही सिपाहियों ने ईसा को घेर लिया और उन्हें पकड़ लेना चाहा। लेकिन पतरस ने लाट पादरी के एक नौकर से तलवार छीन ली और उसका दाहिना कान काट दिया। यह देखकर ईसा ने पतरस से कहा, ''तलवार को पुनः उसकी म्यान में रख दो। जो लोग तलवार उठाते हैं, वे तलवार से मारे जाएँगे।''

उसके बाद ईसा उन लोगों की ओर मुखातिब हुए जो उन्हें पकड़ने आए थे, और बोले, ''तुम लोग एक डाकू को पकड़ने की तरह मुझे हथियारों के साथ क्यों पकड़ने आए हो? क्या मैं हर रोज आप लोगों को उपदेश देता हुआ गिरजा में आपके

बीच में नहीं होता—तब आपने मुझे क्यों नहीं पकड़ा।?"

इस पर अफसर ने सिपाहियों को आज्ञा दी कि ईसा को बाँध लो और सिपाहियों ने उन्हें बाँध लिया। पहले वे उन्हें काइयाफस के पास ले गए। यह काइयाफस वही था, जिसने ईसा को मार डालने के लिए यह कहकर फरीसियों को प्रेरित किया था कि सारी जाति के मर जाने से तो एक आदमी का मरना कहीं बेहतर है। इस तरह ईसा को एक मकान के सहन में लाया गया।

ईसा के सारे शिष्य भाग गए। उनमें से केवल एक—पतरस—दूर-दूर रहता हुआ ईसा के पीछे चला और देखता रहा कि वे उन्हें कहाँ ले जाते हैं।

जब ईसा को लाट पादरी के सहन में लाया गया, तो पतरस भी यह देखने के लिए दाखिल हुआ कि क्या होता है। एक औरत ने उसे सहन में देखा और पूछा, "क्या तुम भी गैलिली के ईसा के साथ थे?" तब पतरस डरा कि कहीं वह भी ईसा के साथ गुनहगार न हो जाए और उत्तर दिया, "मैं नहीं जानता कि तुम किस बारे में बात कर रही हो।"

इसके बाद ईसा को मकान में अंदर ले जाया गया तो पतरस भी बाकी लोगों के साथ ड्यौढ़ी में दाखिल हुआ। वहाँ आग जल रही थी और एक दूसरी औरत आग ताप रही थी। जब पतरस उस आग के पास आया तो इस औरत ने उसकी ओर देखा और कहा, "मैं समझती हूँ कि यह आदमी नाजरथ में ईसा के साथ था।" पतरस इससे बहुत डर गया और कसमें खाने लगा कि वह ईसा के साथ कभी नहीं रहा और उसके बारे में कुछ नहीं जानता।

थोड़ी देर बाद कुछ दूसरे और लोग पतरस के पास गए और बोले, "तुम सब एक ही हो, तुम भी तो दंगाइयों में से एक हो। तुम्हारी बोली से लगता है कि तुम गैलिली के रहनेवाले हो।" इस पर पतरस ने फिर कसम खाई कि उसने तो ईसा को कभी देखा तक नहीं। बड़ी मुश्किल से अभी वह यह कह ही पाया था कि मुर्गे ने बाँग दी और पतरस को ईसा के ये शब्द याद हो आए, 'आज रात ही मुर्गे के बाँग देने से पहले तुम हो सकता है एक बार नहीं, तीन बार मुझे छोड़ दो।' वह सहन से बाहर चला गया और फूट-फूटकर रोने लगा।

यातना

बड़े-बूढ़े और स्क्रीबी लाट पादरी के मकान पर जमा हुए और जब वे सब आ गए तो ईसा को भीतर लाया गया और लाट पादरी ने पूछा कि वह क्या शिक्षा देता था और

उसके शिष्य कौन थे?

ईसा ने जवाब दिया, "मैं हमेशा हर किसी के सामने खुलेआम बोला हूँ और मैंने कभी किसी बात को नहीं छिपाया। आप मुझसे क्यों पूछते हैं? उन लोगों से पूछिए जिन्होंने मेरे उपदेशों को सुना और समझा है। वे ही आपको बताएँगे।"

जब ईसा ने यह कहा तो लाट पादरी के नौकरों में से एक ने उनके मुँह पर चाँटा मारा और कहा, "जानते हो तुम किससे बात कर रहे हो? क्या कोई लाट पादरी को ऐसे जवाब देता है?"

ईसा ने कहा, "अगर मैंने बुरी तरह जवाब दिया है तो मुझे बताओ कि उसमें गलत क्या था? लेकिन अगर मैंने बुरे तरीके से जवाब नहीं दिया तो तुम मुझे मारते क्यों हो?"

लाट पादरी और बड़े-बूढ़ों ने ईसा को सज़ा देने की कोशिश की, लेकिन उन्हें कोई सबूत न मिला। आखिर उन्होंने दो झूठे गवाह तैयार किए और इन गवाहों ने कहा कि ईसा ने ऐलान किया था कि वह गिरजाघर को नष्ट कर सकता है और उसे तीन दिन में बना भी सकता है। लाट पादरी ने ईसा से पूछा, "इसके बारे में तुम्हें क्या कहना है?" लेकिन ईसा ने जवाब नहीं दिया। इसके बाद लाट पादरी ने उनसे कहा, "तो हमें बताओ, क्या तुम ईसा, प्रभु के पुत्र हो?" ईसा ने जवाब दिया, "हाँ।"

इस पर लाटरी पादरी चिल्लाया, "तुम प्रभु के निंदक हो! हमें और सबूत क्या चाहिए? आप सबने सुना है कि यह किस प्रकार प्रभु की निंदा करता है?" लाट पादरी ने सभा में उपस्थित लोगों से कहा, "अब तो आप लोगों ने खुद ही सुन लिया कि यह किस प्रकार प्रभु की निंदा करता है! इसके लिए आप इसे क्या सज़ा देना चाहते हैं?"

इस पर उन सबने जवाब दिया, "मौत!"

इसके बाद सब लोग और संतरी ईसा पर झपटे और सबने उनके मुँह पर थूकना शुरू कर दिया और उनके चाँटे लगाने लगे। उन्होंने उनकी आँखों पर पट्टी बाँध दी, उन्हें पीटा और पूछा, "तुम तो प्रभु के पुत्र हो; अब तनिक अंदाज करो कि किसने तुम्हें पीटा है?" लेकिन ईसा मौन रहे।

निर्भयता

इसके बाद ईसा को बाँधकर रोमन गर्वनर, पॉंटियस पाइलट के पास ले जाया गया। जब उन्हें पाइलट के सामने उन्होंने हाज़िर किया तो पाइलट बाहर निकलकर

ड्यौढ़ी में आया। जो लोग ईसा को लाए थे उनसे उसने पूछा, "तुम इस आदमी पर क्या दोष लगाते हो?" उन्होंने जवाब दिया, "यह पापी है। इसलिए हमने इसे आपके सामने हाज़िर किया है।"

पाइलट ने जवाब दिया, "अगर तुम इसे पापी मानते हो तो तुम लोग खुद ही अपने नियमों द्वारा इसका न्याय करो।" लेकिन वे बोले, "हम इसे इसलिए लाए हैं कि आप इसे मृत्यु दंड दें, क्योंकि हमें किसी को मार डालने की इजाज़त नहीं है।"

तब पाइलट ने उनसे फिर पूछा कि ईसा का अपराध क्या है? वे बोले, "वह लोगों को भड़काता है और उन्हें सीज़र को कर अदा करने के लिए मना करता है और अपने-आपको यहूदियों का बादशाह कहता है।"

पाइलट ने उनकी बात सुनी और ईसा की अदालत में पेश करने की आज्ञा दी।

जब ईसा उसके सामने आए, पाइलट ने पूछा—

"क्या तुम यहूदियों के बादशाह हो?" ईसा ने जवाब दिया, "क्या आप अपनी ओर से मुझसे पूछ रहे हैं, या आप उन्हीं के शब्दों को दोहरा रहे हैं?"

पाइलट ने जवाब दिया, "मैं यहूदी नहीं हूँ। तुम्हारे ही लोग तुम्हें मेरे सामने लाए हैं, क्योंकि तुम अपने-आपको बादशाह कहते हो।"

ईसा ने कहा, "हाँ, मैं बादशाह हूँ, पर मेरा पृथ्वी पर का साम्राज्य नहीं है। अगर मैं भौतिकी वस्तुओं का बादशाह होता तो मेरी प्रजा मेरी ओर से लड़ती और मुझे वह यहूदियों के हाथों में न सौंपती। लेकिन आप देखते हैं, जो उन्होंने मेरे साथ किया है! मेरा पृथ्वी पर का राज नहीं है।"

तब पाइलट ने पूछा, "क्या तुम अब भी अपने को बादशाह मानते हो?"

ईसा ने कहा, "मैं लोगों को स्वर्ग के साम्राज्य के बारे में सच्चाई की शिक्षा देता हूँ और जो सच्चाई के साथ जीवन बिताता है वह बादशाह है।"

पाइलट ने कहा, "सच्चाई? सच्चाई क्या है?"

पाइलट ने ईसा की ओर पीठ की और वह बाहर यहूदियों के पास गया और उनसे बोला, "मैं नहीं समझता कि इस आदमी ने कोई बुराई की है, न ऐसी कोई बात है, जिसके लिए इसे मृत्यु-दंड दिया जाए।"

लेकिन लाट पादरियों ने यह कहते हुए अनुरोध किया कि इसने बहुत बुराई की है, लोगों को भड़काया है और सारे जूडिया को विद्रोही कर लिया है।

इसके बाद पाइलट ने लाट पादरियों की मौजूदगी में ईसा से फिर सवाल किया और उसने उनसे पूछा, "तुम देखते हो कि वे तुमको किस प्रकार अपराधी बतलाते हैं? तुम अपनी सफाई क्यों नहीं देते? लेकिन ईसा मौर रहे और एक भी शब्द न बोले। इससे पाइलट को बहुत ही आश्चर्य हुआ।

तब पाइलट को याद आया कि गैलिली तो बादशाह हैरोद के राज्य में है। उसने पूछा, "वह गैलिली का रहनेवाला तो नहीं? उन्होंने जवाब दिया कि वह वहीं का वासी है। इस पर पाइलट ने कहा, "अगर वह गैलिली का वासी है तो वह हैरोद के अधिकार में है।"-और यहूदियों से पिंड छुड़ाने के लिए पाइलट ने यहूदियों को हैरोद के पास भेज दिया।"

संकोच

तब ईसा को हैरोद के पास ले जाया गया। हैरोद ने ईसा के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था और उन्हें देखकर वह बहुत खुश हुआ। उसने ईसा को अपने सामने बुलाया और उनसे कई बातों के बारे में पूछना शुरू किया। लेकिन ईसा ने जवाब नहीं दिया। लाट पादरियों और स्क्रीबियों ने पाइलट के सामने पेश करने की तरह ही हैरोद के सामने भी ईसा पर अनेक दोष लगाए और कहा कि यह विद्रोही है। लेकिन हैरोद ने ईसा को महज एक बेवकूफ आदमी समझा और उसके सिर पर एक लाल फीता बाँधने की आज्ञा दी ताकि वह बेहूदा-सा दिखाई देने लगे और उसने बेवकूफी की इस पोशाक में उसे पाइलट के पास लौटा दिया।

जब वह पाइलट के सामने दूसरी बार लाया गया तो पाइलट ने यहूदियों के शासकों को फिर बुलाया और उनसे कहा, "आप इस आदमी को मेरे सामने इसलिए लाए थे कि वह लोगों को विद्रोह के लिए उकसाता है। मैंने आपके सामने ही इसकी जांच की थी और जान नहीं सका कि वह विद्रोही है। मैंने उसे आपके साथ हैरोद के पास भेजा था, और जैसाकि आप देखते हैं, वहाँ भी इसके खिलाफ कोई खतरनाक बात मालूम नहीं हो पाई। इसलिए मैं समझता हूँ कि इसे फाँसी नहीं दी जाएगी, लेकिन इसके कोड़े लगाए जाएँगे और उसके बाद छोड़ दिया जाएगा।

जब उन्होंने यह सुना तो वे सब चिल्ला उठे, "नहीं-नहीं, इसे रोमन तरीके से मौत की सजा दी जाए... इसे टिकटी पर कीलों से लटकाया जाए।"

पाइलट ने उनकी बात सुनी और बोला, "अच्छी बात है। लेकिन यह एक पुरानी रीति है कि पोसओवर के अवसर पर एक अपराधी की क्षमा-दान किया जाए। एक डाकू, बाराबास है, जिसे मृत्यु-दंड दिया गया है और दूसरा यह आदमी है। दो में से एक को मुक्त किया जा सकता है। इनमें से कौन छोड़ा जाए—ईसा या बाराबास।"

पाइलट ईसा को बचाना चाहता था, लेकिन लाट पादरियों ने लोगों को प्रेरणा

की और वे सब चिल्लाए, "बाराबास! बाराबास!"

लेकिन पाइलट अब भी ईसा को मृत्यु-दंड नहीं देना चाहता था और उसने लाट पादरियों को पुन: प्रेरणा की कि वह उसे मुक्त कर दें। वह बोला, "आप सब लोग उसके खिलाफ क्यों अड़ गए हैं? उसने कोई बुरा काम नहीं किया और उसे फाँसी देने का कोई कारण भी नजर नहीं आता।"

लेकिन लाट पादरी और उनके नौकरी फिर चिल्लाए, "उसे फाँसी दो! उसे रोमन तरीके से फाँसी दो! उसे फाँसी दो! उसे फाँसी दो!"

पाइलट ने कहा, "तब इसे ले जाओ और अपने-आप उसे फाँसी दो, क्योंकि मुझे तो उसमें कोई दोष दीखता नहीं।"

लाट पादरियों ने कहा, "कानून के अनुसार ही हम माँग करते हैं। अपने को 'प्रभु का पुत्र' कहने के लिए कानून के अनुसार उसे फाँसी दी जानी चाहिए।"

इस पर पाइलट असमंजस में पड़ गया, क्योंकि वह नहीं जानता था कि 'प्रभु का पुत्र' का मतलब क्या है?

वह लौटकर अदालत में चला गया और उसने फिर ईसा को बुलाया और उनसे पूछा, "तुम कौन हो, और कहाँ से आए हो?" लेकिन ईसा ने जवाब नहीं दिया। पाइलट ने कहा, "तुम मेरी बात का जवाब क्यों नहीं देते? क्या तुम जानते हो कि तुम मेरे अधिकार में हो और मैं तुम्हें फाँसी भी दे सकता हूँ और मुक्त भी कर सकता हूँ?"

इसके बाद ईसा ने जवाब दिया, "नहीं, आपका मुझ पर कोई अधिकार नहीं। अधिकार तो केवल परमात्मा का है।"

फाँसी की आज्ञा

पाइलट चाहता था कि ईसा को छोड़ दिया जाए और उसने फिर लोगों से बातचीत की, उसने कहा, "यह कैसी बात है कि आप लोग अपने 'बादशाह' को फाँसी देना चाहते हैं?"

लेकिन यहूदियों ने जवाब दिया, "अगर आपने ईसा को छोड़ दिया तो आप यह जाहिर कर देंगे कि आप सीज़र के स्वामिभक्त नौकर नहीं हैं, क्योंकि जो अपने-आपको बादशाह बताता है, वह सीजर का शत्रु है। हमारा एक बादशाह सीज़र है, इसलिए इस 'बादशाह' को फाँसी दो।"

जब पाइलट ने ये शब्द सुने तो उसने महसूस किया कि उसे ईसा को फाँसी देनी ही चाहिए। वह यहूदियों के पास बाहर आया, अपने हाथों पर उसने पानी

डाला, और बोला, "मैं इस बेगुनाह आदमी के खून से अपने हाथ नहीं रंगना चाहता।"

लोग चिल्लाए, "उसका खून हमारे और हमारे बच्चों के सिर पर रहने दो!"

तब पाइलट ने ईसा को पीटने का हुक्म दिया। जब सिपाही उन्हें पीट चुके तो उन्होंने उनके सिर पर ताज पहना दिया और उनके हाथ में एक लकड़ी थमा दी, उनके कंधों पर एक लाल ओढ़नी डाल दी और उनका मजाक उड़ाने लगे। वे उन्हें झुक-झुककर सलाम करते और कहते, पर "यहूदियों के बादशह की जय!" उन्होंने उनके मुँह और सिर पर प्रहार किए और उनके चेहरे पर थूका। वे सब चिल्लाते जाते थे, "इसे फाँसी दो! हमारा बादशाह सीज़र है... इसे फाँसी दो!"

अत:पाइलट ने ईसा को फाँसी देने का हुक्म दिया। उन्होंने लाल ओढ़नी उतार ली और उन पर उन्हीं के वस्त्र ओढ़ा दिए, और उन्हें फाँसी के स्थान पर टिकटी ले जाने को कहा, ताकि, उन्हें वहाँ फासी दी जा सके। इस जगह का नाम गॉलगोथा था।

उन्होंने उन्हें टिकटी पर कीलों से ठोंक दिया। दो दूसरे आदमियों को भी फाँसी पर लटकाया गया। ईसा मध्य में थे और उनकी दोनों ओर एक-एक आदमी।

ईसा ने कहा, "परम-पिता उन्हें माफ करो, क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं!"

अंत

जब ईसा टिकटी पर लटक रहे थे तो लोगों ने उन्हें घेर लिया और गालिया दीं। कुछ लोग उनके पास तक आए, अपने सिरों को हिलाते हुए कहते हैं, "देखो, तुम यरूसलम के गिरजे को नष्ट करना चाहते थे और तीन ही दिन में फिर बना लेना चाहते थे। अच्छा ही हुआ न अब! अपने-आपको बचाओ तो, इस टिकटी से उतरकर तो दिखाओ!"

लाट पादरी और स्क्रीबी वहाँ जमा हुए और उन पर हँसे। बोले, "वह दूसरों को बचाता था, लेकिन अपने-आपको नहीं बचा सकता! अब दिखाओ कि तुम ईसा हो। टिकटी से उतर आओ तो हम तुम पर विश्वास कर लेंगे। यह कहता था कि प्रभु का पुत्र है और परमात्मा उसे भूलेंगे नहीं अब परमात्मा ने उसे क्यों भुला दिया?"

दूसरे लोगों, लाट पादरियों और सिपाहियों—सबने उन्हें गालियाँ दीं।

जिन डाकुओं को उनके साथ ही फाँसी दी गई थी उनमें से एक बोला, "अगर तुम ईसा हो तो अपने-आपको और हमें भी बचाओ।" लेकिन दूसरे डाकू ने यह

सुनकर कहा, "तुम प्रभु से डरते नहीं। खुद ही अपने बुरे कामों के लिए टिकटी पर लटके हुए हो। इस पर भी एक बेगुनाह आदमी को गाली देते हो! तुमको और मुझे तो एक कारण से फाँसी पर लटकाया गया है, लेकिन इस आदमी ने तो कुछ भी बुरा नहीं किया।"

नौंवे घंटे पर ईसा ने ऊँची आवाज में कहा, "मेरे प्रभु, हे मेरे स्वामी, तुमने मुझे क्यों भुला दिया है?"

और जब लोगों ने यह सुना, वे हँसे और बोले, "वह एलियास नबी को बुला रहा है। आओ देखें तो कि एलियास आता या नहीं।"

इसके बाद ईसा बोले, "मुझे पीने को कुछ दो। और एक आदमी ने एक स्पंज लिया और उसे सिरके में डुबोकर और सरकंडे पर बाँधकर ईसा को दिया। ईसा ने स्पंज को चूस लिया और तब ऊँची आवाज़ में बोले, "मेरा काम पूरा हुआ। हे परम-पिता! मैं अपनी आत्मा को आपको हाथों में सौंपता हूँ।"

इसके बाद उनका सिर ढलक गया और वह चिर-शांत हो गए।

❐

कितनी जमीन ?

अनुवादक

जैनेंद्र कुमार

कितनी ज़मीन ?

1

दो बहनें थीं। बड़ी का कस्बे में एक सौदागर से विवाह हुआ था। छोटी देहात में किसान के घर ब्याही थी।

बड़ी का अपनी छोटी बहन के यहाँ आना हुआ। निबटकर दोनों जनी बैठीं तो बातों का सूत चल पड़ा। बड़ी अपने शहर के जीवन की तारीफ करने लगी, "देखो, कैसे आराम से हम रहते हैं। फैंसी कपड़े और ठाठ के सामान! स्वाद-स्वाद की खाने-पीने की चीजें, और फिर तमाशे-थिएटर, बाग-बगीचे!"

छोटी बहन को बात लग गई। अपनी बारी पर उसने सौदागर की जिंदगी को हेच बताया और किसान का पक्ष लिया। कहा, "मैं तो अपनी जिंदगी का तुम्हारे साथ अदला-बदला कभी न करूँ। हम सीधे-सादे और रूखे-से रहते हैं तो क्या, चिंता-फिकर से तो छूटे हैं। तुम लोग सजी-धजी रहती हो, तुम्हारे यहाँ आमदनी बहुत है। लेकिन एक रोज वह सब हवा भी हो सकता है, जीजी। कहावत है ही—हानि-लाभ दोई जुड़वाँ भाई। अक्सर होता है कि आज जो अमीर है कल वही टुकड़े को मोहताज है। पर हमारे गाँव के जीवन में यह जोखिम नहीं है। किसानी जिंदगी फूली और चिकनी नहीं दीखती तो क्या, उमर लंबी होती है और मेहनत से तंदुरुस्ती भी बनी रहती है। हम मालदार न कहलाएँगे; लेकिन हमारे पास खाने की कमी भी कभी न होगी।"

बड़ी बहन ने ताने से कहा, "बस-बस, पेट तो बैल और कुत्ते का भी भरता है। पर वह भी कोई जिंदगी है ? तुम्हें जीवन के आराम, अदब और आनंद का क्या पता है ? तुम्हारा मर्द जितनी चाहे मेहनत करे, जिस हालात में तुम जीते हो, उसी हालात में मरोगे, वही चारों तरफ गोबर, भुस, मिट्टी! और यही तुम्हारे बच्चों की किस्मत में बदा है।"

छोटी ने कहा, "तो इसमें क्या हुआ! हाँ, हमारा काम चिकना-चुपड़ा नहीं है; लेकिन हमें किसी के आगे झुकने की भी जरूरत नहीं है। शहर में तुम हजार लालच से घिरी रहती हो। आज नहीं तो कल की क्या खबर है।

कल तुम्हारे आदमी को पाप का लोभ—जुआ, शराब और दूसरी बुराइयाँ फँसा सकते हैं, तब घड़ी भर में सब बरबाद हो जाएगा। क्या ऐसी बातें अक्सर होती नहीं हैं ?''

घर का मालिक दीना ओसारे में पड़ा औरतों की यह बात सुन रहा था। उसने सोचा कि बात तो खरी है। बचपन से माँ-धरती की सेवा में हम इतने लगे रहते हैं कि कोई व्यर्थ की बात हमारे मन में घर नहीं कर पाती है। बस, है तो मुश्किल एक है। वह यह कि हमारे पास जमीन काफी नहीं है। जमीन खूब हो तो मुझे किसी की परवाह न रहे, चाहे शैतान ही क्यों न हो।

औरतों में फिर इधर की, उधर की, घर की और परिवार की सब बातचीत हुई। आखिर अलग होकर वे आराम करने लगीं।

लेकिन वहीं कोने में शैतान दुबका बैठा था। उसने सब कुछ सुना। वह खुश था कि किसान की बीवी ने गाँव की बड़ाई करके अपने आदमी को डींग पर चढ़ा दिया। देखो न, कहता था कि जमीन खूब हो तो फिर शैतान भी आ जाए तो परवाह नहीं।

शैतान ने मन में कहा कि अच्छा हजरत, यही फैसला सही। मैं तुमको काफी जमीन दूँगा और देखना है कि उसी से तुम मेरे चंगुल में होते हो कि नहीं।

2

गाँव के पास ही जमींदारी की मालकिन की कोठी थी। कोई तीन सौ एकड़ उनकी जमीन थी। उनके अपने आसामियों के साथ बड़े अच्छे संबंध रहते आए थे; लेकिन उन्होंने एक कारिंदा रखा, जो पहले फौज में रहा था। उसने आकर लोगों पर जुर्माने ठोकने शुरू कर दिए।

दीना का यह हाल था कि वह बहुतेरा करता, पर कभी तो उनका बैल जमींदारी की चरी में पहुँच जाता, कभी गाय बगिया में चरती पाई जाती। और नहीं तो उसकी रखाई हुई घास में बछिया-बछड़ा ही जा मुँह मारते। हर बार दीना को जुर्माना उठाना पड़ता। जुर्माना तो वह देता, पर बेमन। वह कुनमुनाता और चिढ़ा हुआ-सा घर पहुँचता और अपनी सारी चिढ़ घर में उतारता। पूरे मौसम कारिंदे की वजह से उसे ऐसा त्रास भुगतना पड़ा। जाड़ों का पतझड़ आने पर वह खुश होता कि चलो, अब जानवरों को अंदर बंद रखना पड़ेगा। ढोर तब बाहर चर सकते नहीं थे और उन्हें घर में रखकर खिलाना पड़ता था। पर चलो, दीना को जुर्माने की चिंता से तो मुक्ति मिल जाती थी।

अगले जाड़ों में गाँव में खबर हुई कि मालकिन अपनी जमीन बेच रही है

और मुंशी इकरामअली से सौदे की बातचीत चल रही है। किसान सुनकर चौकन्ने हुए। उन्होंने सोचा कि मुंशीजी की जमीन होगी तो वह जमींदार के कारिंदे से भी ज्यादा सख्ती करेंगे और जुर्माने चढ़ाएँगे और हमारी तो गुजर-बसर इसी जमीन पर है।

यह सोचकर किसान मालकिन के पास गए। कहा कि मुंशीजी को जमीन न दीजिए। हम उससे बढ़ती कीमत पर लेने को तैयार हैं। मालकिन राजी हो गई। तब किसानों ने कोशिश की कि मिलकर गाँव-पंचायत की तरफ से वह सब जमीन ली जा सके ताकि वह सभी की बनी रहे। दो बार इस पर विचार करने को पंचायत जुड़ी, पर फैसला न हुआ। असल में शैतान की सब करतूत थी। उसने उनके बीच फूट डाल दी थी। बस, तब वे मिलकर किसी एक मत पर आ ही नहीं सके। तय हुआ कि अलग-अलग करके ही वह जमीन ले ली जाए। हर कोई अपने बित्ते के हिसाब से ले। मालकिन पहले की तरह इस बात पर भी राजी हो गई।

इतने में दीना को मालूम हुआ कि एक पड़ोसी इकट्ठी पचास एकड़ जमीन ले रहा है और जमींदारिन राजी हो गई है कि आधा रुपया अभी नकद ले लें बाकी साल भर बाद चुकता हो जाएगा।

दीना ने अपनी स्त्री से कहा कि और जने खरीद रहे हैं। हमें भी बीस या इतने एकड़ जमीन लेनी चाहिए। जीना वैसे भार हो रहा है और वह कारिंदा जुर्माने-पर-जुर्माने करके हमें बरबाद ही कर देगा।

उन दोनों ने मिलकर विचार किया कि किस तरकीब से जमीन खरीदी जाए। सौ कलदार तो उनके पास बचे हुए रखे थे। एक उन्होंने उमर पर आया अपना बछड़ा बेच डाला। कुछ माल बँधक रखा। अपने बड़े बेटे को मजदूरी पर चढ़ाकर उसकी नौकरी के मद्दे कुछ रुपया पेशगी ले लिया। बाकी बचा अपनी स्त्री के भाई से उधार ले लिया। इस तरह कोई आधी रकम उन्होंने इकट्ठी कर ली।

इतना करके दीना ने एक चालीस एकड़ का जमीन का टुकड़ा पसंद किया जिसमें कुछ हिस्से में दरख्त भी खड़े थे। मालकिन के पास उसका सौदा करने पहुँचा। सौदा पट गया और वहीं-के-वहीं नकद उसने साई दे दी। फिर कस्बे में जाकर लिखा-पढ़ी पक्की कर ली।

अब दीना के पास अपनी निजी जमीन थी। उसने बीज खरीदा और इसी अपनी जमीन पर बोया। इस तरह वह अब खुद जमींदार हो गया। अपनी जमीन जोतता और बोता। अपनी जमीन पर चारा उगाता, फल के पेड़ लगाता। ईंधन भी वहीं हो

जाता था और उसके ढोरों को चराई के लिए बाहर नहीं जाना पड़ता था। अब वह अपने खेतों की तरफ जाता, या लहराती फसल को निहारता, या हरी घास की चरागाहों पर नजर फैलाता तो उसका मन हर्ष से भर जाता था। यह बिछी घास, उगते पौधे और फलते फूल ऐसे मालूम होते थे कि और सबसे बढ़कर। पहले जब वह वहाँ से गुजरता तो यह जमीन बिलकुल ऐसी मालूम होती थी जैसी और जमीन। लेकिन अब बात ही दूसरी हो गई थी।

3

इस तरह दीना काफी खुशहाल था। उसके संतोष में कोई कमी न रहती, अगर बस पड़ोसियों की तरफ से उसे पूरा चैन मिल सकता। कभी-कभी उसके खेतों पर पड़ोसियों के मवेशी आ चरते। दीना ने बहुत विनय के साथ समझाया, लेकिन कुछ फर्क नहीं हुआ। उसके बाद, और-तो-और, घोसी-छोकरे गाँव की गायों को दिन-दहाड़े उसकी जमीन में छोड़ देने लगे। रात को बैल खेतों का नुकसान करते। दीना ने उनको बार-बार निकलवाया और बार-बार उसने उनके मालिकों को माफ किया। एक अर्से तक वह धीरज रखे रहा और किसी के खिलाफ कार्रवाई नहीं की। लेकिन कब तक? आखिर उसका धीरज टूट गया और उसने अदालत में दरख्वास्त दी। मन में जानता तो था कि मुसीबत की वजह असली यह है कि और लोगों के पास जमीन की कमी है, जान-बूझकर दीना को सताने की मंशा किसी की नहीं है। लेकिन उसने सोचा कि इस तरह मैं नरमी दिखाता जाऊँगा तो वे लोग शह पाते जाएँगे और मेरे पास जितना है सब बरबाद कर देंगे। नहीं, उनको एक सबक सिखाना चाहिए।

सो उसने ठान ली। एक सबक दिया, दूसरा दिया। नतीजा कि दो-तीन किसानों पर अदालत से जुर्माना हो गया। इस पर तो पास-पड़ोस के लोग दीना से कीना रखने लगे। अब कभी-कभी जान-बूझकर भी तंग करने के लिए अपने मवेशी उसके खेतों में छोड़ देते। एक आदमी गया और उसे जरूरत अगर घर में ईंधन की थी तो उसने रात में जाकर सात पूरे शीशम के दरख्त काट गिराए। दीना ने सवेरे घूमते हुए देखा कि पेड़ कटे हुए पड़े हैं। वे धरती से सटे हैं और उनकी जगह खड़े ठूंठ मानो दीना को चिढ़ा रहे हैं। देखकर उसको तैश आ गया।

उसने सोचा कि अगर दुष्ट ने एक यहाँ का तो दूसरा दूर का पेड़ काटा होता तो भी गनीमत थी। लेकिन कमबख्त ने आस-पास के सब पेड़ काटकर बगिया को वीरान कर दिया। पता लगे तो खबर लिए बिना न छोड़ूं। उसने जानने के लिए सिर खुजलाया कि यह करतूत किसकी हो सकती है। आखिर तय किया कि हो-न-हो

यह धुन्नू होगा। और कोई ऐसा नहीं कर सकता। यह सोच धुन्नू की तरफ गया कि शायद कुछ सूत पकड़ाई मिले, लेकिन वहाँ कुछ चोरी का सबूत मिला नहीं और आपस में कहा-सुनी और तेजा-तेजी के सिवा कुछ नतीजा न निकला। तो भी उसके मन में पक्का हो गया कि धुन्नू ने ही यह किया है और जाकर रपट लिखा दी। धुन्नू की पेशी हुई, मामला चला। एक अदालत से दूसरी अदालत हुई। आखिर में धुन्नू बरी हो गया, क्योंकि कोई सबूत और गवाह ही नहीं थे। दीना इस बात पर और भी झल्ला उठा और अपना गुस्सा मजिस्ट्रेट पर उतारने लगा।

इस तरह दीना का अपने पड़ोसियों और अफसरों से मनमुटाव होने लगा, यहाँ तक कि उसके घर में भी आग लगाने की बातें सुनी जाने लगीं। अगर्चे दीना के पास अब जमीन ज्यादा थी और जमींदारों में गिनती थी, पर गाँव में और पंचों में पहला-सा उसका मान न रह गया था।

इसी बीच अफवाह उड़ी कि कुछ लोग गाँव छोड़-छोड़कर कहीं जा रहे हैं।

दीना ने सोचा कि मुझे तो अपनी जमीन छोड़ने की जरूरत है ही नहीं। लेकिन और कुछ लोग अगर गाँव छोड़ेंगे तो चलो, गाँव में भीड़ ही कम होगी। मैं उनकी जमीन खुद ले लूँगा। तब ज्यादा ठीक रहेगा। अब तो कुछ तंगी मालूम होती है।

एक दिन दीना घर के ओसारे में बैठा हुआ था कि एक परदेशी-सा किसान उधर से गुजरता हुआ उसके घर उतरा। वह वहाँ रातभर ठहरा और खाना भी



सबेरे घूमते देखा कि पेड़ कटे पड़े हैं

वहीं खाया। दीना ने उससे बातचीत की कि भाई कहाँ से आ रहे हो? उसने कहा कि दरिया सतलज के पार से आ रहा हूँ। वहाँ बहुत काम है। फिर एक में से दूसरी बात निकली और आदमी ने बताया कि उस तरफ नई बस्ती बस रही है। उसके अपने गाँव के कई और लोग वहाँ पहुँचे हैं। वे सोसायटी में शामिल हो गए हैं और हरेक को बीस एकड़ जमीन मुफ्त मिली है। जमीन ऐसी उम्दा है कि उस पर गेहूँ की पहली फसल जो हुई तो आदमी से ऊँची उसकी बालें गईं और इतनी घनी कि दराँत के एक काट में एक पूला बन जाए। एक आदमी के पास खाने को दाने न थे। खाली हाथ वहाँ पहुँचा। अब उसके पास दो गाएँ, छह बैल और भरा खलियान अलग।

दीना के मन में अभिलाषा पैदा हुई। उसने सोचा कि मैं यहाँ तंग सँकरी-सी जगह में पड़ा क्या कर रहा हूँ, जबकि दूसरी जगह मौका खुला पड़ा है। यहाँ की जमीन, घर-बार बेच-बाच कर नकदी बना वहीं क्यों न पहुँचूँ और नए सिरे से शुरू करके देखूँ। यहाँ लोगों की गिचपिच हुई जाती है। उससे दिक्कत होती है और तरक्की रुकती है, लेकिन पहले खुद जाकर मालूम कर आना चाहिए कि क्या बात है। सो बरसात के बाद तैयारी करके वह चल दिया। पहले रेल में गया, फिर सैकड़ों मील बैलगाड़ी पर या पैदल सफर करता हुआ सतलज के पारवाली जगह पर पहुँचा। वहाँ देखा कि जो उस आदमी ने कहा था, सब सच है। सबके पास खूब जमीन है। हरेक को सरकार की तरफ से बीस-बीस एकड़ जमीन मिली हुई है, या जो चाहे खरीद सकता है। और खूबी यह कि कौड़ियों के मोल जितनी चाहे जमीन और भी ले लो।

सब जरूरी बातें मालूम करके दीना जाड़ों से पहले-पहल घर आ गया। आकर देश छोड़ने की बातें सोचने लगा। नफे के साथ उसने सब जमीन बेच डाली। घर-मकान, मवेशी-डंगर सबकी नकदी बना ली और पंचायत से इस्तीफा दे दिया और सब कुनबे को साथ ले सतलज-पार लिए रवाना हो गया।

4

दीना परिवार के साथ उस जगह पहुँच गया। जाते ही एक बड़े गाँव की पंचायत में शामिल होने की अर्जी दी। पंचों की उसने खूब खातिर की और दावतें दीं। जमीन का पट्टा उसे सहज मिल गया। मिली-जुली जमीन में से उसके और उसके बालबच्चों के इस्तेमाल के लिए पाँच हिस्से यानी सौ एकड़ जमीन उसको दे दी गई। वह सब इकट्ठी नहीं थी, टुकड़े कई जगह थे। अलावा इसके पंचायती चरागाह भी उसके लिए खुला कर दिया गया। दीना ने जरूरी इमारतें अपने लिए खड़ी कीं और

मवेशी खरीद लिए। शामलात जमीन में से ही अब उसको इतना मिल गया था कि पहले से तिगुनी, और जमीन उपजाऊ थी। वह पहले से कई गुना खुशहाल हो गया। उसके पास चराई के लिए खुला मैदान-का-मैदान पड़ा था और जितने चाहे वह ढोर रख सकता था।

पहले तो वहाँ जमने और मकान-वकान बनवाने का उसे रस रहा। वह अपने से खुश था और उसे गर्व मालूम होता था। पर जब वह इस खुशहाली का आदी हो गया तो उसे लगने लगा कि यहाँ भी जमीन काफी नहीं है; और होती तो अच्छा था। पहले साल उसने गेहूँ बुवाया और जमीन ने अच्छी फसल दी। वह फिर गेहूँ ही बोते जाना चाहता था, पर उसके लिए और पड़ती जमीन काफी न थी। जो एक बार आ चुकती थी, वह उस तरफ एक साथ दोबारा गेहूँ नहीं देती थी। एक या दो साल उससे गेहूँ ले सकते थे, फिर जरूरी होता था कि धरती को आराम दिया जाए। बहुत लोग ऐसी जमीन चाहनेवाले थे, लेकिन सबके लिए आती कहां से? इससे बदाबदी और खींचातानी होती थी। जो संपन्न थे, वे गेहूँ उगाने के लिए जमीन चाहते थे। जो गरीब थे वे अपनी जमीन से जैसे-तैसे पैसा वसूल करना चाहते थे, ताकि टैक्स वगैरा अदा कर सकें। दीना और गेहूँ बोना चाहता था। इसलिए एक साल के लिए किराए पर उसने और जमीन ले ली। खूब गेहूँ बोया और फसल भी खूब हुई। लेकिन जमीन गाँव से दूर पड़ती थी और गल्ला मीलों दूर से गाड़ी में भर-भरकर लाना होता था। कुछ दिनों बाद दीना ने देखा कि कुछ बड़े-बड़े लोग अलग फार्म डाल कर रहते है और वे खूब पैसा कमा रहे हैं। उसने सोचा कि अगर मैं इकट्ठी कायमी जमीन ले लूँ और वहीं घर बसाकर रहूँ तो बात ही दूसरी हो जाए।

इस तरह इकट्ठी और कायमी जमीन खरीदने का सवाल बार-बार उसके मन में उठने लगा।

तीन साल इस तरह निकले। जमीन किराए पर लेता और गेहूँ बोता। मौसम ठीक गए, काश्त अच्छी हुई और दीना के पास माल जमा होने लगा। वह इसी तरह संतोष से बढ़ता जा सकता था, लेकिन हर साल और लोगों से जमीन किराए पर लेने और उसके लिए कोशिश और सिरदर्दी करने के काम से वह थक गया था। जहाँ जमीन अच्छी होती, वहीं लेनेवाले दौड़ पड़ते। इससे बहुत चौकस-चौकन्ना और होशियार न रहा जाता तो जमीन मिलना असंभव था। यह एक परेशानी की बात थी। तिसपर तीसरे साल ऐसा हुआ कि दीना ने एक महाजन के साझे में कुछ काश्तकारों से एक जमीन किराए ली। जमीन गोड़ कर तैयार हो चुकी थी कि कुछ आपस में तनातनी हो गई और किसान लोग झगड़ा लेकर अदालत पहुँचे। अदालत से मामला

बिगड़ गया और की-कराई मेहनत बेकार गई।

दीना ने सोचा कि अगर कहीं जमीन मेरी कायमी मिल्कियत की होती तो मैं आजाद होता और काहे को यह पचड़ा बनता और बखेड़ा बढ़ता।

उस दिन से वह जमीन के लिए निगाह रखने लगा। आखिर एक किसान मिला, जिसने एक हजार एकड़ जमीन खरीदी थी, लेकिन पीछे उसकी हालत संभली न रही। अब मुसीबत में पड़कर वह उसे सस्ती देने को तैयार था। दीना ने बात उससे चलाई और सौदा करना शुरू किया। आदमी मुसीबत में था, इससे दीना भाव-दर में कसा-कसी भी कर सका। आखिर कीमत एक हजार रुपए तय पाई। कुछ नकद दे दिया जाए, बाकी फिर। सौदा पक्का हो ही गया था कि एक सौदागर अपने घोड़े के दाने-पानी के लिए उसके घर के आगे ठहरा। उससे दीना की बातचीत जो हुई तो सौदागर ने कहा कि मैं नर्मदा नदी के उस पार से चला आ रहा हूँ। वहाँ 1500 एकड़ उम्दा जमीन कुल पाँच सौ रुपए में मैंने खरीदी थी। सुनकर दीना ने उससे और सवाल पूछे। सौदागर ने कहा—

"बात यह है कि अफसर-चौधरी से मेल-मुलाकात करने का हुनर चाहिए। सौ से बढ़ती रुपए तो मैंने रेशमी कपड़े और गलीचे देने में खर्च किए होंगे। फिर



सौदागर ने कहा, "वहाँ जमीन मुफ्त के भाव ले सकते हो।"

शराब, फल-मेवों की डालियाँ, चाय-सेट वगैरा के उपहार अलग। नतीजा यह कि फी एकड़ मुझे जमीन आनों के भाव पड़ गई।" कहकर सौदागर ने अपने दस्तावेज सब दीना के सामने कर दिए।

फिर कहा, "जमीन ऐन नदी के किनारे है और सारे-का-सारा किता इकट्ठा है। उपजाऊ इतना कि क्या पूछो।"

दीना ने इस पर उत्सुकतापूर्वक सौदागर से सवाल-पर-सवाल किए। उसने बताया—

"वहाँ इतनी जमीन है, इतनी, कि तुम महीनों चलो तो पूरी न हो। वहाँ के लोग ऐसे सीधे हैं जैसे भेड़। और जमीन समझो मुफ्त के भाव ले सकते हो।"

दीना ने सोचा, यह ठीक रहेगा। भला मैं अब हजार एकड़ के लिए हजार रुपए क्यों फसाऊँ? अगर वहाँ जाकर इतना रुपया जमीन में लगाऊँ तो यहाँ से कई गुनी ज्यादा जमीन मुझे पड़ जाएगी।

5

दीना ने पूछताछ की कि उस जगह कैसे जाया जाए। सौदागर ने सब बतला दिया। वह चला गया तो दीना ने भी अपनी तैयारी शुरू की। बीवी को कहा कि घर देखना-भालना और खुद एक आदमी साथ ले यात्रा को निकल पड़ा। रास्ते में एक शहर में ठहरकर, वहाँ से चाय के डब्बे और शराब और इसी तरह और उपहार की चीजें जो सौदागर ने बताई थीं, ले लीं। फिर दोनों बढ़ते गए, बढ़ते गए। चलते-चलते आखिर सातवें रोज वहाँ पहुँचे जहाँ से कोल लोगों की बस्ती शुरू होती थी। देखा तो यहाँ सौदागर ने बताई वही बात थी। दरिया के पास जमीन-ही-जमीन थी। सब खाली। ये लोग उससे काम न लेते थे। कपड़े या सिरकी के तंबू में रहते, शिकार करते, मवेशी पालते और ऐसे ही मौज करते थे। न रोटी बनाना जानते थे, न नाज उगाना सीखे थे। दूध का छाछ-मठा बनाते, पनीर बनाते, और उसकी एक तरह की शराब भी तैयार कर लेते थे। ये सब काम औरतें करतीं। मर्द खाने-पीने और फुर्सत के वक्त चैन की बंसी बजाने में रहते। वे लोग मजबूत और स्वस्थ थे और काम-धाम के नाम बिना कुछ किए मगन रहते थे। अपने से बाहर उन्हें कुछ पता न था। पढ़ना-लिखना सीखे नहीं थे और हिंदी तक नहीं जानते थे। पर थे भले-सीधे स्वभाव के। दीना को देखते ही वे अपने तंबुओं से निकल आए और उसके चारों तरफ जमघट लगाकर खड़े हो गए। उनमें के एक दुभाषिए की मार्फत दीना ने बतलाया कि मैं जमीन की खातिर आया हूं। वे लोग बड़े खुश मालूम हुए। बड़ी आवभगत के साथ वे उसे अपने अच्छे-से-

अच्छे डेरे में ले गए। वहाँ कालीन पर बिछे गद्दे पर बिठाया और खुद नीचे चारों ओर घिरकर बैठ गए। उसे पीने को चाय दी और दारू भी। उसकी मेहमानी में बढ़-चढ़कर दावत हुई। दीना ने भी गाड़ी में से अपने पास से भेंट की चीजें निकालीं और सबको थोड़ी-थोड़ी चाय बांटी। कोल लोग बड़े खुश थे। उन्होंने आपस में इस अजनबी की बाबत खूब चर्चा की। फिर दुभाषिए से कहा कि मेहमान को सब समझा दो।

दुभाषिए ने कहा कि ये लोग कहना चाहते हैं कि हम आपके आने से खुश हैं। हमारे यहाँ का कायदा है कि मेहमान की खातिर जो हमसे बन सके, करें। आपकी कृपा के हम कृतज्ञ हैं। बतलाइए कि हमारे पास कौन-सी चीज है जो आपको सबसे पसंद है, ताकि हम उसी से आपकी खातिर कर सकें।

दीना ने जवाब दिया कि जिस चीज को देखकर मैं बहुत खुश हूँ, वह आपकी जमीन है। हमारे यहाँ जमीन की कमी है और वह उपजाऊ भी इतनी नहीं होती लेकिन यहाँ उसका कोई पार नहीं है और वह जमीन उपजाऊ भी खूब है। मैंने तो अपनी आँखों से यहाँ-जैसी धरती दूसरी देखी नहीं।

दुभाषिए ने दीना की बात अपने लोगों को समझा दी। कुछ देर वे आपस में सलाह करते रहे। दीना समझ नहीं सका कि वे क्या कह रहे हैं। लेकिन उसने देखा कि वे बहुत खुश मालूम होते हैं, बड़े हँस रहे हैं और जोर-जोर से बोल रहे हैं। अनंतर वे चुप हुए और दीना की तरफ देखने लगे।

फिर आपस में बात करने लगे। मालूम पड़ा कि जैसे उनमें कुछ दुविधा है। दीना ने पूछा कि उन लोगों में अब किस बात की अटक है। दुभाषिए ने बताया कि उनमें कुछ की राय है कि सरदार से जमीन देने के बारे में और पूछ लेना चाहिए, गैर-हाजिरी में कुछ कर डालना ठीक नहीं है। दूसरों का खयाल है कि इस बात में सरदार के लौटने की राह देखने की जरूरत नहीं है, जरा-सी तो बात है।

6

यह विवाद चल रहा था कि एक आदमी बड़ी-सी बालदार टोपी पहने वहाँ आ पहुँचा। सब चुप होकर उसके सम्मान में खड़े हो गए। दुभाषिए ने कहा कि यही हमारे सरदार हैं।

दीना ने फौरन अपने सामान में से एक बढ़िया लबादा निकाला और चाय का एक बड़ा डिब्बा; और ये चीजें सरदार को भेंट कीं। सरदार ने भेंट स्वीकार की और अपने आसन पर आ बैठा। बैठते ही कोल लोगों ने उससे कुछ कहना शुरू किया।

सरदार कुछ देर सुनता रहा। फिर उसने उन्हें चुप रहने का इशारा किया। उसके बाद दीना की तरफ मुखातिब होकर हिंदुस्तानी में कहा—

''इन भाइयों ने जो कहा, ठीक है। जो जमीन चाहे चुन लो। हमारे यहाँ उसका घाटा नहीं है।''

दीना ने सोचा कि मैं मनचाहे जितनी जमीन कैसे ले सकता हूँ। पक्का करने के लिए दस्तावेज वगैरा भी तो चाहिए, नहीं तो जैसे आज इन्होंने कह किया कि यह तुम्हारी है, पीछे वैसे ही उसे ले भी सकते हैं।

प्रकट में उसने कहा, ''आपकी दया के लिए मैं कृतज्ञ हूँ। आपके पास बहुत धरती है और मुझे थोड़ी-सी चाहिए। लेकिन मुझे भरोसा होना चाहिए कि मेरा अपना छोटा टुकड़ा कौन-सा है और यह कि वह मेरा ही है। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि जमीन को नाप लिया जाए और उतना टुकड़ा फिर मेरे हवाले कर दिया जाए? मरना-जीना ईश्वर के हाथ है और संसार में यही चक्कर चलता है। आप दयावान लोग तो मुझे ये देते हैं, पर हो सकता है कि पीछे आपकी औलाद उसी को वापस ले लेना चाहे तब— ?''

सरदार ने कहा, ''तुम्हारी बात ठीक है। जमीन तुम्हारे हवाले ही कर दी जाएगी।''

दीना ने कहा, ''सुना है, यहाँ एक सौदागर आया था। उसको भी आपने जमीन दी थी और उस बाबत कागज पक्का कर दिया था। वैसे ही मैं चाहता हूं कि कागज पक्का हो जाए।''

सरदार समझ गया।

बोला, ''हाँ, जरूर। यह तो आसानी से हो सकता है। हमारे यहाँ एक मुंशी है, कस्बे में चलकर लिखा-पढ़ी पक्की कर ली जाएगी और रजिस्ट्री हो जाएगी।''

दीना ने पूछा, ''कीमत की दर क्या होगी?''

''हमारी दर तो एक ही है। एक दिन के एक हजार रुपए।''

दीना समझा नहीं। बोला, ''दिन! दिन का हिसाब यह कैसा है? यह बताइए कितने एकड़?''

सरदार ने कहा, ''यह सब गिनना-गिनाना हमसे नहीं होता। हम तो दिन के हिसाब से बेचते हैं। जितनी जमीन एक दिन में पैदल चलकर तुम नाप डालो, वही तुम्हारी। और कीमत है ही दिनभर की एक हजार।''

दीना अचरज में पड़ गया। कहा, ''एक दिन में तो बहुत-सी जमीन को घेरा जा सकता है।''

सरदार हँसा। बोला, "हाँ, क्यों नहीं। बस, वह सब तुम्हारी।" लेकिन एक शर्त है। अगर तुम उसी दिन उसी जगह न आ गए, जहाँ से चले थे, तो कीमत जब्त समझी जाएगी।"

"लेकिन मुझे पता कैसे चलेगा कि मैं इस जगह से चला था।"

"क्यों, हम सब साथ चलेंगे और जहाँ तुम ठहरने को कहोगे ठहरे रहेंगे। उस जगह से शुरू करना और वहीं लौट आना। साथ फावड़ा ले लेना। जहाँ जरूरी समझा, निशान लगा दिया। हर मोड़ पर एक गड्ढा किया और उस पर घास को जरा ऊँचा चिन दिया। पीछे फिर हम लोग चलेंगे और हल से इस निशान से उस निशान तक हदबंदी खींच देंगे। अब दिनभर में जितना चाहो बड़े-से-बड़ा चक्कर तुम लगा सकते हो। पर सूरज छिपने से पहले जहाँ से चले थे वहाँ आ पहुँचना। जितनी जमीन तुम इस तरह नाप लोगे वह तुम्हारी हो जाएगी।"

दीना खुश हुआ। तय हुआ कि अगले सवेरे ही चलना शुरू कर दिया जाएगा। फिर कुछ गपशप हुई, खाना-पीना हुआ। ऐसे ही करते-कराते रात हो गई। दीना के लिए उन्होंने खूब आराम का परों का बिस्तर लगा दिया और वे लोग रातभर के लिए विदा हो गए। कह गए कि पौ फटने से पहले ही वे आ जाएँगे ताकि सूरज निकलने से पहले-पहले मुकाम पर पहुँच जाया जाए।

7

दीना अपने परों के बिस्तरे पर लेटा तो रहा, पर उसे नींद न आई। रह-रहकर वह जमीन के बारे में सोचने लगता था—

"चलकर मैं कितनी जमीन नाप डालूँगा, कुछ ठिकाना है! एक दिन में पैंतीस मील तो आसानी से कर ही लूँगा। दिन आजकल लंबे होते हैं और पैंतीस मील!—कितनी जमीन उसमें आ जाएगी! उसमें से घटियावाली तो बेच दूँगा या किराए पर उठा दूँगा। लेकिन जो चुनी हुई उम्दा होगी वहाँ अपना फार्म बनाऊँगा। दो दर्जन तो बैल फिलहाल काफी होंगे। दो आदमी भी रखने होंगे। कोई डेढ़ सौ एकड़ में तो काश्त करूँगा। बाकी चराई के लिए।"

दीना रातभर पड़ा जमीन-आसमान के कुलाबे मिलाता रहा। देर-रात कहीं थोड़ी नींद आई। आँख झपी होगी कि एक सपना दिखाई दिया। ....वह उसी डेरे में है....कि किसी के बाहर से खिलखिलाकर हँसने की आवाज उसके कानों में आई। अचरज हुआ कि यह कौन हो सकता है? उठकर बाहर आकर देखा कि कोल लोगों का वह सरदार ही बाहर बैठा ठट्ठा दे-देकर हंस रहा

है। हँसी के मारे अपना पेट पकड़ लेता है। पास जाकर दीना ने पूछा, "आप ऐसा हँस क्यों रहे हैं?" लेकिन अभी पूछ पाया नहीं था कि देखता क्या है कि वहाँ सरदार तो है नहीं, बल्कि वह सौदागर बैठा है जो अभी कुछ दिन पहले उसे अपने देश में मिला था और जिसने इस जमीन की बात बताई थी। तब दीना उससे पूछने को हुआ कि यहाँ तुम कैसे हो और कब आए? लेकिन देखा तो वह सौदागर भी नहीं, बल्कि वह पुराना किसान है जिसने मुद्दत हुई तब सतलज-पार की जमीन का पता दिया था। लेकिन फिर जो देखता है तो वह किसान भी नहीं है, बल्कि खुद शैतान है, जिसके खुर हैं और सींग हैं। वही वहाँ बैठा ठट्ठा मारकर हंस रहा है। सामने उसके एक आदमी पड़ा हुआ है—नंगे पैर, बदन पर बस एक कुर्त्ता-धोती। जमीन पर वह आदमी औंधे मुँह बेहाल पड़ा है। दीना ने सपने में ही ध्यान से देखा कि ऐसे पड़ा हुआ आदमी वह कौन है और कैसा है? देखता क्या है कि वह आदमी दूसरा कोई नहीं, खुद दीना ही है और उसकी जान निकल चुकी है। यह देख मारे डर के वह घबरा गया। इतने में उसकी आँख खुल गई।

उठकर सोचा कि सपने में आदमी जाने क्या-क्या वाहियात बातें देख जाता है। अंह! यह सोचकर मुँह मोड़ दरवाजे के बाहर झाँककर जो देखा तो सवेरा होनेवाला था। सोचा, समय हो गया। उन्हें अब जगा देना चाहिए। चलने में देर ठीक नहीं।

वह खड़ा हो गया और गाड़ी में सोते हुए अपने आदमी को जगाया। कहा कि गाड़ी तैयार करो। खुद कोल लोगों को बुलाने चल दिया।

जाकर कहा, "सवेरा हो गया है। जमीन नापने चल पड़ना चाहिए।" कोल लोग सब उठे और इकट्ठे हुए। सरदार भी आ गए। चलने से पहले उन्होंने चाय की तैयारी की और दीना को चाय के लिए पूछा। लेकिन चाय में देर होने का खयाल कर उसने कहा, "अगर जाना है तो हमको चल देना चाहिए। वक्त बहुत हो गया।"

8

कोल तैयार हुए और सब चल पड़े। कुछ घोड़े पर, कुछ गाड़ी में। दीना नौकर के साथ अपनी छोटी बहली में सवार था। फावड़ा उसने साथ रख लिया था। खुले मैदान में जब पहुँचे, तड़का फूट ही रहा था। पास एक ऊँची टेकड़ी थी, पार खुला बिछा मैदान। टेकड़ी पर पहुँचकर गाड़ी-घोड़ों से सब उतर आए और एक जगह जमा हुए। सरदार ने फिर आगे जाने कितनी दूर तक फैले मैदान की तरफ हाथ उठाकर दीना से कहा कि देखते हो? यह सब, आँख जाती है वहाँ तक, हम लोगों



यहाँ से वहाँ तक उम्दा जमीन देखकर दीना की आँखें चमक उठीं

की जमीन है। उसमें जो तुम चाहो ले लो।

दीना की आँखें चमक उठीं। धरती एकदम अछूती पड़ी थी। बस, हथेली की तरह हमवार और मुलायम। काली ऐसी कि बिनौला। और जहाँ कहीं जरा निचान था, वहाँ छाती-छाती जितनी तरह-तरह की हरियाली छाई थी।

सरदार ने अपने सिर की रुंएदार टोपी उतारी और धरती पर रख दी। कहा, "यह निशान रहा। यहाँ से चलो और यहीं आ जाओ। जितनी जमीन चल लोगे वही तुम्हारी।"

दीना ने भी रुपए निकाले और टोपी पर गिनकर रख दिए। फिर उसने पहना हुआ अपना कोट उतार डाला और धाती को कस लिया। अंगोछे में रोटी रखी, आस्तीनें चढ़ाईं, पानी का बंदोबस्त किया, आदमी से फावड़ा लिया और चलने को तैयार खड़ा हो गया। कुछ क्षण सोचता रह गया कि किस तरफ को चलना बेहतर होगा। सभी तरफ का लालच होता था।

उसने तय किया कि आगे देखा जाएगा। पहले तो सामने सूरज की तरफ ही चला चलूँ। एक बार पूरब की ओर मुँह करके खड़ा हो गया, अंगड़ाई लेकर बदन की सुस्ती हटाई और धरती के किनारे सूरज के मुँह चमकाने का इंतजार करने लगा।

सोचने लगा कि मुझे वक्त नहीं खोना चाहिए और ठंड-ठंड में रास्ता अच्छा

पार हो सकता है। सूरज की पहली किरन का उनकी ओर आना था कि दीना, कंधे पर फावड़ा संभाल, खुले मैदान में कदम बढ़ाकर चल दिया।

शुरू में वह धीमे चला, न तेज। हजार-एक गज चलने पर वह ठहरा। वहाँ एक गड्ढा किया और घास ऊँची चिन दी कि आसानी से दीख सके। फिर आगे बढ़ा। उसके बदन में फुर्ती आ गई। उसने चाल तेज कर दी। कुछ देर बाद दूसरा गड्ढा खोदा।

अब पीछे मुड़कर देखा। सूरज की धूप में टेकड़ी साफ दीखती थी। उस पर आदमी खड़े थे और गाड़ी के पहियों के अरे तक चमकते दीखते थे। कोई अंदाज तीन मील तो वह आ गया होगा। धूप में ताप आता जाता था। बदन पर से वास्कट उतारकर उसने कंधे पर डाल ली और फिर चल पड़ा। अब खासी गर्मी होने लगी। उसने सूरज की तरफ देखा। वक्त हो गया था कि कुछ खाने-पीने की भी सोची जाती।

"एक पहर तो बीत गया। लेकिन दिन में चार पहर होते हैं। अंह, अभी क्या लौटना! अभी जल्दी है। लेकिन जूते उतार डालूँ।" यह सोच उसने जूते उतारकर धोती में खोंस लिए और बढ़ चला। अब चलना आसान था।

सोचा, "अभी तीन-एक मील तो और भी चला चलूँ। तब दूसरी दिशा लूँगा। कैसी उम्दा जगह है। इसे हाथ से जाने देना हिमाकत है। लेकिन क्या अजब बात है कि जितना आगे बढ़ो उतनी जमीन एक-से-एक बढ़कर मिलती है।



मुड़नेवाला था कि आगे बहुत उपजाऊ जमीन दिखाई दी

कुछ देर वह सीधा बढ़ा चला। फिर पीछे मुड़कर देखा तो टेकड़ी मुश्किल से दीख पड़ती थी और उस पर के आदमी रेंगती चींटी-से मालूम होते थे और वहाँ धूप में जाने क्या कुछ चलता हुआ-सा दीख पड़ता था।

दीना ने सोचा, ''ओह, मैं इधर काफी बढ़ आया हूँ। अब लौटना चाहिए।'' पसीना बेहद आ रहा था और प्यास भी लग आई थी।

यहाँ ठहरकर उसने गड्ढा किया, ऊपर घास का ढेर चिन दिया। उसके बाद पानी पीकर सीधी बाईं तरफ मुड़ गया। चला चलता गया, चला चलता गया। घास ऊँची थी और गर्मी बढ़ रही थी। वह थकने लगा। उसने सूरज की तरफ देखा। सिर पर दोपहरी हो आई थी।

सोचा, अब जरा आराम ले लेना चाहिए। वह बैठ गया। रोटी निकालकर खाई और कुछ पानी पिया। लेटा नहीं कि कहीं नीद न आ जाए। इस तरह कुछ देर बैठ फिर आगे बढ़ चला।

पहले तो चलना आसान हुआ। खाने से उसमें दम आ गया था। लेकिन गर्मी तीखी हो चली और आँखों में उसके ऊँघ-सी आने लगी। तो भी वह चलता ही चला गया। सोचा कि तकलीफ घड़ी-दो घड़ी की है, आराम जिंदगीभर का हो जाएगा।

इस तरह भी उसने काफी लंबी राह नापी। वह बाईं तरफ मुड़नेवाला ही था कि आगे जमीन उपजाऊ दिखाई दी। उसने सोचा कि टुकड़े को छोड़ना तो मूर्खता होगी। यहाँ सनी की बाड़ी ऐसी उगेगी कि क्या कहना! यह सोच उसने उस टुकड़े को भी नाप डाला और पार आकर गड्ढे का निशान बना दिया। फिर दूसरी तरफ मुड़ा। जो टेकड़ी की तरफ देखा तो ताप के मारे हवा काँपती-सी मालूम हुई। उस कँपकँपी के धुँधकारे में से वह टेकड़ी की जगह मुश्किल से चीह्न पड़ती थी।

दीना ने सोचा कि क्षेत्र की ये दो भुजाएँ मैंने ज्यादा नाप डाली हैं। अब इधर कुछ कम ही रहने दूँ। वह तेज कदमों से तीसरी तरफ बढ़ा। उसने सूरज को देखा। सूरज कोई दो-तिहाई अपना चक्कर काट चुका था और दीना अपने रकबे की तीसरी दिशा में दो मील मुश्किल से तय कर पाया था। मुकाम से अभी वह दस मील दूर था। उसने सोचा कि छोड़ो जाने भी दो। मेरी जमीन की एक बाजू छोटी रह जाएगी तो छोटी सही। लेकिन अब सीधी लकीर में मुझे वापस चले चलना चाहिए। जो ऐसे कहीं दूर निकल गया तो बाजी गई। अरे, इतनी ही जमीन क्या थोड़ी है ?

यह सोच दीना ने वहाँ तीसरे गड्ढे का निशान डाल दिया और टेकड़ी की तरफ मुँह कर ठीक उसी सीध में चल दिया।

9

नाक की सीध बाँधकर वह टेकड़ी की तरफ चला। लेकिन अब चलते मुश्किल होती थी। धूप उसका सत ले चुकी थी। नंगे पैर जगह-जगह कट और छिल गए थे और टांगें जवाब दे रही थीं। जरा आराम करने का उसका जी हुआ, लेकिन यह कैसे हो सकता था? सूरज छिपने से पहले उसे पहुँच जाना था और सूरज किसी की बाट देखता बैठा नहीं रहता। वह पल-पल नीचे ढल रहा था।

उसके मन में सोच होने लगा कि यह मुझ से बड़ी भूल हुई। मैंने इतने पैर पसारे क्यों? अगर कहीं वक्त तक न पहुँचा तो?

उसने फिर टेकड़ी की तरफ देखा, फिर सूरज की तरफ। मुकाम से अभी वह दूर था और सूरज धरती के पास झुक रहा था।

दीना जी तोड़ चलने लगा। चलने में साँस फूलती और कठिनाई होती थी; लेकिन तेज-पर-तेज कदम वह रखता गया। बढ़ा चला, लेकिन जगह अब भी दूर बनी थी। यह देख उसने भागना शुरू किया। कंधे से वास्कट फेंक दी, जूते दूर हटाए, टोपी अलग की, बस साथ में टंकन के तौर पर वह हल्का फावड़ा रहने दिया।

रह-रहकर सोच होता कि मैं क्या करूँ? मैंने बिसात से बाहर चीज हथियानी चाही। उसमें बना काम बिगड़ा जा रहा है। अब सूरज छिपने से पहले मैं वहाँ कैसे पहुँचूँगा?

इस सोच और डर में वह और हाँफने लगा। वह पसीना-पसीना हो रहा था, धोती गीली होकर चिपकी जा रही थी और मुँह सूख गया था। लेकिन फिर भी वह भागता ही जाता था। छाती उसकी लुहार की धौंकनी की तरह चल उठी, दिल भीतर हथौड़े की चोट-सा धड़कने लगा। उधर टँगें बेबस हुई जा रही थीं। दीना को डर हुआ कि इस थकान के मारे कहीं गिरकर ढेर ही न हो जाए।

हाल यह था, पर रुक वह नहीं सका। इतना भाग कर भी अगर मैं अब रुकूँगा तो वे सब लोग मुझ पर हँसेंगे और बेवकूफ बनाएँगे, इसलिए उसने दौड़ना न छोड़ा, दौड़े ही गया। आगे कोल लोगों की आवाज सुन पड़ती थी। वे उसको जोर-जोर से कहकर बुला रहे थे। इन आवाजों पर उसका दिल और सुलग उठा। अपनी आखिरी ताकत समेट वह दौड़ा।

सूरज धरती से लगा जा रहा था। तिरछी रोशनी के कारण वह खूब बड़ा और लहू-सा लाल दीख रहा था। वह अब डूबा, अब डूबा। सूरज बहुत नीचे पहुँच गया था। लेकिन दीना भी जगह के बिल्कुल किनारे आ लगा था। टेकड़ी पर हाथ



सिर से पाँव तक कुल छह फुट जमीन उसे काफी हुई।

हिला-हिलाकर बढ़ावा देते हुए कोल लोग उसे सामने दिखाई देते थे। अब तो जमीन पर रखी वह टोपी भी दीखने लगी, जिस पर उसकी रकम भी रखी थी। वहीं बैठा सरदार भी दिखाई दिया—वह पेट पकड़े हँस रहा था।

दीना को अपने सपने की याद हो आई।

उसने सोचा कि हाय, जमीन तो काफी नाप डाली है, लेकिन क्या ईश्वर मुझे उसको भोगने के लिए बचने देगा ? मेरी जान तो गई दीखती है। मैं मुकाम तक अब नहीं पहुँच सकूँगा।

दीना ने हसरत-भरी निगाह से सूरज की तरफ देखा। सूरज धरती को छू चुका था। कुछ हिस्सा डूब भी चुका था। वह बची-खुची अपनी शक्ति से आगे बढ़ा। कमर झुकाकर भागा, जैसे कि टांगें साथ न देती हों। टेकड़ी पर पहुँचते-पहुँचते अंधेरा हो आया था। उसने ऊपर देखा—सूरज छिप चुका था। उसके मुँह से एक चीख-सी निकल गई। "ओह, मेरी सारी मेहनत व्यर्थ गई!"—यह सोचकर वह थमने को हुआ, लेकिन उसे सुन पड़ा कि कोल लोग अब भी उसे पुकार रहे हैं। उसे सहसा याद आया कि वे लोग ऊँचाई पर खड़े हैं और उन्हें सूरज अब भी दीख रहा होगा। सूरज छिपा नहीं है, अगर्चे मुझको नहीं दीखता। यह सोच कर उसने लंबी साँस खींची और टेकड़ी पर आँख मूँदकर दौड़ा। चोटी पर अभी धूप थी। पास

पहुँचा और सामने टोपी देखी। बराबर सरदार बैठा वहीं पेट पकड़े हँस रहा था। दीना को फिर अपना सपना याद आया और उसके मुँह से चीख निकल पड़ी। टांगों ने जवाब दे दिया। वह मुँह के बल आगे को गिरा और उसके हाथ टोपी तक जा पहुँचे।

"खूब! खूब!" सरदार ने कहा, "देखो, उसने कितनी जमीन ले डाली!"

दीना का नौकर दौड़ा आया और उसने मालिक को उठाना चाहा। लेकिन देखता क्या है कि मालिक के मुँह से खून निकल रहा है।

दीना मर चुका था। कोल लोग दया से और व्यंग्य से हँसने लगे।

नौकर ने फावड़ा लिया और दीना के लिए कब्र खोदी और उसमें लिटा दिया। सिर से पाँव तक कुल छह फुट जमीन उसे काफी हुई।

❒

प्रेम में भगवान

अनुवादक
जैनेंद्र कुमार

प्रेम में भगवान

एक नगर में मार्टिन नाम का एक मोची रहा करता था। नीचे के तल्ले में एक तंग कोठरी उसकी थी। वहाँ से खिड़की की राह सड़क नजर आती, जहाँ आने-जानेवालों के चेहरे तो नहीं, पर पैर दिखाई दिया करते थे। मार्टिन लोगों के जूतों से ही उनको पहचानने का आदी हो गया था। क्योंकि वहाँ एक मुद्दत से रहता था और बहुतेरे लोगों को जानता था। पास-पड़ोस में शायद कोई जोड़ा जूता होगा जो उसके हाथों न निकला हो। सो खिड़की की राह वह अपना ही काम देखा करता। कुछ जोड़ियों में उसने तला बैठाया था तो कुछ में और मरम्मत की थी। कुछ ऐसे भी होते कि पूरे-के-पूरे उसी के बनाए हुए। काम की मार्टिन को कमी नहीं थी, क्योंकि काम वह सच्चाई से करता था। माल अच्छा लगाता और दाम भी वाजिब से ज्यादा नहीं लेता था। बड़ी बात यह थी कि वह वचन का पक्का था। जिस दिन की माँग होती अगर उस दिन पूरा करके दे सकता तो वह काम ले लेता था, नहीं तो साफ कह देता था। वादे करके झुठलाता नहीं था। इसलिए आस-पास सरनाम था और काम की उसके पास कभी कमी नहीं होती थी।

यों आदमी वह नेक था और नीति की राह उसने कभी नहीं छोड़ी। और उमर ज्यादा होने पर तो वह और भी आत्मा की भलाई की और ईश्वर की बातें सोचने लग गया था। अपना निजी काम शुरू करने का वक्त आने से पहले ही, यानी जब वह दूसरे के यहाँ मजूरी पर काम किया करता था, तभी उसकी स्त्री का देहाँत हो गया था। पीछे एक तीन बरस का बच्चा वह छोड़ गई थी। बालक तो और भी हुए थे, पर छुटपन में ही सब जाते रहे थे। पहले तो मार्टिन ने सोचा कि बच्चे को देहात में बहन के यहाँ भेज दूँ। पर, फिर बालक को पास से हटाने को उसका जी नहीं हुआ। 'वहाँ दूसरे के घर बालक को जाने क्या भुगतना पड़े, क्या नहीं! इससे चलो अपने पास ही जो रहने दूँ।'

सो मार्टिन नौकरी छोड़, घर किराए पर ले, बच्चे के साथ वहीं रहने और अपना काम करने लगा। पर बालक का सुख उसकी किस्मत में न लिखा था। बालक बारह बरस का हो चला था और उम्मीद बँधने लगी थी कि बाप के काम में अब कुछ

सहाई होने लगेगा कि तभी आया बुखार, हफ्ते भर रहा होगा, और बालक उसमें चल बसा! मार्टिन ने बच्चे को दफनाया; लेकिन मन में उसके ऐसा दु:ख समा गया, ऐसा दु:ख कि ईश्वर तक को कोसने को जी होता था। दु:ख में बार-बार वह कहता कि हे भगवान, मुझे भी उठा लो। तुम कैसे हो कि मेरा इकलौता, नन्हीं-सी उमर का, जो मेरे प्यार का बच्चा था, उसे तो तुमने उठा लिया और मुझ बूढ़े को छोड़ दिया! सो इस करनी पर जैसे उसने हठ ठान कर परमात्मा को अपने से बिसार दिया।

एक दिन उसी के गाँव के एक बुजुर्ग, जो घर छोड़ पिछले आठ बरस से तीरथ-तीरथ घूम रहे थे, यात्रा की राह में मार्टिन के पास आए। मार्टिन ने अपने दिल का घाव उनके आगे खोल दिया और सब दु:ख कह सुनाया। बोला, "अब भाई, मुझे जीने की भी चाह नहीं रह गई है। बस भगवान करे मैं जल्दी यहाँ से उठ जाऊँ। तुम्हीं कहो जग में अब कौन आस मुझे बाकी है?"

उन वृद्ध यात्री ने कहा, "ऐसी बात मुँह से नहीं कहते, मार्टिन। ईश्वर की लीला भला हम क्या जानें! कोई हमारा चाहा यहाँ थोड़े ही होता है। ईश्वर की मर्जी ही चलती है। उनकी ऐसी ही मर्जी है कि बच्चा चला जाए और तुम जीओ, तो इसी में कोई भलाई होगी। और जो निराशा की बात करते हो सो वजह है कि तुम बस अपने ही सुख के लिए रहना चाहते हो।"

मार्टिन ने पूछा, "नहीं तो भला किसके लिए रहना चाहिए?"

वृद्ध ने कहा, "ईश्वर के लिए, मार्टिन। उसने हमें जीवन दिया। सो उसी के लिए हमें रहना चाहिए। उसके निमित्त रहना सीख जाओ कि फिर कोई क्लेश भी न रहे। फिर सब सहल हो जाए।"

सुनकर मार्टिन कुछ देर चुप रहा। फिर बोला, "पर ईश्वर के लिए रहना कैसे होगा?"

वृद्ध ने उत्तर दिया, "संत लोगों के चरित से पता लग सकता है कि ईश्वर के लिए जीने का भाव क्या है। अच्छा तुम बाँच तो सकते हो न? तो इंजील की एक पोथी ले आना। उसे पढ़ना। उसमें सब लिखा है। उससे पता लग जाएगा कि ईश्वर की मर्जी के अनुसार रहना कैसा होता है?"

ये वचन मार्टिन के मन में बस गए। उसी दिन वह गया और बड़े छापे की इंजील की पोथी ले आया और पढ़ना शुरू कर दिया।

पहले विचार था कि छुट्टी के दिन सातवें रोज पढ़ा करूँगा; लेकिन एक बेर पढ़ना शुरू किया कि उसका मन बड़ा हलका मालूम हुआ। सो वह रोज-रोज पढ़ने लगा। कभी तो पढ़ने में इतना दत्तचित्त हो जाता कि लालटेन की बत्ती धीमी पड़ते-

पड़ते बुझ तक जाती, तब कहीं पोथी हाथ से छूटती। देर रात तक पढ़ता रहता। और जितना पढ़ता उसे साफ दीखता कि ईश्वर की आदमी से क्या चाहना है और ईश्वर में होकर आदमी को कैसे जीवन बिताना चाहिए। उसका दिल खूब हलका हो गया था। पहले रात को जब सोने लेटता तो मन पर बहुत बोझ मालूम हुआ करता था। बच्चे की याद करके वह बड़ा शोक मानता था। लेकिन अब वह बार-बार हलके चित्त से यही कहता कि हे भगवान, तू ही है। तू ही जगदाधार है। तेरा ही चाहा हो।

उस समय से मार्टिन की सारी जिंदगी बदल गई। पहले चाय पिया करता था और कभी-कभी दारू भी ले लेता था। पहले कभी ऐसा भी हो गया है कि किसी साथी के साथ जरा ज्यादा चढ़ा आए और आकर वाही-तबाही बकने लगे और खरी-खोटी कहने लगे। लेकिन अब यह सब बात जाती रही। जीवन में उसके अब शांति आ गई और आनंद रहने लगा। सबेरे वह अपने काम पर बैठ जाता और दिनभर काम करने के बाद साँझ हुई कि दिया लिया और इंजील की पोथी खोल बांचने बैठ गया। जितना पढ़ता उतनी ही उसकी बुद्धि साफ होती और मन खुलकर प्रसन्न होता हुआ मालूम होता।

एक बार ऐसा हुआ कि इंजील की पुस्तक लेकर मार्टिन रात बहुत देर तक बैठा रह गया। संत ल्यूक की कथनी वह पढ़ रहा था। छठे अध्याय में उसने बांचा—

''जो तुझे एक गाल पर मारे, तू दूसरा भी उसके आगे कर दे। जो कोट उतारना चाहे, कुरता भी उसे सौंप दे। जो माँगे सबको दे। और जो ले जाए उससे तू वापस कुछ न माँग। और जो तू चाहता है कि लोग तुझसे ऐसे बरतें, वैसे ही तू उनसे बरत।''

फिर वह प्रसंग उसने पढ़ा, जहाँ प्रभु मसीह कहते हैं—

''तुम 'प्रभु', 'प्रभु' तो मुझे कहते हो, पर मेरा कहा करते नहीं हो। जो मेरे पास आता है, मेरा कहा सुनता है और सुना करता है, वह उस आदमी के समान है, जिसने गहरे खोद अपने मकान की नींव चट्टान पर जमाई है। बाढ़ आई और लहरें टकरा-टकरा कर हार गईं, पर मकान नहीं हिला। क्यों नींव चट्टान पर खड़ी थी। पर जो सुनता है और करता नहीं, वह उस आदमी के समान है जिसने धरती पे मकान खड़ा किया, पर बुनियाद न दी। आई पानी की बाढ़ और टकराना था कि मकान ढह पड़ा। उसका सब डूब गया, कुछ बाकी न रहा।''

मार्टिन ने ये वचन पढ़े तो मन भीतर से गद्गद् हो गया। आँख से ऐनक उतार उसने पोथी पर रख दी और माथे पर अँगुली देकर उस कथन पर वह गहरा सोच करने लगा। उन वचनों से वह अपने जीवन की तोल-परख कर रहा था।

अपने से ही वह पूछने लगा कि अब मेरा मकान चट्टान पर है कि रेत पर खड़ा

है। चट्टान पर है तो ठीक है। पर यहाँ इकले में बैठे तो सब सही-दुरुस्त मालूम होता है। जैसे ईश्वर की मर्जी के मुताबिक ही मैं चल रहा हूँ। लेकिन आँख झपकी कि मन में विकार हो आता है। तो भी जतन मुझे छोड़ना नहीं चाहिए, जतन में ही आनंद है। हे भगवान, तुम्हीं मालिक हो।

यह सब विचार कर वह फिर सोने को हुआ। पर पोथी उससे नहीं छूटती थी। सो फिर वह सातवाँ अध्याय बाँचने लगा। वहाँ जहाँ कि सौ बरस का बूढ़ा प्रभु के पास आता है और विधवा के पुत्र का जिक्र है और संत जॉन के शिष्य लोग मिलते हैं। पढ़ते-पढ़ते फिर वह जगह आई जहाँ एक धनी-मानी ईशु मसीह को अपने घर भोजन देते हैं। फिर वह स्थल कि जहाँ एक पापिनी आँसुओं से उनके चरण पखारती और केशों से पोंछती है। उस समय प्रभु उसका पक्ष लेते और उसे आशीष और आशा देते हैं। पुस्तक का चवालीसवाँ बंध आया और मार्टिन ने पढ़ा—

"तब प्रभु उस स्त्री की ओर होकर साइमन से बोले, 'इस स्त्री को देखो। मैं तुम्हारे घर अतिथि हूँ। पर तुमने मेरे पैरों पर पानी नहीं दिया। और यह है कि अपने आँसुओं से इसने मेरे पैर धोए हैं और केशों से उन्हें पोंछा है। तुम मुझसे बचे हो और जबसे मैं आया हूँ, यह मेरे पैरों को ही चूमती रही है। तुमने मेरे सिर पर भी तेल नहीं दिया, और यह है कि मेरे पाँव स्नेह से भिगोती रही है।"

ये शब्द पढ़ते-पढ़ते मार्टिन सोचने लगा, "उसने पैरों पर पानी नहीं दिया, उन्हें छूने से बचा। सिर को तेल नहीं दिया..." मार्टिन ने ऐनक उतार वहीं पोथी पर रख दी और सोच में डूब गया।

"वह आदमी मेरी तरह का रहा होगा। अपनी-ही-अपनी सोचता होगा। कैसे खुद अच्छा खा लेना और आराम से रह लेना। बस, अपना ही सोच, मेहमान की चिंता नहीं। कुछ अपना-ही-अपना उसे खयाल था। मेहमान की तनिक परवाह नहीं थी। और कौन मेहमान? स्वयं भगवान। जो कहीं वह मेरे यहाँ पधार जाएँ तो क्या मैं भी वैसा ही करूँ?"

उस समय दोनों बाँह चौकी पर डाल उसी पर मार्टिन ने अपना सिर टेक दिया। ऐसे बैठे-बैठे जाने कब उसे नींद आ गई।

इतने में जैसे बिलकुल कान के पास से बड़े सूक्ष्म सुर में किसी ने कहा, "मार्टिन!"

मार्टिन मानो नींद से चौंककर उठा। बोला, "कौन है? मुड़कर दरवाजे के बाहर झाँका, पर कोई न था। उसने फिर पुकारा। पुकार के जवाब में उसे साफ-साफ सुनाई दिया : "मार्टिन, कल गली पर ध्यान रखना। मैं आऊँगा।"

अब मार्टिन उठा। खड़ा हो गया, आँखें मलीं। समझ नहीं सका कि ये शब्द

जागते में सुने थे कि सपने में। फिर उसने दिया बुझा दिया और सो गया।

अगले दिन तड़का फूटने से पहले ही उठा और भजन-प्रार्थना कर, आग जला, अंगीठी पर खाना चढ़ा दिया। फिर अपनी खिड़की के तले आकर काम में जुट गया। काम करते-करते रात की बात सोचने लगा। कभी तो उसे मालूम होता कि वह सब सपना था। कभी जान पड़ता कि सचमुच की ही आवाज उसने सुनी थी। सोचा कि ऐसी बातें पहले भी तो घटती रही हैं।

खिड़की के तले बैठा, रह-रहकर वह सड़क पर देखने लगता था। काम से ज्यादा उसे किसी के आने का ध्यान था। अनपहचाने जूते गली पर चलते देखता तो झाँक उठता कि उनको पहननेवाला जाने कौन है। इस तरह एक झल्लीवाला नए चमचमाते जूतों में उधर को निकला। फिर एक कहार गया। इतने में एक बूढ़ा सिपाही, जिसने पुराने राजा का राज देखा था, उस गली में आया। हाथ में उसके फावड़ा था। जूतों से मार्टिन उसे पहचान गया। पुरानी चाल के घिसे से जूते थे। पहननेवाले का नाम स्टेपान था। एक पड़ोसी लालाजी के घर में वह रहता था और उनका कुछ काम-धाम निबाह दिया करता था—यही झाड़ू-सफाई वगैरह कर देना। दया-भाव से लाला ने उसे रखा हुआ था। वही स्टेपान गली में आकर शहर से बरफ हटाने लग गया था। रात बरफ खूब पड़ी थी और जमा हो गई थी। मार्टिन ने उसे एक निगाह देखा। कुछ देर देखते रहकर फिर नीचे सिर डाल अपने काम में लग गया।

मन-ही-मन वह हँस पड़ा। बोला, "मैं भी उमर से बुढ़ा गया हूँ, नहीं तो क्या! देखो कि मैं भी कैसा बहकने लगा हूँ! आया तो स्टेपान है गली साफ करने, और मुझे सूझा कि मसीह प्रभु ही आ गए हैं! है न बात कि मैं सठिया गया हूँ!"

लेकिन कुछ टांके भरे होंगे कि खिड़की की राह वह फिर बाहर देख उठा। देखा कि फावड़ा जरा टेककर दीवार का सहारा ले स्टेपान या तो सुस्ता रहा है, या फिर गरम होने के लिए साँस ले रहा है। स्टेपान की उमर काफी थी। कमर झुक चली थी और देह में कस बहुत नहीं रहा था। बरफ हटाने के लायक भी दम नहीं था। वह हाँफ-सा रहा था।

मार्टिन ने सोचा, "बुलाकर मैं उसे चाय को पूछूँ तो कैसा! चाय बनी हुई है ही।"

सो, आरी को वहीं जूते में उड़सा छोड़, खड़े होकर झटपट चाय की सब तैयारी कर डालने लगा। फिर खिड़की के पास जाकर थपथपाकर स्टेपान को इशारा किया। स्टेपान सुनकर खिड़की पर आया। मार्टिन ने उसे अंदर बुलाया और आगे बढ़कर दरवाजा खोल दिया। बोला, "आओ थोड़ा गरमा न लो। तुम्हें ठंड लग रही मालूम

होती है।''

स्टेपान बोला, ''भगवान तुम्हारा भला करें। हाँ, मेरी देह में सरदी बैठ गई है और जोड़ दर्द करते हैं।''

यह कहकर स्टेपान अंदर आया और देह की बरफ द्वार के बाहर ही झाड़ दी। फिर यह सोचकर कि कहीं फर्श पर निशान न पड़े, वह बाहर ही पैर पोंछने लगा। इसमें देह उसकी मुश्किल से सँभली रह सकी और गिरते-गिरते बचा।

मार्टिन बोला, ''रहने दो, रहने भी दो। फर्श झड़ जाएगा। सफाई तो रोज होती ही है। कोई बात नहीं भाई, आ जाओ। बैठो, लो चाय पियो।''

दो गिलास भरकर एक मार्टिन ने स्टेपान के आगे सरका दिया और रकाबी में डाल कर दूसरे में से खुद पीने लगा।

स्टेपान ने अपना गिलास खत्म कर औंधा रख दिया। वह चाय के लिए बहुत धन्यवाद देने लगा। लेकिन प्रकट था कि और भी एक गिलास मिल जाए तो बुरी बात न होगी।

मार्टिन ने गिलास भरते हुए कहा, ''एक गिलास और लो, अरे, लो भी।''

कहकर साथ ही उसने अपना भी गिलास भर दिया। पर पीता जाता था और रह-रहकर मार्टिन सड़क की तरफ देखता जाता था।

स्टेपान ने पूछा, ''क्या किसी की बाट जोहते हो?''

''बाट? भई, क्या बताऊँ! कहते लाज आती है। सच पूछो तो इंतजार तो नहीं है, पर रात एक आवाज सुनी थी, जो मन से दूर नहीं होती है। वह सचमुच कोई था, या सपना था, कह नहीं सकता। कल रात की बात है कि मैं धर्म-पुस्तक इंजील बाँच रहा था। उसमें प्रभु ईसा का वर्णन है न! कि कैसे उन्होंने दुःख उठाए और किस भाँति वह इस धरती पर प्रेम और भक्ति से रहे। सो तुमने भी जरूर सुना होगा।''

स्टेपान ने कहा, ''सुना तो मैंने है। पर मैं अपढ़ आदमी हूँ और समझता-बूझता कम हूँ।''

''तो सुनो भाई। उनके जीवन के विषय की बात है। मैं पढ़ रहा था। पढ़ते-पढ़ते वह प्रसंग आया, जहाँ मसीह एक धनवान आदमी के यहाँ जाते हैं। वह धनी आदमी मन से उनकी आवभगत नहीं करता। अब तुम्हें मैं क्या कहूँ? मैं सोचने लगा कि उस आदमी ने उनका पूरा आदर कैसे नहीं किया! मैंने सोचा कि कहीं मैं होता तो जाने क्या न करता? पर देखो कि उस आदमी ने मामूली भी कुछ नहीं किया। इसी तरह की बात सोचते-सोचते मुझे नींद आ गई। फिर एकाएक जो जागकर उठा तो ऐसा लगा कि कोई मुझे नाम लेकर धीमे-से कह रहा है कि देखना, इंतजार में

रहना, मैं कल आऊँगा। ऐसा दो बार हुआ। सच कहूँ तो भाई, वह बात मेरे मन में बैठ गई। यों तो मुझे खुद शरम आ रही है, पर क्या बताऊँ, मन में आस लगी ही है कि वह भगवान कहीं न आते हों!!"

स्टेपान सुनकर चुप रहा, और सिर हिला दिया। फिर गिलास की चाय खत्म कर गिलास को अलग रख दिया। लेकिन मार्टिन ने सीधा कर फिर उसे चाय से भर दिया।

"लो, लो भाई। पीओ भी। हाँ, मैं सोच रहा था कि इस पृथ्वी पर मसीह प्रभु कैसे रहते थे। नफरत किसी से नहीं करते थे और मामूली-से-मामूली लोगों के बीच मिल-जुलकर रहते थे। साथी उनके साधारण जन थे और हम-जैसे अधम और पापी लोगों को उन्होंने शरण देकर उठाया था। उन्होंने कहा कि जो तनेगा उसका सिर नीचा होगा। जो झुकेगा वही उठेगा। उन्होंने कहा, तुम मुझे बड़ा कहते हो। और मैं हूँ कि तुम्हारे पैर धोऊँगा। कहा, कि सबसे आगे वही गिना जाएगा जो सबसे पीछे रहकर सेवा करेगा। क्योंकि जो दीन हैं और दयावान हैं, और प्रीत रखते हैं, वही धनी हैं।"

स्टेपान सुनते-सुनते अपनी चाय भूल गया। बुड्ढा आदमी था और जल्दी उसे आँसू आ जाते थे। सो वहाँ बैठे-बैठे भगवद्-वाणी सुनकर उसके दोनों गालों पर आँसू ढुलकने लगे।

मार्टिन ने कहा, "लो, लो। बस एक और।"

लेकिन स्टेपान ने माफी माँगी, धन्यवाद दिया, और गिलास को अलग कर उठ खड़ा हुआ!

"तुम्हारा मुझ पर बड़ा अहसान हुआ, मार्टिन। तुमने मेरे तन और मन दोनों को खुराक दी और सुख पहुँचाया है।"

मार्टिन बोला, "कब तो अतिथि मिलते हैं। भाई, फिर भी इधर आया करना। मुझे बड़ी खुशी होगी।"

स्टेपान चला गया। उसके बाद बाकी बची चाय मार्टिन ने निबटाई, फैला सामान संगवाया और काम पर आ बैठा।

बैठकर वह आरी से जूते के तले की सीवन ठीक करने लगा। तला सीता जाता था और खिड़की से बाहर देखता जाता था। ईशु की तस्वीर उसके मन में भी और उन्हीं की करनी और कथनी की याद से उसका अन्तःकरण भरा था।

इतने में दो सिपाही उधर से निकले। एक सरकारी जोड़ी पहने था। दूसरे के पैरों में देसी जूते थे। फिर पड़ोस के एक मकान-मालिक निकले, जिनका बढ़िया कामदार जोड़ा था। फिर एक झाबा लिए नानबाई उधर से गुजरा। ऐसे बहुत-से लोग

चलते हुए गए। बाद में एक स्त्री आई जिसके पैरों में देहाती जूतियाँ थीं। वह खिड़की के सामने से गुजरी; लेकिन आगे दीवार के पास जाते-जाते रुक गई! मार्टिन ने खिड़की में से उसे देखा। वह इधर के लिए अनजान मालूम होती थी। कपड़े मामूली थे और गोद में बच्चा था। दीवार के पास वह हवा को पीठ देकर खड़ी हो गई थी। बच्चे को हवा की शीत से बचाने को वह उसे बार-बार ढकने का जतन करने लगी। लेकिन उढ़ाने को कपड़ा उसके पास नहीं के बराबर था। इन जाड़े के दिनों में गरमी के-से कपड़े वह पहने थी। यह भी झीने और फटे थे। खिड़की में से मार्टिन ने बच्चे का रोना सुना। स्त्री उसे मना-मनाकर चुप कराना चाहती थी और वह चुप नहीं होता था। मार्टिन उठा और द्वार से बाहर जाकर बोला, "सुनना माई। इधर सुनो।"

स्त्री सुनकर मुड़ी।

"वहाँ सरदी में खुले में बच्चे को लेकर क्यों खड़ी हो? अंदर आ जाओ, यहाँ बच्चे को ठीक तरह उढ़ा भी लेना। इधर आओ, इधर।"

एक बुड्ढा आदमी, नाक पर ऐनक चढ़ाए इस तरह उसे बुला रहा है, यह देखकर स्त्री को अचरज हुआ। लेकिन वह चलती आई।

साथ-साथ दोनों अंदर आए और कमरे में पहुँचे। वहाँ मार्टिन ने हाथ से बताकर कहा, "वह खाट है, वहाँ बैठ जाओ। आग है ही, जरा गरमा लो और बच्चे को भी दूध पिला लो।"

"दूध मेरे कहाँ है सबेरे से मैंने कुछ खाया ही नहीं है।" यह कहने पर भी बच्चे को उसने छाती से लगा ही लिया।

मार्टिन ने सिर खुजलाया। फिर रोटी निकाली और एक तश्तरी। फिर अंगीठी से उतारकर कुछ शोरबा रकाबी में दे दिया। दलिए की पतीली भी उतारी; लेकिन वह अभी हुआ नहीं था। सो, बस रोटी-रसा ही सामने कर दिया।

"लो, बैठ जाओ और शुरू करो। बच्चा लाओ मुझे दो। देखती क्या हो, बच्चे क्या मुझे हुए नहीं हैं? देख लेना, मैं बच्चों को खूब मना लेता हूँ।"

स्त्री बैठकर खाने लगी। मार्टिन ने बच्चे को बिछौने पर लिटा दिया और खुद बैठ गया। वह तरह-तरह से बच्चे को बहलाने लगा। कभी कैसी आवाज निकालता और कभी कुछ बोली बोलता। लेकिन दाँत थे नहीं और आवाज उससे ठीक नहीं निकलती थी। सो बच्चे का रोना जारी रहा। तब उँगली दे-देकर वह बच्चे को गुदगुदाने लगा। फिर एक खेल किया। उँगली सीधी बच्चे के मुँह तक ले जाता, फिर चट से खींच लेता। यह उसने बार-बार किया पर उँगली बालक को मुँह में नहीं लेने दी। क्योंकि उसकी उँगली काम से तमाम काली हो रही थी। मोम-वोम

जाने क्या उसमें लगा था! बच्चा पहले तो इस उँगली के खेल को ध्यान से देखने लगा और चुप हो गया। फिर तो वह एकदम हँस पड़ा। मार्टिन यह देख बड़ा ही खुश हुआ।

स्त्री बैठी खाती जाती थी और बतलाती जाती थी कि कौन हूँ और क्यों ऐसी हालत में हूँ।

बोली, "मेरे आदमी की सिपाही की नौकरी थी। फिर कोई आठ महीने हुए जाने उन्हें कहाँ भेजा गया। तब से कुछ खबर उनकी नहीं मिली। उसके बाद मैंने रोटी पकाने की नौकरी कर ली। रोटी बनाती थी; लेकिन यह बालक होने को हुआ तो मुझे उन्होंने काम से हटा दिया। तीन महीने से मैं भटक रहीं हूँ कि नौकरी मिल जाए। जो पास था, पेट के खातिर सब बेच चुकी। अब कौड़ी नहीं रह गई है। सोचा, मैं धाय बन जाऊँ। लेकिन कोई मुझे रखने को राजी नहीं हुआ। कहते थे कि मैं बहुत दुबली और दुखिया दिखती हूँ, सो दूध क्या उतरेगा। मैं यहाँ एक लालाइन की बात पर आई थी। वहाँ हमारे गाँव की एक नौकरानी है। उन्होंने मुझे रखने को कहा था। मैं समझती थी कि सब ठीक-ठाक है। पर वहाँ गई तो कहा कि अगले हफ्ते तक हमें फुर्सत नहीं है, फिर आना। वह दूर जगह थी और आते-जाते मेरा दम हार गया है। बच्चा बिचारा भूखा है, देखो कैसी आँखें हो गई हैं। भाग्य की बात है कि वह तो मकान की मालकिन दयालु हैं, भाड़ा नहीं लेतीं। नहीं तो, मेरा ठौर-ठिकाना न था।"

मार्टिन ने सुनकर साँस भरी। पूछा, "कोई गरम कपड़े पास नहीं हैं?"

बोली, "गरम कपड़ा कहाँ से हो? अभी कल ही छह आने में अपना चदरा गिरबी रख चुकी हूँ।"

इतना कहकर स्त्री बढ़ी और बच्चे को गोद में ले लिया। मार्टिन खड़ा हो गया और अपने कपड़ों में खोज-छान करने लगा। आखिर एक बड़ा गरम चोगा उसने निकाला और कहा, "यह लो। चीज तो फटी-पुरानी है; पर चलो बच्चे के कुछ काम तो आ ही जाएगी।"

स्त्री ने उस चोगे को देखा। फिर उस दयावान बूढ़े की तरफ आँख उठाई, फिर चोगे को हाथ में लेते-लेते वह रो पड़ी।

मार्टिन ने मुड़कर खाट के नीचे झुककर वहाँ से एक छोटा-सा बक्स निकाला! उसमें इधर-उधर कुछ खोजा और फिर नीचे सरकाकर बैठ गया।

स्त्री बोली, "भगवान तुम्हारा भला करे, बाबा। सचमुच ईश्वर ने ही मुझे इधर भेज दिया। नहीं तो बच्चा ठिठुरकर मर चुका होता। मैं चली, तब सरदी इतनी नहीं थी। अब तो कैसी गजब की ठंडी बयार चल रही है। जरूर यह ईश्वर की करनी है

कि तुमने खिड़की से बाहर झाँका और मुझ गरीबनी पर दया की।''

मार्टिन मुस्कराया। बोला, ''यह सच बात है। उसी ने मुझे आज इधर देखने को कहा था। कोई यह संयोग ही नहीं है कि मैंने तुम्हें देखा।''

यह कहकर मार्टिन ने उसे अपनी सपने की बात सुनाई। बताया कि कैसे ईश्वर की वाणी हुई थी कि इंतजार करना, मैं आऊँगा।

स्त्री बोली, ''कौन जाने? ईश्वर क्या नहीं कर सकता।'' वह उठी और अपने बच्चे को चारों ओर से ढकते हुए चोगा कंधों पर डाल लिया। तब झुककर मार्टिन को फिर एक बार धन्यवाद दिया।

''प्रभु के नाम पर—यह लो।''

मार्टिन ने कहा और चदरा गिरवी से छुड़ाने के लिए छह आने स्त्री के हाथ में थमा दिए। स्त्री ने ईशु प्रभु को स्मरण किया। मार्टिन ने प्रभु का नाम लिया और फिर उसे बाहर पहुँचा आया।

स्त्री के चले जाने पर मार्टिन ने देगची उतार कुछ खाया-पीया, बासन-वस्त्र सँभालकर रख दिए और फिर काम करने बैठ गया। वह बैठा रहा, बैठा रहा और काम करता रहा। लेकिन खिड़की को नहीं भूला। छाया कोई खिड़की पर पड़ती कि वह तुरन्त निगाह करता कि देखूँ, कौन जा रहा है। उनमें कुछ जान के लोग निकले तो कुछ अनपहचाने भी। पर कोई खास नजर नहीं आया।

थोड़ी देर बाद एक सेबवाली स्त्री को मार्टिन ने ठीक अपनी खिड़की के सामने रुकते देखा। वह एक बड़ी टोकरी लिए थी; लेकिन सेब उसमें बहुत नहीं रह गए दीखते थे। साफ था कि वह बहुत-कुछ उसमें से बेच चुकी है। उसकी कमर पर एक बोरा था जिसमें छिपटियाँ भरी थीं। उसे वह घर ले जा रही थी। कहीं इमारत की मदद लगी होगी, सो वहीं से बटोरकर लाई होगी। बोरा उसे चुभ आया था और एक कंधे से दूसरे पर उसे बदलना चाहती थी। सो बोरे को उसने रास्ते के एक ओर रख दिया और टोकरी को किसी खंभे से टिका दिया। फिर बोरे की छिपटियों को हलहलाने लगी। लेकिन तभी फटी-सी टोपी ओढ़े एक लड़का उधर दौड़ा और टोकरी से एक सेब ले भागने को हुआ। पर बुढ़िया ने देख लिया और मुड़कर चट से उसकी बाँह पकड़ ली। लड़के ने बहुतेरी खींचातानी की कि छूट जाए, लेकिन बुढ़िया ने अपने हाथ जमाए रखे। टोपी बालक की उतारकर फेंक दी और उसे बालों से पकड़कर झँझोटने लगी। लड़का चिल्लाया जिस पर बुढ़िया और धिक्कार उठी। यह देख मार्टिन ने हाथ की आरी उड़सी भी नहीं कि हाथ से उसे वहीं डाल झट से दरवाजे के बाहर आ गया। जल्दी में ऐनक भी छूटी। लड़खड़ाते पैरों वह सीढ़ी उतर और दौड़ सड़क पर आ खड़ा हुआ। बुढ़िया लड़के के बाल झंझोट रही थी और

गालियाँ दे रही थी। कहती थी, "तुझे पुलिस में दूँगी।" लड़का छूटने को मचल रहा था। चिल्ला रहा था कि "मैंने कुछ नहीं लिया, मुझे क्यों मार रही हो? मुझे छोड़ दो।"

मार्टिन ने आकर उन्हें अलग कर दिया। लड़के को हाथ से लेकर कहा, "जाने दो, माई। भगवान के लिए उसे अब माफ कर दो।"

"अजी, मैं उसे दिखा दूँगी। जिससे साल-एक याद तो रखे। बदमाश को थाने ले जाऊँगी!"

मार्टिन बुढ़िया को निहारने लगा।

"जाने दो, माई। फिर ऐसा नहीं करेगा। भगवान के लिए उसे जाने दो।"

बुढ़िया ने लड़के को छोड़ दिया। लड़का भाग जाने को हुआ। लेकिन मार्टिन ने उसे रोक लिया।

लड़का रो उठा और माफी माँगने लगा।

"ठीक। और यह तो अब अपने लिए एक सेब!" कहते हुए मार्टिन ने टोकरी से एक सेब लिया और लड़के को दे दिया। फिर बोला, "इसके पैसे मैं दूँगा तुम्हें माई।"

"इस तरह इन छोकरों को तुम बिगाड़ दोगे।" बुढ़िया बोली, "इसे कोड़े लगने चाहिए थे कि हफ्ते भर तो याद रहती।"

"ओह, माई," मार्टिन कह उठा, "छोड़ो-छोड़ो। यह तरीका हम लोगों का हो, ईश्वर का यह तरीका नहीं है। अगर एक सेब की चोरी के लिए उसे कोड़े लगने चाहिए तो हमें अपने पापों के लिए क्या मिलना चाहिए, सोचो तो?"

बुढ़िया चुप रह गई।

तब मार्टिन ने उसे उस कथा की याद दिलाई जहाँ प्रभु तो अपने सेवक पर सारा ऋण छोड़ देते हैं, पर वह दास जरा से के लिए अपने कर्जदार का गला जा दबोचता है। बुढ़िया ने यह सब सुना और लड़का भी पास खड़ा सुनता रहा।

"सो प्रभु की बानी है कि हम माफ करें। मार्टिन ने कहा, "नहीं तो हम भी माफी नहीं पाएँगे। हर किसी को माफ करो। अनजान बालक को तो और भी पहले माफी मिलनी चाहिए।"

बुढ़िया ने सिर डुलाया और साँस भरी।

बोली, "यह तो सच है। लेकिन वे इतने बिगड़े जो जा रहे हैं।"

मार्टिन बोला, "यह तो हम बड़ों पर है न कि अपने उदाहरण से उन्हें हम अच्छी राह दिखाएँ।"

"यही तो मैं कहती हूँ," बुढ़िया बोली, "मेरे खुद सात हो चुके हैं। उनमें

सिर्फ अब एक लड़की है। बुढ़िया बताने लगी कि कैसे और कहाँ वह अपनी बेटी के साथ रहा करती थी और कितने धेवती-धेवते उसके थे। बोली, "यह देखो, अब मुझमें अगर्चे कुछ कस नहीं रह गया है, फिर भी उनके लिए मैं काम में जुटी ही रहती हूँ। और बच्चे भी वे भले हैं। उन्हें छोड़ और कोई भी तो मेरे पास नहीं लगता। नन्हीं ऐनी तो अब मुझे छोड़ किसी के पास जाएगी ही नहीं। कहेगी, 'हमारी नानी, हमारी प्यारी अच्छी नानी।'' ...और ऐनी की यह याद आते ही बुढ़िया की आँखें एकदम भीग गईं।

लड़के के लिए बोली, "सच तो है। बिचारे का बचपन था, और क्या। ईश्वर उसका सहाई हो।"

यह कहकर जैसे ही वह बोरा उठाकर अपनी कमर पर रखने को हुई कि लड़का कूदकर उसके सामने आ खड़ा हुआ और बोला, "लाओ, यह मैं ले चलूँ, माँ। मैं उसी तरफ जा रहा हूँ।"

बुढ़िया ने 'हाँ' में सिर हिलाया और बोरा लड़के की कमर पर रख दिया। फिर दोनों साथ-साथ गली से चलते चले। मार्टिन से सेब के पैसे माँगना बुढ़िया बिलकुल ही भूल गई। दोनों आपस में बोलते-चालते वहाँ से गए, और मार्टिन खड़ा-खड़ा उन्हें देखता रहा।

आँख से वे ओझल हो गए तो मार्टिन घर वापस आया। जीने पर उसे अपनी ऐनक पड़ी मिली जो कि टूटी नहीं थी। उसे उठा और आरी हाथ में ले वह फिर काम पर बैठ गया। थोड़ा-सा काम किया था कि चमड़े के सूराखों से सुआ निकालना उसकी आँखों को मुश्किल होने लगा। तभी बाहर क्या देखता है कि लैंपवाला गली के लैंप जलाने गली से निकला जा रहा है।

सोचा—रोशनी का समय हो गया दीखता है। सो उसने भी लैंप ठीक किया, उसे टाँगा और फिर अपने काम पर बैठ गया। एक जूता उसने पूरा कर लिया। फिर अदल-बदलकर उसे जांचने लगा। सब दुरुस्त था। सो उसने अपने औजारों को समेटा, कटनी-छटनी को बुहार दिया और मोम-धागा और सब चीज-वस्तु को ठीक-ठाक रख दिया। फिर लैंप उतार मेज पर रख और आले से अपनी इंजील की पोथी ली। चाहता था कि वहीं से खोलूँ जहाँ पहले दिन निशान लगा छोड़ा था। लेकिन किताब दूसरी जगह खुल गई। उसे खोलना था कि कल का सपना फिर मार्टिन के सामने आ रहा। साथ ही उसे पैरों की आहट-सी सुन मिली, मानो कोई उसके पीछे चल-फिर रहा हो। मार्टिन मुड़ा। उसे लगा जैसे अँधेरे कोने में कई आदमी खड़े हों। लेकिन वह चीन्ह न सका कि कौन हैं। उसी समय एक आवाज फुसफुसाकर मानो कान में बोली, "मार्टिन, मार्टिन, क्या तुम मुझे नहीं पहचानते?"

मार्टिन संदेह के सुर में बोला, "कौन?"

आवाज बोली, "यह मैं।"

कहने के साथ अँधियारे कोने से निकल स्टेपान आ आगे हुआ। वह मुस्कराया! और बादल की भाँति फिर अंतर्धान हो गया।

फिर आवाज हुई, "और यह मैं।"

और इस पर अँधेरे में से वह स्त्री गोद में बच्चा लिए आ निकली। वह मुस्कराई, बच्चा हँसा और ये दोनों अंतर्धान हो गए।

फिर तीसरी आवाज आई, "और यह मैं।"

और कहने के साथ ही वह बुढ़िया और सेब लिए वह लड़का आ सामने हुए, दोनों मुस्कराए और अंतर्धान हो गए।

इस पर मार्टिन का हृदय आनंद से भर आया। उसने प्रभु को स्मरण किया, ऐनक आँखों पर रखी और ठीक जहाँ इंजील खुली थी, पढ़ने लगा। सफे के ऊपर ही पड़ा—

"मैं भूखा था और तूने मुझे खाना दिया। मैं प्यासा था, तूने मुझे पानी दिया। मैं अजनबी था और तूने मुझे ग्रहण किया।"

और सफे के अंत में पढ़ा—

"इन भाइयों में से एक के लिए, अदना-से-अदना के लिए, जो तूने किया वह मुझको किया समझ। जो दिया मुझे पहुँचा समझ।"

उस समय मार्टिन को प्रत्यक्ष हुआ कि उसका सपना सच्चा हुआ है। उसको प्रतीत हुई कि रक्षक प्रभु सचमुच ही उसके घर पधारे थे और उन्हीं ने उसका आतिथ्य पाया था।

खोखला ढोल

इमेल्यान नाम का एक मजदूर एक दिन अपने मालिक के काम पर जा रहा था। जाते-जाते एक खेती की मेड़ पर कहीं से मेंढ़क फुदककर उसके सामने आ गया। मेंढ़क इमेल्यान के पैर से कुचल ही गया था कि वह तो इमेल्यान की तरकीब से बच गया। इतने में ही सुना कि पीछे से कोई नाम लेकर पुकार रहा है।

मुड़कर देखता है कि एक बड़ी सुंदर लड़की है। उस लड़की ने कहा, "इमेल्यान, तुम शादी क्यों नहीं कर लेते हो?"

इमेल्यान ने कहा कि भला मैं शादी कैसे कर सकता हूँ। जो पहने खड़ा हूँ वही

कपड़े मेरे पास हैं, और कुछ भी नहीं। सो कौन मुझसे शादी करने को राजी होगा?

लड़की ने कहा, "तुम कहो तो मैं राजी हूँ। मैं बुरी नहीं हूँ।"

लड़की इमेल्यान के मन को बहुत अच्छी लग रही थी। वह बोला, "तुम तो परी दीखती हो। पर मेरा ठौर-ठिकाना भी नहीं है। हम लोग रहेंगे कहाँ और कैसे?"

लड़की बोली, "इसकी क्या सोच-फिकर है! आलस कम किया और मेहनत ज्यादा की तो अपने लायक खाने-पहनने को तो सब कहीं हो जाएगा।"

इमेल्यान ने कहा, "यह बात है, तो चल, शादी कर लें। लेकिन बताओ कि चलें कहाँ?"

"आओ शहर चलो।"

सो इमेल्यान और लड़की दोनों शहर चले। वहाँ शहर के परले सिरे पर दूर एक झोंपड़ी में इमेल्यान को लड़की ले गई। दोनों की शादी हो गई और वे घर बसाकर रहने लगे।

एक दिन शहर का राजा वहाँ से गुजरा। इमेल्यान की बीबी भी राजा की सवारी देखने झोंपड़ी से बाहर निकली। राजा ने जो उसे देखा तो दंग रह गया।

राजा ने मन में कहा, "ऐसी परी-सी सुंदरी यहाँ कहाँ से आ गई!" उसने अपनी सवारी रोककर उसे पास बुलाया। पूछा, "तुम कौन हो?"

सुंदरी ने कहा, "मैं इमेल्यान किसान की बीबी हूँ।"

राजा ने कहा, "ऐसी सुंदर होकर तुमने किसान से ब्याह क्यों किया? तुम तो रानी होने लायक हो।"

सुंदरी ने कहा, "आप मुझसे ऐसी बात मत कहें। मेरे लिए तो किसान ही अच्छे हैं।"

इस कुछ देर की बात के बाद राजा की सवारी आगे बढ़ गई। लौटकर राजा महलों में आ तो गया; पर इमेल्यान की स्त्री की मूरत उसके मन से दूर नहीं हुई। वह रात भर नहीं सोया। सोचता रहा कैसे उसे पाऊँ। पर उसकी समझ में कोई ठोस जुगत नहीं आई। तब उसने अपने नौकरों को बुलाया और कहा, "कोई तदवीर उस परी को पाने की निकालो।"

राजा के नौकरों ने बताया, "इमेल्यान को काम करने के लिए महल में बुलाइए। यहाँ हम उससे इतना काम लेंगे, इतना काम लेंगे कि आखिर वह मर ही जाए। तब उसकी बीबी अकेली रह जाएगी और आप उसे ले लीजिएगा।"

राजा ने वैसा ही किया। फर्मान हो गया कि इमेल्यान महल में काम करने के लिए आए और स्त्री के साथ वहीं रहे।

हुक्म इमेल्यान को मिला, तब उसकी स्त्री ने कहा, ''इमेल्यान, जाओ दिन भर काम करना, पर रात को सोने घर आ जाना।''

सुनकर इमेल्यान चला गया। महल पहुँचने पर राजा के दीवान ने पूछा, ''इमेल्यान, बीबी को छोड़कर तुम अकेले क्यों आए?''

इमेल्यान ने कहा, ''उसकी जगह तो वहीं है। घर उससे बनता है। यहाँ उसे क्या?''

राजा के महलों में उस अकेले को दो आदमियों का काम दिया गया। आशा तो नहीं थी कि वह काम पूरा होगा, पर इमेल्यान उसमें जुट गया और शाम होते-होते अचरज की बात देखो कि काम सब पूरा हो गया। दीवान ने देखा कि काम सब निबट गया है। तब अगले दिन के लिए उससे चौगुना काम बता दिया।

इमेल्यान घर लौटा। वहाँ सब चीज साफ-सुथरी थी, खाना तैयार था, पानी गरम रखा था और बीबी बैठी कपड़े सी रही थी और पति की बाट देख रही थी। उसने पति की आवभगत की, हाथ-पैर धुलाए, खाने-पीने को दिया और काम की बात पूछी।

इमेल्यान ने कहा कि काम की बात क्या पूछती हो! काम तो इतना देते हैं कि बिसात से ज्यादा। काम के बोझ से मुझे मारना चाहते हैं।

स्त्री ने कहा, ''काम के बारे में झींकना अच्छा नहीं होता। काम के वक्त आगे-पीछे भी नहीं देखना चाहिए कि कितना हमने कर लिया, कितना बाकी रह गया। बस काम करते चलना चाहिए। बाकी सब अपने-आप ठीक हो जाएगा।''

सुनकर इमेल्यान बेफिकरी से रात को सोया। सबेरे उठकर वह काम पर गया और बिना दाएँ-बाएँ देखे उसमें लगा रहा। होनहार की बात कि साँझ से पहले सभी काम पूरा हो गया और अँधेरा होते-होते रात बिताने वह अपने घर पहुँच गया।

राजा के लोग दिन-ब-दिन उसका काम बढ़ाते गए। पर हर रोज शाम होने से पहले सब काम खत्म हो जाता और इमेल्यान सोने अपने घर पहुँच जाता। ऐसे एक हफ्ता बीत गया। राजा के नौकरों ने देखा कि भारी काम दे-देकर तो वे इमेल्यान का कुछ नहीं बिगाड़ सकते। उन्होंने तब से मुश्किल और बारीक काम कर दिया। पर उससे भी कुछ न हुआ। क्या बढ़ई का, क्या राजगिरी का और क्या और तरह का, सब काम इमेल्यान ठीक तरह और ठीक वक्त से पहले कर देता और मजे में रात को घर रवाना हो जाता। ऐसे दूसरा हफ्ता भी निकल गया।

इस पर राजा ने अपने आदमियों को बुलाकर कहा, ''क्या मैं तुम्हें मुफ्त का माल खिलाता हूँ? दो हफ्ते बीत गए हैं, तुमने क्या करके दिखाया? कहते थे, तुम काम से इमेल्यान को थका दोगे। पर शाम होती नहीं कि खुशी से उसे रोज

गाते हुए घर लौटते मैं अपनी आँखों से देखता हूँ। क्या तुम लोग मुझे बेवकूफ बनाना चाहते हो?"

बादशाह के सामने वे लोग इधर-उधर करने लगे। बोले, "हमने अपने बस तो भारी-से-भारी काम उसे दिया। पर उसने तो सब ऐसे साफ कर दिया जैसे झाड़ू से बुहार दिया हो। वह तो थकता ही नहीं। फिर हमने बारीक काम सौंपे। उन्हें भी उसने पार लगा दिया। कुछ भी काम दो वह सब काम कर देता है। जाने कैसे? वह, या तो उसकी बीबी, कोई-न-कोई जादू जरूर जानते मालूम होते हैं। हम तो खुद उससे तंग हैं। हाँ, एक बात सोची है। इमेल्यान को बुलाया जाए, कहा जाए कि महल के सामने दिनभर के अंदर एक मंदिर की इमारत तुमको खड़ी करनी है। अगर वह न कर सके तो उसका सिर कलम कर दिया जाए।"

राजा ने इमेल्यान को बुला भेजा। कहा, "सुनो इमेल्यान, महल के सामने एक नया मंदिर बनवाना है। कल शाम तक वह तैयार हो जाना चाहिए। अगर कर दोगे तो इनाम दूँगा। नहीं करोगे तो सिर उतरवा लूँगा।"

बादशाह की आज्ञा चुपचाप सुनी और इमेल्यान लौटकर चला आया। उसने सोच लिया कि अब जान गई। घर पहुँचकर पत्नी से कहा, "सुनती हो? अब तैयारी करो और यहाँ से भाग चलो; नहीं तो बेमौत मरना होगा।"

उसकी स्त्री ने कहा, "ऐसे डर क्यों रहे हो? और हम क्यों भाग चलें?"

इमेल्यान ने कहा, "डरने की बात ही है। राजा ने कल-कल में एक पूरा नया मंदिर खड़ा करने का हुक्म दिया है। नहीं कर सकूँगा तो सिर देना होगा। बस, बचने की एक ही राह है। वह यह कि वक्त रहते हम लोग यहाँ से भाग चलें।"

लेकिन उसकी बीबी ने इस बात को अपने कान पर भी नहीं लिया। बोली, "राजा के पास बहुत-से सिपाही हैं। कहीं से भी वे हमें पकड़ लाएँगे। हम बच नहीं सकते। और जब तक बस हो, हमें राजा का हुक्म मानना चाहिए।"

"हुक्म मैं कैसे मानूँ जबकि काम मुझसे होना मुमकिन नहीं है।"

स्त्री ने कहा, "तो भी जी क्यों हलका करते हो? जो होगा देखा जाएगा। अभी तो खा-पीकर आराम से सोओ। सबेरे तड़के उठ जाना और सब काम हो जाएगा।"

इस पर इमेल्यान आराम से सोया। अगले दिन पौ फटते ही बीवी ने उसे जगाया। कहा, "झटपट तैयार होकर जाओ और मंदिर का काम पूरा कर डालो। यह हथौड़ी है, ये कीलें हैं। अभी वहाँ एक दिन के लायक बाकी काम मिलेगा।"

इमेल्यान शहर में गया। चौक में पहुँचा तो देखता क्या है कि मंदिर बना-बनाया खड़ा है। वह ऊपरी कुछ काम करने में लग गया जो शाम तक सब पूरा हो गया।

राजा ने जगने पर देखा कि सामने मंदिर तैयार खड़ा है और इमेल्यान यहाँ-वहाँ

कुछ कीलें गाड़ रहा है। मंदिर बना देखकर राजा को खुशी नहीं हुई। इमेल्यान को सजा अब वह कैसे दे? और उसकी बीवी कैसे हाथ लगे? फिर उसने नौकरों को इकट्ठा किया। कहा, ''इमेल्यान ने यह काम भी पूरा कर दिया। बताओ उसे किस बात पर खत्म किया जाए? इस बार कोई पक्की तरकीब निकालो। नहीं तो उसके साथ तुम सबके भी सिर उतारे जाएँगे।''

इस पर उन दोनों ने तय किया कि इमेल्यान से महल के चारों तरफ एक दरिया बहाने को कहा जाए, जिसमें किश्तियाँ तैर रही हों और किनारे-किनारे पक्के घाट हों। राजा ने इमेल्यान को बुला भेजा और यही हुक्म सुना दिया। कहा, ''अगर एक दिन में पूरा मंदिर बना सकते हो तो यह काम भी एक रात में कर सकते हो। कल सब हो जाए। नहीं तो तुम्हारा सिर धड़ पर नहीं रहेगा।''

इमेल्यान अब सब आस छोड़ बैठा और भारी जी से घर आया। घर में पत्नी ने पूछा, ''ऐसे उदास क्यों हो? क्या राजा ने और नया काम बताया है?''

जो हुआ था, इमेल्यान ने कह सुनाया। बोला, ''चलो, अब भी भाग चलें।''

लेकिन बीवी ने कहा, ''राजा के सिपाही हैं। उनसे कहाँ बचेंगे? जहाँ पहुँचोगे, वहीं से पकड़ लेंगे। इससे भागना नहीं, हुक्म मानना ही भला है।''

''लेकिन मुझसे उतना सब काम कैसे होगा?''

स्त्री ने कहा, ''जी मत छोटा करो। खा-पीकर आराम से सोओ। सबेरे उठ पड़ना और भगवान ने चाहा तो सब ठीक हो जाएगा।''

चिंता छोड़कर इमेल्यान सो गया। सबेरे ही उसकी पत्नी ने उठकर कहा, ''उठो, अब महल जाओ। वहाँ सब तैयार है। महल के सामने दरिया के किनारे जरा जमीन उठी हुई है। लो यह फावड़ा, उसे हमवार कर देना।''

सबेरे उठते ही राजा ने अचंभे से देखा, जहाँ कुछ नहीं था, वहाँ दरिया मौजें ले रहा है, पाल खोले किश्तियाँ तैर रही हैं। राजा को अचरज तो हुआ; पर न तो पानी से भरी नदी और न उस पर खेलती हुई हंसिनी-सी नौकाओं को देखकर उसके मन में जरा खुशी हुई। इमेल्यान को पकड़ न पाने पर वह इस कदर बेचैन था। उसने सोचा कि अब मैं करूँ तो क्या करूँ? यह सोचकर उसने फिर अपने नौकरों को बुलवाया।

''देखो तुम लोग,'' राजा ने कहा, ''कोई-न-कोई काम निकालो जो उससे न हो। समझे? जो कहते हैं वह सब कर देता है। और अब तक उसकी औरत हमको नहीं मिल सकी है।''

सोचते-सोचते नौकरों ने एक युक्ति लगाई। राजा के पास जाकर कहा, ''इमेल्यान को बुलाकर कहिए कि देखो इमेल्यान, वहाँ जाओ कि जाने कहाँ और वह चीज

लाओ कि जाने क्या। तब वह बचकर नहीं निकल सकेगा। वह फिर जहाँ-कहीं भी जाएगा, आप कह दीजिए कि वहाँ के लिए नहीं कहा था। और जो लाएगा, कह दीजिए कि वह हमने मँगाया ही नहीं था। यह कहकर मौत की सजा दे दीजिए और उसकी बीबी ले लीजिए।"

राजा सुनकर खुश हुआ। कहा, "यह तुमने ठीक सोचा है।"

इमेल्यान को बुलाया गया और राजा ने कहा, "इमेल्यान, वहाँ जाओ कि जाने-कहाँ और वहाँ से वह लाओ कि जाने-क्या। अगर नहीं ला सके तो तुम्हारा सिर सलामत नहीं है।"

इमेल्यान ने घर जाकर बीबी से राजा की बात कह सुनाई। सुनकर बीबी सोच में पड़ गई।

बोली, "लोगों ने राजा को इस बार तुम्हें पकड़ने की ठीक तरकीब बता दी है। अब हमें होशियारी से चलना चाहिए।"

यह कहकर वह बैठी सोचती रही। आखिर बोली, "देखो, दूर एक दादी बुढ़िया है। सिपाहियों की वह धरती-माँ जैसी है। उससे मदद माँगना। अगर वह तुम्हें कुछ दे, या बताए, तो उसे लेकर महल में आना। मैं वहीं रहूँगी। मैं अब राजा के लोगों से बच नहीं सकती; वे मुझे जबर्दस्ती ले जाएँगे। पर थोड़े दिन की बात है। अगर तुम दादी की बात पर चलोगे तो मुझे जल्दी बचा लोगे।"

उसने यात्रा के लिए पति को तैयार कर दिया। साथ में कुछ कलेवे को बाँध दिया और चरखे का एक तकुआ दे दिया। कहा, "देखो, यह तकुआ दादी को देना। इससे वह पहचान जाएगी कि तुम कौन हो।" यह कहकर ठीक रास्ता बताकर उसे भेज दिया।

इमेल्यान चलते-चलते एक जगह पहुँचा, जहाँ सिपाही कवायद कर रहे थे। इमेल्यान खड़ा होकर उन्हें देखने लगा। कवायद के बाद बैठकर सिपाही आराम करने लगे। उसने पास जाकर पूछा, "भाइयो, आप लोग जानते हैं कि कौन रास्ता वहाँ जाने-कहाँ जाता है और मैं कैसे वह जाने क्या चीज पा सकता हूं।"

सिपाहियों ने अचरज से उसकी बातें सुनीं। फिर पूछा, "तुमको किसने यह काम देकर भेजा है।"

"मुझको राजा ने यह हुक्म दिया है।"

सिपाहियों ने कहा, "हम भी जिस दिन से सिपाही की नौकरी में आए हैं उसी दिन से वहाँ-जाने-कहाँ जा रहे हैं और अभी कहीं नहीं पहुँचे हैं। और वह जाने क्या ढूँढ़ रहे हैं और अभी तक कुछ नहीं पा सके हैं। हमसे भाई, तुम्हें कुछ मदद नहीं मिल सकती।"

इमेल्यान कुछ देर सिपाहियों के साथ ठहर आगे बढ़ा। कोस-पर-कोस चलता गया। आखिर एक जंगल आया। जंगल में एक झोंपड़ी थी और थी सिपाहियों की धरती-माँ, वही बुढ़िया दादी, चर्खे पर सूत कात रही थी और रो रही थी। कातते-कातते वह उंगलियों को ले जाकर मुँह के नहीं आँख के पानी से गीला करती थी। इमेल्यान को देखकर बुढ़िया ने चिल्लाकर कहा, "कौन है ? तू यहाँ क्यों आया है ?"

तब इमेल्यान ने वह तकुआ बुढ़िया को दिया और कहा, "मेरी स्त्री ने यह देकर मुझे तुम्हारे पास भेजा है।"

बुढ़िया इस पर एकदम मुलायम पड़ गई और हाल-चाल पूछने लगी। इमेल्यान ने सब बता दिया। कैसे लड़की मिली; कैसे वे ब्याह करके गाँव में बसे; कैसे मंदिर बनाया और किश्ती-घाटवाला दरिया बनाया; और अब उसे राजा ने वहाँ-जाने-कहाँ जाने और वह-जाने-क्या लाने का हुक्म देकर भेजा है—यह सब उसने बता दिया।

सुनकर दादी का रोना रुक गया। मन में बोली, "अब मेरे संकट कटने का वक्त आया है।" प्रकट में इमेल्यान से कहा, "अच्छा बेटा, बैठो कुछ खा-पी लो।"

खिला-पिलाकर दादी ने बताया कि देखो, यह सूत का पिंड है, इसे लो और सामने लुढ़का दो। इसके सूत के पीछे-पीछे तुम चलते जाना। चलते-चलते समंदर तक पहुँच जाओगे। वहाँ एक बड़ा शहर दीखेगा। उसमें चले जाना। शहर के पास आखिरी मकान पर एक रात ठहरने को जगह माँगना। वहाँ आँख खोलकर रहना। तब तुम्हारी चीज मिल जाएगी।

इमेल्यान ने कहा, "दादी, मैं पहचानूँगा कैसे कि यही वह चीज है ?" बुढ़िया ने कहा, "जब तुम ऐसी चीज देखो जिसकी लोग माँ-बाप से भी ज्यादा सुनें, समझ लेना वही है। उसी को राजा के पास ले जाना। तब राजा कहेगा, यह वह चीज नहीं है। तुम कहना, यह वह नहीं है तो लाओ मैं उसे तोड़े देता हूँ, और तब तुम उसे धमाधम पीटने लगना। पीटते-पीटते नदी तक ले जाना और टुकड़े-टुकड़े करके उसे नदी में फेंक देना। तब तुम्हारी स्त्री तुम्हें वापस मिल जाएगी और मेरे आँसू पुंछ जाएँगे।"

इमेल्यान ने दादी को प्रणाम करके विदा ली और सूत के गोले के पीछे-पीछे चला। गोला लुढ़कता और खुलता हुआ आखिर समंदर के किनारे तक पहुँच गया। वहाँ एक बड़ा शहर था और उसके दूसरे सिरे पर एक बड़ा मकान। इमेल्यान ने रात को ठहरने के लिए वहाँ जगह माँगी और मिल गई।

सबेरे उसने सुना कि घर में बाप लड़के को जगा रहा है कि भैया, उठ कर जाओ, जंगल से कुछ लकड़ी काट लाओ।

लेकिन लड़के ने सुना-अनसुना करके कहा, "अभी बहुतेरा वक्त है। ऐसी जल्दी अभी क्या है?"

माँ ने कहा, "उठो, बेटा जाओ। तुम्हारे पिताजी के बदन की हड्डी दुखती है। तुम नहीं जाओगे तो उन्हें जाना पड़ेगा। बेटा, दिन बहुत निकल आया है।"

पर लड़के ने कुछ बहाना बना दिया और करवट लेकर फिर सो गया। इमेल्यान ने यह सब सुना।

तभी एकाएक बाहर सड़क पर किसी चीज की जोर की आवाज होनी शुरू हुई। और देखता क्या है कि वह आवाज सुनते ही लड़का फौरन उछलकर उठा और चट कपड़े पहन घर से निकल भागा। इमेल्यान भी कूदकर देखने पीछे लपका कि क्या चीज है जिसका हुक्म लड़का माँ-बाप से ज्यादा मानता है। देखता क्या है कि सड़क पर एक आदमी पेट के आगे बाँधे एक चीज लिए जा रहा है, जिसे वह दोनों तरफ दो कमचियों से पीट रहा है। वही चीज थी जो इस जोर से गूँज रही थी और जिसकी आवाज पर लड़का घर से भाग आया था। वह चीज गोल थी। दोनों सिरों पर खाल मढ़ी थी। पूछा, कि इसका क्या नाम है?

लोगों ने बताया, "ढोल।"

"क्या यह अंदर खोखला है?"

"हाँ, अंदर यह खोखला है।"

इमेल्यान ताज्जुब में रह गया। उसने कहा, "यह हमें दे दो।" पर देनेवाले ने नहीं दिया। इस पर इमेल्यान ढोलवाले के पीछे-पीछे हो लिया। सारे दिन साथ लगा रहा। आखिर जब ढोलवाला सोया, तब ढोल उठाकर इमेल्यान भाग आया।

भागा-भाग, भागा-भाग, आया अपनी बस्ती में। पहले तो बीबी को देखने पहुँचा घर। पर वह वहाँ नहीं थी, इमेल्यान के जाने के अगले दिन उसे राजा के लोग ले गए थे। इस पर इमेल्यान महल की ड्योढ़ी पर पहुँचा और खबर भिजवाई कि इमेल्यान लौट आया है जो वहाँ गया था कि जाने-कहाँ और वह ले आया है कि जाने-क्या।

सुनकर राजा ने हुक्म दिया कि कह दो अगले दिन आवे।

इस पर इमेल्यान ने कहलवाया, "मैं वह चीज लेकर आया हूँ जो राजा ने चाही थी। राजा मेरे पास उसे लेने नहीं आ सकते तो मैं ही उनके पास आता हूँ।"

इस पर राजा बाहर आए। उन्होंने पूछा, "अच्छा, तुम कहाँ गए थे?"

इमेल्यान ने ठीक-ठीक बता दिया।

राजा ने कहा, "वह असली जगह नहीं है। अच्छा, लाए क्या?"

इमेल्यान ने ढोल दिखा दिया। लेकिन राजा ने उसे देखा भी नहीं। कहा, "यह

वह चीज नहीं है।"

इमेल्यान ने कहा, "अगर यह वह चीज नहीं है तो मैं इसे पीटकर तोड़े देता हूँ। फिर देखा जाएगा।"

यह कहकर इमेल्यान ढोल पीटता हुआ महल से बाहर निकल आया। ढोल का पिटना था कि पीछे-पीछे राजा की फौज निकल आई और इमेल्यान को सलाम करके उसके हुक्म के इंतजार में खड़ी हो गई।

राजा ने अपनी खिड़की में से यह देखा तो अपनी फौज को चिल्ला-चिल्लाकर कहा कि इमेल्यान के पीछे मत जाओ। पर किसी ने कुछ नहीं सुना और सब ढोल के पीछे चल पड़े।

राजा ने जब यह देखा तब हुक्म दिया कि इमेल्यान की बीबी उसको दे दो और वापस वह ढोल माँगा।

पर इमेल्यान ने कहा, "यह नहीं हो सकता। इसको तोड़कर मुझे नदी में फेंक देना है।"

यह कहकर इमेल्यान ढोल पीटता हुआ नदी की तरफ बढ़ गया। सिपाही सब उसके पीछे थे। नदी पहुँचकर ढोल के टुकड़े-टुकड़े करके इमेल्यान ने नदी की धार में फेंक दिया। और सिपाही सब अपने-अपने घर भाग गए।

तब इमेल्यान अपनी बीबी को साथ लेकर अपने घर पहुँच गया। उसके बाद राजा ने उन्हें नहीं सताया और वे सुख से रहने लगे।

सूरत की बात

हिंदुस्तान के सूरत शहर में एक अतिथिशाला थी। उसी की बात है। सूरत शहर उन दिनों बढ़ा-चढ़ा बंदरगाह था और दुनियाभर से देश-विदेश के यात्री वहाँ आया करते और उस अतिथिशाला में मिला करते थे।

एक दिन एक फारसी आलिम वहाँ आए। उन्होंने ईश-तत्त्व पर मनन-चिंतन करने में जीवन बिताया था और उस विषय पर बहुत-कुछ लिखा-पढ़ा था। ईश्वर के बारे में उन्होंने इतना सोचा, इतना पढ़ा और इतना लिखा था कि आखिर उनकी बुद्धि भ्रम में पड़ गई थी और ईश्वर की सत्ता से भी उनका विश्वास जाता रहा था। यह पता पाकर वहाँ के शाह ने अपने देश फारस से उन्हें देश-निकाला दे दिया था।

जीवनभर सृष्टि के आदि-कारण पर विवाद करते-करते यह बिचारे तत्त्व-भेदी आखिर विभ्रम में पड़ गए थे और बजाए समझने के कि उनकी बुद्धि में विकार है,

वह मानने लग गए थे कि सृष्टि की व्यवस्था में ही कोई मूल-चेतना काम नहीं कर रही है।

इन आलिम-फाजिल के साथ अफ्रीका का एक हब्शी गुलाम भी था। वह संग-संग रहता था। आलिम अतिथिशाला में आए तो गुलाम दरवाजे के बाहर ही ठहर गया। यहाँ वह धूप में एक पत्थर पर बैठ गया और मक्खियाँ बहुत थीं, सो बैठा-बैठा मक्खियाँ उड़ाने लगा।

वह फारसी आलिम अंदर पहुँचकर आराम से मसनद पर जम गए और एक अफीम के शरबत के प्याले का हुक्म दिया। उसकी घूँट लेने पर उनके दिमाग की नसों में तेजी आ गई। उस वक्त शाला के खुले दरवाजे में से उधर बैठे गुलाम से वह बोले, "क्यों रे, क्या ख्याल है तेरा? खुदा है या नहीं?"

"वह तो है—"

गुलाम ने कहा और कमर में बँधी अपनी पेटी में से लकड़ी की एक मूरत उसने निकाली। बोला—

"—जी, देखिए, यह है। इसी खुदा ने मेरे पैदा होने के रोज से मुझे बचाया और पाला है। हमारे देश में हरएक आदमी जिस बरगद की पूजा करता है, वह खुदा मेरा उसी की लकड़ी का बना है।"

वहाँ अतिथिशाला में जमा हुए और लोग आलिम मालिक और बेवकूफ गुलाम की यह बातचीत अचरज से सुनने लगे। पहले तो उन्हें मालिक के सवाल पर आश्चर्य था। लेकिन गुलाम के जवाब पर और भी आश्चर्य हुआ।

उन्हीं लोगों में एक ब्राह्मण पंडित थे। गुलाम की बात सुनकर उन्होंने उस तरफ मुँह किया और बोले—

"अरे मूर्ख, क्या तुम संभव समझते हो कि ईश्वर को तुम अपनी पेटी में लिए फिर सकते हो? ईश्वर एक है, अखिल है। वह ब्रह्म है। समस्त सृष्टि से वह बड़ा है, क्योंकि स्रष्टा है। ब्रह्म ही सत् है, वही सत्ताधीश है। उसकी महिमा-पूजा में गंगा-तट पर अनेकानेक हमारे मंदिर बने हुए हैं, जहाँ सन्निष्ठ ब्राह्मण उसकी पूजा-अर्चा में निरत रहते हैं। सत्य परमेश्वर का ज्ञान उन्हीं को है और किसी को नहीं है। सहस्र-सहस्र वर्ष हो गए परन्तु कई काल-चक्रों के अनंतर भी ब्राह्मण ही उस ब्रह्म-ज्ञान के अधिकारी हैं, क्योंकि स्वयं ब्रह्म उनके रक्षक हैं।"

ब्राह्मण पंडित ने इस भाव से यह कहा कि उपस्थित मंडली सब उनके प्रभाव से विश्वस्त हो रहेगी। लेकिन वहीं एक यहूदी दलाल बैठे थे। जवाब में वह बोले—

"नहीं, सच्चा ईश्वर हिंदुस्तान के मंदिर में नहीं है। न ब्राह्मण लोग ईश्वर को

विशेष प्रिय हैं। सच्चा ईश्वर ब्राह्मणोंवाला ईश्वर नहीं है। बल्कि इब्राहीम, इसाक, याकूब का खुदा सच्चा खुदा है। और उसका साया सबको छोड़ पहले इजराईलवालों को मिला है। दुनिया शुरू हुई तब हमारी जाति को ही उसकी शरण का वरदान मिला है। हम लोग जितने उसके निकट हैं और कोई नहीं है। अगर हम आज दुनिया पर छितरे हुए फैले हैं, तो इसका और मतलब नहीं है, यह तो हमारी परीक्षा है, क्योंकि उसका वचन है कि एक दिन होगा कि उसकी प्रिय (हमारी) जाति के सब जन एरुशलम में जमा होंगे। तब एरुशलम का हमारा प्राचीन मंदिर अपनी पहली महिमा पर आ जाएगा और हजरत इजराईल वहाँ बैठकर तमाम जातियों और मुल्कों पर हकूमत करेंगे।''

इतना कहते भावावेश से उस यहूदी के आँसू आ गए। वह और भी कहना चाहते थे; लेकिन एक रोमन पादरी भी वहाँ थे। वह बीच में पड़कर यहूदी की तरफ मुखातिब होकर बोले—

''तुमने जो कहा सत्य नहीं है। तुम ईश्वर के माथे अन्याय मढ़ते हो। वह तुम्हारी जाति को औरों से ज्यादा प्यार नहीं कर सकते। नहीं, अगर यह सच भी हो कि इजराईल के लोग ईश्वर को विशेष प्यारे थे, तो इधर 1900 साल से उन लोगों ने अपनी करतूतों से उसे नाराज कर दिया है। तभी तो ईश्वर ने अपने क्रोध में तुम्हारी तमाम जाति को तितर-बितर कर डाला है। अब अपने मजहब में औरों को तुम बढ़ा भी नहीं सकते हो और उसके माननेवाले जहाँ-तहाँ थोड़े-ही-बहुत रहते जा रहे हैं। परमात्मा किसी खास जाति के साथ पक्षपात नहीं करता। हाँ, रोमन-चर्च को उसने विशेष प्रकाश दिया है और जिसका कल्याण होनेवाला है उसको वह उस चर्च की शरण भेज देता है। इससे रोमन-चर्च के सिवाय मुक्ति का उपाय दूसरा नहीं।''

वहाँ एक प्रोटेस्टेंट भी थे। रोमन पादरी के ये वचन सुनकर उनका चेहरा पीला हो आया और रोमन पादरी की तरफ मुड़कर वह बोले—

''कैसे कहते हो कि मुक्ति तुम्हारे धर्म में है। असल में रक्षा और मुक्ति उन्हीं को मिलेगी जो ईशु के उपदेशों को मन से और सच्चाई से मानेंगे और उसके अनुसार चलेंगे।''

उस समय एक तुर्क, जो सूरत में ही चुंगी दफ्तर में अफसर थे, चुरट पीने बैठे थे, उन दोनों पादरियों की तरफ उन्होंने ऐसे देखा मानो दोनों भूल में हैं। और बोले—

''रोमन या दूसरे ईसाई धर्म में आपका ईमान रखना अब फिजूल है। बारह सौ बरस हुए कि उसकी जगह एक सच्चे मजहब ने ले ली है। उसके नबी हजरत मोहम्मद पर ईमान लाइए। वह मजहब है इस्लाम। आप देखते ही हैं कि इस्लाम किस तरह दोनों मुल्क यूरोप और एशिया में बढ़ता जा रहा है। यहाँ तक कि इल्मो-

हुनर के मरकज चीन में भी वह फैल रहा है। आपने अभी खुद कहा था कि खुदा ने यहूदियों का साथ छोड़ दिया है। यह इससे भी साबित है कि यहूदियों की छीछालेदर हो रही है और उनका मजहब फल नहीं रहा है। तो फिर इस्लाम की सच्चाई का आपको इकबाल करना होगा, क्योंकि उनको दूर-दराज तक फतह हासिल हो रही है। आखिर बहिश्त में उन्हीं को जगह होगी जो मोमिन होंगे। और मुहम्मद को खुदा का आखिरी पैगंबर मानकर उस पर ईमान लावेंगे। उनमें भी वह जो उमर के पैरोकार होंगे, अली के नहीं। अली को माननेवाले काफिर हैं।''

इसके जवाब में उस फारसी आलिम ने कुछ कहना चाहा, क्योंकि वह अली के तबके के थे। लेकिन तब तक तो वहाँ उपस्थित नाना मत-संप्रदायों के लोगों के बीच खासा विवाद छिड़ आया था। अबीसीनिया के ईसाई वहाँ थे और तिब्बत के लामा ईस्माईली और अग्निपूजक, सब-के-सब परमात्मा के बारे में और उसकी सच्ची राह-पूजा के बारे में झगड़ रहे थे। सबका आग्रह था कि उन्हीं की जाति और देश को सच्चे ईश्वर का ज्ञान मिला है और उन्हीं की विधि सच्ची है।

बहस हो रही थी और चिल्लाहट मची थी। पर उनके बीच एक महाशय चुप थे। यह चीन देश के थे और कनफ्यूशस में श्रद्धा रखते थे। एक कोने में अपने शांत बैठे थे और विवाद में भाग नहीं ले रहे थे। चुपचाप वह चाय पी रहे थे और दूसरे लोग जो बोल रहे थे सबकी सुनते थे; पर अपनी कुछ नहीं कहते थे।

उस तुर्क ने उन सज्जन को इस तरह बैठे देखा और बोला, ''ऐ चीनी दोस्त, जो मैंने कहा उम्मीद है उसकी ताईद मुझे तुमसे मिलेगी। तुम चुप बाँधे बैठे हो, लेकिन अगर बोले तो मैं जानता हूँ कि मेरी राय की ताईद ही करोगे। तुम्हारे मुल्क के व्यापारी जो चुँगी के मामले में मेरी मदद लेने आते हैं, उनका कहना है कि चीन में अगरचे बहुतेरे मत चले, लेकिन चीन के लोगों को इस्लाम की सबसे बढ़कर मालूम हुआ। वे खुशी से उसे कबूल करते जा रहे हैं। मेरी बात की तुम ताईद करोगे मैं जानता हूँ। इससे बोलो कि खुदा और उनके सच्चे रसूल की बाबत तुम्हारा क्या खयाल है!''

दूसरे लोगों ने भी उन चीनी आदमी की तरफ मुड़कर कहा, ''हाँ, हाँ, बताओ कि इस विषय में तुम क्या सोचते हो?''

कनफ्यूशस के अनुयायी उन चीनी सज्जन ने आँखें बंद कीं, जैसे अपनी ही थाह ली। फिर आँखें खोलीं और अपनी चौड़ी आस्तीनों में से बाहर निकाल दोनों हाथों को अपनी छाती पर ले लिया और शांत और सौम्य वाणी में उन्होंने कहना आरंभ किया—

''भाइयो, मुझे मालूम होता है कि बड़ा कारण अहंकार है। वही धर्म-विश्वास

के मामलों में हमको आपस में सहमत होने से रोकता है। आप लोग मेहरबानी करें और आपकी इच्छा हो तो एक कहानी कहकर मैं इस बात को साफ करना चाहूँगा।

''हम लोग यहाँ चीन से एक अंग्रेजी जहाज पर सवार होकर आए हैं। वह जहाज दुनिया भर का चक्कर लगा चुका है। राह में पानी के लिए हमें ठहरना था। सो सुमात्रा द्वीप के पूर्वी किनारे पर हम उतरे। वक्त था और ऊपर धूप थी। इससे उतरकर हम कुछ जने समुद्र के किनारे नारियलों की छाँह में बैठ गए। पास ही वहाँ के लोगों का गाँव था। हम उस समय जगह-जगह और मुल्क-मुल्क के आदमी वहाँ जमा थे।

''बैठे हुए थे कि एक अंधा आदमी उसी तरफ आया। पीछे मालूम हुआ कि लगातार बहुत काल सूरज की तरफ देखते रहने से वह आदमी अंधा हुआ है।

''असल में आँख गाड़कर वह सूरज का भेद और उनकी ज्योति को अपनी समझ में पकड़ रखना चाहता था। उस कोशिश में वह एक अर्से तक रहा। सदा उधर ही ताका करता। नतीजा यह हुआ कि सूरज की रोशनी से उसकी आँखों को नुकसान हुआ और वह अंधा हो गया।

''अंधा होने पर तो और भी वह अपने मन में तर्क चलाने लगा। सोचता कि सूरज की रोशनी कोई तरल पदार्थ तो है नहीं, क्योंकि तरल होती तो इस बरतन से उस बरतन में ढाली जा सकती और पानी की भाँति हवा से वह यहाँ-वहाँ भी हिलती-डुलती दीखती। और न वह आग है। आग होती तो पानी उसे बुझा सकता। न वह चेतन आत्मा है, क्योंकि आत्मा तो अदृश्य है और रोशनी आँखों से दीखती है। फिर न वह कोई जड़ वस्तु है, क्योंकि उसे उठा-पकड़ नहीं सकते। और यदि सूरज की रोशनी तरल नहीं है, अग्नि अथवा चेतन या जड़ भी नहीं है तो सिद्ध हुआ कि वह है ही नहीं। अत: वह असिद्ध है।

''इस तरह उसका तर्क चलने लगा। और सदा सूरज की तरफ देखने और बुद्धि लगाए रखने से उसने अपनी आँख भी और बुद्धि भी दोनों को खो दिया। सो जब वह अंधा हो गया तो उसे और पक्का हो गया कि सूरज की रोशनी कोई सत्-वस्तु ही नहीं है।

''इस अँधे आदमी के साथ एक दास भी था। उसने मालिक को नारियल के पेड़ों की छांह में बिठा दिया था और जमीन पर से एक नारियल उठाकर रात के लिए रोशनी का इंतजाम करने लगा। बटकर नारियल की जटा की उसने बत्ती बनाई; गिरी को कुचलकर उसी के खोल में तेल निकाल लिया और बत्ती को उस तेल में भिगोकर रख दिया।

''वह दास वहाँ बैठा जब यह कर रहा था तभी उसका अंधा मालिक उससे

बोला कि क्यों रे, मैंने तुझे ठीक कहा था न कि सूरज नहीं है। देखो यह कैसा गुप अँधेरा चारों तरफ है। फिर भी लोग कहते हैं कि सूरज है...अगर है तो भला क्या है ?

''दास बोला, 'यह तो मैं नहीं जानता कि सूरज क्या है। सो जानने से मुझे है भी क्या! पर रोशनी क्या है यह तो मैं जानता ही हूँ। यह मैंने अपना दीया तैयार कर लिया है। उसके सहारे उँगली पकड़कर मैं आपको राह दिखाने के काम भी आ जाऊँगा और रात को झोंपड़ी में उससे जो चीज आप चाहें पाकर दे भी सकूँगा।'

''इतना कहकर उसने अपने नारियल के दीपक को ऊपर उठा लिया। बोला—

''सो मेरा तो यही सूरज है।''

''पास ही वहाँ एक लंगड़ा आदमी भी बैसाखी रखे बैठा था। यह सुनकर वह हँस दिया और अँधे आदमी से बोला, 'मालूम होता है तुम जन्म के अंधे हो। तभी तो नहीं जानते सूरज क्या है। मैं बताता हूँ, क्या है। वह एक आग का गोला है। हर सबेरे समंदर में से उगता और शाम हमारे टापू की पहाड़ियों में जाकर छिप जाता है। हम यह रोज देखते हैं। आँखें होतीं तो तुम भी देख लेते।'

''यह बातचीत एक मछुआ मल्लाह भी सुन रहा था। वह लंगड़े आदमी से बोला कि दीखता है तुम अपने इस छोटे-से टापू से बाहर कभी कहीं गए नहीं हो। जो तुम लंगड़े न होते और मेरी तरह डोंगी लेकर बाहर निकल सकते तो देखते कि सूरज तुम्हारी पहाड़ियों में जाकर नहीं छिपता है। लेकिन जैसे ही हर सबेरे वह निकलता समंदर से है, वैसे हर रात डूबता भी समंदर में ही है। जो कह रहा हूँ उसको तुम बिलकुल सच्ची बात मानना। क्योंकि हर रोज मैं यह अपनी आँखों देखता हूँ।

''उस समय हमारे दल में एक हिंदुस्तानी भी था। बात के बीच में पड़कर वह बोले, 'कोई समझदार आदमी तो नासमझी की ऐसी बात कर नहीं सकता। तुमने जो कहा उस पर मुझे अचरज होता है। आग का गोला पानी में उतरे तो भला बिना बुझे कैसे रहेगा ? असल में वह गोला नहीं है, न आग है। वह तो एक देवता हैं जो सात घोड़ों के रथ में बैठकर स्वर्ण-पर्वत मेरु की प्रदक्षिणा करते हैं। तभी राहु और केतु नाम के असुर उन देवता पर चढ़ाई करते हैं और ग्रस लेते हैं। तब दुनिया पर अंधकार छा जाता है। लेकिन हमारे पंडित-पुरोहित होम-स्तवन आदि करते हैं। उससे देवता मुक्त हो जाते हैं और फिर प्रकाश देने लगते हैं। तुम—जैसे अनजान लोग जो बस अपने द्वीप के इर्द-गिर्द रहते हैं और आगे का कुछ नहीं जानते, वही ऐसी बचपन की बात कह सकते हैं कि सूरज उन्हीं के देश के लिए होता है।'

''एक मिस्री सज्जन भी वहाँ मौजूद थे। उनका पहले एक अपना जहाज था।

अपनी बारी लेकर वह बोले, 'तुम्हारी बात भी सही नहीं है। सूरज कोई देवता नहीं है। और न तुम्हारे हिंदुस्तान के या तुम्हारे स्वर्ण-पर्वत के चारों तरफ ही घूमता है। मैं दूर-दूर घूमा हूँ। काले सागर गया हूँ, अरब का किनारा मेरा देखा है, मेडागास्कर और फिलिपाइन टापू भी मैंने घूमे हैं। सूरज हिंदुस्तान को ही नहीं, सारी धरती को रोशनी देता है। कोई एक पहाड़ का चक्कर वह नहीं करता, पर पूरब में दूर कहीं जापान के टापू के पार वह उगता है और पश्चिम में उधर इंग्लिस्तान के द्वीपों के परली तरफ कहीं छिपता है। जब भी तो जापान के लोग अपने देश को 'निपन' कहते हैं, जिसका मतलब होता है सूर्योदय। मैं इस बात को पूरे भरोसे से कह सकता हूँ, क्योंकि अव्वल तो मैंने खुद कम नहीं देखा-जाना है, और फिर अपने दादा से सुनकर भी मैं बहुत जानता हूँ। ओर से छोर तक समंदर तमाम हमारे बाबा का छाना हुआ था।'

"अभी वह मिस्री सज्जन और आगे भी कहते। लेकिन हमारे जहाज के एक अंग्रेज नाविक जो वहीं थे, बीच में काटकर बोलने लगे—

"असल में तो हमारे इंग्लैंड देश के रहनेवाले लोगों से सूरज की गति के बारे में ज्यादा और कोई नहीं जान सकता। हमारे मुल्क का बच्चा-बच्चा जानता है कि सूरज न कहीं से निकलता है, न कहीं छिपता है। वह तो सदा पृथ्वी के चारों तरफ घूमता रहता है। इसका पक्का सबूत यह है कि हमने धरती का पूरा चक्कर लगाया है, पर सूरज से तो जाकर हम कहीं नहीं टकराए। जहाँ गए, सूरज सबेरे दीखने लगता और रात को छिप जाता। ठीक जैसे कि यहाँ होता है।"

"यह कहकर वह अंग्रेज छड़ी से रेत में नक्शा बनाकर अपनी बात समझाने लगे कि किस तरह सूरज धरती के चारों तरफ आसमान में चक्कर लगाता है। लेकिन वह साफ-साफ नहीं समझा सके। इससे जहाज के बड़े अफसर को बताकर बोले क़ि वह मुझसे ज्यादा इन बातों को जानते हैं। वह ठीक-ठीक आपको समझा सकेंगे।

"वह सज्जन, समझदार और बुर्दबार थे। अब तक चुपचाप सब सुने जा रहे थे। खुद कहे जाने से पहले वह नहीं बोले थे। अब सबका उनसे अनुरोध होने लगा। इसलिए बोले—

"आप सब लोग एक-दूसरे को असल में बरगला रहे हैं और खुद भी धोखा खा रहे हैं। सूरज धरती के चारों तरफ नहीं घूमता, बल्कि धरती उसके चारों तरफ घूमती है। इस सफर में वह खुद भी अपनी धुरी पर घूमती जाती है। उसका एक चक्कर चौबीस घंटे में पूरा होता है। इतने समय में न सिर्फ जापान, फिलिपाइन या जहाँ हम बैठे हैं, वह सुमात्रा का टापू ही सूरज के सामने आ जाते हैं, बल्कि

अफ्रीका, यूरोप, अमरीका या और जो मुल्क हों उस सूरज के सामने हो रहते हैं। सूरज किसी एक पहाड़ या टापू या एक समंदर या एक धरती के लिए नहीं चमकता। बल्कि हमारी पृथ्वी की तरह और ग्रह हैं, उनको भी वह चमकाता है। अगर आप अपने पैर के नीचे की धरती के बजाए ऊपर आसमान पर भी निगाह रखा करें तो आप सभी लोग यह आसानी से समझ सकते हैं। तब यह मानने की जरूरत आपको न रहेगी कि सूरज आपके लिए या आप ही के लिए उगता और प्रकाश करता है।'

"जगत के देश-देश देखे हुए और ऊपर आसमान पर भी निगाह रखनेवाले उन अनुभवी-ज्ञानी ने उनको यह सद्बोध दिया।"

कन्फ्यूशस के चेले वह चीनी महोदय ऊपर की कहानी सुनाकर अन्त में बोले, "इस तरह मत-मतांतर के बारे में यह अहंकार ही है जो हममें फूट डालता है और भूल करवाता है। सूरज की उपमा से ईश्वर को भी जान लीजिए। सब लोग अपना-अपना परमात्मा बनाना चाहते हैं। या कम-से-कम अपने देश-जाति के लिए एक विशेष ईश्वर को मानना चाहते हैं। हरेक मुल्क और जाति के लोग उस ईश्वर को अपने मंदिर-गिरजों में घेरकर बाँध लेना चाहते हैं, जो सारे ब्रह्मांड से भी बड़ा है और कुछ जिससे खाली नहीं है।

"क्या आदमी का बनाया कोई मंदिर-गिरजा इस कुदरत के मंदिर की बराबरी कर सकता है? खुद भगवान ने यह जगत सिरजा है कि सब लोग यहाँ एक रहें और सिरजनहार मानें। अरे, आदमी के तमाम देवालय उसी की नकल तो हैं। और भगवान का आलय स्वयं यह जगत है। मंदिर क्या होता है? उसमें आँगन होता है, छत होती है, दीपक होते हैं, मूर्तिचित्र होते हैं। वहाँ उपदेश लिखे मिलते हैं, शास्त्र-पुराण रखे होते हैं। वेदी होती है, पुजारी होते हैं और पुजापे की भेंट-पूजा चढ़ती है। लेकिन किस देवालय का समंदर जैसा खुला आँगन है? आकाश के चँदोए जैसा किस मंदिर का कलश है? सूरज, चाँद और तारे किसके प्रकाशदीप हैं? सजीव भक्ति से भीगे उदार संतों के समान स्फूर्तिदायक चित्र-मूर्तियाँ और कहाँ हैं? आदेश और आलेख्य ईश्वर की महिमा के ऐसे सुलभ और कहा हैं जैसे इस जगती पर? यहाँ हर कहीं तो उन दयाधाम की दया के अनुकंपा के स्मृति-चिह्न हैं। और कहां वह नीतिशास्त्र है जिसका वचन आदमी के भीतर की वाणी जितना स्पष्ट और अविरोधी है? कौन पूजक और कौन पुजारी उस आत्माहुति से बढ़कर है जो इस पृथ्वी पर स्त्री-पुरुष नित्य एक-दूसरे के प्रति दे रहे और देकर जी रहे हैं? और कौन वेदी है जो सत्पुरुष के हृदय की वेदी की उपमा में ठहर सके, कि जहाँ का चढ़ा उपहार स्वयं भगवान ग्रहण करते हैं?

"ईश-कल्पना जितनी ही ऊँची उठती जाएगी उतना सद्ज्ञान बढ़ेगा। उस ज्ञान के साथ-साथ मनुष्य स्वयं उत्तरोत्तर वैसा ही होता जाएगा। उसी महामहिम की भाँति कल्याणमय, दयामय और प्रेममय। फिर वह जीवमात्र को उसी की भाँति स्नेह करेगा।

"इसलिए सब जगह जो उसी का प्रकाश और उसी की महिमा देखता है, वह किसी की त्रुटि नहीं निकालेगा, न किसी को हीन मानेगा। जो उस ज्योति की एक रेख लेकर, मूर्ति बना उसी में भगवान को देख लेता है, उसकी श्रद्धा भी स्खलित नहीं करेगा। न तो वह उस नास्तिक को हीन भाव से देखेगा जो दुर्दैव से ही अंधा होकर सूरज की रोशनी से अकस्मात् वंचित बन गया है।"

इन शब्दों में कन्फ्यूशस के शिष्य चीन के उस सत्पुरुष ने अपनी मान्यता प्रकट की। सुनकर वहाँ मौजूद सब आदमी शांत और गंभीर हो आए और मत-मतांतरों के बारे में अपना सब विवाद भूल गए।

देर हो, अँधेर नहीं

पाटनपुर नगर में हरजीत राय नाम का एक व्यापारी था। उसके दो दुकानें थीं और रहने का अपना निज का घर। हरजीत जवान था। स्वस्थ शरीर, बाल घुंघराले, हँसता चेहरा। विनोदी स्वभाव का था और गाने का उसे शौक था। उमर पर उसे शराब का चस्का भी लगा था और पैसा होने पर उसे रंगरेली सूझती थी। लेकिन शादी हो गई तो उसकी आदतें धीमे-धीमे बदल गईं। खास मौकों की बात दूसरी, नहीं तो शराब उसने अब छोड़ दी थी।

एक बार वह कातकी के मेले को जा रहा था। जाने लगा और पत्नी से विदा ले रहा था तो वह बोली, "देखो, आज न जाओ, मुझे बुरा सपना दीखा है।"

हरजीत हँस दिया। बोला, "मैं जानता हूँ कि तुमको यह डर है कि मैं मेले में गया तो बहक जाऊँगा और पैसा बरबाद करके आऊँगा। यही न ?"

बीबी ने कहा कि ठीक मालूम नहीं कि यही डर है कि दूसरा है। लेकिन मुझे बुरा सपना हुआ है। सपने में दीखा कि तुम जब लौटे और टोपी उतारी तो सारे बाल तुम्हारे सफेद-फक पड़े हुए हैं।

हरजीत और भी हँसा। बोला, "यह तो और अच्छे भाग्य का सपना है। देख लेना कि इसका फल होगा कि मैं जितना माल ले जाता हूँ, वह सब बिक जाएगा और तुम्हारे लिए तरह-तरह की सौगात लेकर लौटूँगा।"

इस भाँति उसने परिवार से राजी-खुशी विदा ली और चल दिया।

आधे पड़ाव चलने पर उसे अपनी जान-पहचान का एक और व्यापारी मिला। वे दोनों एक साथ सराय में ठहरे। साथ ही खाया-पीया और फिर पास-पास के कमरों में सोने चले गए।

सबेरे देर तक सोने की हरजीत की आदत नहीं थी। और ठंड-ठंड में रास्ता चलना भी आसान होता है, इसलिए तड़का फूटने से पहले उसने गाड़ीवान को जगाया। कहा कि गाड़ी जोतो और चलो।

यह कहकर वह सराय के मालिक के पास गया जो वहीं पिछवाड़े रहता था। सरायवाले का लेना चुकाया, उसे धन्यवाद दिया और हरजीत अपने सफर पर आगे बढ़ा।

कोई दसेक कोस चलने पर उसने बैल खोले कि कुछ उन्हें खिला-पिला दे। खुद भी जरा आराम किया। सुस्ताने के बाद फिर सरायवाले को चाय के लिए कहकर अपनी बंसरी निकाल बजाने लगा।

तभी एक इक्का आकर वहाँ रुका। इक्का सजा-बजा था और घोड़े के गले में घंटी बज रही थी। उसमें से एक अफसर उतरे, पीछे दो सिपाही। आकर अफसर ने हरजीत से सवाल पूछने शुरू किए कि तुम कौन हो, कहाँ से आए हो?

हरजीत ने सवालों का माकूल जवाब दिया और कहा, "आइए, चाय में मेरा साथ दीजिएगा?"

लेकिन अफसर निमंत्रण को अनसुना करके अपनी जिरह पर कायम रहे। "पिछली रात तुम कहाँ थे? अकेले थे? या और कोई व्यापारी साथ था? आज सबेरे वह दूसरा आदमी तुम्हें मिला? अँधेरे-तड़के तुम सराय से क्यों चल दिए?" इत्यादि—

हरजीत अचरज में था कि ये सब प्रश्न उससे क्यों किए जा रहे हैं? तो भी जैसा था, वह सब बताता चला गया। फिर उसने कहा, "आप तो मुझसे इस तरह सवाल-पर-सवाल पूछ रहे हैं जैसे मैं कोई चोर-डाकू हूं। अपने काम से मैं जा रहा हूँ, मुझसे सवाल पूछने की जरूरत नहीं है।"

अफसर ने इस पर साथ के सिपाहियों को पास बुला लिया। कहा, "मैं इस जिले का पुलिस अफसर हूँ। सवाल मैं इसलिए पूछता हूँ कि जिसके साथ तुम कल रात ठहरे थे, उसका आज गला कटा हुआ पाया गया है। अब हम तुम्हारी तलाशी लेंगे।"

इस पर वे तीनों कमरे में आ गए और अफसर-सिपाही सबने मिलकर हरजीत का सामान खोलना शुरू किया और देखते क्या हैं कि सामान में से एक छुरा बरामद

हुआ!

अफसर ने कहा, "यह किसका है?"

हरजीत देखता रह गया। खून से दागी उस छुरे को अपने सामान में से निकलते देखकर वह अचकचा गया था। वह डर गया।

"इस चाकू पर खून के निशान कैसे हैं?"

हरजीत ने जवाब देने की कोशिश की। लेकिन शब्द उसके मुँह से ठीक नहीं निकले। लड़खड़ाती आवाज में कहा, "मैं—मेरा नहीं—मैं नहीं जानता।"

पुलिस-अफसर ने कहा, "इसी सबेरे अपने बिस्तरे पर वह व्यापारी मरा पाया गया है। किसी ने गला काट दिया है। एक तुम्हीं हो सकते हो जिसने यह काम किया। मकान अंदर से बंद था और तुम्हारे सिवाय वहाँ और कोई न था। फिर तुम्हारे सामान में से यह छुरा भी निकलता है। इस पर खून के निशान तक मौजूद हैं। तिस पर तुम्हारा चेहरा और तरीका भी भेद खोले दे रहा है। इसलिए सच कहो कि तुमने उसे कैसे मारा और कितना रुपया तुम्हारे हाथ लगा?"

हरजीत ने शपथपूर्वक कहा, "यह मेरा काम नहीं है। शाम को साथ ब्यालू करने के बाद मैंने उस व्यापारी को फिर देखा तक नहीं। मेरे पास अपने पाँच हजार रुपयों के अलावा और कुछ नहीं है। यह चाकू मेरा नहीं है।"

लेकिन यह कहते हुए उसकी जवान लड़खड़ाती थी, चेहरा पीला था और डर से वह ऐसा काँप रहा था कि मुजरिम ही हो।

पुलिस-अफसर ने सिपाहियों को हुक्म दिया कि इसको बाँधकर गाड़ी में ले लो।

सिपाहियों ने हाथ-पैर बाँधकर उसे गाड़ी में पटक दिया। हरजीत के आँसू आ गए और उसने प्रार्थना की शरण ली। उसके पास न माल रहा न रकम। सब छीनकर उसे नजदीक कस्बे की हवालात में बंद होने भेज दिया गया। पाटनपुर में उसकी बाबत पूछताछ हुई कि वह कैसे चाल-चलन का आदमी है। वहाँ के व्यापारियों ने और दूसरे लोगों ने बताया कि पहले तो वह पीया करता था और वक्त मौज में गंवाता था। लेकिन वह आदमी भला है और इधर आकर राह-रास्त पर चलता है। खैर, मुकदमा चला और अजबपुर के एक व्यापारी की हत्या करने और उसके आठ हजार रुपए चुराने का आरोप उसके सिर लगा।

हरजीत की स्त्री सुनकर शोक में बेसुध-सी हो गई। उसे समझ न पड़ा कि कैसे वह अपने कानों पर विश्वास करे। बच्चे उसके सब छोटे थे। एक तो दूध पीती बच्ची थी। सबको साथ ले वह शहर में गई जहाँ उसका पति जेल में था। पहले तो उसे मुलाकात की इजाजत न मिली। बहुत उनहार करने और कोशिश करने से

आखिर उसे इजाजत मिली और वह पति के पास ले जाई गई। जेल के कपड़ों और बेड़ियों में चोर-डाकुओं के साथ बंद जब उसने अपने पति को देखा तो वह सह न सकी और धड़ाम से गिरी। काफी देर बाद उसे होश हुआ। तब उसने बच्चे को गोद में खींच पति के पास बैठकर घर-बार की बातचीत शुरू की। उसने पूछा कि यह क्या हुआ?

हरजीत ने जो हुआ था सब बतला दिया।

पूछने लगी, "अब क्या करना चाहिए?"

'राजा के पास अर्जी भेजनी चाहिए कि एक निरपराध आदमी की मौत से रक्षा की जाए।'

स्त्री ने कहा, "अर्जी तो मैंने भेजी थी। लेकिन वह मंजूर नहीं हुई।"

हरजीत इसका जवाब नहीं दे सका। आँखें नीची डालकर देखता रहा।

स्त्री ने कहा, "सुनते हो, सपना वह मेरा बेमतलब नहीं था कि मैंने एकदम तुम्हारे बाल सफेद देखे थे। याद है? उस रोज तुम्हें चलना नहीं चाहिए था। लेकिन—"

आगे वह खुद कुछ नहीं कह सकी। फिर पति के बालों में उँगली फिराते हुए बोली, "मेरे स्वामी, अपनी स्त्री से देखो झूठ न कहना। सच कहना—तुमने हत्या नहीं की?"

"ओ, सो तुम भी मुझे संदेह करती हो!" कहकर हाथों में मुँह को छिपा हरजीत फूटकर रोने लगा।

उस वक्त सिपाही ने आकर कहा कि मुलाकात का वक्त पूरा हो गया। अब चलो।

स्त्री-बच्चे चल दिए और हरजीत ने आखिरी बार अपने परिवार को हसरत से देखकर विदा किया।

उनके चले जाने पर हरजीत को ध्यान हुआ कि सब तरफ क्या-क्या कहा जा रहा है। और तो और, स्त्री तक ने उस पर शुबह किया। यह याद कर उसने मन में धार लिया कि ईश्वर ही बस सच्चाई जानता है। उसी से अब तो प्रार्थना करनी चाहिए। उसी से दया की आशा रखनी चाहिए। और कुछ नहीं। यह सोच हरजीत ने फिर कोई दरख्वास्त नहीं की। आशा-अभिलाषा उसने छोड़ दी और ईश्वर की प्रार्थना में लीन रहने लगा।

उसे कोड़ों की और डामुल की सजा मिली। सो पहले उसे भीगे बेंत से कोड़े लगे। जब उसके जख्म भर आए तो और कैदियों के साथ उसे डामुल भेज दिया गया।

छब्बीस बरस वह वहाँ काले पानी में कैदी रहा। इस बीच बाल उसके रुई से सफेद हो गए। मैले सन के-से रंग की दाढ़ी बढ़ आई। हँसी-खुशी उसकी उड़ गई। कमर झुक आई। अब धीमें चलता था, थोड़ा बोलता था और हँसता कभी न था। अक्सर प्रार्थना में रहता था। और कहीं उसे आस न थी।

जेल में उसने जूते गाँठना सीख लिया था। उससे कुछ पैसों की बचत भी हो गई थी। उन पैसों से उसने 'संतों की जीवनी' नाम की किताब मंगा ली थी। जेल में पढ़ने लायक चाँदना रहता कि वह उस किताब को पढ़ने लगता और पढ़ता रहता। इतवार के दिन वह भजनपद गाकर सुनाता। उसकी आवाज अब भी खासी थी और बड़ी भाव-भक्ति के साथ वह पद कहता था।

जेल-अफसर हरजीत को चाहते थे। वह सीधा, नेक और विनयी था। और कैदी भी उसकी इज्जत करते थे। वे उसे 'दादा' 'भगतजी' कहा करते थे। जब उन्हें जेलवालों से किसी बात के लिए दरख्वास्त करनी होती, या कुछ कहना-सुनना होता तो हरजीत को ही अपना मुखिया बनाते थे। और जब आपस में झगड़ा होता, तब उसी के पास आकर निबटारा और फैसला माँगते थे।

घर से हरजीत को कोई खबर नहीं मिली। उसे पता नहीं था कि उसकी बीबी-बच्चे जीते भी हैं कि नहीं।

एक दिन उनकी जेल में कैदियों की एक नई टुकड़ी आई सो शाम को पुराने कैदी नएवालों के आस-पास जमा हो बैठे। पूछने लगे कि कहाँ-कहाँ से आए हो! और कितनी-कितनी सजा लाए हो? और किस-किस जुर्म की सजाएँ हैं?... इत्यादि। इन्हीं सबके बीच हरजीत भी था। वह आनेवालों के पास बैठा था और निगाह नीची डाले, जो कहा जाता, सुन रहा था।

नए कैदियों में से एक आदमी अपना किस्सा बयान कर रहा था। वह लम्बा, तगड़ा कोई साठ बरस का आदमी था। दाढ़ी उसकी बारीक छटी थी। मजे में आप-बीती कह रहा था—

''दोस्तो, मैं बताता हूँ। बात यह कि मैंने गाड़ी में से खोलकर एक घोड़ा ले लिया। सो उसके लिए मैं पकड़ा गया और चोरी का इल्जाम लगा। मैंने कहा कि वाह, मैंने घर आने के लिए घोड़ा खोला था ताकि जल्दी पहुँच जाऊँ। घर आकर मैंने उसे पास नहीं रखा, खुला छोड़ दिया। तिस पर वह गाड़ीवाला आदमी मेरा दोस्त था। इसलिए मैंने अदालत से कहा, 'इसमें कोई बुरा नहीं है।'

'उन्होंने कहा, 'चुप रहो। तुमने चोरी की है।'

''लेकिन कहाँ और कैसे चोरी की है, यह वह साबित न कर सके। एक बार हाँ, मैंने सचमुच जुर्म किया था। उस जुर्म का किसी को पता ही न चला और मैं नहीं

पकड़ा गया। और अब यहाँ आया तो एक न कुछ बात के लिए...लेकिन दोस्तो, मैं झूठ बकता हूँ।, मैं यहाँ पहले भी आ चुका हूँ। लेकिन ज्यादा दिन नहीं ठहरा।"

एक ने पूछा, "हो कहाँ के ?"

"पाटनपुर मेरा गाँव है। वतन मेरा वही है। नाम बलवंत। वैसे मुझे 'बल्ली-बल्ली' कहते हैं। "

हरजीत ने पाटनपुर का नाम सुनकर सिर उठाया। पूछा, "तुम पाटनपुर के राय घराने के लोगों को जानते हो? उनका क्या हाल है? क्या उनमें कोई अभी जीता है?"

"क्या पूछा, जानता हूँ? खूब, जानूँगा क्यों नहीं। वे मालदार लोग हैं। हाँ, उनका बाप यहीं-कहीं डामुल में हम चोर-डाकुओं की तरह कैद है। लेकिन दादा, तुम यहाँ कैसे आए?"

हरजीत को अपने दुर्भाग्य की कथा कहना नहीं रुचा। उसने लंबी साँस ली। बोला, "छब्बीस साल से यहीं अपने पाप की सजा काट रहा हूँ"

बलवंत ने कहा, "पाप क्या?"

हरजीत ने कहा, "अंह, छोड़ो भी। कुछ तो किया ही होगा।"

हरजीत और कुछ न कहता। लेकिन साथियों ने बल्ली को बताया कि हरजीत राय क्योंकर यहाँ जेल में पहुँचे। किसी हत्यारे ने एक सौदागर की हत्या की और चाकू इनके सामान में छिपा दिया। इस तरह बेकसूर इन्हें सजा मिली।

यह सुनकर बलवंत हरजीत राय की तरफ देख उठा। फिर घुटनों पर हाथ मारकर बोला कि यह खूब रही! वाह यह एक ही रही! लेकिन दादा, तुम बुढ़ा कितने गए हो?"

और लोग पूछने लगे तुमको इनके बारे में अचंभा क्यों हो रहा है, जी? क्या तुमने पहले इनको कहीं देखा था? कहाँ देखा?

लेकिन बल्ली ने जवाब किया। उसने सिर्फ यही कहा कि दोस्ती है, संजोग की बात कि हम लोग यहाँ आकर मिले।

इन शब्दों से हरजीत को भी आश्चर्य हुआ। मन में उसके गुमान हुआ कि यह आदमी जानता है कि किसने उस व्यापारी को मारा था। पूछा, "बलवंत, शायद तुमने उस मामले की बाबत सुना होगा। हाँ, हो सकता है कि तुमने मुझे पहले देखा भी हो।"

"सुनता कैसे नहीं? दुनिया बातों से भरी है। कान किसी के बंद थोड़े रह सकते हैं। लेकिन एक मुद्दत हुई। अब क्या याद कि मैंने क्या सुना था।"

हरजीत ने पूछा कि शायद तुमने सुना हो कि किसने व्यापारी का खून किया?

बलबंत इस पर हँसने लगा। बोला, "क्यों, जिसके सामान में छुरा निकला, वही तो हत्यारा। अगर किसी और ने वहाँ रख दिया तो वह जब तक पकड़ा न जाए, मुजरिम कैसा? तिस पर दूसरा कोई तुम्हारे थैले में चाकू रख कैसे सकता था जबकि थैला तुम्हारे सिर के नीचे था! ऐसे तुम जग न जाते?"

हरजीत को यह सुनकर पक्का हो गया कि इसी आदमी ने वह हत्या की होगी। इस पर उसका जी खराब हो आया और उठकर वहाँ से चला।

सारी रात वह जागता रहा। उसको बहुत कष्ट था। कल पल को न थी। तरह-तरह की तस्वीरें उसके मन में आती थीं, स्त्री का चेहरा आया, जब वह मेले में जाने के लिए उससे विदा ले रहा था। उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे वह सामने जीती-जागती मौजूद हो। ऐसी प्रत्यक्ष कि उसे छू सकता हो। मानो उसकी हँसी की आवाज और बातचीत का एक-एक शब्द सुन पाता हो। फिर उसके मन में बच्चों की तस्वीरें आईं। फूल से बच्चे! एक बड़े से चोगे में दुबका था, दूसरा माँ का दूध पी रहा था। अनंतर वह खुद अपने को देखने लगा, जैसा कि वह हुआ करता था। जवान, खुश और तंदुरुस्त और खूबसूरत। उसको याद आया कि सराय में कैसा मगन मैं बंसी बजा रहा था। चिंता की रेख छू नहीं गई थी कि तभी पकड़ लिया गया! फिर वह जगह और दृश्य याद आया। जहाँ कोड़े लगे थे। अफसर लोग और कुछ कैदी इर्द-गिर्द खड़े थे। इसके बाद इन जेल के छब्बीस बरसों का समूचा जीवन उसकी आँखों के आगे फिर गया। वहाँ की मुसीबतें, कुसँग, बेड़ियाँ और समय से पहले उस पर आ उतरा बुढ़ापा। इन सबको याद कर उसका जी भारी हो आया। उसे बड़ी व्यथा हुई, ऐसी कि मौत माँगने की इच्छा हुई।

"और यह सब उस दुष्ट के कर्म हैं।" हरजीत सोचने लगा। उस बलवंत के खिलाफ उसे बड़ा गुस्सा आया। मन में होने लगा कि चाहे मरना पड़े, पर उस बदमाश को फल देना चाहिए। वह रात भर प्रार्थना करता रहा, पर उसे शांति नहीं मिली। दिन में वह बलवंत के पास से बचता रहा, न ऊपर नजर उठाई।

इस तरह दो हफ्ते निकल गए। रात को हरजीत सो न सकता था, उसे इतना त्रास था। समझ में नहीं आता कि क्या करूँ, क्या न करूँ?

एक रात जेल में घूम रहा था कि उसे पास कहीं से मिट्टी गिरती हुई मालूम हुई। वह रुका कि क्या है। इतने में देखता है कि एक तरफ दीवार के नीचे बलवंत का मुँह उंझक आया है। हरजीत को देखकर बलवंत का चेहरा डर से राख हो गया। हरजीत ने चाहा कि इस बात को दरगुजर कर दे। पर बलवंत ने बाहर निकलकर उसको हाथ से पकड़ लिया। कहा कि मैंने कोठरी में से रास्ता खोद डाला है। रोज मिट्टी को जूतों में रखकर काम पर बाहर जाने के वक्त इधर-उधर फेंक आया करता

था। लेकिन अब तुम चुप रहो। हल्ला मत करना। चलो, तुम भी मेरे साथ निकल चलो। और अगर तुमने कुछ आवाज की तो मुझे पकड़कर, चाहे मार-मार कर, वे फिर मेरी जान ही निकाल लें, लेकिन तुम्हें तो पहले ही खत्म कर दूँगा।''

हरजीत अपने शत्रु को देखकर गुस्से से काँपने लगा। उसने अपना हाथ झटककर अलग कर दिया। कहा, ''मैं भागना नहीं चाहता और तुम अब क्या और मुझे खत्म करोगे? पहले ही सब कर चुके हो। और तुम्हारी खबर देने की जो बात हो—तो मैं नहीं जानता। जो परमात्मा करेगा होगा।''

अगले दिन जब कैदी बाहर काम पर गए तो वार्डरों ने देखा कि एक जगह मिट्टी का ढेर-सा हो रहा है। किसी कैदी ने ही ला-लाकर यहाँ डाली होगी, और कौन डालता? जेल तलाश किया गया तो उस चोर रास्ते का भी पता लग गया। जेल-सुपरिंटेंडेंट आए और सबसे पूछा कि किसकी यह करतूत है। सबने इनकार कर दिया कि हमें पता नहीं। जो जानते थे उन्होंने भी भेद नहीं दिया, क्योंकि बता देते तो बलवंत की जान की खैर न थी। आखिर सुपरिंटेंडेंट ने हरजीत से पूछा। सुपरिंटेंडेंट भी उसका मान करते थे और मानते थे कि हरजीत सत्यवादी है।

''हरजीत, तुम सच्चे और नेक आदमी हो। ईश्वर से डरते हो। सच बताओ कि यह काम किसका है?''

बलवंत ऐसा बना रहा जैसे मतलब न हो। सुपरिंटेंडेंट पर उसने आँखें लगा रखी और भूले भी हरजीत की तरफ नहीं देखा। साहब के सवाल पर हरजीत के हाथ काँपने लगे और ओंठ भी काँपे। बहुत देर तक एक भी शब्द उसके मुँह से न निकला। एक बार सोचा कि जिसने मेरी जिंदगी बरबाद कर दी, उसे ही मैं किसलिए बचाऊँ? मैंने कितना दु:ख उठाया है! अब मिलने दूँ उसे बदला। लेकिन फिर खयाल हुआ कि मैं कह दूँगा कि तो जेलवाले इसकी जान के गाहक हो जावेंगे। तिस पर क्या पता कि मेरा शक ही हो और बात सच न हो। जो हुआ सो हुआ, अब उसकी तकलीफ से क्या हाथ आनेवाला है?

सुपरिंटेंडेंट ने दुहराकर पूछा, ''सुनते हो न, हरजीत? तुम पाप से डरते हो। सच बताओ दीवार में छेद किसने किया है?''

हरजीत ने बलवंत की तरफ देखा। फिर कहा, ''मैं नहीं बता सकता हुजूर! ईश्वर की आज्ञा नहीं है कि मैं बताऊँ। इसके लिए मेरा जो चाहे कीजिए, मैं आपके हाथ में हूँ।''

साहब ने और जेल दरोगा ने बहुतेरी कोशिश की। लेकिन हरजीत ने आगे कुछ नहीं कहा। अब क्या होता? सो मामले को वहीं छोड़ना पड़ा।

उस रात जब हरजीत अपने बिस्तर पर पड़ा था और आँखों में नींद उतर चली

थी कि कोई दबे पाँव आया और चुपचाप पास बैठ गया। अँधेरे में भेद कर हरजीत ने पहचाना तो वह था बलबंत।

हरजीत बोला, "अरे, और तुम मेरा क्या चाहते हो? तुम यहाँ क्यों आए हो? क्या जी नहीं भरा?"

बलवंत चुप सुनता रहा। हरजीत उठकर बैठ गया और बोला, "क्या है तुम्हारी मंशा? बुलाऊँ पहरेदार?"

बलवंत हरजीत के चरणों में झुका जाने लगा। धीमे-से बोला, "हरजीत भाई, मुझे माफ कर दो।"

"माफ किसलिए?"

"मैं गुनहगार हूँ। मैंने ही उस व्यापारी को मारा था और छुरा तुम्हारे सामान में रख दिया था। मैं तुम्हें भी मारना चाहता था; लेकिन बाहर शोर सुन, छुरा तुम्हारे सामान में दुबका, खिड़की की राह मैं भाग गया था।"

हरजीत चुप था। उसे कुछ भी बोल न सूझा। बलवंत धरती पर घुटनों के बल आ बैठा। बोला, "हरजीत भाई, मुझे माफ कर दो। मैं सब इकबाल कर लूँगा। कहूँगा, मैं हत्यारा हूँ। तब तुम छूट जाओगे और घर जा सकोगे।

हरजीत ने कहा, "बलबंत, अब मैं क्या कहूँ। कहना तो आसान है। पर यह छब्बीस बरस जाने मैं क्या-क्या नहीं उठाता रहा हूँ। क्यों? सब तुम्हारी वजह से। लेकिन अब मैं कहाँ जाऊँ। मेरी स्त्री स्वर्ग गई, बच्चे मुझे भूल चुके। कौन मुझे पहचानेगा? बलवंत, अब मेरे पास जाने को कोई जगह नहीं है"

बलवंत धरती पर से उठा नहीं, वहीं फर्श पर अपना सिर पटककर पीटने लगा।

"हरजीत, मुझे माफ करो। मुझे बेंत से पीटा तब इतनी तकलीफ नहीं हुई जितनी अब तुम्हें देखकर होती है। मुझसे सहा नहीं जाता, मैं तुम्हें सताता गया, तुम मुझे बचाते गए...हरजीत, हा-हा खाता हूँ, परमात्मा के लिए मुझे क्षमा करो। मैं बड़ा अधम हूँ, पापी हूँ, दुराचारी हूँ।"

बलवंत को सुबकी भर-भरकर रोते हुए सुना तो हरजीत भी रो आया। बोला, "ईश्वर तुम्हें क्षमा करेगा, बलवंत। कौन जानता है कि मैं तुमसे सौ गुना अधम नहीं हूं।"

यह कहते-कहते उसके अंतर में जैसे एक प्रकाश का उदय हो आया। सब चाह जैसे उसकी मिट गई। घर जाने की अभिलाषा और कलख भी उसे अब नहीं रह गई। जेल से रिहाई की जरूरत ही उसमें न रही। बस ईश्वर की आखिरी घड़ी अब आए, यही आस उसे शेष रह गई।

हरजीत ने कितना ही कहा, लेकिन बलवंत अपने जुर्म का इकबाल करके ही

माना। पर हरजीत के जेल से छुटकारे का हुक्म आया कि वह तो देह से छुटकारा पा चुका था!

धर्मपुत्र

1

एक दिन किसान के घर एक बालक जनमा। उसने अपने भाग्य सराहे और बड़ा कृतार्थ हुआ। खुश-खुश एक पड़ोसी के घर गया कि आप इस बालक के धर्म-पिता बन जावें। पर गरीब के बेटे को कौन अपनावे! सो पड़ोसी ने इनकार कर दिया। तब दूसरे पड़ोसी से कहा, उसने भी इनकार कर दिया। इस पर बेचारा किसान घर-घर घूमा; लेकिन कोई उसके बालक का धर्म-पिता बनने को राजी न हुआ। यह देख वह दूसरे गाँव चला। चलते-चलते राह में एक आदमी मिला। पूछने लगा, "जयरामजी की, भाई चौधरी, कहाँ जा रहे हो?"

किसान बोला, "भगवान की दया हुई कि जीवन को सारथ करने और बुढ़ापे में सहारा होने घर में हमारे उजियाला जनमा है। मरने पर वही हमारी मिट्टी लगाएगा और हमारी आत्मा को दया-धर्म से सींचेगा। लेकिन मैं गरीब हूँ और गाँव में कोई उसका धर्म-पिता बनने को राजी नहीं है। सो मैं उसके धर्म-पिता की ख़ोज में जा रहा हूँ।"

मुसाफिर ने कहा, "चाहो तो मैं धर्म-पिता बन सकता हूँ।"

किसान सुनकर प्रसन्न हुआ और धन्यवाद देने लगा। फिर सोचकर बोला, "यह तो आपने मुझे धन्य किया; लेकिन अब सोचता हूँ कि धर्म-माता के लिए मैं किसे कहूँ।"

मुसाफिर ने कहा, "धर्म-माँ के लिए सुनो, सीधे उस नगर में जाओ। वहाँ चौक में एक पत्थर की हवेली होगी। सामने नीली खिड़कियाँ दीखेंगी। वहाँ पहुँचोगे तो द्वार पर ही तुम्हें मकान के मालिक मिलेंगे। उनसे कहना कि अपनी बेटी को बालक की धर्म-माता बन जाने दें।"

किसान सुनकर अचकचा आया। बोला, "एक धनी आदमी से ऐसी बात कैसे कहूँगा? वह मुझे तिरस्कार से देखेंगे और अपनी लड़की को पास न आने देंगे।"

"सो चिंता न करो। तुम जाओ, कहो तो। और कल सबेरे तैयारी रखना। मैं ठीक संस्कार के वक्त पहुँच जाऊँगा।"

किसान घर लौट आया। फिर उन धनी व्यापारी की तलाश में शहर की तरफ

गया। चौक में पहुँचकर उसने बहली खोली, और मकान की ड्यौढ़ी पर पहुँचा था कि सेठ वहीं मिले। पूछने लगे—कहाँ चौधरी, क्या चाहते हो?"

किसान ने कहा कि भगवान ने दया की है और घर में दीपक जनमा है। वही हमारी आँखों का तारा है, बुढ़ापे का सहारा है और मौत के बाद हमारे प्रेत को पानी देगा। बड़ी मेहरबानी होगी जो आप अपनी बेटी को उसकी धर्म-माता बनने दें।

व्यापारी ने पूछा, "संस्कार कब है?"

"कल सबेरे।"

"अच्छी बात है। तसल्ली रखो। कल सबेरे संस्कार के समय वह आ जाएगी।"

अगले दिन माता आ गई, धर्म-पिता भी आ गए और शिशु का संस्कार होते ही धर्म-पिता चले गए। किसी को पता भी नहीं चला कि वह कौन है, कहाँ रहते हैं। न वह फिर दीखे।

2

बालक चाँद की तरह बढ़ने लगा। माँ-बाप के उछाह का पूछना क्या! बढ़कर माता-पिता के लिए छोटी उमर से ही वह सहाई होने लगा। तंदुरुस्त था और काम को उद्यत, चतुर और आज्ञाकारी। दस बरस का हुआ कि लिखना-पढ़ना सीखने के लिए उसे मदरसे में भेजा गया। जो और पाँच बरस में सीखते वह एक ही बरस में सीख गया और कुछ ही अरसे में वहाँ की सब विद्या उसने समाप्त कर दी।

पूजा-दशहरे के दिन आए और छुट्टियों में वह अपनी धर्म-माता को प्रणाम करने गया। जाकर चरण छुए और सामने भेंट रखी।

फिर लौटकर घर आया तो माँ-बाप से उसने पूछा, "जी, धर्म-पिता कहाँ रहते हैं? इस विजयदशमी के दिन मैं उनको प्रणाम करना चाहता हूँ और दक्षिणा भेंट दूँगा।"

पिता ने कहा, "बेटे, तुम्हारे धर्म-पिता का हमें कुछ पता नहीं है। हमें अक्सर उनका खयाल आता है। तुम्हारा नाम-संस्कार हुआ उसी रोज से उनकी कोई खबर नहीं मिली। यह तक मालूम नहीं कि कहाँ रहते हैं और अब हैं भी कि नहीं।"

पुत्र बोला कि माता जी और पिता जी, आप दोनों मुझे इजाजत दीजिए। मैं अपने धर्म-पिता की खोज में जाऊँगा। उन्हें खोजकर रहूँगा और उनके चरणों की रज लूँगा।

माता-पिता ने बालक को अनुमति दे दी और वह अपने धर्म-पिता की खोज में चल पड़ा।

3

घर से निकल वह सीधी सड़क चल दिया। घंटों चलता रहा। चलते-चलते एक मुसाफिर मिला। उसने पूछा कि लड़के, तुम कहाँ जा रहे हो?

लड़के ने जवाब दिया, "मैं धर्म-माता के दर्शन करने और उन्हें प्रणाम करने गया था। फिर घर जाकर मैंने धर्म-पिता के बारे में पूछा, जिससे उनके भी दर्शन पाऊँ और चरण छू सकूँ। लेकिन मेरे माता-पिता भी उनका पता नहीं जानते हैं। कहने लगे कि मेरा संस्कार हुआ था, उसके बाद से ही उनकी कोई खबर नहीं मिली, जाने जीते भी हैं कि नहीं। लेकिन मैं जरूर अपने धर्म-पिता के दर्शन चाहता हूँ। सो मैं उसी खोज में निकला हूँ।"

मुसाफिर ने कहा, "तुम्हारा धर्म-पिता तो मैं ही हूँ।"

बालक सुनकर कृतार्थ हुआ। उसने उनके चरणों में मस्तक नवाया। फिर पूछने लगा कि धर्म-पिता, आप अब किधर जा रहे हैं? हमारी तरफ जा रहे हों तो मैं भी आपके साथ चल रहा हूँ।

पथिक ने कहा कि अभी तो मेरे पास तुम्हारे घर चलने को समय नहीं है। जगह-जगह बहुत काम है। लेकिन कल सबेरे मैं अपनी जगह पहुँच जाऊँगा। तब वहाँ आकर तुम मुझे मिलना।

"लेकिन धर्म-पिता, मुझे जगह का पता कैसे चलेगा?"

"सुनो, अपने घर से सबेरे सामने सूरज की सीध में चलते चले जाना। चलते-चलते जंगल आ जाएगा। जंगल को पार करना। फिर एक घाटी में पहुँचोगे। घाटी में पहुंचकर वहाँ बैठना और थोड़ा विश्राम करना। पर चौकस होकर देखते रहना कि आस-पास क्या होता है। फिर घाटी के परले किनारे तुम्हें एक बगीचा दीखेगा। वहाँ मकान होगा, जिसकी छत सुनहरी झलकती होगी। वही मेरा घर है। तुम सीधे दरवाजे पर आना—वहाँ तुम्हें मैं खुद खड़ा मिलूँगा।"

4

बालक ने धर्म-पिता के कहे अनुसार किया। वह उठकर सूर्य-भगवान की तरफ चलता चला गया। चलते-चलते वन आया। उसे पार करने पर घाटी आई। घाटी में क्या देखता है कि ऊँचा एक बरगद का पेड़ खड़ा है। उसकी एक शाख पर रस्सी बँधी है। रस्सी से एक भारी लकड़ी का लट्ठ लटका हुआ है। लट्ठ के नीचे लकड़ी की बड़ी-सी कठौती रखी है जो शहद से भरी हुई है। बालक यह देखकर अचरज में हुआ कि क्यों इस तरह शहद भरा हुआ रखा है और उसके ठीक ऊपर यह लकड़ी का लट्ठ क्यों लटक रहा है। लेकिन अचरज का समय भी नहीं मिला कि

उसे किसी के उधर जाने की आहट सुनाई दी। देखतो क्या है कि रीछ चले आ रहे हैं एक रीछनी है, पीछे-पीछे तीन बच्चे हैं। दो तो नन्हें-नन्हें हैं, एक तगड़ा है। रीछनी सूंघती-सूंघती शहद की कठौती तक सीधी पहुँच गई। बच्चे भी पीछे लगे रहे। वहाँ पहुँचकर उसने शहद में मुँह डाल दिया और चाटने लगी और बच्चों ने भी चारों ओर से उसे घेर लिया। वे भी नांद पर चढ़कर लदर-पदर शहद चाटने लगे। थोड़ा ही चाटने पाए होंगे कि ऊपर का लट्ठ आया और उन बच्चों के बदन में आकर लगा। रीछनी ने मुँह से उस लट्ठ को परे हटा दिया। हटकर वह गया कि लौटकर अब फिर आ गया था। रीछनी ने यह देखकर दूसरी बार अपने पंजों से उस लट्ठे को धकिया दिया। वह दूर चला गया। लेकिन फिर उतने ही जोर से लौटा। लौटकर इस बार जोर से वह एक बच्चे की पीठ और दूसरे के सिर से टकराया। बच्चे दर्द के मारे चीखते-चिल्लाते भागे। उनकी माँ ने यह देखकर गुस्से के साथ उस लट्ठ को लकड़ी को अपने अगले हाथों में भींचकर पकड़ा और उठाकर जोर से फेंक दिया। लट्ठ दूर चला गया और मौका देखकर वह रीछ का जवान पट्ठा आया और नांद में मुंह डाल चटचट शहद खाने लगा। देखा-देखी छोटे बच्चे भी चले आए। लेकिन वे पास पहुँचे न होंगे कि लट्ठ लौटकर आया और इस जोर से उस जवान बेटे के सिर में लगा कि वह वहीं ढेर हो गया। रीछनी को इस पर और गुस्सा चढ़ा। झुंझलाकर उसने लट्ठ को जोर से पकड़ा और पूरी शक्ति से उसे परे फेंक दिया। जिस डाल से बँधा था उससे भी ऊँचा वह जा पहुंचा—इतना ऊँचा कि रस्सी ढिला गई। इस बीच रीछनी फिर नांद पर आ गई और बच्चे भी उसी किनारे आ लगे। लट्ठा ऊँचा चलता गया, ऊँचा चलता गया, आखिर वह रुका और फिर गिरना शुरू हुआ। जैसे-जैसे नीचे गिरता, जोर उसका बढ़ता जाता था। आखिर पूरे बल से रीछनी के सिर में जाकर लगा। लगना था कि रीछनी लोट-पोट हो गई। उसके पाँव आसमान में हिलते रहे और वहीं जान दे दी। बच्चे वन में भाग गए।

5

बालक अचरज में भरा यह देखता रहा। फिर उसने आगे की राह पकड़ी। जंगल पार कर घाटी के परले किनारे उसे एक आलीशान बगीचा मिला। वहाँ था एक महल-का-महल। छत उसकी सुनहरी झकझकाती थी। महल के दरवाजे पर बालक को धर्म-पिता मिले। मुस्कराकर उन्होंने बालक का स्वागत किया और दरवाजे में से उसे अंदर ले गए। लड़के ने जो सपने में भी नहीं देखा वह सचमुच में यहाँ था। क्या बहार, आनंद! फिर धर्म-पिता उसे महल के अंदर ले गए। वहाँ की विभूति का तो कहना ही क्या! वह अपूर्व थी। धर्म-पिता ने चलकर बालक को महल का एक-

एक कमरा दिखाया। उसकी तो आँखें न ठहरती थीं। एक-से-एक बढ़-चढ़कर ऐसी शोभा और ज्योति और उल्लास था कि—

आखिर एक कमरे पर पहुँचे जहाँ का दरवाजा मुहरबंद था। धर्म-पिता ने कहा कि यह दरवाजा देखते हो न। इसमें ताला नहीं है, बस मुहरबंद है। वह खुल सकता है, लेकिन खबरदार, उसे खोलना नहीं। तुम यहाँ रहो, जी चाहे जहाँ फिरो। यहाँ का सब तुम्हारा है। सब भोग और सब आराम। लेकिन मेरी एक ताकीद है। यह दरवाजा मत खोलना। जो कहीं तुमने उसे खोला, तो याद कर लो जंगल में तुमने क्या देखा था।

यह कहकर धर्म-पिता अंतर्धान हो गए। लड़का उस महल में रहता रहा। वहाँ वह सुख और आनंद थे कि तीस साल ऐसे बीत गए जैसे तीन घंटे। जब एक-एक कर तीस साल गुजर गए तो एक दिन धर्म-पुत्र मुहरबंद दरवाजे के पास से गुजर रहा था। वह ठिठका और अचरज में आकर सोचने लगा कि धर्म-पिता ने इस कमरे में जाने की मनाही क्यों की थी।

सोचने लगा कि जरा देखने में क्या हर्ज है। यह सोचकर उसका दरवाजे को हाथ से तनिक-सा धकियाना था कि मुहर गिर गई और दरवाजा खुल गया। अंदर देखता क्या है कि और सभी से बढ़कर और बड़ा यह हाल है। बीच में उसके सिंहासन रखा है। कुछ देर वह उस खाली हाल के वैभव को देखता हुआ इधर-उधर घूमता रहा। अनंतर सीढ़ी चढ़ वह सिंहासन पर जा पहुँचा और वहाँ बैठ गया। बैठकर देखता है कि सिंहासन से टिककर शासन-दंड रखा हुआ है। उसने उसे हाथ में ले लिया। उसका हाथ में लेना था कि हाल की सब दीवारें हवा हो गईं। धर्मपुत्र ने देखा तो सारी दुनिया उसके सामने बिछी थी और लोग जो कुछ वहाँ कर-धर रहे थे, सब उसे दीखता था। वह सामने देखने लगा कि समंदर फैला है और जहाज उस पर आ-जा रहे हैं। दाएँ हाथ अजब-अजब तरह की जंगली जातियाँ बसी हुई हैं। बाएँ, हिंदुस्तान के अलावा और लोग बसे दीखते हैं। चौथी तरफ मुँह जो उसने मोड़ा तो देखा कि उसकी आँख के आगे समूचा हिंदुस्तान फैला है और उसी के जैसे लोग घूम-फिर रहे हैं।

उसने सोचा कि देखें कि हमारे घर क्या हो रहा है और खेती-बाड़ी का क्या हाल है। उसने अपने बाप के खेतों को देखा कि बालें खड़ी हैं और पकने के नजदीक हैं। वह अंदाज लगाने लगा कि फसल कितने की बैठेगी। इतने में उसे गाड़ी में कोई आता दिखाई दिया। रात का वक्त था। धर्मपुत्र ने सोचा कि पिता ही होंगे, रात को गल्ला ढो ले जाना चाहते हैं। लेकिन देखता क्या है कि वह आदमी तो है नत्थूसिंह जोकि एक नंबरी चोर है। रात को आया है कि चुराकर खेत का सारा

नाज भर ले जाए। यह देख धर्मपुत्र को गुस्सा आ गया। उसने पुकारकर कहा, ''बापा, ओ बापा, उठो हमारे खेत से नाज चुराया जा रहा है।''

बाप रात को अपनी मढ़ैया में चौकन्ना होकर सोया करता था। वह एकदम जाग बैठा। सोचा कि मैंने सपने में सही, लेकिन अपने खेत का नाज चोरी होते देखा है। चलूँ, देखूँ क्या बात है। भागकर वह खेत में आया तो वहाँ देखता है कि नत्थूसिंह मौजूद है। हल्ला मचाकर पास-पड़ोसवालों को भी उसने इकट्ठा कर लिया और नत्थूसिंह की खूब मरम्मत बनाई। उसे पीटा-कूटा और बाँधकर थाने ले गए।

उसके बाद धर्मपुत्र ने शहर की ओर निगाह उठाई, जहाँ धर्ममाता रहती थीं। अब उनका विवाह हो गया था। इस घड़ी वह चैन की नींद सो रही थीं। इतने में उनका पति उठा और दबे पाँव घर से निकल चला। धर्मपुत्र ने वहीं से पुकारकर कहा, ''माँ, उठो, उठो, देखो तुम्हारा पति अपने किस कुकर्म के लिए घर से निकल चला है।''

इस पर धर्म-माँ झठ से उठीं और कपड़े पहनकर उस कुलटा के यहाँ पहुँची जहाँ पति गया था। जाकर उस नारी को खूब बुरा-भला सुनाया, मारा-पीटा और बाहर खदेड़ दिया।

इसके बाद धर्मपुत्र ने अपने पेट की माँ का खयाल किया। वह अपने घर में छप्पर के तले सो रही थीं। देखता क्या है कि एक चोर घर में घुस गया है और बक्स का ताला तोड़ रहा है जिसमें माँ की जमा-जोखों रखी है। इतने में माँ जग उठीं। यह देख डाकू ने गंडासा ऊपर उठा माँ पर वार करना चाहा।

यह देख धर्मपुत्र से रहा न गया और उसने उस दुष्ट पर हाथ का शासन-दंड खींचकर मारा। वह जाकर कनपटी पर लगा और चोर वहीं का वहीं ढेर हो रहा।

6

धर्मपुत्र का चोर को मारना था कि दीवारें फिर चारों ओर घिर आईं और हॉल जैसे-का-तैसा हो गया।

उसी समय दरवाजा खुला और धर्मपिता अंदर आते दिखाई दिए। वहाँ पहुँच, हाथ पकड़कर उन्होंने धर्मपुत्र को सिंहासन से नीचे उतारा और अपने साथ ले चले।

बोले, ''तुमने मेरा कहना नहीं माना और मना करने पर दरवाजा खोला, यह पहली गलती। सिंहासन पर जा बैठे और शासन-दंड हाथ में ले लिया यह दूसरी गलती। उसके बाद यह तुमने तीसरी गलती की जिससे दुनिया में अँधेरा फैला जा रहा है। ऐसे तो तुम घड़ीभर सिंहासन पर और रहते तो आधी दुनिया बरबाद हो चुकी थी।''

यह कहकर धर्म-पिता अपने साथ धर्मपुत्र को फिर सिंहासन पर ले गए और शासन-दंड अपने हाथ में रखा। दीवारें फिर उसी तरह सामने से गायब हो गईं और दुनिया का सब कुछ दिखाई देने लगा।

धर्म-पिता ने कहा, "अब देखो, देखते हो न कि तुमने अपने पिता के हक में क्या किया। नत्थूसिंह को एक साल की सजा हुई। अब जो वापस आया है तो जेल से बची-खुची और बुराइयाँ सीख आया है। रहा-सहा भी अब वह पक्का हो गया है। देखते नहीं कि उसने अब तुम्हारे बाप के दो बैल चुरा लिए हैं और खलिहान में आग लगाए दे रहा है। सो अपने लिए ये बीज तुमने बोए!"

और सचमुच धर्मपुत्र ने देखा कि आँख-आगे उसके बाप का खलिहान आग की लपटों में धू-धू करके जल रहा है।

उसके बाद धर्म-पिता ने वह दृश्य दूर कर दिया और दूसरी तरफ देखने को कहा, "देखो, यह तुम्हारी धर्म-माता के पति हैं। एक साल हुआ कि उन्होंने बीबी को छोड़ दिया है। अब औरों के पीछे लगे हैं। उनकी पहली प्रेयसी की हालत देखते हो? वह कितनी पतिता हो गई है। दुःख से पत्नी का हाल भी बेहाल है। गम के मारे उन्हें दौरे पड़ने लगे हैं। सो यह सेवा तुमने अपनी धर्म-माता की की है।"

धर्म-पिता ने यह दृश्य भी फिर हटा दिया। अब उसके आगे अपने गाँव का मकान था। वहाँ देखता है कि उसकी माँ रो रही है और अपने अपराधों की क्षमा माँग रही है। पछतावा करती सिर धुनती कह रही है, "हाय, भला होता मुझे चोर उसी रात मार डालता। फिर मुझे ऐसे भोग तो न भोगने होते!"

धर्म-पिता ने कहा, "देखते हो? यह है जो तुमने अपनी माँ के लिए करके रखा है!"

वह पर्दा भी दूर हुआ। फिर धर्म-पिता ने सामने देखने को कहा। अब जो उसने देखा तो दो वार्डर जेलखाने के आगे एक डाकू को पकड़े खड़े हैं।

धर्म-पिता ने कहा, "पहचानते हो? इस आदमी के सिर पर दस खून हैं। वह खुद कर्म-फल का भोग लेकर अपने आप उतरता। लेकिन उसको मारकर उसके पाप तुमने बढ़ाकर अब अपने सिर ले लिए हैं। अब उन सब पापों के लिए तुम्हें जवाब देना होगा। यह हैं जो तुमने अपने हक में किया है! याद करो, रीछनी ने लट्ठ को एक बार हटा कर अपने बच्चों को चोट पहुँचाई। फिर हटाया तो अपने जवान बेटे को खोया। तीसरी बार जोर से हटाया तो अपनी जान से हाथ धो बैठी। वही तुमने किया है। अब मैं तुमको तीस साल और देता हूँ कि दुनिया में जाओ और डाकू के और अपने पापों के लिए प्रायश्चित करो। प्रायश्चित पूरा नहीं करोगे तो तुमको उसकी जगह लेनी होगी।"

धर्मपुत्र ने पूछा, "उसके पाप का उतारा मुझे कैसे करना होगा, पिता।"

"दुनिया में जो बदी लाने के तुम भागी हो उसे मिटाना तुम्हारा काम है। उतना कर लोगे, तो उस डाकू के और तुम्हारे दोनों के पापों का उतारा हो जाएगा।"

धर्मपुत्र ने पूछा, "मैं दुनिया की बदी को कैसे मिटाऊँगा, पिता?"

धर्म-पिता ने कहा, "जाओ, सूरज की दिशा में सीधे चलते चले जाना। चलते-चलते एक खेत मिलेगा, जहाँ कुछ आदमी होंगे। देखना कि वे क्या कर रहे हैं और जो तुम जानते हो उन्हें बतलाना। फिर आगे बढ़ना। ऐसे ही बढ़ते जाना। राह में जो देखो याद रखना। चौथे दिन तुम एक वन में पहुँचोगे। उस वन के बीचों-बीच एक कुटी मिलेगी। वहाँ एक साधु रहता है। जाकर जो हुआ हो सब सुनाना। वह बताएगा कि तुम्हें क्या करना होगा। उसका कहा कर चुकोगे तब डाकू के और तुम्हारे अपने पापों का उतारा पूरा हो जाएगा।"

यह कहकर धर्म-पिता ने उसको महल के दरवाजे से बाहर कर दिया।

7

धर्मपुत्र अपनी राह बढ़ चला। सोचता जाता था कि मैं जगत में से बदी का नाश कैसे करूँगा। बदकारों का नाश हो, ऐसे ही तो बदी का नाश होता है। उन्हें जेल में डाल दिया जाए या उनका अंत कर दिया जाए। तब फिर बिना औरों का पाप अपने ऊपर लिए बदी से लड़ना कैसे होगा?

धर्मपुत्र ने बहुतेरा विचारा, पर निश्चय पर नहीं आ सका। वह चला-चलता गया। चलते-चलते एक खेत आया। वहाँ खूब घनी और ऊँची गेहूँ की बालें खड़ी थीं। बस बालें पक ही गई थीं और काटने को तैयार थीं। इतने में क्या देखता है कि एक बछड़ा खेत में घुस गया है। उसे खेत में मुँह मारते देख कुछ लोग लाठी ले उसके पीछें पड़ गए हैं। खेत में से वे उसे कभी उधर खदेड़ते हैं, कभी इधर। बछड़ा बाहर भागने के लिए खेत के जिस किनारे आकर लगता कि उधर ही कुछ लोग सामने मिलते हैं। डर के मारे वह फिर भीतर लौट जाता है। सब जने खेत में से होकर इधर-उधर उसका पीछा कर रहे हैं और खेत खूब रौंदा जा रहा है। इधर यह है, उधर बाहर सड़क पर खड़ी एक औरत रो रही है कि हाय रे, मेरे बछड़े को ये लोग भगा-भगा कर मारे डाल रहे हैं!

धर्मपुत्र ने उन किसानों को कहा, "तुम लोग यह क्या कर रहे हो? सब जने खेत से बाहर आ जाओ। यह औरत अपने बछड़े को आप बुला लेगी।"

आदमियों ने ऐसा किया। वह स्त्री भी खेत के किनारे आकर पुकारने लगी, "आओ भैया, आओ मुनवा, यहाँ आओ।" बछड़े ने कान खड़े किए। एक पल

सुनता रहा। फिर अपने आप भाग आया और मचलकर अपना मुँह स्त्री की गोद में ऐसे मारने लगा और ऐसी किलोल करने लगा कि वह बेचारी गिरते-गिरते बची। सब आदमी इससे खुश हुए, स्त्री खुश थी और बछड़ा भी मगन दिखाई देता था।

धर्मपुत्र फिर वहाँ से आगे बढ़ा। सोचने लगा कि ऐसे ही बदी-से-बदी फैलती है। जितना आदमी बुराई के पीछे पड़ते हैं, वह उतनी ही बढ़ती है। मालूम होता है बुराई बुराई से दूर नहीं होगी। फिर कैसे दूर होगी, यह भी ठीक पता नहीं था। बछड़े ने तो अपनी मालकिन का कहना मान लिया और चलो सब ठीक हुआ। पर कहना न मानता तो उसे खेत से बाहर करने का क्या उपाय था?

धर्मपुत्र फिर सोच में पड़ गया और किसी नतीजे पर नहीं पहुँच सका। खैर, वह बढ़ता ही गया।

8

चलते-चलते एक गाँव मिला। गाँव के पार परले किनारे उसने रात भर टिकने को जगह माँगी। घर की मालकिन अकेली थी और घर की सफाई कर रही थी। उसने उसे ठहरा लिया। घर के अंदर धर्मपुत्र पीढ़े पर बैठा, स्त्री को काम करते देखने लगा। वह बुहारी से फर्श झाड़ चुकी थी, अब चीजबस्त झाड़न से झाड़ने लगी। सबके बाद उस धूल-भरे मैले झाड़न से उसने जोर-जोर से मेज पोंछनी शुरू की। कई बार पोंछी, पर मेज साफ नहीं होती थी। कपड़े के मैल की लकीरें रह ही जाती थीं। यह देख वह दूसरे सिरे से हाथ फेरकर पोंछना शुरू करती। पर पहली लकीरें मिटतीं तो उनकी जगह दूसरी बन जातीं। फिर उसने सबकी सब मेज फिर दुबारा साफ की। लेकिन फिर वही बात। मैल की लकीरें अब भी मौजूद। धर्मपुत्र कुछ देर चुपचाप देखता रहा। फिर बोला, "माई, तुम यह क्या कर रही हो?"

"भैया, देखते हो कि मैं सफाई कर रही हूँ। त्यौहार सिर पर है पर यह मेज साफ ही नहीं होती। मैं तो थक आई।"

धर्मपुत्र बोला, "मेज झाड़ने से पहले झाड़न को तो साफ कर लो, माई।"

स्त्री ने वैसा ही किया। तब मेज भी साफ चमक आई।

स्त्री ने कहा, "तुमने भली बात बतलाई, भैया तुम्हारा अहसान मानती हूँ।"

अगले सबेरे यहाँ से विदा ले धर्मपुत्र अपनी राह आगे बढ़ लिया। काफी दूर चलने पर एक वन का किनारा आया। वहाँ देखा कि देहात के कुछ लोग लोहे की मोटी हाल लेकर उसे मोड़ना चाह रहे हैं। और पास आया तो देखता है—कई लोग मिलकर लोहे का सिरा पकड़कर जोर लगा रहे हैं। वे घूम तो रहे हैं, पर हाल मुड़ती नहीं।

खड़ा होकर वह उन्हें देखने लगा। लोग चक्कर लगाते हैं, पर लोहा नहीं मुड़ता। बात यह थी कि जिस चीज में लोहा अटका रखा था, वह चीज खुद लोगों के घूमने के साथ घूम जाती थी। यह देख धर्मपुत्र ने कहा, "भाइयो, यह आप क्या कर रहे हैं?"

"देखते तो हो कि हम पहिए की हाल मोड़ रहे हैं। सब कर लिया, थककर चूर हुए जा रहे हैं। पर यह हाल मुड़ती ही नहीं।"

धर्मपुत्र ने कहा, "पहले उसे तो थिर कर लो जहाँ हाल अटका रखी है। नहीं तो आपके घूमने के साथ वह भी घूम जाएगी। यों हाल कैसे मुड़ेगी?"

किसानों ने बात मान ली। वैसा किया तो काम ठीक चलने लगा।

वह रात उन लोगों के साथ बिता अगले दिन धर्मपुत्र आगे बढ़ा। सारा दिन और सारी रात वह चलता रहा। आखिर तड़का होते उसे कुछ बनजारे मिले। वह भी फिर वहीं रह गया। बनजारे बैलों का सौदा-वौदा कर चुके थे। अब आगे की तैयारी में आग जलाना चाह रहे थे। सूखी छिपटी और पात-फूँस वगैरह इकट्ठा करके उन्होंने दियासलाई दिखाई। वह जल नहीं पाई कि ऊपर से हरी घास का ढेर रख दिया। कुछ धुआँ उठा, घास में सिसकारी-सी हुई और आग बुझ गई। बनजारे फिर सूखी छिपटियाँ बीनकर लाए, फिर जलाया और फिर वैसी ही गीली घास ऊपर ला रखी। आग फिर नहीं जली और बुझ गई। इस तरह बहुत देर तक बार-बार चेष्टा करते रहे। पर आग जलती ही न थी।

उस समय धर्मपुत्र ने कहा, "दोस्तो, घास ऊपर रखने में जल्दी न करो। पहले सूखी लकड़ी ठीक तरह जल चले, तब ऊपर कुछ रखना। आग एक बार लहक आने दो, फिर चाहे जितनी घास ऊपर रख देना।"

बनजारों ने बात मान ली । पहले आग खूब जल जाने दी। इस तरह जरा देर में आग लपटें दे उठी।

धर्मपुत्र कुछ देर उनके साथ रहा, फिर अपनी राह आगे हो लिया। चलता रहा, चलता रहा। सोचता जाता था कि तीन बातें जो उसने देखी हैं, उनका क्या मतलब हो सकता है। लेकिन उसे थाह छू नहीं मिलती थी।

9

धर्मपुत्र दिनभर चलता रहा। संध्या समय दूसरे बड़े जंगल का किनारा आया। वहाँ साधु की कुटिया मिली। उस पर जाकर धर्मपुत्र ने खटखटाया। अंदर से आवाज ने कहा, "कौन है?"

धर्मपुत्र, "मैं एक बड़ा पापी हूँ जिसे अपने और एक-दूसरे के भी पापों का

प्रायश्चित करना है।"

यह सुनकर साधु बाहर आए।

"वह पाप कौन हैं जिन्हें दूसरे के लिए तुम्हें उठाना पड़ रहा है?"

धर्मपुत्र ने साधु को सब बातें सुना दीं। धर्म-पिता की बात कहा, रीछनी और उसके बच्चों की घटना सुनाई, मुहरबंद कमरे और सिंहासन का हाल बताया। फिर धर्म-पिता ने जो आदेश देकर उसे भेजा था, वह कह सुनाया। रास्ते में जो किसान बछड़े का पीछा करने में खूब खेत रौंद रहे थे और कैसे फिर बछड़ा मालिक की पुकार पर अपने आप खेत से बाहर आ गया, वह सुनाया। अंत में बोला कि यह तो मैं देख चुका हूँ कि बुराई का मेट बुराई से नहीं किया जा सकता। पर यह समझ में नहीं आता कि उसे फिर मिटाया कैसे जा सकता है। मुझे बतलाएँ कि यह कैसे किया जाए।"

साधु ने कहा, "और कुछ तुमने रास्ते में देखा हो तो बताओ?"

धर्मपुत्र ने बतला दिया कि कैसे मेज साफ करती औरत देखी थी और कुछ देहाती हाल मोड़ते हुए मिले थे और बनजारे आग जलाना चाह रहे थे।

साधु सब सुनते रहे। फिर कुटिया में गए और अंदर से एक पुराना कुल्हाड़ा लेकर आए। कहा, "मेरे साथ आओ।

कुछ दूर जाने पर साधु ने एक पेड़ बताया। कहा, "इसे काट डालो।"

धर्मपुत्र ने यह पेड़ काट गिराया।

साधु ने कहा, "अब इसके तीन टुकड़े करो।"

धर्मपुत्र ने पेड़ के तीन टुकड़े कर दिए।

इस पर साधु फिर कुटिया में गए और वहाँ से कुछ जलती लकड़ियाँ लाए, बोले, "इनसे तीनों टुकड़ों को आग दे दो।"

धर्मपुत्र ने आग जलाई और पेड़ के उन बड़े-बड़े तीनों टुकड़ों को उनमें डाल दिया। जलते-जलते उनकी जगह तीन काले कुंदे ठूँठ रह गए।

साधु ने कहा, "अब इनको धरती में गाड़ दो, ऐसे कि आधे धरती में रहें, आधे ऊपर।"

धर्मपुत्र ने वैसा ही किया।

"अब देखो, वहाँ सामने पहाड़ी की तलहटी में एक नदी है। वहाँ से मुँह में पानी भरकर लाओ। लाकर इन ठूँठों की जड़ में सींच दो। पहले ठूँठ को सींचो, जैसे कि तुमने पहले स्त्री को सीख दी थी। दूसरे को सींचो, क्योंकि हाल मोड़नेवाले किसानों को उपदेश दिया था। और इस तीसरे को बनजारों के नाम पर सींचे जाओ। जब इनमें जड़ें जम आएँगी और कल्ले फूटने लगेंगे और उन काले ठूँठों की जगह

सेब के दरख्त हो आएँगे तब तुम भी समझ जाओगे कि आदमी में बुराई को कैसे मेटा जाना चाहिए। तब तुम्हारे सब पाप धुल जाएँगे।"

इतना कहकर साधु अपनी कुटिया में चले गए। धर्मपुत्र बहुत देर तक सोचता-विचारता रहा। लेकिन साधु की बात का भेद न पा सका। तो भी साधु ने जैसा बताया था वैसा ही करना उसने शुरू कर दिया।

10

धर्मपुत्र नदी पर गया, मुँह में पानी लिया और लौटकर पहले ठूँठ में सींच दिया। बार-बार इसी तरह मुँह में पानी ला-लाकर वह तीनों ठूंठों को सींचता रहा। जब उसे बहुत भूख लगी और थकान से चूर हो आया, तो कुटिया की तरफ चला कि साधु से कुछ खाने को माँग ले। इधर-उधर देखने पर उसे कुटिया में कुछ सूखी हुई रोटी मिल गई। थोड़ा खाकर उसने भूख शांत की और भीतर कुटी का दरवाजा खोला तो देखता है कि साधु की देह वहाँ मृतक पड़ी हुई है। तब वह मृतक देह के कर्म के लिए लकड़ी जमा करने में लगा। दिन में यह किया, रात को मुँह में पानी ला-लाकर ठूँठ सींचने में लगा रहा। रात भर, जब तक बना, वह ऐसा ही करता रहा।

अगले दिन पास के गाँव के कुछ लोग साधु के लिए खाना लेकर वहाँ पहुँचे। आकर देखते हैं कि साधु का तो शरीरांत हो गया है। अपनी जगह वह धर्मपुत्र को छोड़ गए हैं और उसको आशीर्वाद भी दिया है। सो साधु की देह का क्रिया-कर्म किया और जो खाना लाए थे धर्मपुत्र को भेंट कर दिया।

धर्मपुत्र साधु की जगह रहता रहा। लोग जो खाने को दे जाते थे उससे गुजर करता और साधु के आदेशानुसार उसी नदी से मुँह में भरकर पानी लाता और उन जले ठूँठों पर सींच देता।

इस तरह एक साल बीत गया। इस बीच बहुत लोग उसके दर्शन को आए। उसकी खयाति दूर-दूर फैल गई। लोगों में शोहरत हो गई कि एक पहुँचा हुआ संत है जो आत्मा के उद्धार के लिए पहाड़ी की तलहटी की नदी से मुंह में पानी लेकर आता है और जले ठूँठ सींचता है। सो ठठ-के-ठठ लोग दर्शन करने वहाँ पहुँचने लगे। मालदार, धनी, व्यापारी लोग वहाँ आते और भेंट-उपहार लाते। पर वह उसमें अपने तन जितनी चीज रखता। बाकी सब गरीबों को बांट देता।

इस तरह धर्मपुत्र रहने लगा। आधे दिन ठूँठ में पानी सींचता, बाकी आधा दिन आने-जानेवालों से मिलने-बताने में जाता। वह सोचने लगा कि बुराई को मिटाने और पाप धोने के लिए यही तरीका शायद होगा।

एक दिन कुटिया में बैठा था कि कोई आदमी घोड़े पर सवार उधर से निकला। अपनी मौज में वह तराने गाता हुआ चला जा रहा था। धर्मपुत्र कुटी से बाहर आया कि कौन आदमी है। देखा कि एक अच्छा मजबूत जवान है, चुस्त कपड़े हैं और खूब जीन-वीन से लैस एक बढ़िया घोड़े पर सवार है।

धर्मपुत्र ने रोककर पूछा, "तुम कौन हो जी, और कहाँ जा रहे हो?"

लगाम खींचकर उस आदमी ने कहा, "मैं डाकू हूँ। ऐसे ही घूमा करता हूँ और जो हाथ लगता है उसे पार करता हूँ। शिकार जितने ज्यादा मिलते हैं उतनी ही खुशी के मैं गीत गाता हूँ।"

धर्मपुत्र के जी में दहल समा गई। सोचने लगा कि ऐसे आदमी में से बदी को कैसे मिटाया जा सकता है। जो अपने आप भक्ति-श्रद्धा में मेरे पास आते हैं उनको कहना तो आसान है और वे अपने गुनाह सहज मान लेते हैं। लेकिन यह तो अपने पाप ही की डींग मारता है।

मन में यह सोच उसने उधर से मुँह मोड़ लिया। खयाल आया कि अब मैं कैसे करूँगा। यह डाकू यहीं आस-पास घूमता रहेगा और मेरे दर्शन को आनेवाले लोग डर के मारे रुक जाएँगे, वे आना-जाना छोड़ देंगे। इससे उनकी भलाई भी रुक जाएगी। और मैं भी भला फिर कैसे रहूँगा?

इसलिए फिर लौटकर उसने डाकू को पुकारकर कहा, "यहाँ बहुत लोग मेरे पास आया करते हैं। वे पाप की डींग भरते नहीं आते, बल्कि पछतावे से भरे हुए आते हैं। वे भगवान से क्षमा की प्रार्थना करते हैं। ईश्वर का डर हो तो तुम भी अपने पापों की क्षमा माँगो। और जो तुम्हारे दिल में पछतावे की कमी न हो तो यहाँ से चले जाओ और फिर कभी इधर न आना। मुझे मत सताना और मेरे पास आनेवाले आदमियों को भी मत सताना। अगर नहीं मानोगे तो ईश्वर से सजा पाओगे।"

डाकू ठठ मारकर हँसने लगा। बोला, "मुझे ईश्वर का डर नहीं है और तुम्हारी बात की परवा नहीं है। तुम कोई मेरे मालिक नहीं हो। तुम अपनी धर्माई पर रहते हो, तो मैं अपनी डकैती पर रहता हूँ। रहना सभी को है। बुढ़िया औरतें जो पास आएँ उन्हीं को पट्टी पढ़ाया करो। मुझे तुमसे सीखने को कुछ नहीं है। और जो ईश्वर की बात तुमने कही, सो इसी नाम पर कल मैं रोज से दो ज्यादा आदमियों को जमघट लगाऊँगा। तुम्हें भी मैं मार सकता हूँ, लेकिन अभी मैं अपने हाथ खराब करना नहीं चाहता। पर देखना, आयंदा मेरी राह न काटना।"

इस तरह धमकी देकर डाकू एड़ लगा अपना घोड़ा दौड़ा ले गया। वह फिर लौटकर नहीं आया और धर्मपुत्र पहले की तरह पूरे आठ साल वहाँ शांति से रहता रहा।

11

एक रात धर्मपुत्र अपनी कुटी में बैठा था। ठूँठों में पानी दे चुका था। अब जरा विश्राम का समय था। उसकी निगाह रास्ते पर लगी थी कि कोई आएगा। वह जैसे प्रतीक्षा में था। लेकिन उस दिन भर कोई नहीं आया। वह शाम तक अकेला बैठा रहा। उसका जी इकलेपन से ऊब गया। उसे सूना-सूना लगने लगा। उसे पिछली बातें याद आने लगीं। याद आया कि डाकू ने ताने से कहा था कि तुम अपनी धर्माई पर जीते हो, मैं अपनी डकैती पर रहता हूँ। इस पर उसे विचार हुआ कि साधु ने बताया था वैसे मैं नहीं रह रहा हूँ। उन्होंने मुझ पर एक प्रायश्चित डाला था। लेकिन उसमें से मैं तो खाने-कमाने लगा हूँ और गुजर भी पाने लगा हूँ। होते-होते भक्तों का चढ़ावे का ऐसा आदी हो गया हूँ कि अब वे नहीं आते तो जी ऊबता है और सूना लगता है। जब लोग आते हैं तो मुझे इसीलिए खुशी होती है न कि वे मेरी धर्माई की तारीफ करते हैं। यह तो रहने की ठीक विधि नहीं है। मैं प्रशंसा के मोह में बहक रहा हूँ। अपने पुराने पाप तो क्या उतारता, और नए जोड़े जा रहा हूँ। यहाँ से कहीं दूर दूसरी तरफ जंगल में मुझे चले जाना चाहिए, जहाँ लोग मुझे पा न सकें। वहाँ फिर मैं ऐसे रहूँगा कि पुराने पाप धुलते जाएँ और नया कोई जमा न हो।

यह मन में धारकर थैली में कुछ रूखी रोट बटोर, एक फावड़ा ले, धर्मपुत्र कुटी छोड़ चल दिया। बराबर घाटी में उसे एक एकांत जगह की याद थी। सोचा कि बस वहाँ पहुँचकर एक गुफा-सी अपने लिए खोदकर तैयार कर लूंगा और लोगों से छुटकारा पाऊँगा।

अपना थैला लटकाए और फावड़ा लिए वह जा रहा था कि उसी की तरफ आते हुए डाकू के कदम उसे सुनाई दिए। धर्मपुत्र को डर लग आया और वह तेज कदम बढ़ चला। लेकिन डाकू ने उसे पकड़ लिया। पूछा, "कहाँ जा रहे हो?"

धर्मपुत्र ने कहा, "मैं लोगों से दूर चला जाना चाहता हूँ। कहीं ऐसी जगह रहना चाहता हूँ जहाँ कोई पास न आए।"

यह सुनकर डाकू को अचरज हुआ। बोला, "लोग पास नहीं आएँगे तो तुम्हारा गुजारा कैसे होगा?"

धर्मपुत्र को यह सूझा भी नहीं था। डाकू की बात से याद आया कि हाँ, आहार तो आदमी के लिए जरूरी है। बोला, "जो परमात्मा की दया हो जाएगी उसी पर बसर कर लूँगा।"

डाकू ने कुछ नहीं कहा और आगे बढ़ लिया।

धर्मपुत्र सोचने लगा कि मैंने डाकू से अपने रंग-ढंग बदलने के बारे में इस बार क्यों नहीं कहा। शायद अब उसे पछतावा हो। आज तो उसका रुख कुछ मुलायम

मालूम होता था। अब की उसने मुझे मारने की भी धमकी नहीं दी।

यह सोचकर उसने डाकू को पुकारकर कहा कि सुनते हो, अभी तुम्हें अपने गुनाहों की माफी माँगनी चाहिए। ईश्वर से तो सदा बच नहीं सकते।

यह सुनकर डाकू ने घोड़ा मोड़ पेटी में से खंजर निकाला और धर्मपुत्र को मारने को हुआ। धर्मपुत्र यह देखकर चौंका और सहमा हुआ सीधा अंदर जंगल में बढ़ गया।

डाकू ने उसका पीछा नहीं किया। बस जोर से सुनाकर कहा, "दो बार मैं तुम्हें छोड़ चुका हूँ। अगली बार जो कहीं तुमने मुझे टोका, तो तुम्हारी खैर नहीं है, यह समझ लेना।"

यह कहकर डाकू अपने रास्ते हो लिया।

उस शाम धर्मपुत्र ठूँठ में पानी देने जो पहुँचता है कि क्या देखता है कि उनमें से एक ठूँठ कल्ले दे रहा है और उसमें से नन्हें सेब की कोंपले चली हैं!

12

सबसे अपने को छिपाकर धर्मपुत्र बिलकुल अकेला रहने लगा। रोटी खत्म हो गई तो उसने सोचा कि चलूँ, खाने के लिए कहीं कुछ कंद-मूल देखूँ। यह सोचकर वह कुछ दूर चला था कि देखता क्या है कि एक पेड़ की टहनी पर अँगोछे में बँधी रोटियाँ लटकी हुई हैं। उसने वे रोटियाँ ले लीं और जब तक बना, उन पर गुजारा करता रहा।

वे खत्म हो गईं तो उसी पेड़ पर दुबारा वैसे ही अंगोछा लटका मिला। इस तरह उसका गुजारा होता रहा। बस अब कुछ बात थी तो डाकू का डर बाकी था। आस-पास कहीं जाते-आते उसकी आहट सुनता तो सहम कर दुबक रहता था। सोचता कि कहीं ऐसा न हो कि मैं अपने पाप धो न पाऊँ, उससे पहले ही डाकू मुझे मार दे।

इस तरह दस साल और हो गए। एक तो उनमें सेब का पेड़ होकर हरिया आया था, लेकिन और दो ठूँठ के ठूँठ रहे। एक सबेरे धर्मपुत्र जल्दी उठा और काम पर पहुँचा। ठूँठ की जमीन को मुँह के पानी से काफी गीली करते उसे खूब मेहनत पड़ी। आखिर थककर वह आराम करने लगा। बैठे-बैठे सोचने लगा। सोचा कि मैंने पाप किया है, इसी से मैं मौत से डरता हूँ। ईश्वर की मरजी कौन जानता है। हो सकता है कि मौत से ही मेरे पाप धुलनेवाले हों। तब उसका भी स्वागत किए बिना मैं कैसे रह सकता हूँ।

यह खयाल करके मन में आया ही था कि उधर से घोड़े पर सवार जाने किसे गाली देता हुआ डाकू उस तरफ ही आता मालूम हुआ। धर्मपुत्र ने सोचा कि सिवा

ईश्वर के किसी और से मेरा कुछ बन-बिगड़ क्या सकता है। यह सोचकर वह आगे बढ़कर डाकू को मिला। देखता क्या है कि डाकू अकेला नहीं है। पीछे घोड़े से एक और आदमी बँधा है। मुँह उसका बंद है और हाथ-पैर कसे हुए हैं। वह आदमी कुछ नहीं कर रहा है, पर डाकू उसे मन आई गाली दिए जा रहा है।

धर्मपुत्र बढ़ता हुआ जाकर घोड़े के सामने खड़ा हो गया। पूछा, ''इस आदमी को कहाँ ले जा रहे हो?''

डाकू ने जवाब दिया, ''जंगल के अंदर लिए जा रहा हूँ। यह एक मालदार बनिए का बेटा है, पर बताता नहीं है कि बाप का माल कहाँ छिपा है। सो कोड़ों से इसकी खबर लूँगा तब बताएगा।''

यह कहकर वह घोड़े को एड़ लगाने को हुआ कि धर्मपुत्र ने घोड़े की रास पकड़ ली और जाने नहीं दिया। कहा, ''इस आदमी को छोड़ दो।''

डाकू को गुस्सा चढ़ आया और उसने मारने को हाथ उठाया—

''क्या, तुम भी कुछ मजा चखना चाहते हो? जो इस आदमी को मार मिलेगी वह तुम भी चाहो तो वैसी कहो। मैं कह चुका हूँ कि ज्यादा करोगे तो मेरे हाथ से जान खोओगे। सुना? अब रास छोड़ो।''

लेकिन धर्मपुत्र डरा नहीं। बोला, ''तुम जा नहीं पाओगे। मुझे तुम्हारा डर नहीं है। बस एक ईश्वर का मुझे डर है उसका हुक्म है कि मैं तुम्हें न जाने दूँ। इस आदमी को तुम छोड़ दो।''

डाकू को गुस्सा तो आया, लेकिन उसने चाकू निकालकर उस आदमी के बँध काट दिए और उसे आजाद कर दिया। फिर बोला, ''अब जाओ, तुम दोनों चले जाओ। और खबरदार, जो फिर मेरी राह आड़े आए।''

वह वैश्यपुत्र तो घोड़े की पीठ से खिसक चट भाग गया। डाकू भी घोड़े पर सवार हो चलने को था कि धर्मपुत्र ने फिर उसे रोका और कहा कि देखो, अपनी इस बदी से बाज आओ। लेकिन डाकू सब चुपचाप सुनता रहा। आखिर बिना कुछ बोले वह चला गया।

अगले दिन धर्मपुत्र फिर ठूँठ में पानी देने गया। और अचरज की बात देखो कि दूसरा ठूँठ भी हरा हो रहा था। उसमें भी सेब के पेड़ की कोपलें फूटने लगी थीं!

13

दस साल और बीते। धर्मपुत्र एक दिन शांति से बैठा था। न कोई कामना थी, न आशंका। प्रसन्नता से मन भरा आता था।

सोचा, ''ईश्वर ने आदमी को कैसी-कैसी न्यामतें बख्शी हैं। फिर भी नाहक

वह कैसा हैरान और परेशान रहता है। क्यों वह खुश नहीं रहता। क्या उसे अड़चन है?''.....

फिर आदमी खुद जो अपने लिए मुसीबत पैदा करता है और बुराई के बीज बोता है, उसके फल याद कर धर्मपुत्र का जी भर आया। उसने सोचा कि जैसे मैं रहा हूँ, वैसे ही रहते जाना गलत है। मुझे चाहिए कि जो सीखा है, चलूँ और वह औरों को भी सिखाऊँ। जो पाता हूँ, सब को दूँ।

यह विचार मन में आना था कि डाकू के घोड़े की टाप उसे सुन पड़ी। लेकिन वह उसे रोकने नहीं बढ़ा। सोचा कि उसे कहने-सुनने से क्या फायदा है। वह कुछ समझ नहीं सकता।

पहले तो यह विचार आया; फिर मन बदल गया और धर्मपुत्र बढ़कर सड़क पर आ पहुँचा। आते हुए डाकू को देखा कि वह उदास है, आँखें उसकी झुकी हुई हैं। धर्मपुत्र को देखकर दया आई और पास पहुँचकर उसकी रानों पर हाथ रखकर उसने कहा, ''भाई, अपने आप पर अब रहम करो। तुम्हारे अंदर ईश्वर का वास है। तुम तकलीफ पाते हो इसी से औरों को सताते हो। नतीजा यह कि आगे के लिए और तकलीफ जमा करते जा रहे हो। लेकिन ईश्वर तुम्हें प्यार करता है और तुम्हें अपनाने को सदा तैयार है। देखो, अपने को बिलकुल बरबाद न करो। अभी बदल सकते हो।''

पर डाकू नाराज होकर अपनी राह चलने को हुआ। बोला, ''अपने काम-से-काम रखो— ''

लेकिन धर्मपुत्र ने डाकू को और कस के पकड़ लिया और उसकी आँखों से तार-तार आँसू गिरने लगे।

डाकू ने इस पर आँख उठाई और धर्मपुत्र की तरफ देखा। जाने कैसे और कितनी देर देखता रहा। फिर एकाएक घोड़े से नीचे उतर वह धर्मपुत्र के चरणों में घुटनों आ बैठा।

बोला, ''तुमने आखिर मुझे जीत ही लिया, भाई! बीस साल तक मैं अड़ा रहा, लेकिन आखिर तुमने मुझे जीत ही लिया। अब जो चाहे मेरा करो, मैं तुम्हारे हाथ हूँ और बेबस हूँ। जब तुमने पहले मुझे सीख देने की कोशिश की, उससे मुझे और गुस्सा चढ़ आया था। पर तुम जब लोगों से अपने-आप को दूर ले गए तब मुझे तुम्हारे शब्दों पर खयाल हुआ। क्योंकि तब मैंने देखा कि उन लोगों से तुम्हें अपनी कोई गरज नहीं है। उसी दिन के बाद से मैं तुम्हें खाना पहुँचाने लगा। मैं ही पेड़ पर अंगोछा बाँध जाया करता था।''

धर्मपुत्र को याद आई वही पुरानी बात। उस स्त्री की मेज तभी साफ झड़ सकी

थी जब झाड़न को साफ कर लिया गया था। इसी तरह जब कोई अपनी परवाह और गरज छोड़कर अपने दिल को साफ कर लेगा तभी वह दूसरों के दिल की सफाई कर सकेगा।

डाकू आगे बोला, "जब मैंने देखा कि तुम्हें मौत का डर नहीं है उस समय से मेरा दिल भी बदल चला।"

और धर्मपुत्र को याद आई वह हाल मोड़ने की घटना। जब तक एक जगह लोहे का सिरा किसी थिर चीज में नहीं अटका दिया गया कि हाल नहीं मुड़ी। ऐसे ही जब तक मौत का डर दूर कर जीवन को ईशनिष्ठान में स्थिर नहीं कर लिया गया तब तक इस आदमी के अक्खड़ मन पर काबू पाना भी नहीं हो सका।

डाकू ने कहा, "लेकिन मेरा मन तब तो पिघलकर पानी-पानी हो आया जब करुणा के मारे तुम्हारी आँखों से अपने लिए मैंने आँसू ढरते देखे।"

धर्मपुत्र सत्य की यह महिमा सुनकर मग्न हो आया। फिर वह अपने ठूँठों के पास गया और डाकू को भी साथ ले गया। जाकर दोनों देखते हैं तो तीसरे ठूंठ में भी सेब का कल्ला फूट गया है और हरी झाँकी दे रहा है! उस समय धर्मपुत्र को याद आया कि बनजारों की घास तब तक आग न पकड़ सकी थी जब तक पहले छिपटियाँ अच्छी तरह न सुलग लेने दी गई थीं। इस तरह जब उसका अपना दिल सहानुभूति की गरमी से जलने-जैसा हो गया था तभी वह दूसरे के दिल को अपनी लौ से जगा भी सका, पहले नहीं।

और धर्मपुत्र ने इस भाँति प्रकाश पाने और अपने पापों के क्षय हो जाने पर बहुत आभार और आनंद माना।

फिर उसने डाकू को अपनी सारी जीवन-कथा कह सुनाई। इस भाँति अपना सब मर्म उसे भेंट करने के अनंतर धर्मपुत्र ने शरीर छोड़ दिया। डाकू ने उसकी देह की अंत्एष्टि की और धर्मपुत्र के कहे अनुसार ही रहने लगा। धर्मपुत्र से जो उसने पाया था, सन कहीं उसी का वितरण करने में वह लग गया।

दो साथी

1

एक बार की बात है कि दो बूढ़े आदमी थे। उन्हें परम तीर्थ-धाम एरुशलम के यात्रा-दर्शन की चाह हुई। उनमें एक का नाम था एफिम शुएव। यह एक खासा खुशहाल काश्तकार था। दूसरे का नाम था एलीशा। एलीशा की हालत उतनी

अच्छी न थी।

एफिम आदमी औसत तरीके का था। संजीदा, इरादे का मजबूत, आदत का नेक। शराब उसने जीवन में कभी नहीं पी थी। न बीड़ी पीता था, न तंबाकू। और कभी उसके मुँह पर गाली नहीं आती थी। दो बार गाँव में वह सरपंच चुना गया था और उसके काल में हिसाब पाई-पाई का दुरुस्त रहता था। बड़ा उसका कुनबा था। दो बेटे थे और एक नाती का भी ब्याह हो गया था और सब जने साथ रहते थे। वह मिलनसार था और उसकी काया अभी तंदुरुस्त बनी थी। दाढ़ी नीचे तक आती थी और साठ पार तो गए तब दाढ़ी के एक-आध बाल कहीं चाँदी के होने शुरू हुए थे।

एलीशा न संपन्न था, न दीन। काम उसका बढ़ईगीरी का था और बाहर बस्ती में जाकर मजदूरी कर लिया करता था। पर उमर हो आई तो बाहर अब नहीं जा सकता था। सो घर रहकर उसने मधुमक्खी पाल ली। इसका एक बेटा काम की तलाश में दूर देश चला गया था। दूसरा घर रहता था। एलीशा दयावान और खुशमिजाज आदमी था। कभी-कदास पी लेता था और सुँनी की आदत भी थी और गाने का भी शौक था। लेकिन आप भी वह शांत प्रकृति का था और पास-पड़ोस के साथ या घर में सबसे बनाकर रहता था। कद में जरा नाटा, रंग कुछ पक्का। दाढ़ी घुँघराली घनी। और सिर अपने हमनाम पुराने ऋषि एलीशा की भाँति हमारे इन एलीशा का भी बालों से एकदम सूना था।

इन दोनों वृद्धजनों ने, एक मुद्दत हुई कि, साथ एरुशलम की यात्रा को चलने का संकल्प किया था। लेकिन एफिम को फुरसत का समय नहीं निकला। काम उसे बहुत रहा करता था। एक निबटता कि दूसरा हाथ घेर लेता। पहले तो नाती की शादी की बात ही आगे आ गई। फिर अपने छोटे बेटे के लाम पर से लौटने के इंतजार में रहने में समय निकल गया। उसके बाद एक नए मकान के सिलसिले में मदद लगनी शुरू हो गई।

सो एक इतवार के दिन दोनों जने, जहाँ मदद लग रही थी, उस नए घर के आगे मिले। वहाँ बल्लियों के चट्टे पर बैठकर बात करने लगे।

एलीशा ने कहा, "क्यों जी; वह यात्रा का संकल्प हमारा कब पूरा होने में आएगा?"

एफिम का मुँह लटक गया। बोला, "अभी थोड़ी बार और देखो। यह साल तो तुम जानो कैसा कठिन मुझे पड़ा है। सोचा था रुपए दो-सौ एक में यह झोंपड़ी खड़ी हो जाएगी। लेकिन चार-सौ ऊपर लग गए और अभी कितना काम बाकी है। गरमी आने तक और ठहरो। भगवान ने चाहा तो गरमी में जरूर-ही-जरूर चलेंगे?"

एलीशा ने कहा, "मेरी राय तो है कि हमें जल्दी-से-जल्दी चल देना चाहिए।

मौसम बसंत का है, सो समय अच्छा भी है।''

''समय तो अच्छा है, लेकिन इस लगी मदद का क्या करूँ? इसे छोड़ कैसे दूँ?''

''तुम तो ऐसे कहते हो जैसे देखने-भालने को दूसरा कोई है ही नहीं। तुम्हारा बेटा ही जो है।''

''बेटा! भली कही! उसका एतबार मुझे नहीं है। कभी हजरत ज्यादा भी चढ़ा जाते हैं।''

''भाई, आँख मिचने पर भी तो हमारे सब कुछ काम चलेगा न। सो बेटा बड़ा हुआ, आप भुगत के सब सीख जाएगा।''

''तुम्हारा कहना तो ठीक है, लेकिन काम छेड़ा तो अधबीच में उसे छोड़ा भी नहीं जाता है।''

''भाई, सब कुछ तो इस जन्म में कभी पूरा हुआ नहीं है। उस दिन की बात है कि हमारे घर ईस्टर के लिए झाड़ा-बुहारी और सफाई-धुलाई हो रही थी। सो कुछ यहाँ करने को है, तो कुछ वहाँ निपटाना है। इस तरह यह-कर वह-कर, बस यही लगा-लगी रही। फिर भी सब काम पूरा नहीं हुआ। सो बड़े-बेटे की बहू जो हमारी है बड़ी समझदार है। बोली, ''परव-त्यौहार का दिन हमारी बाट नहीं देखता, यही गनीमत है। नहीं तो कितना ही करें, हम उसके लिए कभी तैयार न हो पाएँ और ऐसे तो त्यौहार कभी न मनें।''

एफिम सुनकर सोच-विचार में पड़ गया। बोला, ''इस झोंपड़े पर मेरा खासा खर्चा आ गया है और यात्रा पर तुम जानो खली हाथ तो जाया नहीं जाता। हरेक पर सौ-सौ रुपया तो भी लगेगा। और सौ रुपया कोई छोटी रकम नहीं है।''

एलीशा यह सुनकर हँस पड़ा। बोला, ''छोड़ो भी, कैसी बात करते हो। मुझसे दस गुना तुम्हारे पास होगा। फिर भी पैसे की चलाते हो। मुझे बता दो कि कब चलना है, और आज पास कुछ नहीं तो क्या, तब तक मैं चलने जोग कर ही लूँगा।''

एफिम भी इस पर हँसा। कहने लगा, ''भई, पता नहीं था कि तुम ऐसे रईस हो। अच्छा, यह रकम ले कहाँ से आओगे?''

''घर में मिल-मिला कर जमा-बटोर कुछ हो ही जाएगा। वह काफी न हुआ तो कुछ मधुमक्खी के छत्ते एक पड़ोसी के हाथ उठा दूँगा। वह अरसे से लेना भी चाह रहा है।''

''अगर कहीं शहद उनसे पीछे खूब पका तो तुम्हें बेचने का अफसोस होगा।''

''अफसोस? नहीं भाई, अफसोस मैं नहीं जानता। अपने पाप के सिवा मैं किसी और बात के लिए पछतावा नहीं करता। भई, अपनी आत्मा से बढ़कर तो

दूसरा कुछ है नहीं।''

''सो तो ठीक है, फिर भी घर के काम-धाम का हर्ज करना भी ठीक नहीं लगता।''

''लेकिन आत्मा का हर्ज हो रहा है, सो यह तो उससे बुरी बात है ना। हम दोनों ने तीर्थ का संकल्प किया था। सो चलना ही चाहिए।''

2

एलीशा ने आखिर साथी को मोड़ ही लिया। खूब सोच-विचारने के बाद सबेरे के समय एफिम एलीशा के पास आए। बोले, ''भई, तुम्हारी बात सही है। चलो, चलें। मौत-जिंदगी परमात्मा के हाथ है। सो जब तक देह में सामर्थ्य है और दम बाकी है तभी चल दें तो अच्छा है।''

सो सात रोज के अंदर दोनों जने प्रस्थान के लिए तैयार मिले। एफिम के पास नकद पैसा काफी हो गया। सौ-एक रुपया उसने साथ ले लिया। दो-सौ बीबी के पास छोड़ दिया।

एलीशा ने भी तैयारी कर ली थी। दस छत्ते उसने पड़ोसी को उठा दिए थे। जो नई मधुमक्खी की मुहाल उन छत्तों पर आकर लगे, वे भी उसी की। इस तमाम पर सत्तर रुपए उसे मिले। सौ में के बाकी उसने अपने कुनबे के और लोगों से जमा बटोरकर पूरे कर लिए। इसमें इधर के और लोग सब खोखले ही रह गए। बीबी ने अपनी मौत के बाद क्रिया-कर्म के वास्ते बचाकर कुछ रख छोड़ा था सो सब दे दिया। बहू ने भी पास का अपना सब कुछ सौंप दिया।

एफिम ने अपने बड़े लड़के को ठीक-ठीक पूरी तरह सब कुछ समझाकर ताकीद दे दी थी कि कब और कितनी घास कहाँ से कटेगी, खाद का क्या इंतजाम होगा और छत कैसी पड़ेगी। उसने एक-एक बात का विचार रखा था और पूरा बंदोबस्त समझा दिया था। दूसरी तरफ एलीशा ने अपनी बीबी को बस इतना कहा कि उन छत्तों को जो बेच दिए हैं न, अपनी मक्खी न लगने देना कि कहीं उनका शहद कम हो जाए। और देखना, सब छत्ते पूरे-के-पूरे पड़ोसी को मिल जाएँ, कुछ अपनी तरफ से चूक न हो। बाकी घर की और बातों के बारे में एलीशा किसी तरह का कोई जिक्र भी मुँह पर नहीं लाया। बोला, ''जैसी जरूरत देखना, वैसा अपने आप कर लेना। तुम्हीं लोग तो मालिक हो। सो जो ठीक जानो अपने सोच-विचारकर वह कर ही लोगे।''

इस तरह दोनों वृद्ध जन तैयार हो गए। लोगों ने खाना बनाकर साथ बाँध दिया और पैरों के लिए पट्टियाँ तैयार करके दे दीं। जूते उन्होंने एक जोड़ी पहन लिए, एक

साथ रख लिए। परिवार के लोग गाँव के किनारे तक साथ-साथ आए और वहाँ दोनों को विदा दी। दोनों जने अपनी यात्रा पर चल दिए।

एलीशा मन से हलका और प्रसन्न था। गाँव से निकलना था कि घरबार की सब बातें उसने मन से भुला दीं। उसको बस अब यह लगन थी कि अपने साथी को कैसे आराम से और खुश रखूँ। किसी को कोई सख्त कड़ुआ शब्द न कहूँ और सारी यात्रा कैसी प्रीति और शांति से पूरी करूँ। सड़क पर चलते हुए एलीशा या तो मन-मन में प्रार्थना दुहराता रहता, या संत-महात्माओं के जीवन का विचार करता। जो थोड़ा-बहुत उनके बारे में उसने सुना-जाना था वही उसे बहुत था। रास्ते में कोई मिलता या रात में कहीं ठहरना होता तो वह बड़ी विनय से बात करता और सबसे मीठे बैन बोलता। इस तरह मगन भाव से वह अपनी यात्रा पर आगे बढ़ता रहा। एक बात बेशक उसके बस की नहीं हुई। सुँघनी उससे नहीं छोड़ी गई। सुँघनी की डिबिया तो उसने घर छोड़ दी थी, लेकिन उसके बिना अब उसे कल नहीं पड़ती थी। आखिर एक राहगीर ने उसे कुछ सुँघनी दी। सुँघनी पाकर वह फिर चलते-चलते राह में रुक जाता (कि कहीं उसके साथी को बुरा न लगे या मन न चले) और पीछे रहकर सुँघनी की वह जरा नक्की ले लेता और फिर आगे बढ़ता था।

एफिम भी मजबूत तबियत से चल रहा था। कोई खोटा काम नहीं करता था और अहंकार के वचन नहीं बोलता था, लेकिन मन वैसा हलका नहीं था। घर की फिकर का बोझ उसके मन पर बना था। जाने घर पर कैसे चल रहा हो। देखो, बेटे से यह और कहने की याद न रही। और हाँ, वह भी नहीं बतलाया। लड़का ठीक-ठीक चला भी लेगा कि नहीं। रास्ते में कहीं खाद की गाड़ी जाती उसे दीखती या आलू ढोते हुए लोग मिलते तो एफिम के मन में एकदम खयाल होता कि घर पर हमारे सब काम ठीक-ठीक हो रहे होंगे कि नहीं। उन्हें अपने हाथों से करके बता और समझा आऊँ।

इस तरह पाँच हफ्ते वे दोनों चलते गए, चलते गए। उनके जूते के तले बेकार हो गए। छोटा-रूस आते-आते दूसरे जूतों के बंदोबस्त की उन्हें सोचनी पड़ी। घर से चले तब से अब तक खाने और रात के ठहरने के उन्हें दाम देने हुआ करते थे। यहाँ आकर अब लोग उन्हें ठहराने और सत्कार करने में मानो आपस में होड़-सी करने लगे। अपने घर ठहराते, खिलाते-पिलाते और बदले में पैसा एक न छूते। इतना ही क्यों, आगे राह के लिए वे आग्रह के साथ खाना भी उनके साथ बाँध दिया करते थे।

कोई पाँच-सौ मील की यात्रा इन लोगों ने इस तरह बे-लागत की। इसके बाद जो जगह आई, वहाँ उस साल काश्त सूख गई थी। वहाँ के किसान लोग ठहरा तो मुफ्त लेते थे, पर खाना बे-लागत नहीं दे सकते थे। सो कभी तो रोटी उन्हें मिलती

भी नहीं थी। दाम देने को तैयार थे, पर रोटी मयस्सर नहीं होती थी। लोग बोले कि खेती पारसाल एकदम सत्यानाश हो गई। जिनके खलिहान भरे रहा करते थे, उन्हें ही अब घर का बासन-कूसन बेच देना पड़ रहा है। उनसे कुछ उतरी हालत जिनकी थी, उनका हाल बेहाल है। और जो गरीब थे, उनमें भाग गए, सो गए, बाकी जो बचे माँग-तांग कर पेट पालते या घर में पड़े भूखों मर रहे हैं। जाड़ों में तो चोकर और पत्तियाँ खाकर तन जोड़े रहे।

एक रात दोनों आदमी एक छोटे देहात में ठहरे। रात वहाँ नींद ली और अगले दिन तड़का फूटने से पहले चल दिए। वहाँ से काफी रोटी ले रखी। धूप में ताप चढ़ने तक खासी राह उन्होंने तय कर ली । कोई आठ मील चलने पर एक चश्मा आया। वहाँ दोनों जने बैठ गए और पानी लेकर उसके साथ रोटी भिगो-भिगोकर खाई। फिर पाँवों की पट्टी खोल जरा विश्राम किया। एलीशा ने अपनी सुँघनी की डिबिया निकाली।

देखकर एफिम ने नापसंदगी में सिर हिलाया। कहा, "यह क्या बात जी? यह गंदी लत तुम नहीं छोड़ पाते?"

एलीशा ने कहा, "यह लत मेरे बस से भारी हो गई दीखती है। नहीं तो और क्या कहूँ?"

विश्राम के उपरांत उठकर वे लोग वहाँ से आगे बढ़ लिए। कोई मील और चलने पर एक बड़ा गाँव आया जिसके ठीक बीच में से गुजरना हुआ। अब घाम का ताप बढ़ गया था। एलीशा को थकान हो आई थी और जरा वहाँ ठहरकर पानी पी लेने को उसका जी था। लेकिन एफिम बिना रुके चला जा रहा था। दोनों में एफिम अच्छा चलनेवाला था और एलीशा को उसका साथ पकड़े रहने में भी कठिनाई होती थी।

एलीशा ने कहा, "जो कहीं यहाँ पानी मिल जाता, तो अच्छा था।"

एफिम ने कहा, "अच्छी बात, पियो पानी, पर मुझे प्यास नहीं है।"

एलीशा ठहर गया। बोला, "तुम चलते चलो। मैं जरा उस झोंपड़ी तक जाकर पानी पी आता हूँ। थोड़ी देर में बढ़कर तुम्हारा साथ लूँगा।"

"अच्छा।"

यह कहकर एफिम सड़क पर अकेला ही आगे बढ़ लिया। एलीशा झोंपड़ी की तरफ मुड़ा।

झोंपड़ी छोटी-सी थी। दीवारें मिट्टी से पुती थीं। फर्श काले रंग का और इस्तेमाल से चिकना था। ऊपर सफेद पोता। लेकिन दीवारों की मिट्टी गिरने लगी थी। मालूम होता था मिट्टी थोपे मुद्दत हो गई है। ऊपर एक तरफ से छप्पर-छत

छिदीली थी। दरवाजे के आगे एक आँगन-सा था। एलीशा आँगन में आया। देखा कि मिट्टी के डंडे का घेर जो घर के चारों तरफ खिंचा हुआ है, उसके तले अंदर एक आदमी ढेर की मानिंद पड़ा है। देह का मजबूत, दाढ़ी नहीं है और कुरता पाजामे के अंदर उड़सा हुआ है। आदमी वह वहाँ छाया में ही लेटा होगा, लेकिन अब सूरज घूमकर पूरा उसके ऊपर पड़ रहा था। वह सोया नहीं था, फिर भी पड़ा हुआ था। एलीशा ने उसके पास जाकर पानी माँगा; लेकिन आदमी ने कुछ जवाब नहीं दिया।

एलीशा ने सोचा कि या तो यह बीमार है या जान-बूझकर सुनना नहीं चाहता। दरवाजे के पास गया तो अंदर से एक बच्चे के रोने की आवाज आई। उसने कुंडी पकड़ दरवाजे को खटखटाना शुरू किया।

"भाई, कोई है ?"

एलीशा ने पुकारा। पर जवाब कोई नहीं। अपने डंडे से किवाड़ को ठोकते हुए उसने फिर पुकारा, "ये जी, कोई सुननेवाला अंदर है ?"

पर कोई उत्तर नहीं।

"ये सुनो, कोई है ?"

जवाब नदारद।

एलीशा लौटने को हुआ। लेकिन तभी ऐसा मालूम हुआ कि जैसे दूसरी तरफ से कोई कराहने की आवाज उसके कान में पड़ी हो।

"कोई मुसीबत इन लोगों पर पड़ी मालूम होती है। चलूँ। देखूँ तो।"

और एलीशा झोंपड़े में घुसा।

खटका उसने खोला। दरवाजे की कुंडी अंदर से बंद नहीं थी, वह सहज खुल गया और एलीशा जिस कमरे में पहुँचा उसमें बाईं तरफ चूल्हा था। सामने आले के ऊपर मसीह का क्रूस टँगा था। पास एक मेज थी। वहीं बेंच पड़ी थी। बेंच पर थी एक स्त्री। सिर उसका खुला था, तन पर अकेला एक कपड़ा। उमर की बुढ़िया थी। मेज पर सिर रखे झुकी बैठी थी। पास ही पोता मिट्टी-सा पीला दुबला एक बालक जिसका पेट आगे को निकला हुआ था। वह कुछ माँग रहा था और जोर-जोर से रोकर बुढ़िया का पल्ला खींचता था। एलीशा घुसा तो हवा वहाँ की उसे बहुत गंधीली मालूम हुई। उसने मुड़कर देखा तो चूल्हे के पास धरती पर एक औरत और पड़ी थी। आखें बंद थीं। और गले में कुछ घर-घर आवाज हो रही थी। वह वहाँ चित्त पड़ी आसमान में रह-रहकर टाँगें फेंक रही थी। कभी उन टाँगों को सिकोड़ती, समेटती और फिर फेंकने लगती। दुर्गंध वहीं से आ रही थी। मालूम होता था कि वह खुद उठ-बैठ सकती है नहीं, न कोई और देखने-भालनेवाला है। बुढ़िया ने सिर उठाया और आगंतुक को देखा। बोली, "क्या है ? कुछ चाहते

हो? यहाँ कुछ नहीं।"

भाषा उसकी दूसरी थी। फिर भी एलीशा बात समझ गया। बोला "भगवान की दया हो। जरा पीने को पानी चाहता था।"

"यहाँ कोई नहीं है, कुछ नहीं है। पानी काहे में लाकर रखें? जाओ, रास्ता देखो।"

उस समय एलीशा ने पूछा, "क्यों जी, कोई तुममें नहीं जो यहाँ उस बेचारी बीमार को जरा सँभालने लायक हो?"

"नहीं कोई नहीं। लड़का मेरा बाहर बेबस मर रहा है। हम यहाँ अंदर मर रहे हैं।"

बच्चे ने एक नए आदमी को देखकर रोना बंद कर दिया था। लेकिन बुढ़िया बोली तो फिर उसने वही राग शुरू कर दिया। बुढ़िया का आँचल खींचकर बोला, "दादी रोटी, दादी रोटी।"

एलीशा बुढ़िया से पूछनेवाला था कि बाहर से वह आदमी लड़खड़ाता-लड़खड़ाता वहाँ पहुँचा। वह दीवार को पकड़े-पकड़े आ रहा था; पर कमरे में घुसा कि देहली के पास धड़ाम से गिर पड़ा। फिर उठकर चलने और पास आने की उसने कोशिश नहीं की। वहीं से टूटती जबान में बोलने लगा। एक शब्द निकलता कि फिर साँस लेने को वह रुक जाता और हाँफता हुआ फिर आगे का शब्द मुँह से बाहर होता।

बोला, "महामारी ने हमें पकड़ लिया है।...और अकाल...वह भूखा है...मर रहा है...।"

कहकर उसने बच्चे की तरफ इशारा किया और खुद फूटकर रोने लगा।

इस पर एलीशा ने कंधे पर लटके अपने बकचे को लिया और कमर पर से उतारकर धरती पर रख दिया। फिर बेंच पर उसे खोल उसमें से रोटी (डबल रोटी) निकाली। चाकू लेकर उसमें से एक टुकड़ा काटा और उस आदमी की तरफ बढ़ा दिया। लेकिन आदमी ने उसे तो लिया नहीं, बल्कि उस बच्चे और चूल्हे के पीछे दुबकी बैठी एक दूसरी लड़की को इशारे से एलीशा को बताया। मानो कहा, "देते हो तो उन्हें दो, उन्हें।"

यह देखकर एलीशा ने रोटी बालक की ओर बढ़ाई। रोटी का देखना था कि बालक ने दोनों हाथ बढ़ाकर उसे झपट लिया और नन्हें-नन्हें हाथों में टुकड़े को पकड़ उसमें ऐसा मुँह गाड़कर खाने लगा कि उसकी नाक का पता चलना मुश्किल था। पीछे से लड़की भी चलती वहाँ आ पहुँची और रोटी पर आँख गाड़े खड़ी हो गई। एलीशा ने उसे भी टुकड़ा दिया। फिर एक और टुकड़ा काटकर उस बुढ़िया

स्त्री को दिया। वह बुढ़िया भी अपने बूढ़े मुँह से उसे कुतरकर खाने लग गई।

बोली, "जो कहीं थोड़ा इस वक्त पानी कोई और ले आता! तालू तो बेचारों के सूख रहे हैं! कल मैं पानी लेने गई थी, या आज, याद नहीं...सो बीच में ही गिर पड़ी। आगे फिर जा नहीं सकी। डोल वहीं पड़ा रह गया। कोई ले न गया हो, कौन जाने वहीं पड़ा हो।"

एलीशा ने कुएँ का पता पूछा। बुढ़िया ने बता दिया। सो एलीशा गया, डोल लिया और पानी लाकर सबको पिलाया। बच्चों ने और बुढ़िया ने पानी आने पर उसके साथ फिर और कुछ रोटी खाई। लेकिन आदमी ने एक कन मुँह में न डाला। बोला, "मैं खा नहीं सकता।"

अब तक वहाँ पड़ी दूसरी स्त्री को कोई होश नहीं मालूम होता था। वह वैसे ही अधर में टाँग फेंक रही थी। एलीशा तब फिर गाँव की एक दुकान पर गया। वहाँ से कुछ जई का चून लिया। नमक, दाल और तेल ले लिया। एक कुल्हाड़ी भी कहीं से खोज ली और काटकर लकड़ी जमा की। फिर आग जलाई। लड़की भी आकर उसमें मदद देने लगी। उपरांत उन्होंने खाना तैयार किया और भूखे जनों को खिलाया।

3

उस आदमी ने तो नाममात्र खाया। बुढ़िया ने भी कम ही खाया। पर बच्चों ने तो बरतन को चाटकर साफ कर दिया। फिर वे दोनों बालक आपस में गलबाहीं डाले गुड़ी-मुड़ी होकर सो गए।

उस वक्त बुढ़िया स्त्री और उस आदमी ने एलीशा को अपने दु:ख की सारी कथा सुनाई कि कैसे उनकी यह दशा हुई। बोले, "गरीब तो हम पहले ही थे। पर इस साल के सूखे ने मुसीबत ला दी। जो जमा था कठिनाई से सरदी तक चला। जाड़ों के दिन आते-आते यह नौबत हुई कि पड़ोसी से या जिस-तिस से माँगकर काम चलाना पड़ा। पहले तो उन्होंने दिया, पीछे वे भी इनकार करने लगे। चाहते थे कि दें, पर देने को उनके पास होता नहीं था। और हमें भी माँगते शर्म आती थी। सो कर्ज में हम गले तक डूबते गए। एक-एक कर सबका लेना हम पर हो गया। किसी का पैसा चाहिए था तो किसी का नाज वाजिब था और किसी तीसरे की और कोई चीज उधार चढ़ गई थी।

"ऐसी हालत होने पर", आदमी बोला, "मैं काम की तलाश में लगा, पर कोई काम नहीं मिला। पेट रखने जितना नाज मिल जाए, तो उसी मजूरी पर काम करने के लिए बेतादाद लोग तैयार थे; और कभी कुछ काम मिला भी तो, अगले दिन फिर

खाली। फिर और काम ढूँढो। मैं इस चक्कर में बीत चला। बुढ़िया और लड़की ने उधर कहीं दूसरी जगह जा भीख माँगना शुरू कर दिया था। पर कभी बेखाए, तो कभी अधपेट, जीते ही गए। आस थी अगली फसल आने तक ज्यों-त्यों चले चलें तो फिर देखा जाएगा। पर पतझड़ आने तक तो हमें भीख में कुछ भी मिलना बंद हो गया। ऊपर से बीमारी ने आ पकड़ा। हालत बद-से-बदतर होती गई। आज कुछ मिल जाता, तो दो दिन फाके के होते। आखिर घास खाकर हम लोग तन रखने लगे। मालूम नहीं घास की वजह थी कि क्या, मेरी बीबी बीमार पड़ गई। टाँगों पर उससे चला नहीं जाता, न खड़ी रह पाती है। मेरा भी दम छीन होता गया। और मदद कहीं कोई दीखती नहीं...।''

''तो भी'' बुढ़िया बोली, ''मैं कुछ बची थी। पर निराहार काया कब तक चलती। आखिर मैं भी गिरती गई। यह लड़की दुबला गई और डरी-सहमी-सी रहने लगी। मैं कहती कि जा, पड़ोसियों से कुछ माँग-तांग ला! पर वह घर से बाहर न जाती और कोने में सरककर गुमदुबक बैठ जाती। अभी परसों एक पड़ोसन यहाँ पर झाँकने आई। पर यहाँ का हाल देख उल्टे पाँव चली गई। देखा कि यहाँ तो खुद सब बीमार और भूखे पड़े हैं। असल में उसके आदमी ने कहा था कि जा, कहीं से इन नन्हों के मुँह डालने के लिए तो कुछ ला। सो उस आस में बेचारी आई थी। पर हम पहले ही यहाँ मौत की बाट देखते पड़े थे।''

उनकी यह दु:ख-कथा सुनी तो एलीशा ने उस रोज जाने और अपने साथी का संग पकड़ने का विचार छोड़ दिया। रात वह वहीं रहा। अगले सबेरे अँधेरे-दम उठा और घर का काम-धाम सहारने लगा। काम में वह ऐसे अनायास लग गया कि उसी का घर हो। आग जलाई और आटा गूँथा। बुढ़िया उसका साथ देती जाती थी। फिर वह लड़की को साथ लेकर पास-पड़ोस से जरूरी चीज-बस्त लेने चला। क्योंकि घर में कुछ था नहीं, नाज पाने में सब कुछ बिक गया था। न दो बासन रह गए थे, न कोई वस्त्र सो एलीशा जरूरी सामान जुटाने लगा। कुछ अपने पास से मुहय्या हो गया, बाकी खरीदकर ला दिया। सो वहाँ वह एक दिन रहा, फिर दूसरे दिन, और फिर तीसरे दिन। छोटे बालक में अब वह दम आ गया और एलीशा बैठा होता तो वह सरक-सरककर उसकी गोद में चढ़ जाता। लड़की का चेहरा भी खिल आया और वह हर काम में दौड़कर मदद करने लगी। और जरा बात हो तो झट एलीशा के पास भाग आती। कहती, ''दादा, ओ दादा!''

बुढ़िया में भी अब ताकत आती जाती थी और पास-पड़ोस में अब घूम आ सकती थी। आदमी के बदन में भी बल आ रहा था और दीवार का सहारा लेकर अब वह चल-फिर सकता था। बस उसकी बीबी चँगी होने में नहीं आ रही थी। लेकिन

तीसरा दिन होते उसे भी होश हुआ और उसने खाने को माँगा।

एलीशा सोचने लगा कि रास्ते में इतना वक्त बरबाद हो जाएगा, इसका भला क्या पता था। चलो, अब बढ़ना चाहिए।

4

चौथा रोज ईस्टर के व्रत-पर्व का आखिरी रोज था। वह रोज उपवास के पारण का दिन होता और लोग खा-पीकर खुशी मनाते हैं। एलीशा ने सोचा कि इस दिन को तो यहीं इन्हीं लोगों के साथ मुझे गुजारना चाहिए। जाकर दुकान से इनके लिए कुछ ला-लू दूँगा और त्यौहार के आनंद में साथ दूँगा। फिर निबटकर शाम को अपनी राह चल दूँगा।

यह सोचकर एलीशा गाँव में गया और दूध-सेवई का इंतजाम किया और घर पहुँचकर अगले रोज के त्यौहार की तैयारी में मदद देने लगा। कहीं कुछ उबल रहा है तो कुछ सिक रहा है। पर्ववाले दिन एलीशा गिरजे गया। आकर तब सबके संग-साथ में उपवास तोड़ा और जीमन किया। उस रोज बीबी भी उठकर कुछ-कुछ टहलने लायक हो आई थी और पति ने हजामत की और बुढ़िया ने धोकर कुरता नया कर रखा था सो पहना। तब वह गाँव के महाजन के पास क्षमावनी माँगने गया। जमीन और चरागाह उनकी उसी महाजन के यहाँ गिरवी रखी थी। वह कहने गया था कि महाजन, खेत और जमीन बस एक फसल के लिए दे दो। लेकिन शाम को लौटा तो बड़ा उदास था। आकर वह आँसू गिराने लगा। असल में महाजन ने कोई दया नहीं दिखलाई थी। सीधे कह दिया था कि पहले मेरा रुपया दो।

एलीशा इस पर फिर सोच-विचार में पड़ गया। मन में बोला कि अब ये लोग रहेंगे कैसे ? और जने काटकर घास तैयार करेंगे तब ये क्या काटेंगे ? इनकी जमीन तो गिरवी रखी·है। जई पकने के दिन आए। और फिर इस साल देखो धरती-माता ने फसल में क्या धन-धान उगला है; पर दूसरे लोग कटाई कर रहे होंगे और इन बेचारों के पास कुछ भी नहीं। उनकी तीन एकड़ जमीन महाजन के ताबे है। सो मेरे पीछे इन बेचारों की दशा वैसी ही न हो जाएगी जैसी आने पर मैंने देखी थी ?

सोचकर एलीशा दुविधा में हो गया। आखिर तय किया कि आज शाम न जाऊँ, कल तक और ठहर जाऊँ। यह विचार पक्का करके रात में सोने को वह ओसारे में गया और प्रार्थना करके बिछावन पर लेट गया। पर वह सो नहीं सका एक तरफ तो सोचता था कि चलूँ, क्योंकि यहाँ उसका काफी समय और काफी पैसा लग गया था। पर दूसरी तरफ इन लोगों पर उसके मन में करुणा भी आती थी। और...।

मन में बोला, ''इसका तो कोई अंत ही नहीं दीखता है। पहले तो मैंने ही सोचा

था कि लाकर इन्हें पानी दिए देता हूँ। और यह पास की रोटी। तब क्या जानता था कि बात ऐसी बढ़ जाएगी। लो, अब तो खेत और चराई की धरती को गिरवी से छुड़ाने की बात सामने आ गई है। यह किया तो फिर उनको गाय भी लेकर देनी होगी। फिर एक घोड़ा भी चाहिए जिससे गाड़ी में लान-वान ढोया जा सके। वाह दोस्त एलीशा, तुमने तो गले में यह अच्छा फंदा डाल लिया है। अपनी सुध बिसार तुम तो खासे गड़बड़ झाले में पड़ गए हो।'' यह सोचता हुआ एलीशा उठा और सिरहाने से कोट निकाल, तह खोल, अपनी सुँघनी की डिबिया बाहर की और उसमें से एक नक्की ली। सोचता था कि सुँघनी से मदद मिलेगी और झमेला कटकर मन के खयाल साफ होने में आएँगे।

लेकिन कहाँ? बहुतेरा सोचा, बहुतेरा विचारा। पर निश्चय न होता था एक मन होता कि चल देना चाहिए। पर दया रोक लेती थी। उसे सूझ न पड़ती थी कि करूँ तो क्या! कोट की तह कर आखिर फिर उसने सिरहाने ले लिया। ऐसे बहुत देर पड़ा रहा। होते-होते मुर्गे की पहली बांग उसे सुनाई दी। तब उसकी पलकों पर नींद उतरने लगी। पर सो न पाया होगा कि उसे ऐसा लगा कि किसी ने उठा दिया है। देखा, तो वह सफर के लिए तैयार है, वकचा कमर पर कसा है, हाथ में लाठी लिए है। बाहर दरवाजा भी इतना खुला है कि वह तरकीब से चुपचाप निकल जा सकता है। वह निकलकर जा ही रहा था कि कमर के बकचे के बंध एक तरफ तार में हिलग गए। वह उसे छुड़ाने में लगा कि इतने में दूसरी तरफ बाएँ पैर की पट्टी अटक गई और खिंचकर खुलने लगी। आखिर उचककर बकचे को उसने ठीक कमर पर लिया, पर देखता क्या है कि तार ने उसे नहीं हिलाया, बल्कि छोटी लड़की उसे पल्ले से पकड़े हुए है। कह रही है—

''दादा, रोटी! दादा, रोटी!''

फिरकर पैर की तरफ जो उसने देखा तो क्या देखता है कि छोटा बच्चा उसके पाँव की पट्टी को पकड़े हुए है। और बराबर की खिड़की में से बुढ़िया और घर का मालिक वह आदमी, दोनों जने उसे जाते देख रहे हैं।

एलीशा इस पर जग आया। उठकर अपने आपसे ऐसे बोलने लगा कि दूसरा भी सुन ले। कहने लगा कि कल मैं उनके खेत उन्हें छुड़ा दूँगा और एक घोड़ा ले दूँगा। बच्चों के लिए एक गाय और फसल आने तक के लायक नाज भी भर दूँगा। नहीं तो मैं उधर समंदर पार भगवान को पाने जाऊँ, तो कहीं ऐसा न हो कि अंदर के भगवान को ही मैं खो बैठूँ।

इस विचार के बाद एलीशा अपनी गाढ़ी नींद सो गया, तड़का फूटने पर उठा। अध-सबेरे ही उठ महाजन के पास जाकर उसने चराई की धरती और खेती की

जमीन दोनों को पैसा चुकाकर छुड़ा लिया। फिर एक दराँत ली। (क्योंकि अकाल में यह भी काम आ गई थी) और उसे साथ लेकर घर लौटा। आकर आदमी को तो कटाई करने भेजा और खुद फिर गाँव की तरफ चला। वहाँ पता लगा कि चौपाल पर एक गाड़ी-घोड़ा बिकाऊ है। मालिक से भाव-सौदा करके उसने दोनों खरीद लिए। फिर एक बोरा नाज भी ले लिया और उसे गाड़ी में रखवा लिया। उसके बाद गाय की तलाश में चला जा रहा था कि दो औरतें मिलीं। आपस में बात बतलाती जा रही थीं। वे अपनी भाषा में बोल रही थीं, तो भी एलीशा समझ सका कि वे क्या कह रही हैं।

"अरी, पहले तो वे समझे नहीं कि कौन है। सोचा, आता-जाता होगा कोई भला-मानस। पीने को पानी माँगता आया था कि फिर वह वहीं रह गया बहिन, सुना कुछ, क्या-क्या सामान उनके लिए उसने ले डाला है। रामदुहाई, कहते हैं कि एक घोड़ा और एक गाड़ी तो अभी सबेरे ही चौपाल में उसने मोल लिए हैं। ऐसे आदमी दुनिया में बिरले मिलते हैं। चलती हो, चलो उन पुण्यात्मा के दर्शन ही करें।"

एलीशा सुनकर समझ गया कि यह उसी की तारीफ की जा रही है, सुनकर वह आगे गाय लेने नहीं गया। लौटा, चौपाल पर आया, दाम चुकाए और गाड़ी जोतकर घर आ गया। गाड़ी से उतरा तो घर के लोगों को घोड़ा-गाड़ी देखकर बड़ा अचंभा हुआ। उन्होंने सोचा तो कि कहीं सब यह उन्हीं के वास्ते न हो,—पर पूछने की हिम्मत नहीं हुई। इतने में आदमी घर का दरवाजा खोल बाहर आया। बोला, "दादा, यह घोड़ा कहाँ से ले आए?"

एलीशा ने कहा, "अजब सवाल करते हो। खरीदे लिए आ रहा हूँ, नहीं तो सस्ता बिका जाता था। अच्छा, जाओ और काटकर घास नाँद में डाल दो कि रात को इसके लिए हो जाए। और गाड़ी में से यह बोरा भी उतार लो।"

आदमी ने घोड़ा खोल लिया और बोरा नाज कोठे में ले गया। फिर घास काटकर नाँद में डाल दी। आखिर निबट-निबटा सब जने अपने सोने चले गए। एलीशा आज रात सोने के लिए बाहर रास्ते से लगे ओसारे में आ रहा था। उस शाम उसने अपना बकचा भी पास ले लिया। सब-के-सब सो गए थे, उस वक्त वह उठा। बकचा अपना सँभाला और कमर पर कस लिया। पट्टियाँ टाँगों से बाँध लीं, कोट पहन लिया और जूते चढ़ा आगे राह पर एफिम को पकड़ने बढ़ लिया।

5

एलीशा कोई तीन मील से ऊपर चलते चला गया होगा कि चाँदना होने लगा। तब एक पेड़ के नीचे उसने बकचा खोला और पास के पैसे गिने। कुल सात रुपए और पांच आने के पैसे बचे थे।

सोचने लगा कि उतने पैसे लेकर समंदर पार की यात्रा की सोचना वृथा है। अगर भीख माँगकर यात्रा पूरी करूँ तो उससे तो न जाना अच्छा है। एफिम मेरे बिना भी एरुशलम पहुँच ही जाएँगे और मंदिर में वहाँ मेरे नाम का भी एक दिया रख देंगे। और मेरी बात पूछो तो इस जन्म में अपना प्रण पूरा करने को मुझे अब क्या मौका मिलेगा। बड़ा शुक्र है कि प्रण और संकल्प मैंने मालिक के सामने ही किए थे जो दयासागर हैं और पापियों के पाप माफ कर देते हैं।

एलीशा उठा, झटककर फिर अपना बकचा कमर पर लिया, और वापिस मुड़ चला। वह यह नहीं चाहता था कि कोई उसे पहचान ले। सो गाँव को बचाने के लिए चक्कर लेकर वह अपने देश की तरफ तेज चाल चल दिया। घर की तरफ जाते इस बार वही रास्ता उसे हलका लगा जो पहले कठिन मालूम हुआ था। पहले एफिम का साथ पकड़े रहने में मुश्किल होती थी, अब ईश्वर की दया से लंबी राह चलते उसे थकान न आती थी। चलना बालक का खेल-सा लगता था। लाठी हिलाता, एक दिन में चालीस-से पचास मील तक आसानी से नाप लेता था।

देश अपने घर जाकर पहुँचा तो फसल हो चुकी थी। कुनबे के लोग उसे वापिस आया पाकर बहुत खुश हुए। सब पूछने लगे कि क्या हुआ, कैसे बीती, कैसे पीछे और अकेले रह गए। एरुशलम जाए बिना क्यों लौट आए? पर एलीशा ने उनको कुछ कहा नहीं। इतना ही कहा कि भगवान की इच्छा नहीं थी कि मैं वहाँ पहुँचूँ। सो राह में मेरा पैसा जाता रहा और साथी का साथ छूटकर मैं पीछे पड़ गया। भगवान मुझे माफ करेंगे और आप लोग भी माफ करें।

इतना भर कहकर जो पैसा बचा था सब अपनी बुढ़िया बीबी के हाथों में दे दिया। फिर घर-बार के हाल-अहवाल पूछे। सब ठीक-ठीक चल रहा था। काम सबने पूरा किया था। किसी ने कोर-कसर नहीं की थी और सब जने मेल और शांति से रहे थे।

उसी दिन एफिम के घर के लोगों को भी उसके लौटने की खबर मिली। वे भी अपने दादा की खबर लेने आए। उनको भी एलीशा ने यही जवाब दिया।

कहा, ''एफिम तेज चलते हैं। संत पीटर के पर्व के दिन से तीन रोज इधर मेरा उनका साथ छूट गया सोचता था मैं फिर साथ पकड़ लूँगा। लेकिन ईश्वर का चाहा होता है। मेरा पैसा जाता रहा और फिर आगे बढ़ने लायक मैं नहीं रहा। सो अधबीच से लौट आया।''

लोग अचरज करते थे कि ऐसे समझदार आदमी होकर उन्होंने क्या यह मूरखपने की बात की। चलने को चल पड़े; पर जाना था वहाँ पहुँचे नहीं और रास्ते में ही सब पैसा फूंक दिया। कुछ काल तो वे इस पर विस्मय में रहे। फिर धीरे-धीरे

सब भूल चले। एलीशा के मन से भी सब बिसर गया। वह अपने घर के काम-धंधे में लग गया। अपने बेटे की मदद से जाड़ों के लिए लकड़ी काटकर भर ली। औरतों ने और सबने मिलकर नाज गाह रखा, फिर बाहर के छप्पर को ठीक कर लिया। मक्खियों के छत्तों को छा दिया और पड़ोसी को उसने वे दस छत्ते दे दिए जो बेचे थे उस पर जितना मधु-महाल आया, सब-का-सब ईमानदारी से पड़ोसी की तरफ कर दिया। बीबी ने कोशिश भी की कि न बताऊँ कि इन छत्तों पर से कितने मधु-मुहाल हुए हैं। लेकिन एलीशा सब जानता था कि कौन छत्ते फले हैं, कौन नहीं। सो दस की जगह पड़ोसी को सत्रह भरे छत्ते मिले। जाड़ों की सब तैयारी करके उसने लड़के को काम तलाश करने दिया। खुद मधु-मक्खी के कोटर तैयार करने और लकड़ी की खड़ाऊँ वग़ैरह बनाने के काम में जुट गया।

6

एलीशा उधर पीछे गाँव में रह गया था तो उस दिनभर एफिम ने राह में उसका इंतजार देखा। आगे कुछ ही कदम चलने पर वह बैठ गया था। बाट देखता बैठा रहा, बैठा रहा। झोंक आई और एक नींद वह सो भी लिया। उठकर फिर बाट जोहने लगा। लेकिन उसका साथी नहीं लौटा। बाट देखते उसकी आँखें दुख आईं। उस पेड़ के पीछे सूरज डूबने लग रहा था, पर एलीशा का उस सड़क पर न अता दीखता था न पता।

एफिम ने सोचा, ''शायद हो कि इसी रास्ते वह मुझसे आगे निकला चला गया हो। क्या पता किसी ने अपनी गाड़ी पर बिठा लिया हो, मैं सो रहा हूँ तभी बिना मुझे देखे आगे बढ़ता गया हो। लेकिन ऐसा हो कैसे सकता है कि मैं उसे न देखूँ। यहाँ तो पट पर मैदान में दूर-दूर तक साफ दीखता है। चलूँ, लौटकर देखूँ। लेकिन जो कहीं वह आगे बढ़ गया होगा तब तो फिर ऐसे हम दोनों बिछुड़ ही जाएँगे और कोई किसी को न मिलेगा। सो अच्छा है मैं चला ही चलूँ। रात को जहाँ पड़ाव होगा, वहाँ तो आखिर दोनों मिलेंगे ही।''

सो चलते-चलते गाँव आया। वहाँ उसने चौकीदार से कहा कि इस शकल का कोई मेरी उमर का आदमी चलता हुआ आएगा, तो उसे जहाँ मैं ठहरा हूँ वहीं ले आना। लेकिन एलीशा उस रात भी नहीं आया। एफिम अकेला आगे बढ़ा। राह में जो मिलते सबसे पूछता कि नाटे कद का सिर साफ, बूढ़ी उमर का कोई मुसाफिर तो तुमने नहीं देखा है ? पर किसी ने उसे नहीं देखा था। एफिम को अचरज होता और अकेला आगे बढ़ लेता। सोचा कि आखिर ओडेसा पहुँचकर तो हम दोनों मिलेंगे ही। नहीं तो जहाज पर मुलाकात पक्की है। यह सोच उसने फिर उस बाबत सब

फिकर छोड़ दी।

चलते-चलते रास्ते में उसे एक यात्री मिला जो एक लंबी कफनी पहने था। बाल बड़े थे और सिर पर ऐसी टोपी थी जैसे उपदेशक हो। वह थौसके तीरथ की यात्रा से आता था और दूसरी बार एरुशलम धाम को जा रहा था। वे दोनों रात एक ही जगह ठहरे थे, सो वहाँ मिल गए। फिर तो साथ-ही-साथ वे चलने लगे।

ओडेसा दोनों कुशलपूर्वक पहुँच गए। वहाँ जहाज के लिए तीन दिन बाट देखने में रुकना पड़ा। जगह-जगह और दूर-दूर से और बहुत से यात्री भी उसी तरह जहाज की प्रतीक्षा में थे। वहाँ फिर एलीशा के बारे में एफिम ने पूछताछ की पर किसी से कुछ पता नहीं मिला।

एफिम ने वहाँ फिर अपने पास पर सही कराई, जिसकी फीस पाँच रुपए बैठी। चालीस रुपए में एरुशलम का वापिसी टिकट मिला। सफर के लिए खाने-पीने के लिए सामान भी साथ खरीदकर उसने रख लिया।

साथ के यात्री ने तरकीब बताई कि किस तरह बिना, पैसे भी जहाज पर जाना हो सकता है। लेकिन एफिम ने उधर ध्यान नहीं दिया। बोला, "मैं खर्च के लिए तैयार होकर आया हूँ। सो मैं तो पैसा देकर चलूँगा।"

जहाज की सवारियाँ पूरी हो गईं और सब यात्री उस पर आ रहे। एफिम और उसके साथी भी उसमें थे। लंगर उठा और जहाज समंदर में बढ़ लिया।

दिन भर तो मजे में चलता गया। पर रात हवा कुछ तेज उठ आई। पानी पड़ने लगा और जहाज डगमग-डगमग होने लगा। लोग डर गए। स्त्रियाँ चीखने-चिल्लाने लगीं और आदमियों में जो कमजोर थे, वे भी बचत की जहाँ-तहाँ जगह ढूँढ़ते भागने लगे। डर एफिन को भी लगा, लेकिन उसने जाहिर नहीं किया। डेक पर जहाँ पहले जमकर बैठ गया था वहीं बैठा रहा। वहाँ पास टांबो के और लोग भी बैठे थे। सो तमाम दिन और तमाम रात वे सब जने अपने-अपने थैले या बक्स से लगकर चिपके हुए चुपकी मार बैठे रहे। तीसरे दिन जाकर हवा थमी। समंदर शांत हो आया और पाँचवें दिन जहाज कुस्तुनतुनिया बंदर पैर जा लग गया। कुछ लोग उतरकर संत-सोफिया के गिरजा के, जो तुर्कों के अधिकार में था, दर्शन करने उतर गए। और लोग तो गए; लेकिन एफिम जहाज पर ही रहा। उसने तो बस किनारे से ही कुछ रोटी खरीदकर कनात मानी। जहाज वहाँ चौबीस घंटे रहा और फिर आगे बढ़ा। फिर समर्ना बंदर पर वह ठहरा। उसके बाद अलेक्जेंड्रीया। आखिर सब लोग सकुशल जाफा बंदर पर आ पहुँचे। वहाँ सब यात्रियों को उतरना था। अभी यहाँ से भी एरुशलम पक्की सड़क चालीस मील से कुछ ऊपर ही था। जहाज से उतरते भी लोगों को बड़ा डर लगा। जहाज

ऊँचा था और नाव इतनी नीची कि जैसे नाव में एक-एक करके वे लोग उतरे क्या गिराए जाते थे। और नीचे पानी में खड़ी नाव इससे बड़ी डगमगाया करती थी। यह भी डर था कि जरा कुछ हो जाए कि नाव में तो आदमी पहुँचे नहीं और पानी में गिर जाए! दो-एक आदमी इस तरह गिरकर भीगे भी। खैर, आखिर जैसे-तैसे सब लोग सकुशल किनारे पहुँच गए।

वहाँ से ये पाँव-पाँव चले और तीसरे दिन दुपहरी के वक्त एरुशलम पहुँच गए। शहर के बाहर रूस के लोगों के लिए एक जगह बनी थी, वहाँ सब जने ठहरे। सबके पासों पर वहाँ भी सही की गई। फिर खा-पीकर एफिम अपने उस यात्री के साथ तीर्थ-धाम देखने निकला। पर मंदिर खुलने का यह समय नहीं था सो वे धर्माचार्य के रहने की जगह चले गए। वहाँ सब-के-सब यात्री जमा थे। स्त्री अलग और पुरुष अलग, सबको दो घेरों में बैठाया गया था। जूते बाहर छोड़ने को कह दिया था और सब वहाँ नंगे पैर थे। बैठने के बाद एक साधु आए, जिनके कंधे पर तौलिया था और साथ-साथ जल। उन्होंने अपने हाथों से सबके पाँव धोए। तौलिए से पोंछ और माथा नवाकर सबके चरन छुए। घेरों में बैठे हर स्त्री-पुरुष के साथ उन्होंने ऐसा किया। औरों में एफिम के पैर भी धोए और माथे छुए गए थे। सो सबेरे-शाम प्रभु-कीर्तन में एफिम शामिल हुए, प्रार्थना की और वेदी पर, अपना दीपक जलाकर रखा। अपने माँ-बाप के नाम की, लिपि लिखकर पुरोहित को दी कि उसके नाम भी धर्म-प्रार्थना के बीच ले लिए जाएँ। धर्माचार्य के यहाँ सब यात्रियों को खाने-पीने को भी दिया गया। अगले सबेरे मिस्र की मरियम माता की गुहा देखने वे लोग गए। वहाँ ही माता मरियम ने तपस्या की थी। वहाँ भी उन्होंने दीप जलाए और स्तुति पढ़ी। वहाँ से हजरत इब्राहीम के मठ में गए और वह जगह देखी जहाँ हजरत, परमात्मा की भेंट-स्वरूप, अपने पुत्र को मारने को तैयार हो गए थे। फिर वह स्थान देखा जहाँ मरियम मगदालिन को प्रभु ईसा के दर्शन मिले थे। जेम्स का चर्च भी उन्होंने देखा। इस तरह साथ के यात्री ने एफिम को ये सभी स्थान दिखाए। वह बताते भी गए कि कहाँ क्या चढ़ाना चाहिए। दोपहर बीते वे अपने स्थान पर लौटे और भोजन किया। उसके बाद लेटकर आराम करने की तैयारी कर रहे थे कि साथ का यात्री चीखने-चिल्लाने लगा और अपने सब कपड़े फेंक-बिखेरकर टटोलने लगा। बोला, "मेरा बटुआ किसी ने चुरा लिया है। उसमें तेईस रुपए थे। दो तो दस-दस के नोट थे, बाकी खरीज।"

वह यात्री झीकता-रोता रहा, पर रंज मनाने से क्या होता था। कोई और चारा नहीं था। सो फिर चुपचाप अपनी जगह ही वह जा लेटा और नींद लेने की कोशिश करने लगा।

7
बराबर में एफिम पड़ा हुआ था। उस समय उसके मन में विकार हो आया।

वह सोचने लगा कि इसका किसी ने कुछ चुराया नहीं मालूम होता। सब झूठ-मूठ की बात है। जान पड़ता है उसके पास था ही कुछ नहीं। देखो न, कहीं जो पैसा उसने दिया हो। जहाँ देना होता, पट्ठा मुझसे ही दिलवाता। और हाँ, मुझ से एक रुपया भी तो उधार ले रखा है!

यह खयाल आना था कि एफिम ने मन की लगाम खींची। अपने को झिड़ककर कहा कि दूसरे आदमी के दोष देखने का मुझे क्या हक है। यह तो पाप की बात है। नहीं, मैं उसके बारे में और खयाल नहीं लाऊँगा। पर जैसे ही मन और तरफ फेरा कि छूटकर फिर वह वहीं अपने साथी की बात पर पहुँच जाता था। उसे खयाल होता कि देखो, पैसे का वह कैसा नदीदा है। और जब चिल्ला रहा था कि मेरा बटुआ चोरी चला गया है तो आवाज उसकी कैसी खोखली और नकली मालूम होती थी।

सो फिर सोचा कि नहीं जी, उसके पास पैसा-वैसा कुछ था ही नहीं। झूठ-मूठ की बात है।

साँझ को दोनों जने उठे और बड़े मंदिर में संध्या की आरती में शामिल हुए। साथ का यात्री एफिम से लगा-लगा ही चल रहा था। हर कहीं कंधे के पास दीखता। मंदिर में आए, जहां बहुत से यात्री थे। रूसी थे, उसी भाँति और बहुतेरे देशों के लोग थे। ग्रीक के, अरमीनिया के, तुर्किस्तान के, सीरिया के। एफिम भी उनके साथ मंदिर के तोरणद्वार में से दाखिल हुआ। पुजारी उन्हें तुर्की संतरियों के पास से होकर मंदिर के दालान में उस जगह ले गया, जहाँ ईशु-मसीह को क्रूस से उतारा गया था और उनकी देह का अभिषेक हुआ था। वहाँ बड़े-बड़े नौ शमादान रखे थे और बत्तियाँ जल रही थीं। पुजारी ने उनको सब दिखाया और बताया। एफिम ने अपने नाम का भी एक दीपक वहाँ रखा। फिर पुजारी सीढ़ियाँ चढ़कर सीधे वहाँ उन्हें ले गया जहाँ मसीह का सलीब खड़ा था। एफिम ने वहाँ झुककर इबादत की। फिर वह जगह उन्हें दिखाई जहाँ धरती पाताल तक फट गई थी। फिर वह स्थान देखा जहाँ मसीह के हाथ और पैर कीलों से ठोंककर सलीब में जड़े गए थे। फिर आदम-की दरगाह देखी जहाँ मसीह की देह से खून चूकर उस पर गिरा था। फिर वह पत्थर देखा जहाँ मसीह बैठे थे और सिर पर उनके कांटों का ताज चढ़ाया गया था। फिर वह खंभा दिखाया, जहाँ प्रभु को बाँधकर बेंत लगाए थे। फिर पत्थर पर मसीह के चरण चिह्न के दर्शन किए। और आगे भी कुछ देखने को था कि तभी भीड़ में सनसनी पड़ी और लोग मंदिर के भीतर आँगन की तरफ भागने लगे। वहाँ एक पूजा हो चुकी, अब दूसरे कीर्तन का आरंभ था। एफिम भी भीड़ के साथ पत्थर की

चट्टान में कटे मसीह के ताबूत की तरफ बढ़ा चला।

वह साथ के यात्री से पीछा छुड़ाना चाहता था। मन-मन में उसके बारे में बुरे भाव उसमें आ रहे थे। उसे इस बात का चेत था। लेकिन यात्री साथ नहीं छोड़ता था। पास-ही-पास लगा हुआ वह भी ताबूत तक आया। वे बढ़कर आगे की पंगत में पहुँचना चाहते थे। लेकिन अब नहीं हो सकता था, वे बिछुड़ गए थे। भीड़ इतनी थी कि न आगे हिलना बन सकता था, न पीछे जाना मुमकिन था। एफिम अपने सामने निगाह रखे मन में दुआ दोहरा रहा था। रह-रहकर अपने बटुए की सँभाल भी कर लेता था। चित्त उसका दो तरफ बंटा था। कभी तो सोचता कि यात्री ने उसके साथ छल किया है। पर फिर खयाल होता कि कौन जाने वह सच ही बोलता हो और सचमुच बटुआ उसका चोरी गया हो। आखिर मेरे ही साथ ऐसा हो सकता है कि नहीं।

8

ताबूत के ऊपर छत्तीस शमादान जल रहे थे। वेदी छोटी थी और एफिम उधर ही निगाह जमाए खड़ा था। औरों के सिर के ऊपर से निगाह ऊँची कर वह सामने देख रहा था कि कुछ उसे दीखा और वह अचंभे में रह गया। उस शमादानों के ठीक नीचे जहाँ अखंड जोत जल रही थी, सब के आगे की पंक्ति में देखता क्या है कि एक बुढ़ी उमर का आदमी बड़ा-सा कोट पहने वहाँ खड़ा है। सिर बालों से साफ चमकीला चमक रहा है। ऐनमैन वह एलीशा मालूम होता है।

एफिम ने सोचा कि मालूम तो होता है, लेकिन एलीशा हो नहीं सकता। मुझसे आगे भला कैसे वह यहाँ पहुँच सकता था। हमसे पहले का जहाज तो एक हफ्ता पेश्तर ही छूट गया था। वह तो एलीशा को किसी हालत में नहीं मिल सकता था। रहा हमारा जहाज, सो उस पर तो वह था नहीं, क्योंकि मैंने एक-एक यात्री को देख और पूछ लिया था।

एफिम यह सोच ही रहा था कि वह सामने का वृद्ध पुरुष इबादत में झुका और फिर उठकर तीन बार तीनों दिशाओं में झुककर उसने सबको नमस्कार किया। पहले तो सामने ईश्वर को नमन किया। फिर दाएँ-बाएँ अपने सब भाइयों को। दाईं तरफ मुड़कर जब वह व्यक्ति प्रणाम कर रहा था, उस वक्त एफिम ने साफ-साफ देखा। संदेह की जगह न थी। वह तो एलीशा ही है। वही दाढ़ी, वही भवें। आँखें और नाक वही। सब-का-सब चेहरा वही-का-वही। और कोई नहीं जी, एलीशा ही है।

एफिम को अपने बिछुड़े साथी के मिलने पर बड़ी खुशी हुई। विस्मय भी हुआ

कि उसके आगे एलीशा आया तो कैसे ?

सोचा कि शाबाश एलीशा। देखो न कैसे वह बढ़ता हुआ ठेठ आगे पहुँच गया है। कोई जरूर साथ लेकर रास्ता बताता उसे आगे ले गया होगा। यहाँ से निकलकर उसको पाना चाहिए। और यह जो भलामानस यात्री साथ लग गया है, सो इसे छोड़ एलीशा का संग पकड़ना ठीक होगा। उससे शायद मुझे भी आगे पहुँचने की राह मिल जाएगी।

एफिम एकटक सीध में निगाह जमाए रहा कि एलीशा आँख से अलग न हो जाए। पर कीर्तन पूरा हुआ, भीड़ में हलचल हुई और सब जने ताबूत पर माथा टेकने को बढ़ने लगे। इस धक्कम-धक्के में एफिम को फिर भय हुआ कि कहीं ऐसे में बटुआ कोई चुरा न ले। हाथ में उसे दबाए, भीड़ में कोहनी मारता, वह पीछे की ओर बढ़ने लगा। अब तो वह बस किसी तरह बाहर हो जाना चाहता था। बाहर खुले में आया और वहाँ बहुत काल एलीशा की खोज में रहा। गिरजे के अंदर देखा। बाहर देखा; आँगन में या धर्मशाला में खाते-पीते, पुस्तक बेचते या सोते उसे बहुत भाँति के बहुतेरे आदमी मिले; पर एलीशा कहीं नहीं दीखा। सो एफिम बिना अपने साथी को पाए अपने ठहरने की जगह लौटकर आया। उस शाम साथ का यात्री भी फिर नहीं लौटा। उधार का रुपया बिना चुकाए वह चला गया था और एफिम अकेला पड़ गया था।

अगले दिन एफिम दर्शन को मंदिर गया। अबकी जहाज पर मिले एक दूसरे बूढ़े यात्री का साथ उसने ले लिया था। मंदिर में जाकर फिर उसने अगली पंक्ति में पहुँचने की कोशिश की। लेकिन भीड़ के दबाव में ही रह गया। खैर, वहाँ एक खंभे के सहारे टिक कर उसने अपनी इबादत पूरी की। पर सामने जो देखता है तो ठीक अखंड ज्योति के नीचे वेदी के ऐन पास सबके आगे खड़ा है कौन ?—वही एलीशा। बाहें उसकी पुजारी की भाँति वेदी की तरफ फैली हैं और सिर उसका रोशनी में चमचम चमक रहा है।

एफिम ने सोचा कि इस बार तो मैं उसे खोने नहीं दूँगा।

सो धकियाता हुआ वह आगे बढ़ा। लेकिन वहाँ पहुँचा तो एलीशा वहाँ नहीं था। अनुमान किया कि चला गया होगा।

तीसरे दिन एफिम फिर दर्शन के लिए आया और देखता क्या है कि मंदिर में वेदी से लगकर सबसे खास और अगली पवित्र जगह पर सबकी निगाह के बीचोंबीच खड़ा है एलीशा! बाहें फैली हैं और निगाह आकाश की ओर है। जैसे ऊपर उसे कुछ प्रकाश दीख रहा हो। और उसका साफ सिर सदा की भाँति चमकीला चमक रहा है।

एफिम ने सोचा कि इस बार तो किसी तरह मैं उसे अपने से जाने नहीं दूँगा। जाकर दरवाजे पर खड़ा हुआ जाता हूँ। फिर एक-दूसरे को पाए बिना हम किसी तरह भी नहीं रह सकेंगे।

एफिम गया और दरवाजे से लगकर खड़ा हो गया। ऐसे खड़े-खड़े दोपहर बीत गया। तीसरा पहर बीत चला। हर कोई मंदिर से जा चुका था। लेकिन एलीशा की मूरत नहीं दीखी, नहीं दीखी।

एरुशलम में एफिम छह हफ्ते रहा और सब धाम देखे। बैथलेहम के दर्शन किए, बेथैनी गया और जार्डन भी देखा। मंदिर में अपने नाम का दीपक छोड़ा। जार्डन के पवित्र जल की शीशी भरकर साथ में ली और वहाँ की मिट्टी भी बाँध ली। और कुछ मोमबत्तियाँ भी लीं जिन्हें अखंड ज्योति से छूकर एक बार जगा लिया था। आठ जगह पर उसने अपने नाम की प्रार्थना के अर्थ दान दिया। बस राह खर्च भर को उसने पैसा रखा, बाकी सब पुन्न कर दिया। आखिर तीर्थ पूरा कर अपने घर की तरफ वापिस हो लिया। जाफा तक पैदल यात्रा की। वहाँ से ओडेसा तक जहाज में। और फिर आगे पाँव-पाँव घर चला।

9

जिस राह गया, उसी राह एफिम लौट रहा था। ज्यों-ज्यों घर पास आता, उस पर चिंता बढ़ती जाती थी कि पीछे घर के काम-धाम की क्या हालत हुई होगी। कहते हैं न कि एक साल में कितना कुछ नहीं बह जाता। बनाने में जिंदगी लग जाती है, पर बिगड़ सब छन में सकता है। तो वह सोचता था कि उसके लड़के ने पीछे जाने क्या कुछ करके रखा होगा। कैसा मौसम वहाँ चल रहा होगा। जाड़ों में चौपायों पर कैसी बीती होगी और मकान भी ठीक-ठीक पूरा हुआ होगा कि नहीं। एफिम जब उस देश में आया, जहाँ परसाल एलिशा बिछड़ गया था तो गाँवों को वह मुश्किल से पहचान सका। हालत अब कुछ-की-कुछ थी। पिछली साल तो नाज के दाने का ठिकाना न था। अब सब खुशहाल थे। फसल ऐसी भरी हुई थी कि क्या कहा जाए। अब सबके घर भर-पुर गए थे और पहली मुसीबत याद भी न आती थी।

एक शाम एफिम ठीक वहाँ पहुँचा जहाँ एलीशा रुककर पीछे रह गया था। वहाँ से पहले घर के पास आना था कि एक लड़की बाहर भागती आई। सफेद फ्रॉक पहने बड़ी भली लगती थी।

बोली, "दादा, ओ दादा! चलो हमारे घर।"

एफिम अपनी राह बढ़े जाना चाहता था। लेकिन उस नन्हीं नटखट ने जाने न दिया। कोट का छोर पकड़ लिया और हँसती हुई घर की तरफ खींचकर ले चली।

वहाँ छोटा बच्चा लिए एक स्त्री मिली, उसने आवभगत के भाव से कहा कि आइए दादा, कुछ खा न लीजिए और यह रात यहाँ विश्राम कीजिए।

सो एफिम अंदर पहुँचा। सोचा कि यहाँ एलीशा की बाबत पूछकर देखना चाहिए। मैं समझता हूँ कि पानी पीने एलीशा इसी घर की तरफ बढ़कर आया था।

स्त्री ने आगे बढ़कर मेहमान का बकचा कंधे पर से उतरवाया और हाथ-मुँह धोने को पानी दिया। फिर मेज पर बिठाकर सामने दूध रखा और चपातियाँ, दलिया वगैरह लाकर दिया। एफिम ने बहुत शुक्रिया माना कि चलते राहगीर पर आप ऐसी दया दिखलाती हैं। एफिम ने उसके इस सत्कार की बहुत तारीफ की।

लेकिन स्त्री ने मानो इनकार में सिर हिलाया। बोली, "यात्रियों की खातिर करने का तो हमारा धर्म है। और वजह भी है। असल में एक यात्री ही थे, जिन्होंने हमें जीवन में धरम का रास्ता दिखाया। हम ईश्वर को भूलकर रहा करते थे। सो ईश्वर ने हमें ऐसा दंड दिया कि बस मौत ही से बचे। पिछली गरमियों में हालत ऐसी आ गई कि हम सब लोगों को बीमारी ने घेर लिया। बिलकुल बेबस और मोहताज हो गए। खाने को पास दाना नहीं था। वह तो हम मर ही जाते कि ईश्वर के दूत बनकर एक वृद्ध पुरुष हमारी मदद को आ पहुँचे। वह ऐसे ही थे जैसे आप। एक दिन पीने को थोड़ा पानी माँगने आए थे, लेकिन हमारी यह हालत देखी तो उन्हें दया हो आई। फिर हमारे साथ ही कुछ दिन रह गए। उन्होंने हमें खाने को दिया, पीने को दिया और फिर हमें अपने पैरों पर खड़ा किया। धरती हमारी गिरवी से छुड़ा दी और एक गाड़ी-घोड़ा खरीदकर हमको दे दिया।"

इसी समय एक बूढ़ी माँ वहाँ आई और बीच में बात काटकर बोली, "अजी, हम कैसे कहें कि वह मनुष्य ही थे और ईश्वर के भेजे कोई फरिश्ते नहीं थे। उन्होंने हम सबको प्रेम किया और करुणा की। और गए ऐसे कि हमें नाम भी नहीं बता गए। सो हम यह भी नहीं जानते कि किस के नाम की हम माला फेरें और दुआ करें। वह हालत मेरी आँखों के आगे है। मैं मौत की बाट देखती वहाँ पड़ी थी, कि आए वह वृद्ध। उनका सिर साफ था। देखने में कोई खास बात नहीं थी। आकर उन्होंने पीने को पानी माँगा। और मैं थी मन की पापिनी। सोचने लगी कि जाने यह आदमी किस ताक में यहाँ आया है। मैं तो ऐसी थी, और देखो कि उन्होंने हमारे साथ क्या किया। ठीक यही जगह जहाँ तुम बैठे हो, वहीं, बेंच पर, हमें देखते ही अपनी कमर से समान उतारकर रखा और खोलने लगे।"

तभी वह लड़की बीच में बोली, "ना दादी, ना। पहले तो उन्होंने गठरी यहाँ बीच में रखी थी, कोई बेंच पर थोड़ी रखी। बेंच पर तो फिर पीछे उठाकर रखी थी।"

इसके बाद वे सब जन उन्हीं पुरुष की याद करने लगे और उन्हीं की बाबत बहस और चर्चा करने लगे, कि उनके मुँह से क्या-क्या शब्द निकले, क्या उन्होंने दिया, कहाँ वह बैठते थे, कहाँ सोते थे, और किससे कब और क्या-क्या बातें उन्होंने की थीं।

रात को घर का मर्द भी अपने घोड़े पर आया और वह भी एलीशा के बारे में बखान करने लगा कि कैसे वह दयावान यहाँ रहा करते थे।

"वह न आते तो हम अधम अपने पाप के बीच मरे ही पड़े हुए थे। निराश, पल-पल मौत के मुँह में हम सरकते जा रहे थे। ईश्वर को कोसते और आदमी को कोसते थे। लेकिन वह दयालु आए और हमें अपने पैरों खड़ा किया। उनसे हमने परमात्मा को जानना चाहा। उनसे हमने विश्वास पाया कि आदमी में नेकी का बास है। भगवान उनका भला करे। हम जानवर की तरह रहते थे। उन्होंने हमें आदमी बनाया।"

एफिम को खिला-पिला कर उन्हें बिछौना बतला दिया और फिर वे खुद अपने सोने चले गए।

एफिम लेट तो गया, पर सो नहीं सका। एलीशा उनके मन से बाहर नहीं होता था। उसे स्मरण हुआ कि एरुशलम तीर्थ में तीन बार सबसे आगे के स्थान पर उसने एलीशा को देखा था।

सोचा कि एलीशा इसी भाँति मुझसे आगे निकला है। भगवान ने मेरी तीर्थ यात्रा को तो स्वीकार किया हो या नहीं भी स्वीकार किया हो, पर एलीशा के पुण्य को तो प्रत्यक्ष ही उसने ग्रहण कर लिया है।

अगले सबेरे एफिम ने उन लोगों से विदा माँगी। परिवार के लोगों ने राह के लिए उसके साथ कलेवा बाँध दिया और एफिम घर की तरफ आगे बढ़ा।

10

पूरा सालभर एफिम को यात्रा में लग गया। गर्मी लगते गया था कि उन्हीं दिनों लौटा। पर जिस शाम घर पहुँचा तो उसका लड़का वहाँ था नहीं। बाहर दारू-घर पर गया था। लौटा तो ज्यादा चढ़ा आया था। एफिम ने उससे घर के हाल-चाल की बाबत पूछा। पर साफ ही दिखाई देता था कि बाप के पीछे उसने जमकर कुछ नहीं किया है। पैसा जहाँ-तहाँ खर्च डाला है और काम का ख्याल नहीं रखा है। सो बाप ने लड़के को डाँटना शुरू किया।

लड़के ने भी बेअदबी से जवाब दिया। बोला, "तो तुम्हीं ने यहाँ रहकर क्यों नहीं सब देखा-भाला। पैसा बाँधकर आप खुद तो चल दिए तीरथ करने और अब

कहते हैं कि कमाकर रखूँ मैं।'' बूढ़े को सुनकर गुस्सा आ गया और पीटने लगा।

सबेरे एफिम गाँव के चौधरी के पास अपने बेटे के चाल-चलन की शिकायत करने लगा। रास्ते में एलीशा का मकान पड़ता था। वहाँ उसकी बीबी उसारे में खड़ी थी। बोली, ''आओजी, आओ। कब आए? क्या हाल है? तीरथ आपका राजी-खुशी तो हुआ न?''

एफिम रुक गया बोला, ''हाँ, ईश्वर की दया है। तीरथ सब राज़ी हुआ। पर एलीशा तो बीच में छूट गए कि फिर दीखे ही नहीं। वह कुशल से घर आ गए हैं न?''

स्त्री को बात करने का चाव था। बोली, ''हाँ जी, वह वापिस घर आ गए हैं। आए उन्हें दिन भी हो गए। मैं समझूँ कार्तिक बीते ही वह आ गए थे। भगवान की कृपा हुई कि उन्हें जल्दी वापस भेज दिया। उनके बिना यहाँ सब सूना लगता था। काम की तो उनसे अब बहुत आस नहीं है। काम की उमर उनकी गई। पर तुम जानो घर के बड़े तो वह हैं। और वह होते हैं तो घर में उछाह रहता है। और हमारा लड़का तो—उसके आनंद की क्या पूछो, ''भाभी, सूरज छिप जाता है न, सो पिताजी के बिना वैसी हालत हो जाती है जैसे धूप उठ गई हो। अजी, उनके पीछे तो सब बिरथा लगता है और घर में आनंद उमंग नहीं रहती। हम लोग सब उनका खयाल रखते हैं और आराम देते हैं। और हमें भी तो वह कितना प्यार करते हैं।''

''वह घर ही हैं न?''

''हाँ जी, घर ही हैं। अपनी मधु-मक्खियों के पास होंगे। वहीं सदा दीखते हैं। कहते थे, इस साल खूब मधु होगा। भगवान ने ऐसी कृपा की है कि खूब मक्खी फली हैं। ऐसी कि कभी उन्होंने भी अपनी उमर में नहीं देखी। वह कहते हैं कि भगवान हमारे औगुन के माफिक तो यह हमें इनाम नहीं दे रहे हैं। आओ, बड़े जी, तुम आओ। तुमसे मिलकर उन्हें बहुत खुशी होगी।''

एफिम उधर बरामदे में से निकलता हुआ दूसरी तरफ के घर में गया। वहाँ एलीशा मिला। वही लंबा चोगा था। न मुँह ढकने की कोई जाली थी न हाथ में दस्ताने। पेड़ों के कुँज के नीचे, खुले सिर बाँह फैलाए खड़ा था। एफिम को एरुशलम के मंदिर में दीखे चित्र की याद हो आई। उसी भाँति सिर उसका चमक रहा था और पेड़ों के ऊपर छनकर आनेवाली धूप भी ठीक मंदिर की अखंड ज्योति-सी दीखती थी। और मक्खियों ने उसके सिर के आस-पास उड़कर अपने सुनहरे पंखों से वहीं के जैसा उज्ज्वल प्रभा-मंडल बना रखा था। प्रेम से सब उसके चारों तरफ मँडरा रही थीं और कोई काटती नहीं थीं।

एफिम रुक गया और दूर से ही स्त्री अपने पति को पुकारकर बोली, ''अजी,

देखो भी, वह बड़े जी आए हैं।''

एलीशा ने मुड़कर देखा। चेहरा उसका प्रसन्न था। धीमे से दाढ़ी में उलझी दो-एक मक्खियों को निकालते हुए एफिम बढ़कर मित्र की तरफ आया।

''आओ भाई, आओ। कहो, तीरथ कुशल से तो हुआ?''

''हाँ, काया तो मेरी तीरथ करने गई ही थी और जार्डन का जल भी तुम्हारे लिए भरकर लाया हूँ। पर उसके लिए तो तुम हमारे घर आओगे, है न? लेकिन मालिक को मेरी तीरथ-यात्रा स्वीकार हुई कि नहीं...''

एलीशा बोला, ''अजी, तारन-तरन वही हैं। भगवान का ही सब है।''

एफिम कुछ देर चुप रहा। फिर बोला, ''काया तो वहाँ पहुँची, पर सच पूछो तो आत्मा मेरी वहाँ पहुँची कि दूसरे की यह.....''

बीच में एलीशा ने कहा, ''भाई, यह तो भगवान के देखने का काम है। भगवान सब देखते हैं।''

एफिम, ''और वापसी में उस घर पर भी ठहरा था जहाँ तुम पीछे छूट गए थे...''

एलीशा सुनकर जैसे भय से भर गया। जल्दी से बोला, ''भगवान का काम है, भाई, सब भगवान का! आओ, अंदर आओ। हमारा शहद तो जरा देखो''

कहकर एलीशा ने बात बदल दी और घर के हाल-चाल की चर्चा छेड़ दी।

एफिम मन की साँस मन में रोके रह गया। फिर उस घर के उपकृत लोगों की बात उसने नहीं की। न यही बतलाया कि किस रूप में परमतीर्थ एरुशलम के मंदिर की ठीक वेदी के पास एलीशा को उसने तीन बार देखा था। पर अब मन के भीतर खूब समझ गया कि ईश्वर की प्रतिज्ञा और उसके आदर्श को पालन करने का सबसे अच्छा मार्ग क्या है। यही कि आदमी जब तक जीए, औरों की भलाई करे और प्रेम से व्यवहार करे।

जीवन-मूल

1

एक रैदास-मोची अपने स्त्री-बच्चों के साथ एक किसान की झोंपड़ी में रहा करता था। नाम था ननकू। उसके पास अपनी जमीन नहीं थी, न घर। रोज जूते गाठकर रोजी चलाता था। पर काम का भाव सस्ता था और नाज का महँगा। सो जो कमाता था, खाना जुटाने में खर्च हो जाता। स्त्री-मर्द के बीच जाड़ों के लिए बस एक लोई

थी। वह भी चिथड़े हो चली थी। यह दूसरा साल था कि दोनों सोचते थे कि अबके दोहर-लिहाफ बनवाएँगे। सो जाड़ों के दिनों तक ननकू ने उसके लिए कुछ पैसा बचा भी लिया था। पाँच का एक नोट घर के बक्स की तलहटी में रखा था और कोई इतना ही पैसा बस्ती में लोगों से उसे लेना निकलता था।

सो एक सबेरे कंबल-लोई लेने के खयाल से ननकू बस्ती जाने को तैयार हुआ। उसने कुरता पहना, उस पर बीबी के बदन की मिरजई, और ऊपर एक गाढ़े की चादर डाल ली। नोट जेब में रखा। झाड़ से एक डंडा तोड़ सहारे को हाथ में लिया, और कलेऊ करके राम-नाम ले रवाना हो लिया। सोचा कि जो पाँच रुपए बस्ती में लेने निकलते हैं, वे भी उगाह लूँगा। सो पाँच तो वे, पाँच ए—दस रुपए में जाड़े के लिए खासे गरम कपड़े हो जाएँगे।

बस्ती में आया और अपने कर्जदार एक किसान के घर गया। लेकिन किसान घर पर मिला नहीं। स्त्री थी, सो स्त्री ने वचन दिया कि पैसा अगले हफ्ते मिल जाएगा, मैं खुद तो दे कहाँ से सकती हूँ। तब ननकू दूसरे द्वारे पहुँचा। उस आदमी ने भी कसम दिलाकर कहा कि इस वक्त पास पैसा है नहीं, नहीं तो मैं क्या मुकरनेवाला था? ये पाँच आने हैं, चाहो तो ले जाओ। हालत यह देख ननकू ने कोशिश की कि कुछ तो नकद दे दूँ, बाकी उधार हो जाए, और ऐसे एक लोई ले ही चलूँ। लेकिन दुकानदारों में से किसी ने भी उसका भरोसा न किया। कहा कि पैसा ले आओ फिर मन-पसंद लोई छाँट ले जाना। तुम जानो, वसूली में भाई, बड़ी मेहनत लगता है।

नतीजा यह कि बस्ती में ले देकर जो ननकू ने कमाई की सो कुल जमा पाँच आने। हाँ, एक आदमी ने अपना जोड़ा भी दिया था कि इसके तले मोटा चमड़ा लगाकर ठीक कर देना।

ननकू का मन इस पर ढीला हो आया। पाँच आने जो मिले, उन्हें दारू में फेंक, बिना कुछ लिए-दिए, खाली हाथ वह घर को वापिस चल दिया। सबेरे आते उसे सरदी लगी थी; लेकिन अब दारू चढ़ाने के बाद बे-कपड़े भी उसे कुछ गरमी मालूम होती थी। हाथ की लकड़ी को धरती पर पटकता हुआ, दूसरे हाथ में जूता-जोड़ा लटकाए, अपने-आपसे बात करता हुआ, ननकू चला जा रहा था।

"कंबल नहीं है, न लोई, तो भी खासी गरमाई आ गई। एक घूंट क्या लिया कि नस-नस की ठंड भी भाग गई। अजी, क्या जरूरत है लोई की। मजे में चल रहा है। फिक्र काहे की। मैं तो ऐसा ही आदमी हूँ, फिक्र नहीं पालता। परवाह क्या, बिना लोई मजे में कट जाएगी। क्या है, अंह, छोड़ो भी। पर बीबी झींकेगी, झिड़केगी...जरूर झिड़केगी। और सच तो है। यह बेशक शर्म की बात है। आदमी दिन भर काम करे और उसे मजदूरी न मिले!...ठहरो, अगर तुम पैसा नहीं देते तो

क्या समझा है ? मैं चमड़ी उधेड़ दूँगा। मेरा नाम ननकू है। क्या ? देने के नाम पाँच आने ! पाँच आने का भला बन क्या सकता है ? सिवा इसके कि चुल्लू ताड़ी पी ली जाए। आए कहने, तंगी है। होगी तंगी। लेकिन हम ? हमारी तंगी भी कोई पूछता है ? तुम्हारे पास मकान है, बगिया है, सब है। मेरे पास जो पहने खड़ा हूँ, वही है। तुम्हारे पास अपनी खेती का नाज है, मुझे एक-एक दाने का पैसा देना होता है। कुछ करूँ, नाज तो चाहिए ही। और खाली रोटी के लिए काम में पसीना बहाता हूँ तो भी नहीं जुड़ती। तीन रुपए की मजदूरी हफ्ते में बनती होगी। हफ्ते का अन्त आया कि चून खतम। वह तो जैसे-तैसे रुपया धेली ऊपर बना लेता हूँ तो काम चलता है, नहीं तो बस राम का नाम। सुनते हो जी, जो हमारा लेना आता है, अभी रख दो। हील-हुज्जत न चलेगी।''

यह कहता-सुनता वह सड़क के मोड़ तक आ गया था। वहाँ था एक शिवजी का मंदिर। देखता क्या है कि शिवालय के पिछवाड़े धौला-सा कुछ दीखता है। दिन का चाँदना धीमा हो रहा था। उसमें ननकू आँख गाड़कर देखने लगा कि वह धौला-धौला क्या है पर उसे पहचान कुछ नहीं आया। सोचा कि जाते वक्त तो यहाँ कोई सफेद पत्थर था नहीं। क्या फिर बैल है ? लेकिन बैल भी नहीं है। सिर तो आदमी का-सा मालूम होता है। पर इतना सफेद! और आदमी का इस वक्त यहाँ काम क्या है ?

पास आया तो साफ-साफ दिखाई देने लगा। अचंभा देखो कि वह सचमुच आदमी था। जीता हो, चाहे मुर्दा, उघाड़े बदन मंदिर की दीवार से सटा बैठा था। हलन-चलन का नाम नहीं। ननकू को डर लग आया। सोचा कि किसी ने उसे मारकर कपड़े खोंस दिए हैं और वहाँ छोड़ दिया है। मैंने कुछ छेड़ा तो मुसीबत में ही पड़ना होगा।

सो वह ननकू देखी-अनदेखी कर आगे बढ़ लिया। वह उधर से फेर देकर निकला जिससे आदमी फिर उसे दिखाई ही न दिया। कुछ बढ़ गया, तब उसने पीछे मुड़कर देखा। देखता क्या है कि वह आदमी दीवार से लगा हुआ, अब झुका नहीं बैठा है, बल्कि चल फिर रहा है। कहीं वह मेरी तरफ तो नहीं देख रहा है।

उसको पहले से भी ज्यादा भय हुआ। सोचा कि मैं वापिस उसके पास चलूँ या कि अपनी राह बढ़ता जाऊँ। पास गया तो क्या मामला निकले। उसमें जोखिम भी हो सकता है। जाने कौन बला है। यहाँ सुनसान में किसी नेक इरादे से तो वह आया न होगा। पास जाने पर हो सकता है कि कूदकर मेरा गला धर दबाए और भागने का भी रास्ता न रहे। यह भी नहीं, तो ऐसे आदमी का मैं करूँगा क्या ? मेरे सिर वह बोझ ही हो जाएगा, और क्या ? नंग-धड़ंग, भला उसमें मेरा होगा क्या ? अपने

बदन के कपड़े तो उतारकर मैं उसे दे नहीं सकता। सो अपने राह मैं चला ही चलूं।

यह सोचकर ननकू बढ़ा ही चला। मंदिर पीछे छूट गया कि तभी उसके भीतर दूसरा खयाल आया। बीच सड़क रुककर उसने अपने से कहा कि ननकू, तू यह कर क्या रहा है? क्या जाने वह आदमी भूखा मर रहा हो, और तू डर के मारे पास से कतराकर निकला जा रहा है। क्या तू भी मालदार हो गया कि चोर-डाकू का डर लगे? ननकू, तेरे लिए यह शर्म की बात है।

2

पास पहुँच जो देखा तो जवान आदमी है, तंदरुस्त और शरीर पर कोई चोट-रोग का निशान नहीं है। पर सरदी के मारे ठिठुरा जा रहा है और सहमा हुआ है। वहाँ दीवार से कमर टिकाए चुपचाप बैठा है, ननकू की तरफ आँख उठाकर नहीं देखता। जैसे कि उसमें इतना दम ही नहीं है। ननकू और पास गया तब उस आदमी को चेत होता मालूम हुआ। सिर मोड़कर उसने आँखें खोलीं और ननकू की तरफ देखा। उस एक नजर पर ननकू तो निछावर हो गया। वह तो जैसे निहाल हो आया और उसके मन को यह आदमी एकदम भा गया। उसने हाथ की जूता-जोड़ी जमीन पर रख दी। दुपट्टा उतारकर वहीं रख दिया और मिर्जई भी उतारने लगा। बोला—

"सुनो दोस्त, कहने-सुनने की बात नहीं है। अब चटपट ये कपड़े पहन डालो।"

कहा और बाँह से पकड़कर उसने अजनबी को उठाया। खड़े होने पर ननकू ने देखा कि उसका शरीर साफ और स्वस्थ है। हाथ-पैर का बनाव सुघड़ और चेहरा भला, भोला और सुंदर है। ननकू ने अपनी मिर्जई उसके कंधे पर डाल दी। लेकिन उस भले आदमी को आस्तीन में बाँह करना न आया। खैर, ननकू ने खुद मिर्जई पहना दी। दुपट्टा लपेट दिया और जूता पहना दिया।

ननकू ने सिर की टोपी भी उतार उसको दे देनी चाही। लेकिन इसमें उसके अपने सिर को ही ठंडी लगती। उसने सोचा कि एह, मेरा सिर गंजा है और उसके बड़े-बड़े घुंघराले बाल हैं। इससे टोपी अपने सिर पर ही रहने दी। बोला, "अच्छा दोस्त, अब जरा चलो-फिरो। ऐसे गरमी आएगी। बाकी फिर देखेंगे। चल सकते हो न?"

अजनबी खड़ा हो गया और सदय भाव से ननकू को देखने लगा। लेकिन मुँह खोलकर शब्द वह कुछ भी नहीं कह सका।

ननकू ने कहा, "भाई, बोलते क्यों नहीं हो? यहाँ सरदी बहुत है। ठिठुर जाओगे। चलो, घर चलें। यह लो लकड़ी। चला न जाए तो उसे टेकते चलो। लेकिन बढ़े चलो, बढ़ाओ कदम।"

आदमी चल पड़ा। वह ऐसे चला जैसे कदम तिरते हों। उसके किसी से पीछे रहने की तो बात न थी।

चलते-चलते ननकू ने पूछा, "भाई, तुम हो कहाँ के?"

"मैं इस तरफ का नहीं हूँ।"

"यही मैं सोचता था। इधर के लोगों को मैं पहचानता हूँ पर यहाँ तुम शिवाले के पास कैसे आन पहँचे?"

"मालूम नहीं।"

"किसी ने तुम्हें लूटा-ठगा तो नहीं है?"

"नहीं, सब ईश्वर का दंड है?"

"सो तो है ही। वह सबका मालिक है। तो भी कुछ खाने और कहीं सिर टेकने को जगह पाने की तदबीर तो करनी ही होगी न। तुम्हें जाना कहाँ है?"

"मुझे सब जगह समान हैं।"

ननकू को अचरज हुआ। आदमी वह दुष्ट नहीं मालूम होता था। कैसा मीठा बोलता था। लेकिन उसका अता-पता जो न था। तो भी ननकू ने सोचा कि कौन जानता है कि बेचारे के साथ क्या अनहोनी हुई हो।

यह सोचकर उस अजनबी आदमी से उसने कहा, "अच्छा, ऐसा है तो मेरे साथ घर चलो। वहाँ थोड़ा आराम करना, फिर देखा जाएगा।"

यह कहकर ननकू घर की तरफ चल दिया। नया आदमी साथ-साथ था। हवा तेज हो चुकी थी। ननकू को अकेले कुरते में सरदी लग आई। नशा छूट रहा था और अब ठंड ज्यादा सताती थी। तो भी सीटी बजाता अपने वह चला जाता था। पर रह-रहकर उसे सोच होता था कि घर में कैसे बीतेगी? चला था कंबल लेने और आ किस हाल में रहा हूँ। खाली हाथ तो हूँ ही, तिस पर बदन की मिर्जई बदन पर नहीं है और भी बढ़कर यह कि साथ एक आदमी लिए हुए जिसका अता-न-पता और जिसके पास कपड़ा न लत्ता। मन्नो भी क्या कहेगी? निश्चय ही बहुत खुश तो वह होनेवाली है नहीं।

यह सोच-सोचकर उसका मन बैठ जाता था। पर जब वह इस अजनवी आदमी की तरफ देखता, और उसकी हालत को और भीगी कृतज्ञ निगाह को याद करता तो उसे खुशी और हौसला भी होता था।

3

उस दिन सबेरे ही ननकू की बीबी ने सब काम पूरा कर लिया। पानी ले आई, बच्चों को खिला-पिला दिया, खुद खा-पीकर निबट चुकी और चौका-बासन भी सब कर

डाला। फिर बैठी सोचने लगी कि शाम को खाना बनाऊँ कि नहीं। अभी रोटी तो काफी बची हैं अगर कहीं ननकू ने बस्ती में ही कुछ खा-पी लिया तो फिर यहाँ क्या खाएँगे? फिर तो कल के लिए भी यही रोटी चल जाएँगी।

यह सोचकर उसने बची रोटियों को हाथों पर लेकर जैसे तोला। बोली, "बस, अब आज और नहीं बनाऊँगी। घर में आटा भी बहुत नहीं बचा है। तो भी यह इतवार तो इसमें निकालना ही है।"

सो मानवती ने रोटी अलग ढककर रख दी और पति का कुरता ठीक करने बैठ गई। काम करती जाती थी और सोचती जाती थी, "जाड़ों के लिए वह लोई भी खरीदकर लाते होंगे।" वह सोचने लगी, पर कहीं दुकानदार उन्हें ठग न ले। वह सीधे बहुत हैं। छल-कपट जानते नहीं। एक बच्चा भी उन्हें बेवकूफ बना सकता है। दस रुपए पास हैं—कोई कम रकम नहीं है। लोई और दोहर उतने में दोनों हो सकते हैं। बिना कपड़े जाड़ों में चलेगा कैसे? लोई हो गई तो ठीक हो जाएगा। नहीं तो बाहर कहीं निकलने के लायक भी हम नहीं। पर देखो जी, उनको भी कि जो था सब कपड़ा अपने बदन पर वही लेते गए। कुछ नहीं छोड़ गए। मेरी मिर्जई भी नहीं छोड़ गए। कब आएँगे? ऐसे बहुत सबेरे तो नहीं गए। पर वक्त है, अब उन्हें आना ही चाहिए। ओ राम, कहीं बहक न गए हों। ताड़ी की गंध...."

यह सोच रही थी कि बाहर दरवाजे पर कदमों की आहट हुई। सुई को वहीं कपड़े में उड़स मानवती उठकर दरवाजे की तरफ लपकी। देखती क्या है कि एक छोड़ दो आदमी हैं। एक तो ननकू है, दूसरा उसके साथ कोई और भी है। उसके सिर पर टोपी है नहीं, और ऊँचे जूते चढ़ाए हुए है।

मानवती ने फौरन ताड़ लिया। ताड़ी की गंध आती थी। सोचा कि हजरत ने पी दीखती है। और जब देखा कि बदन पर मिर्जई नहीं है, दुपट्टा नदारद है, लोई-वोई भी कोई साथ नहीं दीखती है, और आकर सिमटे-से चुप खड़े हैं, तो उसका दिल निराशा से टूट आया। उसने सोचा कि मालूम होता है कि रुपया सब दारू पर उड़ा डाला है और कहीं के उठाईगीर इस आदमी के साथ मौज-चैन उड़ाई गई है और उसे ले आए हैं मेरे सिर पटकने को।

द्वार की राह छोड़ उसने दोनों को अंदर जाने दिया। पीछे खुद आई। देखा कि दूसरा आदमी नाजुक बदन का है, जवान है, और मेरी मिर्जई उसके तन पर है : नीचे उसके कुरता न कमीज, न सिर पर टोपी। आकर सींक-सा सीधा खड़ा हो गया है, न हिलता है न ऊपर देखता है। मानवती ने सोचा कि जरूर कोई बदकार है। नहीं तो ऐसा डरता क्यों?

वह गुस्से में एक तरफ खड़ी हो गई, कि देखूँ, ये क्या करते हैं।

ननकू ने टोपी उतारी और खटिया पर ऐसे आ बैठे, जैसे कोई खास बात न हुई हो, सब ठीक ही ठाक हो।

बोला, "मन्नो, खाना हो तो लाओ कुछ दो न?"

मानवती कुछ बुदबुदाकर रह गई। हिली-डुली तक नहीं। एक को देखा, फिर दूसरे को देखा। फिर माथा पकड़ चुप रह गई। ननकू ने देखा कि पत्नी बिगड़ी हुई है। उसने इस बात को दरगुजर कर देना चाहा, जैसे कुछ न हुआ हो। अपने साथी की बाँह पकड़कर कहा—अरे, बैठो भी। अब कुछ खाओगे कि नहीं।

सो वह अजनवी आदमी भी पास ही खाट पर बैठ गया।

ननकू ने कहा, "कुछ हमारे लिए क्या पकाकर रखा है? न हो तो वैसा कहो।" मानवती का गुस्सा उबल पड़ा। बोली, "रखा है पकाकर, पर तुम्हारे लिए नहीं। मालूम होता है कि अकल तो तुम दारू के साथ पी आए हो। लेने गए थे लोई-कपड़े, आए तो पास की मिर्जई भी गायब। फिर साथ में लिए आ रहे हैं जाने किस उठाईगीर को, पास जिसके तन पर ढंकने को भी चिथड़ा नहीं।"

"बस, बस करो,मानवती। बेमतलब ज्यादा जबान नहीं चलाया करते। भला, पूछ तो लिया होता कि ये कैसे आदमी हैं, कौन है—

"तो लो, पहले पूछती हूँ कि बताओ तुमने रुपयों का क्या किया है?"

ननकू ने जेब से पाँच का नोट निकाला और तह खोलकर सामने कर दिया।

"यह पाँच का नोट है। बंसी ने कुछ दिया नहीं। जल्दी देने को कहता है।"

मानवती का गुस्सा कम नहीं हुआ। देखो न, लोई तो लाना कैसा, खुद अपनी मिर्जई जो तन पर रहने दी हो। वह भी इस फकीर को दे डाली। फिर उसी को साथ लेते आए हैं घर!

उसने नोट को ननकू के हाथ से झपट लिया और सँभालकर उसे अंदर रखने चली गई। बोली "मेरे पास नहीं है खाना देने को। दुनिया के तमाम नंगे बदकारों को खिलाने को कोई मैं ही नहीं रह गई हूँ।"

"सुनो मुन्नो, जरा तो चुप रहो। कुछ दूसरे आदमी की भी सुनो।"

"बड़ी सुनूँ। नशेबाज से मिल गई बड़ी अकल। जभी तो मैं तुम्हें ब्याहना नहीं चाहती थी। शराबी बदखोर! मेरी माँ ने जो दिया, सब पी डाला। अब लोई लेने गए, उसे भी पीकर खत्म किया।"

ननकू ने बहुतेरा कहना चाहा कि कुल पाँच आने पैसे मैंने खर्चे हैं, और कि कैसे और कहाँ यह आदमी मिला और क्यों साथ है। लेकिन मानवती ने न एक कहने दी, न एक सुनी। वह एक के बदले दस कहती थी। और दसियों बरस पुरानी जाने कहाँ-कहाँ की गड़ी बातें उखाड़कर बीच में ले आती थी।

बकते-झींकते उसने तेजी में आकर ननकू को बाँह से पकड़ खींचा। कहा कि लाओ, मेरी मिर्जई दो। यह अकेली तो मेरे पास है, उसे भी छीन ले गए, हां—तो, और दूसरे को दे डाला। अभी मैं उतरवा लूँगी। समझते हो ?—अभी,अभी। सत्यानासी कहीं के!

ननकू ने कहा, "ले,ले।"

और उसने जोर से झिटककर अपना कुरता बदन से खींच उतारा।

मानवती चिल्लाई, "इसका क्या करूँगी मैं, नास-जाए!"

लेकिन तैश में ननकू ने कुरता तन से उतार ही डाला और अलग खींचकर उसे मानवती के सिर पर दे मारा।

मानवती कुरते को लेकर झींकने लगी। वह सामने से चली जाना चाहती थी, पर नहीं भी चाहती थी। असल में किसी तरह गुस्सा निकालकर वह खत्म कर देना चाहती थी। गुस्से में उसे तसल्ली नहीं थी। और यह भी उसे मालूम हो रहा था कि इसमें उस बिचारे दूसरे आदमी का कोई कसूर तो है नहीं।

4

आखिर रुककर बोली, "अगर वह भलामानस होता तो उघाड़े बदन न होता। उसकी देह पर कुरता तक तो नहीं है। और ठीक-ठिकाना होता तो तुम्हीं न बतला देते कि कहाँ और कैसे मिला ?"

ननकू, "यही तो बतला रहा हूँ। सड़क का वह पहला मोड़ पड़ता है कि नहीं, वहीं शिवाले पर मैं पहुँचा कि यह आदमी वहाँ बैठा था। बे-कपड़े, मारे जाड़े के ठिठुरा जा रहा था। भला यह मौसम है बदन उघाड़े बैठने का ? यह तो ईश्वर की मर्जी जानो कि मैं वहाँ पहुँच गया। नहीं तो यह बचता नहीं। तब मैं क्या करता ? हमें किसी के मन का या करनी का क्या पता है ? न जाने क्या किसी के साथ बीती हो। सो मैंने उसे ढारस दिया, कपड़ा दिया और उसे साथ ले आया। इस पर गुस्सा मत करो, मानो! गुस्सा पाप है। आखिर एक दिन हम सबको काल के गाल में चले जाना है कि नहीं ?"

मानवती के मुँह तक फिर क्रोध के वचन आए, लेकिन उस नए आदमी को देखकर चुप रह गई। वह खटिया की पाटी पर बैठा था। हिलना न डुलना, बाहों में घुटने पकड़े, सिर छाती पर डाले, आँखें बंद, ऐसा बैठा था कि शिथिल। माथे पर भौहों के बींच जैसा उसके डर की सिकुड़न थी। सो देख मानवती चुप रह गई।

ननकू ने कहा, "बताओ, तुम्हें बिलकुल ईश्वर का खयाल नहीं है।"

मानवती ने ये वचन सुने। फिर नए आदमी को देखा तो एकाएक उसका जी

उसकी तरफ कोमल हो आया। वह अंदर गई और चौके में से खाने को ले आई। वहीं खाट पर थाली रख दी और पानी के गिलास भी रख दिए।

बोली, "लो, भूख हो तो यह लो। अब खाते क्यों नहीं ?"

ननकू ने अपने साथी को कहा, "सुनते हो, भाई, लो शुरू करो।"

रोटी तोड़ी और मठे के साथ मिलाकर दोनों जने खाने लगे। मानो आँगन में बोरी डाल, अलग बैठ गई और हथेली पर सिर रखे वह इस अजनवी को देखने लगी। देखते-देखते इस आदमी के लिए उसके मन में करुणा भर आई। जैसे उस पर प्यार हो आने लगा। इसी समय उस आदमी का चेहरा खिल आया। भवें पहले की तरह सिकुड़ी न रहीं, आँखें उठाकर उसने मानो की तरफ और मुस्करा दिया।

मानो का जी हल्का हो गया। खाने के बरतन उसने हटा दिए और फिर उस नए आदमी से बातचीत करने लगी।

पूछा, "कहाँ के रहनेवाले हो ?"

"यहाँ का नहीं हूँ।"

"फिर इस राह कैसे आ लगे ?"

"कुछ कह नहीं सकता।"

"ऐसा हाल तुम्हारा क्यों है ? किसी ने लूटा-लाटा तो नहीं है ?"

"जी, सब दंड परमात्मा का है।"

"और वहाँ तुम नंगे पड़े थे ?"

"जी, कपड़े बिना ठिठुरा जाता था। इन्होंने मुझे देखा और याद की। अपने कपड़े उतारकर मुझे दे दिए और यहाँ अपने घर में ले आए और आपने मुझे यहाँ भोजन दिया और मुझ पर कृपा की। ईश्वर आपकी बढ़वारी करेगा।"

मानवती उठी और जो ननकू का कुरता सँभाल रही थी, लाकर इस आदमी को दे दिया। साथ कहीं से धोती-जोड़ा भी निकाल लाई।

बोली, "यह लो, भाई। पहन लो। अच्छा सोओगे कहाँ। खैर, जगह पड़ी है, पुआल है ही। सो जी चाहे जहाँ सोओ।"

उसने कपड़े पहन लिए और जाकर भीतर कोठरी में पुआल पर लेट गया। मानो ने फिर घर की चीज-बस्त सँभाली, और दीया बुझाकर वह भी खटिया पर पहुँच गई।

उसी चीथड़ा रजाई को पति-पत्नी दोनों जने ऊपर ले लेट रहे। लेकिन मानवती को नींद न आई। वह आदमी उसके मन से बाहर ही नहीं होता था। सोचती थी कि घर में सब रोटी खतम हो गई हैं। कल को चून भी नहीं बचा है और ले-दे के जो कपड़े बचे थे, सो उसको दे देने पड़े हैं। इस पर थोड़ा उसका मन मन्द होता था।

लेकिन जब उस आदमी की मुस्कराहट की याद आती थी, तो मन खुशी से खिलने को होता था।

सो देर तक मानवती जागती रही। देखा कि ननकू भी जग रहा है। रजाई उसने उसकी तरफ करके कहा—

"ननकू!"

"हाँ!"

"रोटी तो सब चुक गई। चून दो-एक मुट्ठी बचा होगा। अब कैसे होगा? झुनिया मौसी से आटा उधार लेना होगा, और क्या?"

"अरे, जो जिलाता है, वह पेट भरने को भी देगा।"

स्त्री फिर कुछ देर सोचती जगती पड़ी रही। अनंतर बोली, "आदमी वह भला मालूम होता है। फिर बताता क्यों नहीं कि है कौन?"

"कोई बात होगी।"

"ननकू!"

"हाँ।"

"क्यों जी, हम देते हैं तो फिर हमें कोई कुछ क्यों नहीं देता?"

ननकू को इसका कोई जवाब नहीं जुड़ा। उससे बोला, "ऊँह, छोड़ो भी, सोओ, सोओ।" और करवट ले वह सो चला।"

5

सबेरे ननकू उठा। बच्चे अभी सोए थे। स्त्री कहीं पड़ोस में आटे का बंदोबस्त करने गई थी। साथ का आदमी अकेला ओसारे में उन्हीं कपड़ों में बैठा आसमान को देख रहा था। चेहरा उसका खुला हुआ और खुश था।

ननकू ने कहा, "सुनो दोस्त, पेट को खाना चाहिए, तन को कपड़ा। इसके लिए उपाय है मेहनत। सो काम से रोजी चला करती है। बोलो, कुछ काम-धाम जानते हो?"

"जानता तो मैं कुछ नहीं हूँ।"

ननकू को यह सुनकर अचरज हुआ। लेकिन बोला, "कोई सीखनेवाला हो तो सब सीख सकता है।"

"अच्छी बात है। सब काम करते हैं, मैं भी करूँगा।"

"तुम्हारा नाम क्या है?"

"नाम!—मंगल।"

"अच्छा मंगल, तुम अपनी बाबत कुछ नहीं बताते हो, जाने दो। तुम जानो

तुम्हारा काम! लेकिन गुजारे के लिए उद्यम तो कुछ करना होगा न। जैसे मैं बताऊँ करते चलोगे तो तुम्हारे रहने और खाने-पीने के बंदोबस्त में हमें कोई अड़चन नहीं होगी।''

''परमात्मा की दया हुई तो मैं काम सीखता जाऊँगा। भगवान् आप का भला करें। मुझे बताते जाइए।''

ननकू ने सूत लिया, पैर के अँगूठे से बाँधा, और उसे बटने लगा। बोला, ''देखते हो न? कुछ भी तो मुश्किल नहीं है।''

मंगल गौर से देखता रहा। फिर उसी तरह अँगूठे में सूत बाँध वह भी बटने लगा। न-कुछ में यह उसे आ गया और सूत उसने अच्छा बट लिया।

फिर ननकू ने बताया कि कैसे मोम से इसे चिकना करते हैं। यह भी मंगल सीख गया। फिर बताया कि कैसे फंदा डालते हैं, कैसे सीते हैं। यह भी मंगल आसानी से सीखता चला गया।

ननकू जो बताता, मंगल झट समझ जाता। तीन दिन के बाद तो मंगल ऐसा काम करने लगा मानो जिंदगी भर यही काम करता रहा हो। लगन से सब दिन वह यही किया करता और थोड़ा खाता। काम के बाद अपने चुपचाप आसमान की तरफ देखने लगता। वह शायद ही कहीं इधर-उधर जाता था। बस काम जितनी बात करता था। न हँसी, न मजाक, न कुछ। पहले दिन जब मानवती ने उसे खाने को दिया था, उस वक्त को छोड़कर फिर वैसी मुस्कराहट भी उसके चेहरे पर नहीं दीखी।

6

दिन पर दिन चलते गए। इस तरह साल निकल गया। मंगल ननकू के साथ रहता और काम करता। उसका नाम सरनाम हो चला था। लोगों में हो गया था कि ननकू का आदमी यह मंगल जैसे जूते सीता है, वैसा आस-पास क्या दूर तक भी कोई नहीं सी सकता। काम ऐसा खूबसूरत और मजबूत और सुबुक कि क्या बात। सो ननकू के यहाँ दूर-दूर के लोग जूते बनवाने आने लगे। इससे ननकू की हालत सुधर आई और खुशहाली बढ़ने लगी।

एक बार जाड़ों के दिन थे। ननकू और मंगल काम करने बैठे थे। तभी दो घोड़ों की बग्घी टनन-टनन करती हुई उनके गाँव में आई। उन्होंने झाँककर देखा। देखते क्या हैं कि बग्घी उनके द्वार पर आकर रुक गई है और वर्दीदार कोचवान ने गाड़ी के रुकते ही चट से नीचे कूदकर दरवाजा खोल दिया है। दरवाजे में से कीमती कपड़े पहने कोई रईस आदमी उतरे। और उसी घर की तरफ बढ़े। मानवती ने झटपट आकर अपने घर के दरवाजे चौपट खोल दिए। सज्जन को अंदर आने के लिए

दरवाजे में झुकना पड़ा। फिर आकर जो खड़े हुए तो सर उनका छत को छूता मालूम होता था और जैसे वह सारी जगह उनसे भर गई थी।

ननकू ने उठकर सलाम किया। वह अचंभे में इन्हें निहार रहा था। इनके जैसा आदमी उसने नसीब में नहीं देखा था। वह खुद दुबला था। मंगल की देह भी इकहरी थी और मानवती के तो हाड़ निकल रहे थे। पर यह सज्जन जैसे दूसरी दुनिया के थे। चेहरा सुर्ख, दोहरी देह, गर्दन ऐसी कि क्या पूछिए। पूरे देव मालूम होते थे।

सज्जन ने ऊपर का चोगा उतारा नहीं कि उसे पास खड़े नौकर ने हाथों-हाथ सँभाल लिया। वह बोले, ''तुममें कौन है जिसका जूता मशहूर है ?''

ननकू ने आगे बढ़कर और झुककर कहा:, ''जी, हाजिर हूँ।''

तब सज्जन ने पुकारकर कहा, ''ऐ छोकरे, वह चमड़ा इधर तो लाओ।''

नौकर चमड़े का बंडल लेकर दौड़ा आया।

''खोला।''

नौकर ने खोला। सज्जन ने छड़ी से चमड़े को दिखाते हुए कहा, ''देखते हो, यह चमड़ा है।''

''जी।''

''जी नहीं, जानते हो कैसा चमड़ा है ?''

ननकू ने हाथ से टटोलकर चमड़े को देखा। बोला, ''अच्छा चमड़ा है।''

''अच्छा है! बेवकूफ, ऐसा कभी तुमने अपने जनम में देखा भी है ? असल जर्मनी का है अकेला वह टुकड़ा बीस रुपए का है।''

ननकू सहमकर बोला, ''जी, ऐसा चमड़ा हमें कहाँ देखने को मिलता है, हुजूर।''

''हाँ, सो ही तो। अच्छा इसके जूते तैयार कर सकोगे ?''

''जी, हुजूर! कर सकूँगा।''

यह सज्जन जोर से बोले, ''कह दिया, सकूँगा। अरे, कर भी सकोगे ? याद रखना कौन कह रहा है और क्या चमड़ा है। समझे ? ऐसा जूता बनाना होगा कि साल भर पूरा चले। न उधड़े न बिगड़े। कर सकते हो, तो लो चमड़ा और शुरू करो। नहीं कर सको तो सीधे कहो। समझते हो न, अगर साल भर के अंदर जूते में उधड़न आ गई या उनकी शकल बिगड़ चली तो तुम हो और जेलखाना। क्या समझे ? और जो वह फटे नहीं और शकल भी कायम रही, तो काम के तुम्हें दस रुपया मिलेंगे। सुना ?''

ननकू तो रोब के मारे डर गया था। उससे जवाब नहीं दिया गया। उसने मंगल

को देखा और धीमे से कोहनी मारकर मानो उससे पूछा, "क्या कहते हो ? यह काम ले लूँ?"

मंगल ने सिर हिला दिया, जैसे कहा कि हाँ, ले लो।

मंगल की कही मानकर ननकू ने काम ले लिया। वादा किया कि जूते तैयार कर दूँगा कि साल में न एक उनकी सीवन जाएगी, न शकल में फरक आएगा।

तब नौकर को बुलाकर सज्जन ने कहा, "ए, हमारे पैर का यह जूता उतारो तो।" यह कहकर बाईं टाँग उन्होंने आगे बढ़ा दी। फिर ननकू से कहा, "देखते क्या हो ? लो अपना नाप लो।"

ननकू ने कागज लिया। उसे धरती पर हाथ से बार-बार चपटा किया। झुका, अपने कुरते से अच्छी तरह हाथ पोंछे कि सज्जन के मोजे मैले न हो जाएँ, और नाप लेना शुरू किया। तली नापी, टखना नापा और पिंडली का नाप देखने लगा। पर कागज उसका छोटा निकला। पिंडली की मोटाई इतनी थी कि कागज ओछा रहा।

"देखना, नाप कहीं इस जगह सख्त न हो जाए।"

ननकू ने उसमें फिर दूसरा कागज जोड़ा। सज्जन मोजे में से अपना अँगूठा चला रहे थे और वहाँ खड़े लोगों को देख रहे थे। इसी दरमियान उनकी नजर मंगल पर पड़ी।

"ऐ, यह कौन है ?"

"हुजूर, यह मेरा आदमी है। यही जूते सिएगा।"

सज्जन ने मंगल को कहा, "यह! अच्छा, सुनते हो जी तुम, देखो भूलना नहीं कि जूते पूरे साल भर चलें। नहीं तो..."

ननकू ने अचरज से मंगल को देखा। देखा कि मंगल जैसे उन रईस को देख ही नहीं रहा है, बल्कि उनके पार जाने कहाँ देख रहा है। जैसे पार पीछे कुछ सचमुच हो। उधर देखते-देखते मंगल एकाएक मुस्करा आया और उसके चेहरे पर चमक झलक गई।

उस सज्जन ने गरजकर कहा, "दाँत क्या निकालता है, बेवकूफ! खयाल रखना, वक्त तक जूते तैयार हो जाएँ। सुना न।"

मंगल ने कहा, "जी, समय पर तैयार लीजिए।"

"हाँ—तैयार!"

यह कहा, जूते पहने, चोगा चढ़ाया और दरवाजे की तरफ बढ़े। लेकिन झुकने की याद न रही और दरवाजे की चौखट खट् से सिर में लगी।

झुंझलाकर उन्होंने गाली दी और सिर मलते हुए गाड़ी में बैठ चलते बने।

चले गए तो ननकू ने कहा, "क्या खूब, आदमी हो तो ऐसा हो। डील-डौल

ऐसा कि देव! एक बार घन पड़े तो शायद पता न चले। ऐसी देह! देखो न, सिर लगा तो चौखट टूटते बच गई। पर सिर का कुछ न बिगड़ा।''

मानवती बोली, ''जो खाएगा-पीएगा वह मजबूत न होगा तो क्या तुम होगे। ऐसी शिला को तो मौत भी छूते बचे!''

7

उनके चले जाने पर ननकू मंगल से बोला, ''दोस्त, काम ले तो लिया; पर कहीं मुसीबत में न फँसना पड़े। चमड़ा कीमती है और आदमी तुम समझो वह मुलायम नहीं है। सो काम में कोई नुक्स नहीं रहना चाहिए। सुना न? तुम्हारी आँख सही और हाथ सच्चे हैं। मैं तो फूहड़ हुआ। इससे भाई, इस चमड़े की काट-कूट को तुम्हीं सँभालो। मैं इतने तले सिए डालता हूँ।''

मंगल ने वह चमड़ा ले लिया। उसे बिछाया, मोड़ा और रापी लेकर काटना शुरू कर दिया।

मानवती आकर देखने लगी। देख रही थी कि उसे अचरज हुआ। उसने बूट बनते देखे थे, लेकिन मंगल बूट के ढंग पर चमड़े को नहीं काट रहा था, और ही तरीके पर काटने लगा था।

उसने रोककर कहना भी चाहा, लेकिन फिर सोचा कि मैं ज्यादा तो जानती नहीं शायद कोई खास बूट इसी तरह से बनते हों। और मंगल खुद होशियार है, सो मुझे दखल नहीं देना चाहिए।

चमड़ा काट चुका तो मंगल ने सीना शुरू किया। लेकिन दोहरी सिलाई नहीं की, जैसे कि बूट सिए जाते हैं। बल्कि इकहरी सिलाई शुरू की, जैसे कि सुबुक काम के या बचकाने स्लीपर सिए जाते हैं।

ननकू ने यह देखा तो उसके मन में बड़ा पछतावा हुआ। सोचा कि मंगल साल भर मेरे साथ रहा है, कभी उसने गलती नहीं की। अब यह उसको हो क्या गया है? वह ऊँचे पूरे बूट को कह गए थे और मंगल ने इकहरी तली के सुबुक स्लीपर बना डाले हैं। ऐसे सारा चमड़ा खराब हो गया अब उनको मैं क्या जवाब दूँगा। ऐसा दूसरा चमड़ा कहाँ से लाकर दूँगा।

बोला, ''यह कर क्या रहे हो, मंगल! तुमने तो सारा नाश करके रख दिया। उन्होंने ऊँचे-ऊचें पूरे बूट के लिए कहा था और यह तुमने क्या बनाकर रख दिया है।''

ऐसा सख्त-सुस्त सुना कर चुका होगा कि बाहर से किसी के आने की आहट हुई। इतने में तो अपने द्वार पर ही कुंडे की खटखटाहट सुनाई देने लगी। देखें तो

घोड़े पर सवार कोई आया है।

किवाड़ खुले और उन सज्जन के साथवाला वही आदमी सामने दिखाई दिया। बोला, ''जय रामजी की, चौधरी।''

''जय राम जी की भाई'', ननकू बोला, ''कैसे आना हुआ?''

''मालकिन ने जूतों की बाबत मुझे भेजा है।''

''जूतों की बाबत! क्या मतलब?''

''अब बूटों की जरूरत नहीं है। क्योंकि मालिक तो रहे नहीं, उन्होंने प्राण छोड़ दिए।''

''क्या—आ!''

''वह यहाँ से घर तक भी नहीं पहुँच सके, गाड़ी में ही मौत ने ले लिया। घर पहुँचकर हम सबने जो उन्हें उतारना चाहा तो देखते क्या हैं कि वह बोरों की तरह लुढ़क रहे हैं। उनमें जान नहीं रह गई थी। बदन ऐसा अकड़ गया था कि जैसे-तैसे गाड़ी से बाहर उन्हें लिया जा सका। मालकिन ने मुझे यहाँ भेजा है कि जूतेवालों से कहना कि बूट जिन्होंने बनवाए थे, उन्हें अब उनकी जरूरत नहीं रही। लेकिन अब उनकी जगह मुलायम इकहरी स्लीपर तैयार कर दें। कहा है, जब तक वे तैयार न हों वहीं रहना और साथ लेकर आना। सो इस वास्ते मैं आया हूँ।''

इस पर मंगल ने बचे-खुचे चमड़े को समेटा, स्लीपर लिए-दोनों की तह की, आस्तीन से फिर एक बार पोंछकर उन्हें साफ कर दिया, और दोनों चीज उस आदमी के हवाले कीं।

''अच्छा, जय रामजी की चौधरी।'' कहता हुआ वह आदमी चला गया।

8

दूसरा साल निकला, फिर तीसरा। इस तरह ननकू के साथ रहते मंगल को छह साल हो गए। वह पहले की तरह रहता था। इधर-उधर कहीं जाता नहीं था, जरूरत पर बोलता था। उस सब काल में वह सिर्फ दो बार मुस्कराया था। एक जब कि मानवती ने उसे खाना दिया था, दूसरे जब वह रईस यहाँ आए थे। ननकू उससे बहुत खुश था और अब ज्यादा सवाल उससे नहीं पूछता था। उसे ख्याल था तो यही कि मंगल पास से कहीं चला न जाए।

एक दिन सब जनें घर में थे। मानवती खाने की तैयारी कर रही थी, बच्चे खेल रहे थे, ननकू एक तरफ बैठा सी रहा था और मंगल एक जोड़ी की एड़ी नई कर रहा था।

इतने में एक लड़का भागा आया और मंगल की कमर पर आ कुदा। बोला,

"चाचा, ओ चाचा, देखो कौन आ रही हैं। छोटी दो लड़कियाँ भी हैं। यहीं आ रही मालूम होती हैं। ओ चाचा ओ, एक लड़की लंगड़ी चलती है।"

लड़के के यह कहने पर मंगल ने औजार नीचे रखे और सब काम छोड़ द्वार से बाहर देखने लगा।

ननकू को इस पर अचरज हुआ। मंगल कभी भी आँख उठाकर बाहर की तरफ नहीं देखता था। लेकिन अब तो जाने क्यों वह एकटक देख रहा था। ननकू ने भी उझककर बाहर देखा। देखता क्या है कि सचमुच एक स्त्री अच्छे कपड़े पहने उसी के घर की तरफ चली आ रही है। हाथ पकड़े दो लड़कियाँ हैं। ऊनी, गरम, सलीके के कपड़े पहने हैं और कंधों पर दुशाला पड़ा है। लड़कियाँ दोनों एक-सी हैं। एक को दूसरे से पहचानना मुश्किल है। लेकिन दोनों में एक का बायाँ पैर खराब है और वह लंगड़ा कर चलती है।

वह स्त्री उन्हीं के ओसारे में आई। आगे-आगे लड़कियाँ थीं, पीछे वह। आकर स्त्री ने उन लोगों को अभिवादन किया।

ननकू ने कहा, "आइए, आइए। हमारे लायक क्या काम है?"

स्त्री बेंच पर बैठ गई। दोनों लड़कियाँ भी उसके घुटने से चिमट बैठीं। वे जैसे यहाँ इन लोगों के बीच डर गई थीं।

"मैं इन दोनों बच्चियों के लिए जूते बनवाना चाहती हूँ। जरा मुलायम होने चाहिए, गरमियों के लायक।"

"जरूर लीजिए, जरूर। ऐसी बचकानी जोड़ी हमने बनाई तो नहीं है लेकिन बना देंगे। रुंएदार, सादे या फैंसी, जैसे कहें। मेरे आदमी इस मंगल के हाथ में हुनर है—"

कहकर ननकू ने मंगल को देखा। देखता क्या है कि मंगल का तो काम-धाम सब छूट गया है और उसकी निगाह उन लड़कियों पर जम गई है! ननकू को अचंभा हुआ। लड़कियाँ नन्हीं-नन्हीं बड़ी सुंदर थीं। काली आखें, गुलाबी गाल और अच्छे कपड़े भी पहने थीं। लेकिन ननकू को समझ न आया कि मंगल यह उन्हें ऐसे क्यों देख रहा— मानो पहले से जानता हो। वह उलझन में पड़ गया, पर महिला से काम की बात भी चलाता जाता था। कीमत पट गई और ननकू पाँव का नाप लेने बढ़ा। स्त्री ने लंगड़ी लड़की को गोद में उठाकर कहा, "इस लड़की के ही दो नाप ले लो। एक लंगड़े पैर के लिए और तीन दूसरे पैर के जूते बना देना। दोनों के एक पाँव हैं। जुड़वाँ बहनें जो ठहरीं।"

ननकू ने नाप लिया और बोला, "जी, ऐसा हो कैसे गया? कैसी सयानी सुंदर लड़की है। क्या जनम से पाँव ऐसा है।"

"नहीं, नहीं, उसकी माँ से ही यह टांग कुचल गई थी।"

इस समय मानवती भी वहाँ आई थी। उसे अचरज हुआ कि यह महिला कौन है और ये बच्चियाँ किसकी हैं। पूछने लगी, "तो क्या तुम इनकी माँ नहीं हो?"

"नहीं, बीबी, मैं माँ नहीं हूँ। नाते में कुछ लगती हूँ। मैं इनको पहले जानती भी नहीं थी। लेकिन अब तो दोनों मेरी गोद में हैं, मेरी हैं।"

"तुम्हारी नहीं हैं, फिर भी तुम इन्हें इतना प्यार करती हो!"

"प्यार नहीं तो और क्या करूँ? दोनों को अपना दूध पिलाकर मैंने पाला है। मेरे अपना भी एक बालक था। ईश्वर ने उसे उठा लिया। पर उसका मुझे इतना प्यार नहीं था जितना इन नन्हियों का मोह मुझे हो गया है।"

"तो फिर ये किसके बालक हैं?"

9

इस तरह एक बार शुरू होना था कि स्त्री पूरी ही कहानी कह चली—

"कोई छह साल होते हैं कि इनके माँ-बाप मर गए। दोनों तीन दिन आगे-पीछे इस धरती से उठ गए। मंगलवार को पिता की अर्थी उठी तो बृहस्पति को माँ ने संसार तज दिया। बाप के मरने के दो दिन बाद इन बेचारे अनाथों ने जन्म लिया। माँ का सहारा तो इनको एक दिन का भी नहीं मिला। हम तब उसी गाँव में रहते थे। हमारे यहाँ खेती होती थी। दोनों हम पड़ोसी थे, हमारे घर के घेरे तो मिले ही हुए थे। बाप इनका अकेला-सा आदमी था और पेड़ काटने का काम करता था। जंगल में पेड़ काटे जा रहे थे कि एक के नीचे वह आ गया। पेड़ ठीक उसके ऊपर आकर गिरा। और वह पिच गया, आंत बाहर आ गई फिर दम निकलना कै घड़ी की बात थी। घर तक ला न पाए कि जान जा चुकी थी। उसके तीसरे दिन माँ ने इस जुगल जोड़ी को जन्म दिया। वह अकेली थी और गरीबनी थी। जवान या बुड्ढा, कोई उसका न था। बेचारी अकेली ने इन नन्हियों को जनमा और अकेली जाकर मौत से मिल गई। "

"अगले सबेरे में मैं उसे देखने गई। झोंपड़ी में घुसती हूँ और देखती हूँ कि उस बेचारी की देह तो ठंडी पड़ी थी और अकड़ गई थी । मरते समय दर्द में करवट ली होगी कि उसमें इस बच्ची की टाँग जाती रही। फिर तो गाँव के लोग आ गए। देह को उठा अर्थी पर रखा और क्रिया-कर्म किया। दोनों बेचारे वे नेक आदमी थे। बच्चे उनके बाद अकेले रह गए। तब उनका क्या होता। गाँव में मैं ही थी जिसकी गोद में दूध-पीता बच्चा था। कोई डेढ़ महीने का मेरा पहलौता मेरी छाती से था। इससे उन दोनों को भी मैंने ही ले लिया। गाँव के लोगों ने बहुतेरा सोचा कि क्या हो। आखिर

उन्होंने मुझे कहा कि भगवती, अभी-अभी तो तुम्हीं इन्हें पाल सकती हो। पीछे देखेंगे कि फिर क्या किया जावे। सो मैं छाती का दूध पिलाकर एक बच्ची को पालने लगी। दूसरी को पहले-पहल मैंने दूध नहीं दिया। सोचती थी कि वह क्या बचेगी? लेकिन फिर मैंने खुद ही खयाल किया कि वह बेचारी बेकसूर क्यों दु:ख पाए और भूखी रहे। सो मुझे दया आई और मैं उसे दूध पिलाने लगी। इस भाँति मैं तीनों को, अपने बालक को और इन दोनों को भी, अपनी छाती के दूध से पालने लगी। मेरी भरी उमर थी और मैं तंदुरुस्त थी और खाना अच्छा खाती थी। सो परमात्मा ने इतना दूध दिया कि कभी तो वह अपने आप ही गिरने लगता था। कभी मैं दो-दो को एक साथ दूध देती। एक को पूरा हो जाता, तो तीसरे को ले लेती। अब परमात्मा की लीला कि ये दोनों बच्चियाँ तो पनपती गईं, और मेरा अपना बालक दो बरस का हो न पाया कि जाता रहा। उसके बाद मेरे कोई संतान नहीं हुई, लेकिन हम बराबर खुशहाल होते चले गए। अब मेरा आदमी एक किराने के व्यापारी का एजेंट है। तनख्वाह खासी है और हम लोग मजे में हैं। हमारे अपना कोई बालक नहीं है और ये नन्हीं मुझे न मिल जातीं तो जीवन सूना ही मुझे मालूम होता। सो इनको प्यार के सिवा भला मैं क्या कर सकती हूँ। यही मेरी आँखों की रोशनी हैं और जीवन का धन हैं।''

यह कहकर उस स्त्री ने लंगड़ी लड़की को एक हाथ से गोद में चिपटा लिया और दूसरे से उसके गाल के आँसू पोंछने लगी।

सुनकर मानवती ने साँस भरी। बोली, ''सच है, माँ-बाप के बिना जीना हो सकता है, पर ईश्वर के बिना कोई भी नहीं जी सकता।''

इस तरह वे आपस में बातें करने लगीं कि एकाएक उस जगह जैसे बिजली की रोशनी हो गई हो, ऐसा लगने लगा। सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। देखते हैं कि ज्योति उधर से फूट रही है, जहाँ मंगल बैठा था। सबकी नजर उधर गई। देखते क्या हैं कि घुटनों पर हाथ रखे मंगल बैठा ऊपर की ओर देख रहा है और चेहरे पर उसके मुस्कराहट खेल आई है।

10

महिला लड़कियों को लेकर चली गई। तब मंगल अपनी जगह से उठा। औजार नीचे रख दिए और ननकू और उसकी स्त्री के सामने हाथ जोड़कर बोला, ''अब मुझे विदा दीजिए। ईश्वर ने मेरे अपराध क्षमा कर दिए हैं। जो भूल हुई हो उसके लिए आपसे भी माफी माँगता हूँ।''

सुनकर दोनों जने देखते क्या हैं कि मंगल के चेहरे में एक आभा फूट रही है।

यह देख ननकू मंगल के आगे आ सिर नवाकर बोला, ''मंगल, मैं देखता हूँ तुम साधारण आदमी नहीं हो। न मैं तुम्हें रुकने को कहने लायक हूँ न कुछ पूछने लायक। पर इतना बताओ कि यह क्या बात है कि जब तुम मुझे मिले और मैं तुम्हें घर लाया तब तुम उदास मालूम होते थे। लेकिन मेरी बीबी ने खाना दिया तो तुम उसकी तरफ मुस्करा पड़े और चेहरा खिल गया। उसके बाद फिर जब वह रईस बूट बनवाने आए तब तुम दूसरी बार हँसे और पहले से ज्यादा तुम्हारे चेहरे पर रौनक दीखी। और अब यह श्रीमती अपनी लड़कियों के साथ आई कि तुम तीसरी बार हँसे और ऐसे खिल आए जैसे उजली धूप। मंगल, मुझे बताओ कि तुम्हारे चेहरे पर ऐसी शोभा उन तीन बार क्यों आई? तुम मुस्कराए क्यों?''

मंगल ने उत्तर दिया, ''शोभा इसलिए कि मुझे दंड मिला था, सो अब ईश्वर ने माफ कर दिया है। और मैं तीन बार हँसा, क्योंकि ईश्वर ने मुझे तीन सत्य जानने के लिए यहाँ भेजा था, और अब मैं उन्हें जान गया हूँ। एक मैंने तब जाना जब तुम्हारी स्त्री ने मुझ पर करुणा की। इसलिए पहली बार तो मैं तब हँसा। दूसरा सत्य मैंने जाना-जब वह रईस यहाँ जूते बनवाने आए थे। इससे दूसरी बार मैं उस समय मुस्कराया। और अब इन लड़कियों को देखकर मैंने तीसरा और अंतिम सत्य जान लिया। इससे अब मैं तीसरी बार हँसा हूँ। और मेरा दु:ख कट गया है।''

इस पर ननकू बोला, ''मंगल, हमें बतलाओ कि ईश्वर ने तुम्हें दंड क्यों दिया था और ये तीन सत्य क्या हैं, कि हम भी उन्हें जान सकें।''

मंगल ने जवाब दिया, ''भगवान ने मुझे सजा इसलिए दी कि उनकी आज्ञा मैंने टाली थी। मैं स्वर्ग में एक देवता था, पर मैंने ईश्वर की आज्ञा भंग की। ईश्वर ने मुझे एक स्त्री की आत्मा लेने भेजा था। मैं उड़कर धरती पर आया। देखता हूँ कि स्त्री वह अकेली है, बेहाल पड़ी, और अभी हाल जुड़वा बच्चियों को जन्म दे चुकी है। बच्चियाँ माँ के बराबर पड़ीं अपनी नन्हीं-सी जान से चिचिंयाकर रो रही हैं, पर माँ उन्हें उठाकर छाती तक नहीं ले जा सकती। मुझे देखकर वह समझ गई कि मैं ईश्वर का दूत हूँ और उसे लेने के लिए आया हूँ सो वह रोने लगी। बोली, ''ओ परमात्मा के दूत! मेरे पति की राख अभी ठंडी भी नहीं हुई है। पेड़ गिरने से उसके असमय प्राण गए। मेरे न बहन है, न चाची हैं, न माँ। इन अनाथों को पीछे देखनेवाला कोई नहीं है। देखो, मुझे अभी मत ले जाओ। बच्चों को दूध पिलाकर पाल-पोस देने दो कि वे पैरों चल जाएँ। तब बेखटके ले जाना। तुम्हीं सोचो बच्चे माँ-बाप के बिना भला कैसे रहेंगे?''

''मेरा जी पसीज आया और मैंने माँ की विनती रखी। उठाकर एक बच्ची को मैंने उसकी छाती से लगा दिया, दूसरी को उसकी बाँहों में दे दिया। वापिस आया।

स्वर्ग और ईश्वर के पास पहुँचकर कहा कि मैं उस माँ की आत्मा को नहीं ला सका हूँ। पति उसका एक पेड़ के गिरने से हाल ही में मरा है और उसके अभी दो जुड़वां बच्ची हुई हैं। सो उसका निवेदन है कि अभी मुझे न ले जाओ। कहने लगी कि मुझे बच्चों को पाल-पोस लेने दो कि वे चलने लगें, नहीं तो बच्चे माँ-बाप के बिना कैसे जिएँगे? मैंने इसलिए उन्हें अपना हाथ नहीं लगाया।

''ईश्वर ने कहा, ''जाओ, उस माँ की आत्मा को लो और तीन सत्य सीखो। सीखो कि आदमियों में किस तत्त्व का वास है, आदमी का क्या वश नहीं है, और वह किसका जिलाया जीता है। जब ये तीन बात सीख लोगे तब ही तुम फिर स्वर्ग वापस आ सकोगे।''

''सो मैं उड़कर फिर धरती पर आया और माँ को उठाकर चला। बच्चियाँ तब उसकी छाती से गिर गईं और अंतिम करवट जो ली तो देह उसकी एक बच्ची पर जा रही। उससे उसकी बच्ची की एक टाँग बेकाम हो गई। मैं आत्मा को लेकर ऊपर उड़ा कि ईश्वर के पास ले जाऊँ। पर जाने कैसा एक हवा का चक्कर आया कि मेरे डैने गिरने लगे। मैं उड़ने में असमर्थ हो गया। माँ की आत्मा फिर अकेली ईश्वर की तरफ उड़ गई और मैं धरती पर सड़क के किनारे आ गिरा।''

11

ननकू और मानवती अब समझे कि कौन था जो इन सब दिन उसके साथ घर में रहा-सहा था और घर में खाया-पिया था। वे गर्व और भय से भर आए।

देवदूत ने कहा, ''मैं अकेला पड़ा था। अनजान, न कपड़ा था न कुछ। आदमी होने से पहले मैं सरदी या भूख नहीं जानता था। आदमी की कोई जरूरत नहीं समझता था। लेकिन वहाँ भूख मालूम हुई और मैं ठंड में ठिठुर जाने लगा। जानता नहीं था कि क्या करूँ। तभी पास ईश्वर के नाम पर बनाया गया आदमियों का एक मंदिर मुझे दिखाई दिया। मैं वहाँ गया कि शरण मिलेगी। पर मंदिर में ताला जड़ा हुआ था और मैं अंदर जा नहीं सका। सो हवा की शीत से बचने के लिए मैं मंदिर के पीछे दीवार के सहारे उकड़ूं बैठ गया। साँझ हो रही थी। मैं भूखा था। दर्द और ठंड से बदन मेरा अकड़ जाता था। तभी एकाएक सड़क पर आते हुए एक आदमी की आहट मुझे मिली। हाथ में उसके एक जोड़ी जूते लटके थे और वह अपने आप से बात करता हुआ जा रहा था। खुद आदमी होने के बाद पहली बार मैंने मनुष्य का चेहरा देखा। वह मुझे बड़ा भयानक मालूम हुआ और उधर से मैंने आँखें मोड़ लीं। वह आदमी बात करता जाता था कि कैसे जाड़ों के लिए मुझे कपड़े बनवाने हैं, और बीबी के लिए क्या करना है, और बच्चों के लिए क्या करना है। मैं सोचने लगा कि

मैं यहाँ पास ही सरदी और भूख के मारे मरा जा रहा हूँ और एक आदमी यह है कि अपने और अपनी स्त्री के लिए ही खाने-पहनने की बात सोचता है। वह मुझे मदद नहीं कर सकता। मुझे देखकर उस आदमी की भवें तन गईं और चेहरा भी भयावह हो आया। वह मुझसे कतराकर दूसरी राह निकल गया। मेरी आस टूट चली। लेकिन एकाएक जान पड़ा कि वह लौटा आ रहा है। ऊपर निगाह उठाकर मैंने देखा तो वह वही नहीं दीखता था। पहले उसके चेहरे पर मौत का डर था, अब जीवन वहाँ था और ईश्वर की सत्ता का चिह्न मुझे उस मुख पर मिला। वह आदमी मेरे पास आया। कपड़े दिए और मुझे फिर घर भी ले गया। घर आने पर एक स्त्री मिली और मुँह खुलना था कि वह मर्द से भी ज्यादा भयावनी मालूम हुई। वाणी में उसकी मौत विराजमान थी और उसमें से चारों ओर जो यम की गंध लपटें ले-ले कर फूटती थीं उसमें साँस लेना मुझे दूभर हो गया। बाहर मैं चाहे सरदी में ठिठुर मरूँ, लेकिन मुझे वह अपने घर से निकाल बाहर करने को तैयार थी। मैं जानता था कि अगर ऐसा हुआ तो इसमें उसका अनिष्ट है। लेकिन पति का उसे ईश्वर की याद दिलाना था कि वह स्त्री एकदम बदल गई। फिर वह मेरे लिए खाने को लाई और मुझे करुणा की आँखों से निहारा तब मौत का वास उसमें नहीं था, और उसमें विद्यमान ईश्वर की महिमा मुझे दिखाई दे आई। उस समय मुझे पहली सच्चाई की बात याद आई। ईश्वर ने कहा था कि यह जानो कि आदमी के अंतर में किसका वास है। और मैंने प्रतीति पा ली कि आदमी के अंदर प्रेम का वास है। मुझे हर्ष हुआ कि ईश्वर की कृपा-दृष्टि मुझ पर बनी है और सत्य-दर्शन में वह मेरे सहाई हैं। तब सहसा मुझसे मुस्कराहट फूट गई लेकिन अभी सब मैंने नहीं जाना था। जानना शेष था कि क्या आदमी का वश नहीं है और आदमी किसके जिलाए जीता है।

''मैं फिर आप लोगों के साथ रहने लगा और एक साल बीत गया। तब एक आदमी आया। वह जूते बनवाना चाहता था जो एक साल तक काम दें। न बीच में कहीं से उधड़े, न बिगड़े। मैंने उसकी ओर देखा। एकाएक देखता क्या हूँ कि उस आदमी के ठीक पीछे-पीछे मेरा ही साथी है, जो उसे उठा लेने को आया हुआ है। मेरे सिवा उस यमदूत को किसी ने नहीं देखा। लेकिन मैंने उसे पहचान लिया और जान गया कि आज का सूरज छिपने न पाएगा कि उससे पहले ही मेरा वह साथी उस आदमी की आत्मा को ले उड़ेगा। यह देख मैंने सोचा कि देखो, यह आदमी साल भर का बंदोबस्त कर रहा है, लेकिन उसे पता नहीं कि वह कै घड़ी का मेहमान है। उस समय मुझे ईश्वर का दूसरा वचन याद आया कि यह सीखो कि आदमी का वश क्या नहीं है?''

आदमी के अंतर में किसका वास है, यह तो मैं जान गया था। अब जाना कि

आदमी का वश क्या नहीं है। आदमी का यह वश नहीं है कि वह अपनी आगे की जरूरतें जाने। इस दूसरी सच्चाई का दर्शन पाने पर दूसरी बार फिर मुझे हर्ष की मुस्कराहट आ गई। एक बिछोह के बाद अपने स्वर्ग के साथी को देखकर भी मुझे आनंद हुआ और परम संतोष हुआ कि ईश्वर ने मुझे दूसरे सत्य के दर्शन दिए।

''लेकिन अब भी सब मैं नहीं जानता था। तीसरा सत्य मुझसे ओझल बना था। वह यह कि आदमी किसके श्वास से जीता है। फिर कुछ दिन बीते। मैं उत्कंठा में रहने लगा कि ईश्वर कब तीसरे सत्य का उद्घाटन करते हैं कि छठे साल जुड़वां बहनों को लेकर वह महिला आई। देखते ही उन लड़कियों को मैंने पहचान लिया। फिर क्या सुनी कि कैसे वे बच्ची पलीं और जीती रहीं। वह सुनकर मैंने सोचा कि माँ ने उन बच्चियों के लिए मुझे रोका था। मैंने उसकी यह बात मान ली थी कि बच्चे माँ-बाप से जीते हैं। लेकिन देखो कि एक बिलकुल अनजान औरत ने उन्हें पाला-पोसा और बड़ा किया। जब वह स्त्री उन बच्चियों को प्यार करती थी, जो उसकी कोख की नहीं थीं, और उस प्यार में उसकी आँखों में आँसू आ रहते थे, तब साक्षात् अशरण-शरण का रूप उनमें मुझे दिखाई दे आया। मैं समझ गया कि लोग किसके जिलाए यहाँ जीते हैं। उस समय मैं धन्य हो गया, क्योंकि ईश्वर ने तीनों सचाइयों के समाधान का मुझे दर्शन करा दिया था। मेरे बँधन कट गए, पाप क्षमा हो गए। और तब मैं तीसरी बार मुस्कराया।''

12

अनंतर उस देवदूत का शरीर दिव्य होकर दसों दिशाओं में मिल गया। अब प्रकाश ही उसका परिधान था और आँखें उस पर ठहरती न थीं। वाणी गंभीर सुन पड़ी थी जैसे कि घन-घोष हो और स्वयं आकाश से दिव्य ध्वनि बिखरती हो। इसी वाणी में देवदूत ने कहा—

''मैं सीख गया हूँ कि लोग अपनी-अपनी चिंता करके नहीं रहते हैं, बल्कि प्रेम से रहते हैं।''

''बच्चियों की माँ को नहीं मालूम था कि उनके जीवन को क्या चाहिए, न उस अमीर आदमी को मालूम था कि उसे क्या चाहिए, न किसी आदमी का वश है कि उसको मालूम हो कि शाम होने तक क्या होनेवाला है। कोई क्या जानेगा कि शाम तक भोग भोगना मिलेगा कि राख में मिलना बदा है!

''आदमी बनकर मैं जिंदा रहा तो इसलिए नहीं कि अपनी परवाह की या कर सका! बल्कि इसलिए जिंदा रहा कि एक राहगीर के दिल में प्रेम का अंश था। उसने और उसकी बीबी ने मुझ पर करुणा की और मुझे प्रेम किया। अनाथ बच्चियाँ जीती

रहीं, तो माँ की चिंता के भरोसे नहीं, लेकिन इसलिए जीती रहीं कि एक बिलकुल अनजान स्त्री के हृदय में प्रेम का अंकुर था और उसने उन पर दया की और प्यार किया। और सब लोग अगर रहते हैं तो अपनी-अपनी फिक्र करने के बल पर वे नहीं रहते, बल्कि इसलिए रहते हैं कि उनमें प्रेम का आवास है।

"मैं अब तक जान सका था कि ईश्वर ने मनुष्य को जीवन दिया कि वे जीएँ। लेकिन अब मैं उससे आगे भी जानता हूँ।"

"मैंने जाना है कि ईश्वर यह नहीं चाहता कि लोग अलग-अलग जिएँ। इसलिए हक नहीं है कि कोई जाने कि किसी की अपनी जरूरतें क्या हैं। ईश्वर तो चाहता है कि सब एक्य-भाव से जिएँ। इसलिए सबको पता है कि सबकी जरूरतें क्या हैं।"

"अब मैं समझ गया हूँ कि चाहे लोगों को पता हो कि वह अपनी फिक्र करके जीते हैं, लेकिन सच्चाई में तो प्रेम है जो उन्हें जिंदा रखता है। जिसमें प्रेम है, वह भगवान में हैं और भगवान उसमें है। क्योंकि भगवान प्रेममय है।"

इतना कहकर देवदूत ने ईश्वर की स्तुति की, जिसकी गूँज से मानो सारा वाताकाश हिल गया। तभी ऊपर छत खुली और धरती से आसमान तक एक जलती लौ की ज्योति उठती चली गई। ननकू और उसके स्त्री-पुत्र चमत्कार से सहमे-से धरती पर आ रहे। तभी देवदूत में प्रकाश के पंख उग आए और वह आकाश में उड़कर अंतर्धान हो गया।

ननकू को चेत आया तो मकान ज्यों-का-त्यों खड़ा था और घर में उसके कुनबेवालों के सिवाय कोई न था।

करीम

पुराने राज की बात है कि एक समय मध्य-देश में करीम नाम का एक काश्तकार रहा करता था। बाप उसका अपने बेटे का ब्याह करने के एक साल बाद परलोक सिधार गया था। धन-संपदा उसने कुछ बहुत पीछे नहीं छोड़ी थी। कुछ जोड़ी बैल थे—दो गाय और काम को दो घोड़े। पर करीम को इंतजाम करना आता था, इससे वह उन्नति करने लगा। पति-पत्नी सबेरे रात होने तक खूब काम करते। औरों से सेबेरे उठ जाते और सोते सबसे पीछे थे। इस तरह साल-पर-साल उनकी दौलत में बढ़वारी होती गई। होते-होते थोड़ा-थोड़ा करके करीम के पास खूब संपदा हो गई। तीस-पैंतीस बरस बीते होंगे कि उसके पास दो सौ से ऊपर बैल हो गए थे।

अस्तबल में कोड़ियों घोड़े। भेड़-बकरियों की तो शुमार क्या। और काम के लिए नौकरानियाँ और नौकर थे। वे ही सब करते थे। दूध वे काढ़ते और सब तरह की सेवा भी वे करते थे। सबको तनख्वाह मिलती थी। करीम के पास हर चीज की खूब इफरात थी और दूर-पास के सब उसके भाग्य पर विस्मय और ईर्ष्या करते थे। कहते थे कि किस्मतवाला आदमी तो करीम है। उसके पास सब कुछ है। दुनिया का मजा है तो उसे है।

अच्छे-अच्छे लोग और ओहदेवाले अफसर करीम की बड़ाई सुनते और उसकी जान-पहचान करना चाहते थे। दूर-दूर से लोग उससे मिलने को आते थे, करीम सबका स्वागत और सबकी खातिर करता था। खुलकर खिलाता-पिलाता और आवभगत करता था। कोई आओ, उसका भंडारा तैयार था। ज़ो चाहो, वहाँ खाने में पा लो। मेहमान आते तब खास रसोई बना करती थी। जो कहीं तादाद कुछ ज्यादा हुई तो पूरी ज्यौनार के सामान हो जाते थे।

करीम के तीन संतान थीं। दो लड़के, एक लड़की। सबकी शादी कर उसने छुट्टी पाई थी। जब उसकी हालत ऐसी नहीं थी, मामूली थी, तो वे बच्चे माँ-बाप के संग लगकर काम किया करते थे। खुद बैलों की सानी-पानी देखते-करते थे लेकिन अमीरी आती गई तो वे बिगड़ते भी गए। एक को तो दारु की लत लग गई। बड़ा तो कहीं कोई फौजदारी कर बैठा और वहीं काम आ रहा। छोटे को ऐसी औरत मिली कि सरकश। सो बाप का कहना अब बेटा नहीं सुनता था और दोनों जनों को अधिक काल साथ निभाना मुश्किल होता जाता था।

इससे दोनों अलग हो गए। करीम ने बेटे को मकान दे दिया और खासी तादाद में गाय-बैल भी उसकी तरफ कर दिए। इस तरह उसकी चल और अचल संपदा कम पड़ गई। उसके बाद ही जाने कैसी एक बीमारी फूटी। उससे भेड़ों के रेवड़-के-रेवड़ सत्यानाश हो गए। फिर अकाल का साल आ गया और काश्त में सूखा पड़ा। बहुत-से चौपाए अगले जाड़ों में बेमौत मर गए। ऊपर से बनजारों का उत्पात हुआ और वे कई घोड़े चुरा ले भागे। इस तरह करीम की संपदा क्षीण होने लगी। वह घट-घटकर कम पड़ती जा रही थी। उधर उसकी काया का कस भी घट रहा था। आखिर सत्तर बरस का होते-होते वह दिन आया कि घर का माल-असबाब नीलाम बोली पर चढ़ाना पड़ गया। कालीन-गलीचे, जीन-तंबू और इसी तरह की और चीजें घर से निकलकर बाजार में आने लगीं। यहाँ तक कि आखिरी बचे-खुचे बैलों की जोड़ियों से भी जुदा होने की नौबत आ गई। अब खाने के भी लाले पड़ गए। उसकी कुछ समझ न आया कि कैसे क्या हुआ और देखते-देखते सब संपदा हवा हो गई। सो करीम और उसकी बीबी को बुढ़ापे की उमर में दूसरे दर की नौकरी

सोचनी पड़ी। करीम के पास कुछ न बचा था; बस तन के कपड़े थे; बुढ़िया बीबी और काम चलाऊ कुछ बासन-ठीकरे। बेटा अलग होकर एक दूसरे गाँव आ रहा था और बेटी उसकी मर चुकी थी। सो उन बूढ़ों को मदद करनेवाला कोई न था।

उनका पड़ोसी था एक मोहम्मद शाह। मोहम्मद शाह की हालत ऐसी थी कि न बहुत इफरात थी, न गरीबी। अपने खाता-पीता था और मन का नेक आदमी था। करीम की पुराने दिन की बढ़ी-चढ़ी मेहमाननवाजी की उसने याद की और उसके मन में बड़ी दया आई। बोला, "करीम, तुम और तुम्हारी बीबी दोनों मेरे मकान पर आकर रहो। गरमी में मेरी खरबूजों की पलेज का काम देख लिया करना। जाड़ों में चौपायों की जरा सार-संभार कर देना। बीबी तुम्हारी गायों को थाम लेगी और दुह दिया करेगी। तुम दोनों का खाना-कपड़ा मेरे जिम्मे। और जब जिस चीज की जरूरत हो मुझे कह देना। वह मिल जाएगी।" करीम ने अपने नेक पड़ोसी का शुक्रिया माना और वह और उसकी बीबी दोनों मोहम्मद शाह के यहाँ नौकरी पर हो गए। पहले तो उनको इसमें बड़ी मुश्किल मालूम हुई पर धीमे-धीमे वे इसके आदी हो गए। अपने बस बराबर मालिक का काम करते और सबर से बसर करते।

मोहम्मद शाह ने देखा कि इन लोगों से उसे बड़ा आराम हो गया है। पहले अच्छी हालत में और खुद मालिक रहने की वजह से इंतजाम की बाबत ये लोग यों ही सब कुछ जानते हैं। तिस पर आलसी नहीं हैं। और काम से बचते नहीं हैं। लेकिन उसके मन को दु:ख रहता था कि देखो, बेचारे किस ऐश पर पहुँचकर आज कैसे मुसीबत के दिन देख रहे हैं।

एक बार मोहम्मद शाह के कोई नातेदार लोग दूर से उसके यहाँ मेहमान हुए। एक वायज मुल्ला भी उनके साथ थे। मोहम्मद शाह ने करीम को कहा कि एक अच्छी भेड़ लो और आज की दावत के लिए उसी को जिबह करो। करीम ने मन लगाकर सब तैयारी की। सब तरह का खाना मेहमानों के आगे रखा गया। सब लोग दस्तरखान पर बैठे खाना खा रहे थे कि करीम का उधर दरवाजे से गुजरना हुआ।

मोहम्मद शाह ने करीम को जाते देखकर एक मेहमान से कहा, "आपने उन जईफ को देखा जो अभी यहाँ से गुजर के गए हैं?"

मेहमान ने कहा, "हाँ। उसमें खास बात क्या है?"

"खास बात यह", मोहम्मद शाह ने कहा, "कि कभी वह यहाँ के सब से मालदार आदमी थे। नाम उनका करीम है। वह नाम आपने सुना भी होगा।"

मेहमान ने कहा, "जी हाँ, नाम तो खूब ही सुना है। पहले देखने का मौका नहीं आया, लेकिन इस नाम की शोहरत तो दूर-दूर तक फैली हुई है।"

"जी हाँ, लेकिन अब उनके पास कुछ नहीं बचा है और मेरे यहाँ मजदूर

बनकर रहते हैं। उनकी बुढ़िया बीबी भी नौकर है। वह दूध दुहती है।''

मेहमान को बड़ा अचरज हुआ। उनका मुँह खुला रह गया। बोला, ''किस्मत का भी एक चक्कर है। एक ऊपर उठता है तो दूसरा नीचे आता है। क्यों साहब, करीम बुढ़ापे की बदकिस्मती पर रंज तो जरूर ही मानते होंगे?''

''जी, कौन जानता है। वैसे यह सुकून से संजीदा और चुपचाप रहते हैं और काम सब तनदिही से करते हैं। रंजीदा दीखते तो नहीं हैं।''

मेहमान ने कहा, ''क्या मैं उनसे बात कर सकता हूँ? उनकी जिंदगी के बारे में पूछना चाहूँगा?''

''क्यों नहीं!'' कहकर मेजबान ने आवाज देकर करीम को बुलाया। बोला, ''बड़े मियाँ, जरा यहाँ आइए। आइए, इस शर्बत में तो शरकत कीजिए। अपनी बीबी मोहतरिमा को भी लेते आइएगा।''

करीम बीबी के साथ वहाँ आया। मेहमानों को और मालिक को सलाम किया। फिर मुँह से दुआ दुहराता हुआ वहीं दरवाजे के पास नीचे बैठ गया। बीबी उधर परदे के पीछे से आई और मालिकन के पास जाकर बैठ गई।

शर्बत का गिलास करीम को दे दिया गया और जवाब में करीम ने झुककर शुक्रिया माना। मुँह से लगाया और फिर गिलास नीचे रख दिया।

उन मेहमानों ने कहा, ''हजरत यकीन है कि आपको हमें देखकर कुछ रंज हो आता होगा। अपनी पहली खुशबख्ती के बाद आज की यह बदबख्ती आपको जरूर नागवार गुजरती होगी।''

करीम मुस्कराया। बोला, ''अगर मैं आपको कहूँ कि असल में खुशी क्या है और खुश-किस्मती क्या है तो आप मेरा यकीन नहीं करेंगे। इससे बेहतर हो कि आप मेरी बीबी से पूछकर देखें! वह औरत है जो मन में होगा वही उसकी जबान पर आ जाएगा। वह आपको सब हकीकत बयान कर देगी।''

यह सुनकर मेहमान पर्दे की तरफ मुखातिब हुए। बोले, ''बड़ी बी, पहले अमीरी के दिनों के मुकाबिले आज की यह बदबख्ती आपको भला क्यों कर बर्दाश्त होती होगी?''

उन मोहतरिमा ने पर्दे के पीछे से इसके जवाब में कहा, ''जनाब, हकीकत उल्टी है और मैं अर्ज करती हूँ। और मेरे खाविंद, हम दोनों पूरे पचास साल सुख की तलाश में रहे। अब तक वह कहीं पाया नहीं। पर इन पिछले दो सालों से जब हमारे पास कुछ नहीं रह गया है और मेहनत करके हम जीते हैं, मालूम होता है कि हमको असली सुख मिला है और जो आज है उससे बढ़कर हम कुछ नहीं चाहते।''

मेहमानों को सुनकर अचंभा हुआ और मालिक मोहम्मद शाह भी ताज्जुब में रह

गए। वह तो उठ तक पड़े और पर्दे को पीछे खींच दिया ताकि सब नजरभर उन मोहतरिमा को देख सकें।

वह खड़ी थीं, सीने पर हाथ बँधे थे और अपने बूढ़े खाविंद की तरफ देख रही थीं। मुस्कराहट उनके चेहरे पर थी और उधर बूढ़े करीम के मुँह पर भी मुस्कराहट थी!

वह कहने लगीं, "हकीकत कहती हूँ। इसे मजाक न गिनिएगा। पचास साल तक हम खुशी की तलाश में रहे; लेकिन भटकते रहे। दौलत थी, तब तक खुशी नहीं हासिल हो सकी। अब जब सब जाता रहा है और मेहनत की नौकरी पर हम लोग लगे हैं, तब आकर वह खुशी भी मिली है जिसकी तलाश थी। अब हमें और कोई चारा नहीं है।"

मेहमान ने पूछा, "लेकिन उस खुशी का सबब क्या है ? राज क्या है ?"

"सबब और राज यह है", उन्होंने कहा, "कि जब दौलत थी तब हम दोनों के पीछे जाने कितनी और क्या फिकरें लगी रहती थीं। यहाँ तक कि आपस में बात करने का वक्त भी नहीं मिलता था। न खुदा का नाम ले पाते थे, न अपनी रूहानी भलाई की कुछ बात सोच पाते थे। मेहमान आए दिन बने रहते और हमें धुन रहती कि क्या तश्तरियाँ उनके आगे पेश की जाएँ, और क्या खातिर की जाए कि वे पीठ पीछे हमारी बुराई न करें, वाह-वाही करें। उनसे छूटने पर नौकरों की फिक्र लग जाती। वे काम से आँख बचाते और खाने के वक्त अच्छा चाहते थे। उधर हमारी कोशिश रहती कि उनसे ज्यादा-से-ज्यादा काम वसूल किया जाए, और एवज मिले कम-से-कम। इस तरह गुनाह का एक चक्कर चलता रहता था। फिर बराबर डर बना रहता था कि कोई बछिया न मर जाए, घोड़ा न जाता रहे। चोर का डर रहता था और जंगली जानवर का डर रहता था। रात जागते बीतती थी कि कहीं कुछ नुकसान न हो रहा हो। और रह-रहकर और उठ-उठकर हम माल की चौकसी करते थे। एक फ़िक्र मिटती कि दूसरी आ दबाती। और नहीं तो ऐसी ही बात सोचते कि जाड़ों में अब के चरी का कैसा पूरा डालना होगा। और फिर हम दोनों में अक्सर तफरका पड़ जाया करता।

वह कहते ऐसा होना चाहिए, मैं कहती कि नहीं वैसा होना चाहिए। इस तरह हम झगड़े पैदा किया करते, अगर्चे फिर मिल भी जाते। गर्जे कि एक मुसीबत से दूसरी मुसीबत और एक गुनाह से दूसरा गुनाह, सिलसिला इस तरह चलता रहता और जिसे सुख कहा जाए, वह नाम को न मिल पाता।"

"और अब ?"

"अब सबेरे उठते हैं तो हम दोनों के मन हलके रहते हैं। बीच में तनाव की

कोई बात नहीं रह गई। अब मुहब्बत और दिल का इत्मीनान हमारा नहीं टूटता। कोई फिकर अब हमें नहीं है। यही खयाल रहता है कि मालिक की खिदमत को कैसे अंजाम दें। जितना कस है उतना हम काम करते हैं, और इरादा नेक देखते हैं। सोचते हैं कि हमारे मालिक को नुकसान न होने पाए, नफा ही हो। काम से लौटकर आते हैं तो खाने-पीने को हमें मिल जाता है, सरदी में तापने को आग मिल जाती है और कपड़ा भी तन को काफी हो जाता है। अब मन की दो बात करने को भी समय है। खुदा का नाम ले सकते हैं और आकबत की सोच सकते हैं। पचास बरस तक हम सुख की तलाश में भटके। आखिर अब हमें वह मिला है।''

मेहमान हँसने लगे—

लेकिन करीम ने कहा, ''हँसिए नहीं, मेहरबान। मजाक की बात यह नहीं है। जिंदगी की हकीकत बयान की है। हम भी पहले बेवकूफ बने और दौलत के चले जाने पर रंज मानने लगे थे। पर अब खुदावंदकरीम ने असलियत हम पर जाहिर कर दी है। वही आपसे अर्ज की है। अपनी तसल्ली के लिए नहीं, बल्कि सच पूछिए तो आपकी भलाई के वास्ते!''

और उनके साथ के वायज मुल्ला ने उस बात की ताईद की।

कहा, ''बेशक, यह सही है। करीम ने हकीकत कही है। कुरान-शरीफ में हजरत पैगम्बर ने भी यही फर्माया है।''

यह सुनकर मेहमानों का हँसना रुक गया और चेहरे संजीदा हो आए।

आदमी और जानवर

एक दिन किसान सबेरे-तड़के हल-बैल लेकर अपने खेत की तरफ चला। साथ रोटी ले ली। खेत पर पहुँचकर उसने हल सँभाला और रोटी चादर में लपेटकर झाड़ी के नीचे रख दी। फिर काम में लग गया। दोपहर तक काम करते-करते बैल थक गया और उसे भी भूख लग आई। तब उसने बैल को चरने खोल दिया, हल को एक तरफ किया और चादर में रखी अपनी रोटी लेने बढ़ा।

चादर उठाई, पर यह क्या! रोटी क्या हुई? उसने यहाँ देखा, वहाँ देखा। चादर को उलटा-पलटा, झाड़ा; लेकिन रोटी वहाँ थी कहाँ? किसान को माजरा कुछ समझ में न आया।

उसने सोचा कि है यह अचरज की बात। मुझे दीखा नहीं तो क्या, पर कोई-न-कोई यहाँ आया जरूर है और रोटी ले गया है।

असल में वहाँ था कि पाप-दानव का एक चर। किसान उधर काम कर रहा था कि उसने ही रोटी चुरा ली थी। अब भी वह झाड़ी के पीछे छिपा बैठा था, आशा में था कि किसान रोए-झींकेगा, बकेगा और बद-दुआएँ देगा।

रोटी चले जाने पर कृषक दु:खी तो हुआ, पर सोचा कि अब हो क्या सकता है। आखिर उसके बिना कोई मैं भूखा तो मर ही नहीं गया। और जिसने रोटी ली होगी जरूरत की वजह से ही ली होगी। सो चलो, उसका ही भला हो।

यह सोच, पाप के कुएँ पर जा, उसने भरपेट पानी पिया और थोड़ा-सा सुस्ताने लगा। तनिक विश्राम के बाद अपना बैल ले, जोत, फिर खेत गोड़ने में लग गया।

यह देख वह चर मन-ही-मन फीका पड़ गया। सोचा था कि किसान मन मैला करेगा और कोसा-कासी करेगा। पर उससे तो किसी के लिए एक बुरा शब्द नहीं निकला।

सो इसकी खबर उसने जाकर दी अपने मालिक पाप-दानव को। बताया कि मैंने तो उस किसान की रोटी तक चुरा ली; लेकिन उस भले आदमी ने गाली तो क्या देना, उल्टा कहा कि जिसने ली हो चलो, उसी का भला हो।

दानव सुनकर बहुत बिगड़ा। कहा कि शर्म की बात है कि आदमी तुमसे बढ़ जावे। तुम अपना काम नहीं जानते। अगर किसान लोग और उनकी बीबियाँ ऐसी नेक होने लगीं तो फिर हम दानव कुलवालों का क्या ठिकाना रहेगा। समझे ? फौरन वापस जाओ और बिगड़ी बात बनाओ। तीन साल के अंदर जो तुमने किसान की नेकी पर काबू नहीं पा लिया तो तुमको वैतरनी में फेंक दिया जावेगा। सुना ? अब जाओ।

चर मालिक की धमकी पर सहमा-सहमा पृथिवी पर वापस आया। सोचने लगा कि क्या करूँ, क्या न करूँ कि मेरा काम पूरा हो। खूब सोचा, खूब सोचा। आखिर एक युक्ति उसे सूझी।

उसने एक मजूर का वेष धरा और जाकर उसी किसान के यहाँ नौकरी कर ली। पहले साल उसने कहा कि इस बार नीची दलदली जमीन में नाज बोओ। किसान ने उसकी बात पक्की रखकर वैसा ही किया। विधि की करनी कि उस साल खूब सूखा पड़ा और सबकी फसल धूप के ताप में प्यासी मारी गई। लेकिन इस किसान की खेती खूब फूली और फली। पौध खूब लम्बी हुई और खूब घनी और बाल में दाना भी बड़ा आया। कटकर इतना नाज हुआ, इतना नाज हुआ कि उस बरस को भी काफी हुआ और आगे के लिए भी बहुतेरा बच गया।

अगले साल उस चर ने सलाह दी कि अब की टीलेवाली जमीन पर बोना चाहिए। बात मानी गई और वहीं बीज डाला। उस साल वर्षा इतनी हुई कि बहुत।

दूसरे सब लोगों की खेती झुक गई, गल गई और बाल में दाना भी नहीं पड़ा। पर चर के मालिक किसान के खेत टीले पर बालों की झूमर पहने लहराते रहे, उनका कुछ नहीं बिगड़ा। इस बार पहले से भी ज्यादा गल्ला किसान को बचा। अब तो उसके खलिहान इतने अटाअट भर गए कि उसे समझ न आता था कि इस सबका क्या करूँ।

ऐसे समय उस चर ने मालिक को बताया कि इस-इस तरह नाज में से खींचकर दारू तैयार की जा सकती है और दारू वह चीज है कि क्या कहा जाए। उसकी निसबत बस किसी से नहीं दी जा सकती ।

किसान ने वही किया। तेज शराब तैयार की। खुद पी और दोस्तों को पिलाई।

इतना करके वह चर अपने मालिक दानव के पास आया। कहा "मालिक, मैंने कामयाबी पा ली है और आपका काम पूरा हो गया है।"

दानव ने कहा, "अच्छा, हम खुद चलकर देखते हैं कि तुमने क्या किया है।"

दानव और चर दोनों किसान के घर आए। देखते क्या हैं कि वहाँ तो पास-पड़ोस के आसूदा किसान निमंत्रित हैं और शराब की दावत दी जा रही है। एक जशन समझो। किसान की स्त्री साकी बनी मेहमानों को शराब दे रही है।

इतने में किसी से टकराकर स्त्री लड़खड़ाई और शराब उसके हाथ से बिखर गई। इस पर पति ने कहा कि कमबख्त, तुझे कुछ सूझता नहीं है। इस नियामत को तूने ऐसी-वैसी चीज समझ रखा है कि लुढ़काती फिरती है? कमीनी बेहया?

चर ने धीमे-से कुहनी मारकर मालिक को दिखाया कि देखिए, यही वह आदमी है जिसने अपने मुँह की रोटी छिन जाने जर भी गुस्सा नहीं किया था!

किसान, औरत को अलग हटाकर, अब भी उस पर तर्राता हुआ, खुद जाम भर-कर लोगों को देने लगा। इतने में एक गरीब, मेहनती काम से लौटते हुए उधर ही आ निकला। वह पार्टी में निमंत्रित नहीं था। लेकिन सबको जयरामजी की करता हुआ वह भी वहाँ आन बैठा। हारा-थका था। सबको पीता देख जी हुआ कि उसे भी एक घूंट मिले। वह बैठा रहा, बैठा रहा। मुँह में उसके पानी आ-आ गया। लेकिन मेजबान किसान ने उसे नहीं पूछा। उल्टे कहा कि हर ऐरा-गैरा आ जाए तो उसे पिलाने को मैं इतनी कहाँ से लाता फिरूँगा, तुम्हीं बताओ।

यह सब देख दानव प्रसन्न हुआ। लेकिन उसके चर ने कहा कि अभी क्या हुआ है, आप देखते जाइए। जाने क्या-क्या बाकी है।

क्या घर के, क्या बाहर के, सबने खुलकर हाथ बंटाया। पहले दौर पर उन लोगों ने आपस में चिकनी-चुपड़ी तकल्लुफ की बातें शुरू कीं। वह मायाचारी की बातें थीं।

दानव सुनकर खुश हुआ और अपने चर को शाबाशी देने लगा। कहा कि शराब से कैसा लोमड़ी का-सा कपट उन्हें आ गया है। इस चीज में अगर यह सिफत है कि लोग एक-दूसरे को धोखा देना चाहने लगते हैं, तो बस फिर क्या है, फतह हुई रखी है।

चर ने कहा कि आप अभी देखते जाइए। अभी तो वे लोमड़ी की तरह एक-दूसरे की तरफ दुम हिला रहे हैं और डोरे डाल रहे हैं। शराब का एक-एक दौर और, तो वे जंगली भेड़िए बने दीखेंगे।

सो सबने एक दौर और चढ़ाया। उसके बाद उनकी बातचीत फूहड़ होती जाने लगी। चिकनी-नमकीन बातों की जगह अब वे एक-दूसरे को तरेरने और गालियाँ देने लगे। बक-झक हुई और मार-पीट की उनमें नौबत आ गई। देखते-देखते सब आपस में झगड़ने लगे। मेहमान-मेजबान का फर्क न रहा, बखेड़े में मेजबान भी शामिल हुए और उनकी भी गति बनी।

दानव इस सब करामात पर खूब खुश हुआ। चर से कहा कि यह काम तुम्हारा एक नम्बर का है। मैं तुमसे खुश हूँ।

पर चर ने कहा कि अभी और बाकी है। आगे इससे भी बढ़कर दृश्य आप देखेंगे। अभी भूखे भेड़िए की तरह लड़ रहे हैं। एक जाम और, और वे सूअर की मानिंद बन जाएँगे।

फिर तीसरा दौर चला। उसके बाद उनमें और सूअर में फिर भेद ही क्या रह गया था। बेसुध, वे चीखते थे और रेंकते थे। कोई किसी की न सुनता था। उन्हें सँभालना मुश्किल था और एक-दूसरे पर गिरे जाते थे।

फिर जशन बिखरने लगा। लोग लड़खड़ाते, गिरते-पड़ते, एक-एक, दो-दो, तीन-तीन करके वहाँ से गलियों की राह बिदा हुए। घर का मालिक मेहमानों को रवाना करने बाहर आया कि वह भी मुँह के बल औंधा कीच में गिरा। सिर से पैर तक लिथड़ा हुआ सूअर की भाँति वह वहीं बड़बड़ाता हुआ पड़ा रहा।

पाप-दानव यह सब देखकर अपने चर से संतुष्ट हुआ। कहा, "शाबाश, तुमने खूब चीज ईजाद की है। पहली भूल तुम्हारी सब माफ हुई। लेकिन मुझे बताओ कि वह चीज तुमने बनाई कैसे? पहले तो जरूर उसमें तुमने लोमड़ी का खून डाला होगा, जिससे लोमड़ी की मायाचारी पीनेवालों में आ गई। फिर मालूम होता है कि भेड़िए का खून उसमें मिलाया होगा। तभी तो भेड़िए की तरह वे खूँखार बने दीखते थे। और अन्त में सूअर का लहू भी रखा ही होगा कि वे सूअर की तरह बर्राने लगे।"

चर ने कहा कि नहीं, उस सबकी जरूरत नहीं हुई। मैंने तो बस इतना किया कि

जिससे किसान के पास जरूरत से ज्यादा नाज हो जाए। जानवर का खून तो आदमी के अंदर रहता ही है। खाने जितना अन्न उसके पास रहे तब तक वह असर दबा रहता है। वही इस किसान का हाल था। पहले तो मुँह का कौर छिनने पर उसका मन कड़ुवा नहीं हुआ; पर जब पास जरूरत से ज्यादा हो गया तो उससे मौज-मजे करने की तबियत उसमें हो आई। बस उस समय मैंने उसे मौज की यह राह दिखा दी—दारू। ईश्वर की दी हुई नियामतों में से खींचकर अपने मजे के लिए जब वह दारू बनाने लगा तो लोमड़ी और भेड़िया और सूअर सबकी तासीर उसके अंदर से बाहर फूट आई। आदमी बस पीता रहे, फिर तो वह हमेशा जानवर बना रहेगा, इसमें शक नहीं।

दानव ने चर की पीठ ठोंकी। पहली चूक के लिए उसे क्षमा किया और कारगुजारी के लिए अपनी नौकरी में ऊँचे पद पर उसे बहाल किया।

तीन जोगी

एक धर्माचार्य जहाज पर कलकत्ते से जगन्नाथ-धाम की यात्रा को जा रहे थे। उस जहाज पर और बहुत-से यात्री भी थे। समुद्र शांत था। वायु अनुकूल और मौसम सुहावना! यात्री लोगों को कुछ कष्ट नहीं था। मिलजुल कर खाते-पीते, गीत-गाते और चर्चा करते वह समय बिताते थे।

एक बार वह आचार्य डेक पर बाहर आए। वह इधर-उधर घूम रहे थे कि देखते हैं कि आगे जहाज के मुहाने पर कुछ लोग जमा हैं। बीच में उनके एक केवट समंदर की तरफ इशारे से जाने क्या दिखाकर सुना रहा है। जिधर मछुए ने उँगली उठाकर बताया था, धर्माचार्य भी ठहरकर उधर ही देखने लगे। लेकिन उन्हें कोई खास बात दिखाई नहीं दी। धूप से समंदर की सतह ही चमकती दीखती थी। इस पर केवट की कहानी सुनने को वह पास आ गए। लेकिन उस आदमी ने उन्हें देखकर अपनी बात बंद कर दी और आदर-भाव से प्रणाम किया। और यात्री भी संभ्रम से प्रणाम करके चुप हो गए।

"भाइयो", धर्माचार्य बोले, "मैं आपका कुछ हर्ज करने नहीं आया। यह भाई कुछ दिखाकर बतला रहे थे। सो मेरी भी सुनने को तबियत हुई कि क्या बात है।"

उनमें से एक यात्री जो औरों से साहसी थे, बोले, "तीन साधुओं की बाबत यह हमें कह रहे थे।"

"कैसे तीन साधु?"

धर्माचार्य यह कहते हुए और आगे आ गए और वहाँ रखे एक बक्स पर बैठ गए।

"मुझे भी बताओ, कैसे साधु?" मैं जानना चाहता हूँ। और तुम इशारे से दिखला क्या रहे थे?"

केवट ने आगे जरा दाहिनी तरफ इशारे से बतलाते हुए कहा, "वहाँ छोटा टापू दीखता है न? जी, जरा दाएँ। जी, वही। वहाँ तीन जोगियों का बास है जो सदा आत्मा के उद्धार में लवलीन रहते हैं।"

"कहाँ, कौन-सा टापू! मुझे तो कोई दीखता नहीं।" धर्माचार्य बोले।

"जी, वह दूर। मेरे हाथ की तरफ देखिए। वह छोटा बादल दीखता है, न, उसी के नीचे जरा दाएँ, एक बारीक लकीर-सी दिखाई देती है। जी वही टापू है।"

धर्माचार्य ने ध्यान से देखा। पर आँखों को अभ्यास नहीं था। इससे धूप में चमकते हुए पानी की सतह के सिवा उन्हें कुछ दिखाई नहीं दिया। बोले, "मुझे तो दिखाई नहीं दिया। पर खैर, वह साधु कौन है जो वहाँ रहते हैं?"

केवट बोला, "कोई संत लोग हैं। जोगी-ध्यानी। उनकी बावत सुन तो मुद्दत से रखा था। पर दर्शन परसाल से पहले नहीं किए।"

फिर केवट ने अपनी कथा सुनाई कि एक बार मैं नाव लेकर दूर निकल गया था। इतने में रात हो गई। दिशा का स्थान मैं सब भूल गया। आखिर उस टापू पर जाकर लगा। सबेरे का समय था। यहाँ-वहाँ भटक रहा था, इतने में मिट्टी की बनी हुई एक कुटिया मुझे मिली। उसके पास एक बूढ़े पुरुष खड़े हुए थे। तभी अंदर से दो पुरुष और भी आ गए। सबने मिलकर मुझे वहाँ खिलाया-पिलाया और फिर मेरी नाव ठीक करने में भी मदद दी।"

धर्माचार्य ने पूछा, "वे साधु दीखते हैं?"

"एक तो नाटे कद के हैं और कमर उनकी झुकी है। वह एक कफनी-सी पहने रहते हैं और बहुत बुड्ढे हैं। मैं समझूं, सौ से तो काफी ऊपर होंगे। उनकी इतनी उमर हो गई है कि सफेद दाढ़ी कुछ हरी पड़ती जा रही है। पर चेहरे पर सदा उनके मुस्कराहट रहती है। और चेहरा ऐसा है कि देवता-स्वरूप। दूसरे उनसे लम्बे हैं लेकिन उनकी भी अवस्था बहुत है। वह फटा-टूटा देहाती ढंग का कुरता पहने रहते हैं। दाढ़ी उनकी भरी है और कुछ पीले-भूरे रंग की है। काया के खूब मजबूत। मैं उनकी भला क्या मदद कर सकता, कि उन्होंने तो मेरी डोंगी को ऐसे पलट दिया जैसे वह कोई गोलची हो। वह भी हँसमुख रहते हैं और चेहरे पर दया-भाव दीखता है। तीसरे का डील खासा है और दाढ़ी बरफ-सी सफेद घुटनों तक आ रही है। सौम्य दीखते हैं और सख्त। भवें घनी, आँखों पर झूलती मालूम होती हैं और वह

बस कमर से एक चटाई का टुकड़ा लपेटे रहते हैं।''

''वे तुमसे कुछ बोले भी?'' धर्माचार्य ने पूछा।

''अधिकतर तो वे सब काम चुप रहकर ही करते हैं। आपस में भी बहुत ही कम बोलते हैं। देखकर ही तीनों एक-दूसरे को समझ जाते हैं, जैसे आँख से ही बोल लेते हैं। जो सबसे ज्यादा डील के हैं, मैंने उनसे पूछा कि आप क्या यहाँ बहुत काल से रहते हैं? सुनकर उनकी भवों में सिकुड़न आई और जैसे नाराजी में कुछ गुनगुनाया। लेकिन जो सबसे वृद्ध थे, उन्होंने उनका हाथ अपने हाथ में लिया और मुस्कराने लगे। तब उनका गुस्सा भी एकदम शांत हो गया। उन बूढ़ों के मुँह से बस इतना निकला, ''हम पर दया रखो।'' और कहकर मुस्करा दिए।

केवट यह कथा सुना रहा था कि टापू पास आने लगा।

उन साहसी आदमी ने उँगली से दिखाकर कहा, ''अब श्रीमान् देखें तो टापू साफ नजर आ सकता है।''

धर्माचार्य ने देखा। सचमुच एक काली लकीर-सी दीखती थी। यहाँ टापू। कुछ देर उधर देखते रहकर आचार्य वहाँ से आए और जहाज के बड़े माँझी से पूछा, ''वह कौन टापू है?''

''वह?'' उसने कहा, ''उसका कोई नाम तो नहीं है। ऐसे तो यहाँ बहुतेरे टापू हैं।''

''क्या यह सच है कि वहाँ अपनी आत्मा के उद्धार के लिए तीन फकीर रहते हैं?''

''ऐसा सुनता तो हूँ, महाराज। पर मालूम नहीं, यह सच है, या क्या ? मल्लाह लोग कहते हैं कि उन्होंने उन्हें देखा है। पर कौन जाने कि अपना मनगढ़ंत दीख तक भी जाता हो।''

''हम उस टापू पर जाना चाहते हैं और उन आदमियों को देखना चाहते हैं।'' धर्माचार्य ने कहा, ''क्या यह हो सकता है?''

उसने जवाब दिया कि ''ठेठ टापू तक तो जहाज जा नहीं सकता, हाँ नाव से आप जा सकते हैं। उसके लिए कप्तान से बोलना होगा।''

धर्माचार्य ने कप्तान को बुला भेजा। कप्तान से आने पर कहा, ''मैं उन फकीरों को देखना चाहता हूँ। क्या मुझे किनारे पहुँचाया जा सकता है?''

कप्तान ने कहा, ''जी हाँ, पहुँच सकते हैं। पर इसमें देर हो जाएगी और गुस्ताखी न हो तो मैं श्रीमान को कहूँ कि लोग ऐसे नहीं हैं कि श्रीमान उनके लिए कष्ट उठाएँ। सुना है कि वे बुड्ढे एकदम नादान हैं। न कुछ समझते हैं न जानते हैं। और बेजुबान ऐसे हैं कि जैसे जलचर मछली।''

धर्माचार्य ने कहा, "खैर, हम देखना चाहते हैं। देर की और कष्ट की चिंता न कीजिए। खर्च की भरपाई हमारे हिसाब से कर लीजिएगा। लाइए, मुझे एक नाव दीजिए।"

अब और क्या हो सकता था। लाचार वैसा ही हुक्म दे दिया गया। बादबान फिरे और जहाज को टापू की तरफ मोड़ दिया गया। आगे सामने कुर्सी ला रखी गई। धर्माचार्य वहाँ बैठकर आगे देखने लगे और यात्री भी आस-पास इकट्ठे हो गए और टापू की तरफ ताकने लगे। आँख जिनकी तेज थी, उन्हें जल्दी ही टापू के किनारे पेड़-पहाड़ियाँ दीख आईं। वहीं एक मिट्टी की झोंपड़ी भी दीखी। आखिर एक आदमी को खुद वह फकीर भी दिखाई दिए। कप्तान ने दूरबीन निकाली और उसमें से देखा। देखकर दूरबीन धर्माचार्य के हाथ में दी। बोला, "सचमुच तीन आदमी किनारे के पास खड़े तो हैं। वहाँ, वह जरा चट्टान के बाईं तरफ।"

धर्माचार्य ने दूरबीन लेकर ठीक-ठीक उसे लगाकर देखा कि हैं तो तीन आदमी। एक लम्बा है, दूसरा औसत कद का, और एक नाटा, छोटा और झुका हुआ है। तीनों एक-दूसरे का हाथ पकड़े किनारे खड़े हैं।

कप्तान ने धर्माचार्य से कहा कि जहाज इससे आगे नहीं जा सकता। अगर श्रीमान किनारे जाना चाहते हैं तो नाव पर जा सकते हैं। हम यहीं लंगर डाले रहेंगे।

लंगर डाल दिया गया। पाल ढीले हो गए और जहाज झटके के साथ रुक गया। फिर नाव नीचे उतारी गई और खेनेवाले मल्लाह पतवार लेकर उस पर तैयार हो बैठे। तब धर्माचार्य भी उतरकर वहाँ अपने आसन पर आ बैठे। मल्लाहों ने खेना शुरू किया और नाव किनारे की तरफ बढ़ चली। कुछ दूर से उन्हें तीनों आदमी साफ दिखाई दे आए। जो सबसे लम्बा था, कमर से चटाई लपेटे था। उससे छोटा फटा-टूटा देहाती कुरता पहने था और नाटा जिसकी उम्र बहुत थी और कमर झुकी थी, सनातन कफनी में था। तीनों हाथ-में-हाथ रखे खड़े थे।

मल्लाहों ने किनारे नाव लगाई और धर्माचार्य के उतरने तक नाव को थाम रखा।

तीनों बुड्ढ़ों ने आचार्य को झुककर नमस्कार किया। धर्माचार्य ने आशीर्वाद दिया। आशीर्वाद पाकर वे और भी नीचे झुक आए।

तब धर्माचार्य उन्हें कहने लगे, "मैंने सुना है कि आप सज्जन पुरुष अपनी आत्मा के उद्धार के हेतु यहाँ रहते हैं और भगवान से स्व-पर कल्याण की प्रार्थना करते हैं। मैं भगवान का एक तुच्छ दास हूँ। उनकी कृपा और आदेश से जगत के प्राणियों को सन्मार्ग बताने का काम करता हूँ। मेरी इच्छा हुई कि आप भगवान के सेवक हैं, सो आपके पास आकर जो बने, आपकी सहायता करूँ और जो जानता हूँ, बताऊँ।"

वे तीनों वृद्ध इस पर मुस्कराकर एक-दूसरे को देखने लगे और चुप रहे।

धर्माचार्य ने कहा, "मुझे बताइए कि आप लोग अपनी आत्मा की रक्षा के निमित्त क्या करते हैं ? और इस द्वीप पर परमात्मा की सेवा-साधना किस प्रकार करते हैं ?"

इस प्रश्न पर सूरा फकीर मंद भाव से अपने सबसे वृद्ध साथी को देख उठा। इस पर वह पुरातन पुरुष मुस्कराया और बोला, "ईश्वर की सेवा तो हमको मालूम भी नहीं है। ईश्वर के दूत, हम तो सब अपने को पाल लेते हैं और अपनी सेवा कर लेते हैं।"

"लेकिन ईश्वर की प्रार्थना आप किस प्रकार करते हैं ?"

"प्रार्थना! हम तो इस तरह कहते हैं, तीन तुम, तीन हम। हम पर दया रखना मालिक!"

यह कहने के साथ तीनों ने प्रकाश की तरफ आँख उठाई और एक आवाज से दुहराया, "तीन तुम, तीन हम। हम पर दया रखना मालिक।"

धर्माचार्य मुस्कराए। बोले, "मालूम होता है आपने त्रिमूर्त और त्रिगुणात्मक की कोई बात सुनी है। लेकिन आपकी प्रार्थना सही नहीं है। आप संत पुरुषों ने मेरा प्रेम जीत लिया है। आप ईश्वर की प्रसन्नता चाहते हैं। किन्तु ईश्वर की सेवा का मार्ग आपको ज्ञात नहीं है। प्रार्थना की वह विधि नहीं है। देखिए, सुनिए, मैं आपको बताता हूँ। मैं कोई अपनी विधि नहीं बतला रहा हूँ। शास्त्रों में सब प्राणियों के मंगल के लिए प्रार्थना की जो विधि विहित है, वही मैं आपको सिखाना चाहता हूँ।"

कहकर आचार्य ने धर्म का तत्त्व उन फकीरों को समझाना शुरू किया कि कैसे परम पुरुष एक है, वही द्विधा होता है। फिर किस प्रकार प्रकृति, पुरुष और आदि बीज-पुरुष, यह विचित्र रूप परमात्मा का संपूर्ण स्वरूप कहाता है।

ईश्वर ने पृथ्वी पर अवतार धारण किया कि धर्म की रक्षा हो। उन अवतारों की वाणी से हमें प्राप्त हुआ है कि ईश्वर की कैसे प्रार्थना करनी चाहिए। सुनिए, मेरे साथ-ही-साथ बोलिए—

"हे परम पिता!"

"हे परम पिता!"—पहले वृद्ध ने दोहराया।

"हे परम पिता!"—दूसरे ने कहा।

फिर तीसरे ने कहा, "हे परम पिता!"

"—जिनका कि आकाश में वास है।"

"—जिनका कि आकाश में वास है।"—पहले साधु ने दोहराया।

लेकिन दूसरा फकीर कहते-कहते भूल गया और तीसरे से उन शब्दों का

उच्चारण ही ठीक नहीं बन पड़ा। उनके मुँह पर बाल बहुत घने थे, इससे आवाज साफ नहीं निकलती थी। सबसे वृद्ध वह पुरातन संत भी दाँत न होने की वजह से शब्दों को पूरा-पूरा और सही नहीं बोल पाते थे।

धर्माचार्य ने प्रार्थना फिर दोहराई और फिर फकीरों ने उसे तिहराया। आचार्य वहाँ एक पत्थर पर बैठे थे, सामने तीनों बूढ़े जोगी खड़े थे। वे आचार्य के मुँह की हरकत को देख-देखकर उन्हीं की तरह प्रार्थना के शब्दों का ठीक-ठीक उच्चारण करने की कोशिश करते थे। धर्माचार्य ने दिनभर प्रयत्न किया। एक-एक शब्द को बीस-बीस, और कोई सौ-सौ बार दोहराया। पीछे-पीछे वे साधु बोलते थे। बार-बार वे लड़खड़ाते भूलते, और गलत कहे चलते। लेकिन हर बार धर्माचार्य उन्हें सुधार देते थे और फिर नई बार शुरू करते थे। आचार्य ने परिश्रम से जी नहीं मोड़ा।। आखिर उस ईश-प्रार्थना को अब जोगी आचार्य के बिना भी पूरी-की-पूरी बोल सकते थे। सबसे पहले प्रार्थना उस मंझले जोगी ने सीखी। उन्हें याद हुई कि फिर आचार्य ने उन्हीं को बार-बार दोहराने को कहा। सो आखिर बाकी दोनों को भी वह कंठ होती गई। प्रार्थना सीख गए, तब आचार्य ने शांति पाई।

अब अंधियारा हो चला था और चाँद ऊपर दीखने लगा था। अब धर्माचार्य ने अपने जहाज पर लौट चलने की सोची। उस समय उन बुड्ढों ने उनके सामने धरती तक झुककर दंडवत् किया। धर्माचार्य ने बड़े प्रेम से उन्हें ऊपर उठाया और सबको गले लगाया। कहा कि आप लोग इसी तरह प्रार्थना किया कीजिए। अंत में वह नाव पर सवार होकर अपने जहाज को लौट चले। नाव में बैठे थे और मल्लाह नाव को जहाज की तरफ खे रहे थे, तब भी उन्हें फकीरों की आवाज सुन पड़ती रही। वे आचार्य की सिखाई प्रार्थना जोर-जोर से दुहरा रहे थे। नाव जहाज से आकर लगी। उस समय उनकी आवाज तो नहीं सुन पड़ती थी; पर चाँद की चाँदनी में वे ज्यों-के-त्यों खड़े हुए वहाँ अब भी दिखलाई देते थे। सबसे छोटे बीच में थे, मंझले बाएँ और लम्बे कद के जोगी दाएँ थे। धर्माचार्य के पहुँचने पर जहाज का लंगर उठा दिया गया। पाल खुल गए और जहाज उद्यत हो गया। बादबानों में हवा भरनी थी कि जहाज चल पड़ा। धर्माचार्य पीछे बैठकर जहां से आए थे, उस द्वीप के तट को देखते रहे। कुछ देर तक तो वे तीनों साधु निगाह में रहे। कुछेक देर बाद वे ओझल हो गए। द्वीप का किनारा फिर भी कुछ काल दीखता रहा। फिर शनैः-शनैः वह मिट गया। अब बस समंदर की लहराती चाँदी की सतह चाँद की चाँदनी में चमकती दीखती थी।

यात्री लोग जहाज पर सो गए थे। चारों ओर शांति थी। पर आचार्य की सोने की इच्छा नहीं। वह अपनी जगह अकेले बैठे समंदर में उसी तरफ देख रहे थे जहां पर

वह टापू था, पर जो दीख नहीं रहा था। उन्हें उन जोगियों की याद आती थी, "कैसे सज्जन संत प्राणी थे और ईश-प्रार्थना को सीखकर कैसे कृतार्थ मालूम होते थे।" उन्होंने प्रभु को धन्यवाद दिया कि प्रभु ने बड़ी कृपा की कि ऐसे सज्जन पुरुषों की सहायता का अवसर मुझे दिया और मुझे उन लोगों को वैदिक प्रार्थना सिखाने का सौभाग्य मिला।

आचार्य इस तरह सोचते हुए एकटक समंदर की सतह पर निगाह डाले उस टापू की दिशा में मुंह करके बैठे थे। चाँदनी चमक रही थी। लहरें यहाँ-वहाँ किल्लोलें लेकर कभी धीमी आवाज से खिलखिल हँस पड़ती थीं। ऐसे ही समय अकस्मात् क्या देखते हैं कि चाँद की किरणों से समंदर के पानी पर जो चमकीली राह-सी बन आई है, उस पर कोई सफेद झकझकाती वस्तु बढ़ती चली आ रही है। क्या है? समंदरी कोई जंतु है, या कि किसी किश्ती के छोर में लगी धातु ही ऐसी झलक रही है? अचरज से आचार्य की आँखें उस पर पड़ गईं।

उन्होंने सोचा कि जरूर यह कोई नाव हमारे पीछे आ रही है। लेकिन यह तो बड़ी तेजी से बढ़ी आ रही है। मिनट भर पहले वह जाने कितनी दूर थी, अब कितनी पास आ गई है। नहीं, नाव नहीं हो सकती। पाल तो कहीं दीखते ही नहीं हैं। जो हो, वस्तु वह कोई हमारे पीछे आ रही है और हमें पकड़ना चाह रही है।

लेकिन चीन्ह न पड़ता था कि क्या है। नाव नहीं, पक्षी नहीं, समंदरी कोई जंतु नहीं। आदमी?—लेकिन आदमी इतना बड़ा कहाँ होता है। फिर वहाँ समंदर के बीच आदमी कहाँ से आ जाता? धर्माचार्य उठे और बड़े माँझी से बोले, "देखो तो भाई, वह क्या है?"

धर्माचार्य को मानो दीखा कि वे तो तीनों ही साधु मालूम होते हैं और पानी पर दौड़ते चले आ रहे हैं। दाढ़ी उनकी चमक रही है और खुद चाँदनी की भाँति उज्ज्वल दीखते हैं।

पर देखकर भी, जैसे आँखों को भरोसा न हो, आचार्य ने दुहराया, "क्या है, क्या चीज है वह, माँझी?"

लेकिन साधु तो ऐसी तेजी से बढ़े आ रहे थे कि जहाज मानो चल ही न रहा हो, उनके आगे बिलकुल थिर पड़ गया हो।

माँझी तो उन जोगियों को उस भाँति पानी पर चला आता देखकर दहशत के मारे सब भूल गया और पतवार से हाथ छोड़ बैठा। बोला—

"बाबा रे, वे जोगी तो हमारे पीछे ऐसे भागे आ रहे हैं कि मानो पाँव तले उनके सूखी धरती ही हो।"

माँझी की आवाज सुनकर और यात्री भी जाग उठे और सब वहीं घिर आए।

देखा तो तीनों साधु हाथ-में-हाथ डाले चले आ रहे हैं, और उनमें आगे के दो जहाज को ठहरने को कह रहे हैं। अचंभा देखो कि बिना पैर चलाए पानी की सतह पर वह तो चलते चले ही आ रहे हैं। जहाज ठहर भी न पाया था कि साधु आ पहुँचे। सिर उठाकर तीनों मानो एक स्वर से बोले, "हे उपकारक, ईश्वर के सेवक, हम लोगों को तुम्हारी सिखाई प्रार्थना याद नहीं रही है। जब तक दोहराते रहे, वह याद रही। जरा रुके कि एक शब्द ध्यान से उतर गया। फिर तो सारी कड़ी ध्यान में से बिखरकर गिरती जा रही है। अब उसका कुछ भी ओर-छोर हमें याद में पकड़ नहीं आता। हे गुरुवर, हमें प्रार्थना फिर सिखाने की कृपा कीजिए।"

आचार्य ने सुनकर मन-ही-मन में राम-नाम का स्मरण किया और कहा, "हे संत पुरुषो, आपकी अपनी प्रार्थना ही ईश्वर को पहुँच जाएगी। मैं आपको सिखाने योग्य नहीं हूँ। मेरी विनय है कि मुझ पापी के लिए भी आप प्रार्थना कीजिएगा।"

कहकर आचार्य ने उन वृद्ध जनों के आगे धरती तक झुककर नमस्कार किया। वे जोगी फिर लौटकर समंदर पार कर गए और जहाँ वे आँख से ओझल हुए, सबेरा फूटने तक वहाँ प्रकाश जगमगाता रहा।

आम बराबर गेहूँ

एक बार एक नदी की अमराई में कुछ बच्चे खेल रहे थे कि उन्होंने एक चीज पाई। देखने में वह गेहूँ के दाने जैसी मालूम होती थी। अधबीच में उसके एक लकीर बनी थी जैसे दो दल जुड़े हों। लेकिन दाना वह इतना बड़ा था जैसे देशी आम।

एक मुसाफिर ने बच्चों के हाथ में उसे देखा तो दो-एक पैसा देकर उसे ले लिया। वह मुसाफिर फिर उसे ले गया और राजधानी के नगर में वहाँ राजा के हाथ अजाएबात के नाम पर उसे बेचकर दौलत बनाई।

राजा ने अपने दरबार के नवरत्न पंडित बुलाए। कहा कि यह चीज क्या है सो बतावें। पंडितों ने बहुत सोचा, बहुत विचारा; पर उन्हें उस चीज का कुछ अता-पता नहीं मिला। आखिर एक दिन वह दाना खिड़की पर रखा था कि मुर्गी उड़कर आई और उसमें चोंच मारनें लगी। इस तरह उसमें छेद हो गया। तब पंडितों ने देखा कि अरे, यह तो गेहूं का ही दाना है। इस पर पंडितों ने राजा से जाकर कहा, "महाराज, यह दाना अन्न राज गेहूँ का है।"

यह सुनकर राजा को बड़ा विस्मय हुआ। उन्होंने पंडितों से कहा कि कहाँ और कब ऐसा नाज का दाना पैदा हुआ, इसका पता आप लगाकर दें। पंडित लोग फिर

सोच में पड़ गए। उन्होंने अपनी पोथियाँ टटोलीं और शास्त्र छाने। लेकिन इस बाबत कोई जानकारी हाथ नहीं आई। आखिर राजा के पास आकर बोले—

"हम कुछ नहीं बता सकते महाराज। इस बारे में हमारी पोथियों में कोई उल्लेख नहीं मिला। इसके लिए तो किसानों से पूछना होगा, महाराज! शायद कोई उनमें अपने पुरखाओं से जानता हो कि कहाँ और कब गेहूँ का दाना इतना बड़ा उगा करता था।"

सो राजा ने हुक्म दिया कि बड़ी-बड़ी उमर के किसान लोग उनके सामने लाए जावें। आखिर ऐसा एक आदमी आया जिससे पता चलने की आस बँधी। वह राजा के सामने हुआ। बुड्ढा था और कमर उसकी झुक गई थी। दाँत थे नहीं। चेहरा मुलतानी मिट्टी-सा पीली था। दो बैसाखियों के सहारे ज्यों-त्यों लड़खड़ाता महाराज की उपस्थिति में वह लाया गया।

राजा ने यह दाना उसे दिखाया। लेकिन बुड्ढे की आँखें मुश्किल से देखने लायक थीं। उसने उसे हाथ में लेकर टटोलकर देखा।

राजा ने पूछा, "बता सकते हो कि ऐसा दाना कहाँ और कब उगा? क्या तुमने ऐसे बड़े दानों का नाज कभी खरीदा है, या कभी अपने खेत में बोया या उगाया है?"

वह बुड्ढा कान का कुछ ऐसा निपट बहरा था कि राजा की बात मुश्किल से सुन सका और काफी देर में वह उसकी समझ में आई। आखिर उसने जवाब दिया, "नहीं, ऐसा नाज न मैंने बोया है, न कभी काटा है, न कभी खरीदा है। जब नाज बेचा-खरीदा करते थे तब भी दाना जैसा आज है उतना ही छोटा होता था। लेकिन मेरे बाप से आप पूछकर देखें। उन्होंने शायद सुना होगा कि ऐसा दाना कहाँ उगता था।"

इस पर राजा ने बाप को लाने का हुक्म दिया। उसकी खोज-खबर हुई और आखिर महाराज के सामने उसे लाया गया। वह एक बैसाखी से चलता हुआ आया। राजा ने उसे दाना दिखाया। उस किसान ने दाने को गौर-से देखा। वह अपनी आँखों से अब भी भली प्रकार देख सकता था।

राजा ने पूछा, "अब बतला सकते हो, चौधरी कि यह कहाँ से पैदा होता है? क्या इस तरह का नाज कभी तुमने खरीदा-बेचा या अपने खेत में बोया-उगाया है?"

वह आदमी थोड़ा ऊँचा तो सुनता था, लेकिन अपने लड़के जैसा उसका बदहाल न था।

उसने कहा, "नहीं, मैंने ऐसे दाने का नाज अपने खेत में न बोया, न काटा। और

बेचने-खरीदने की जो बात आपने कही मैंने नाज कभी खरीदा नहीं और न बेचा। क्योंकि हमारे जमाने में सिक्के का चलन ही नहीं था। सब अपना नाज उगा लेते थे और कमी होती या और जरूरत होती तो आपस में बांट-बदल लेते थे। मुझे मालूम नहीं कि यह नाज कहाँ की उपज है। हमारे जमाने का दाना आज के दाने से तो बेशक काफी बड़ा होता था और भारी होता था, लेकिन इस जैसा नाज का दाना मैंने आज तक नहीं देखा; हाँ, मैंने अपने बाप को कहते सुना है कि उनके जमाने में गेहूँ बहुत होता था। और एक दाना बहुत चून देता था। आप उनसे पूछें।''

सो राजा ने इन बाप के बाप को भी बुला भेजा। खोज करने पर वह भी मिल गए और राजा के सामने लाए गए। वह बिना किसी लठिया के सहारे सीधे चलते हुए वहाँ आ गए। निगाह उनकी निर्दोष थी। कान ठीक सुनते थे और बोलते भी वह साफ और स्पष्ट थे।

राजा ने उन्हें दाना दिखाया। उन वृद्ध पितामह ने उसे देखा और हाथ में लेकर परखा। फिर बोले, ''आज कहीं मुद्दत बाद ऐसा गेहूँ देखने को हमें मिला है।'' यह कहकर उन्होंने कतरकर जरा जीभ पर लिया।

बोले, ''हाँ, यह वही किस्म है।''

राजा ने कहा, ''पितामह, बतलाइए कि कब और कहाँ ऐसा गेहूँ उगा करता था? क्या आपने ऐसा अन्न कभी खुद मोल लिया है या अपने खेत में लगाया है?''

उन वृद्ध पुरुष ने उत्तर दिया, ''राजन्, मेरे जमाने में ऐसा अन्न सब कहीं हुआ करता था। मेरी जवानी ऐसे नाज पर ही पली है। औरों को भी ऐसा ही नाज मैंने खिलाया है। ठीक इसी तरह का दाना हमारे खेत की बालों में पड़ा करता था। उसी को सब बोते, काटते और गाहते थे।''

राजा ने पूछा, ''पितामह, यह बतलाइए कि यह दाना आप कहीं से मोल लाए थे या अपने आप उगा था?''

वृद्ध पुरुष सुनकर मुस्कराए। बोले, ''हमारे जमाने में अन्न बेचने जैसे पाप की कोई बात भी कभी नहीं सोच सकता था और सिक्के को हम जानते भी न थे। हरेक के पास अपनी काफी रहता था।''

राजा ने कहा, ''तो आपके वे खेत कहाँ थे और ऐसा नाज आप जाकर उगाते थे?''

पितामह ने उत्तर दिया, ''हमारे खेत क्या? ईश्वर की यही धरती तब थी। जहां हल जोता और मेहनत की कि वहीं हमारा खेत हुआ। जमीन छूटी बिछी थी। मालिक-मिल्कियत की बात न थी। जमीन ऐसी कोई चीज नहीं थी कि मेरी-तेरी होती। हमारे जमाने में एक हाथ की मेहनत ही ऐसी चीज थी जिसमें लोग अपना

हक मानते थे, नहीं तो कोई नहीं।''

राजा ने कहा, ''दो सवालों का और जवाब दीजिए, पितामह! पहला सवाल यह कि धरती पहले ऐसा दाना कैसे देती थी और अब देना क्यों बंद हो गया? दूसरा यह कि आपका पोता तो बैसाखियों से चलकर यहाँ आया, बेटा एक लठिया के सहारे पहुँचा और आप बिना किसी सहारे के चलते आ गए। आपकी आँखों की रोशनी भी उजली है, दाँत मजबूत हैं और बानी साफ और मधुर है, यह कैसे हुआ?''

उन पुरातन पुरुष ने उत्तर दिया—

''ऐसा इसलिए हुआ कि आदमियों ने आज अपनी मेहनत के भरोसे रहना छोड़ दिया है और दूसरों की मेहनत का आसरा थाम कर रहते हैं। पुराने जमाने में लोग ईश्वर के नियम पालते थे और वैसे रहते थे। जो उनका था, वही उनका था। दूसरे की मेहनत और उसके फल पर उन्हें लोभ नहीं होता था।''

काम, मौत और बीमारी

भारत के आदिम लोगों में एक कथा प्रचलित है—

कहते हैं कि भगवान ने पहले-पहल आदमी तो ऐसा बनाया था कि उसे काम-धाम की जरूरत नहीं थी। न रहने को मकान चाहिए था, न पहनने को कपड़े। तन यों ही पलता था और सबकी सौ बरस की उमर होती थी। और रोग-शोक का किसी को पता न था।

कुछ काल बाद भगवान ने अपनी सृष्टि की ओर मुँह फेरकर देखा कि उसका क्या हाल है। देखते क्या हैं कोई अपने जीवन से खुश नहीं है और वहाँ कलह मची हुई है। सबको अपनी-अपनी लगी है और हालत ऐसी बना डाली है कि जीवन आनंद के बदले क्लेश का मूल हो रहा है।

ईश्वर ने सोचा कि यह बात इसलिए हुई कि सब अलग-अलग अपने-अपने लिए रहते हैं।

इससे हालत को बदलने के लिए ईश्वर ने एक काम किया। ऐसा बंदोबस्त कर दिया कि काम बिना जीवन संभव ही न रहे। सरदी के दु:ख से बचने के लिए रहने को जगह बनानी पड़े—चाहे खोदकर गुफा बनाओ, चाहे चिनकर मकान खड़े करो। और भूख मिटाने के लिए फल या अनाज बोना , उगाना और काटना पड़े।

ईश्वर ने सोचा कि काम से उनमें संघ पैदा होगा और वे सम्मिलित बनेंगे। उन्हें औजार बनाने पड़ेंगे। यहाँ से वहाँ तैयार माल ले जाना होगा। मकान बनाएँगे। खेत

जोतें और नाज बोएँगे। कात-बुनकर कपड़ा बनाएँगे और इनमें कोई काम एक अकेले हो न सकेगा।

तब उन्हें समझ आ जाएगी कि जितने एक मन से साथ होकर वे काम करेंगे उतनी ही बढ़वारी होगी और जीवन फले-फूलेगा। यह बात उनमें एका ले आएगी और सबकी ऐसे बरकत होगी।

कुछ काल बीता और भगवान ने फिर सृष्टि की ओर ध्यान दिया कि अब क्या हाल है। अब लोग पहले से चैन से तो हैं न।

लेकिन देखने में आया कि हालत पहले से खराब है। काम तो साथ करते हैं (क्योंकि और कुछ वश ही नहीं हैं) पर सब साथ नहीं होते। उनमें दल-वर्ग बन गए हैं। वे अलग-अलग वर्ग एक-दूसरे के काम के लिए छीना-झपटी करते हैं और एक-दूसरे की राह में रोक बनते हैं। इस खींच-तान में समय और शक्ति बरबाद जाती है। सो सबकी हालत बिगड़ी है और दिन-दिन बिगड़ती जाती है।

भगवान ने सोचा कि यह भी ठीक नहीं। अब ऐसा करें कि आदमी को अपनी मौत का कुछ पता न रहे। उसके बिना जाने किसी घड़ी वह आ जाए। आयु उसकी निश्चित न रहे। ऐसे आदमी आप सँभल जाएगा।

सो इसी प्रकार की व्यवस्था भगवान ने कर दी। उन्होंने सोचा कि मौत का ठीक ठिकाना आदमी को नहीं रहेगा तो एक-दूसरे से छीना-झपटी भी वह नहीं करेंगे। उन्हें खयाल होगा कि जाने कैघड़ी की जिंदगी है, सो ऐसे जिंदगी के थोड़े से क्षणों को चलो, क्यों नाहक हम बिगाड़ें।

लेकिन बात उल्टी हुई। भगवान जब फिर अपनी सृष्टि को देखने आए तो क्या देखते हैं कि वहाँ तो जीवन पहले से, बल्कि उससे भी ज्यादा खराब है।

जो बलवान थे, उन्होंने यह देखकर कि आदमी तो चाहे जब मर सकता है, कमजोरों को मौत दिखाकर बस कर लिया है। कुछ को मार दिया, औरों को उसने डर से ही डरा दिया। होते-होते यह होने लगा कि वे ताकतवर लोग और उनकी संतान काम से जी चुराने लगी। उन्हें समय काटना ही सवाल हो गया और अपना आलस बहलाने के नाना उपाय वे करने लगे। और जो कमजोर थे, उन्हें इतना काम करना पड़ने लगा कि दम मारने की फुर्सत न मिलती। ऐसे दोनों तरह के लोग एक-दूसरे से खार खाते थे और बचते और डरते थे। दोनों दुखी थे और आदमी का जीवन पहले से गया-बीता और दुर्भर होता जाता था।

यह देखकर ईश्वर ने सुधार की एक तदबीर की। सोचा कि यह उपाय पक्का होगा। बहुत सोच-समझकर भगवान ने आदमी के बीच तरह-तरह की बीमारियाँ भेज दीं। सोचा कि हरेक के सिर पर जब बीमारियाँ खेलती रहा करेंगी तो जो अच्छे

होंगे, वे बीमार पर और दुर्बल पर दया करेंगे और सहाय करेंगे, क्योंकि जाने वे खुद बीमारी में कब न फँस जाएँ। वे औरों पर दया करेंगे तभी अपने लिए दया की आस उन्हें हो सकेगी।

यह इंतजाम करके भगवान निश्चिंत हुए। लेकिन फिर जो अपनी उस सृष्टि को देखने वह आए, जिसे अपनी करुणा में उन्होंने बीमारियों का दान दिया था, तो देखते हैं कि आदमी की हालत बद-से-बदतर है। उसकी भेजी बीमारियों से वह मिलना तो क्या, उल्टे आपस में और भी फटने-बँटने लगे हैं। ताकतवर लोग अपनी बीमारी में कमजोरों से और भी मेहनत कराने और अपनी सेवा लेने लगे हैं लेकिन खुद जब वे सेवक बीमार पड़ते हैं तो उन्हें पूछने भी नहीं आते हैं। और जिन्हें इस तरह खूब काम में जोता जाता और बीमारी में सेवा ली जाती है, वे खिदमत करते-करते थकान से ऐसे चूर हो जाते हैं कि बीमारी में अपनी या अपनों की कोई मदद नहीं कर सकते, और बस भाग-भरोसे हो रहते हैं। तिस पर धनी आदमियों ने इन गरीब लोगों के लिए खैराती अस्पताल वगैरह खड़े कर दिए हैं कि जिससे अपनी मौज में विघ्न न पड़े और गरीब दूर-ही-दूर रहें। वहाँ अस्पताल में गरीब बेचारे अपने सगे-स्नेहियों की सेवा से दूर हो जाते हैं कि जिससे थोड़ा ढाढस उन्हें पहुँच सकता था। फिर वहाँ ऐसे किराए के आदमियों और नर्सों के पल्ले वे पड़ते हैं कि जो बिना किसी दया-ममता के, बल्कि कभी तो झींक और तिरस्कार के साथ, दवा उनके गले उतार दिया करते हैं। तिस पर कुछ बीमारियों को छूत की मान लिया जाता है, और कहीं वह लग न जाए, इस डर से बीमारों से बचा जाता है और जो बीमार के पास रहते हैं, उन तक से दूर रहा जाता है।

यह देखकर भगवान ने मन में कहा कि अगर ऐसे भी इन लोगों को यह समझ नहीं आता है कि इनका सुख किसमें है तो फिर उन्हें दुःख ही मिलने दो। दुःख भोगकर ही वे समझेंगे। यह सोच भगवान ने उन्हें उन पर छोड़ दिया।

इस तरह आदमी को आजाद हुए मुद्दत बीत गई कि अब कहीं कुछ उनमें से समझे हैं कि कैसे वे प्रसन्न रह सकते हैं और रहना चाहिए। काम कुछ के लिए हौआ हो और दूसरों के लिए नित का कोल्हू, यह ठीक नहीं है। बल्कि काम से तो सब मिल-जुलकर आपस में हेल-मेल और खुशी के साथ रहना सीखने की सुगमता होनी चाहिए। सिर पर जब मौत अड़ी-खड़ी है और किसी पल भी वह आ सकती है तो वैसी हालत में आदमी के लिए समझदारी का काम यही हो सकता है कि वह अपनी आयु के क्षण, छिनपल और वर्ष प्रीति, सेवा और भक्ति में बिताए। अब कहीं कुछ समझने लगे हैं कि बीमारी एक-से-एक को हटाने को नहीं है, बल्कि एक-दूसरे को प्रेम के और सेवा के सूत्र में पास लाने के लिए मिली है।

तीन सवाल

एक राजा था। एक बार उसने सोचा कि तीन बातें मालूम हो जाएँ, तो कभी कोई मन की साध अधूरी न रहे और सब काम पूरे हो जाया करें। एक तो यह कि कोई काम कब शुरू किया जाए। दूसरी कि कौन ठीक आदमी है जिनकी सुनी जाए और किनकी अनसुनी छोड़ दी जाए। तीसरी यह कि जरूरी काम कौन-सा है।

यह विचार आने पर उसने अपने सारे राज्य में ऐलान कर दिया कि जो कोई आकर ये तीन सवाल बताएगा, उसे खूब इनाम मिलेगा। एक, हर काम का ठीक समय क्या है। दो, कि सबसे जरूरी आदमी कौन है और तीन, कि सबसे महत्त्व का काम कैसे जाना जा सकता है।

सो बड़े-बड़े विद्वान दूर-दूर से राजा के पास आए। सबने जवाब दिए। पर सबके उत्तर अलग-अलग थे।

पहले सवाल के जवाब में किन्हीं ने तो कहा कि हर एक काम वक्त के लिए बरस, महीने, दिन का पहले से एक गोशवारा तैयार रखना चाहिए। उसमें सब काम का समय नियत कर देना चाहिए। बस फिर एकदम उसी के अनुसार करना चाहिए। उनकी राय थी कि सिर्फ इसी तरह हर काम अपने ठीक वक्त से हो सकता है, नहीं तो नहीं। दूसरों का कहना था कि पहले से हरेक काम का समय बाँध लेना ही मुमकिन नहीं है। असल में चाहिए यह कि बिना इधर-उधर की खामखा बातों में उलझे आदमी अपने आस-पास का खयाल रखे। और जो जरूरी उपयोगी हो, वही करता चले। कुछ औरों ने बताया कि महाराज, आस-पास का कितना भी ध्यान रखो, लेकिन वास्तव में एक आदमी ठीक-ठीक हर काम का सही वक्त नहीं तय कर सकता। इसके लिए पंडितों की एक सभा होनी चाहिए जो इसमें महाराज की संहायता किया करे और प्रत्एक काम का उचित समय निर्धारित कर दिया करे।

लेकिन इस पर और बोले कि वाह, कुछ बातें ऐसी नहीं होतीं कि सभा में आएँ तब कहीं जाकर फैसला हो। उन पर तो तभी-के-तभी निर्णय देना होता है कि क्या करें, क्या नहीं। लें, कि छोड़ें? लेकिन यह तय करने के लिए पहले कुछ पता होना जरूरी है कि किसका क्या फल होनेवाला है। और आगे की बात बस ज्योतिषी तंत्र-मंत्र जाननेवाले जानते हैं। सो हरेक काम का ठीक मुहूर्त जानने को पूछकर चलना चाहिए।

दूसरे सवाल के भी जवाब उसी तरह सबके अलग-अलग थे। कुछ बोले कि राजा के लिए सबसे जरूरी लोग हैं राजदरबारी। किसी ने कहा कि पुरोहित। औरों ने कहा वैद्य। कुछ और बोले नहीं, राज में सबसे जरूरी सिपाही होते हैं।

और तीसरे सवाल के जवाब में कि सबसे जरूरी काम कैसे जाना जाता है, कुछ ने तो जवाब दिया कि दुनिया में सबसे जरूरी वस्तु है विज्ञान।

औरों ने कहा कि जगत में रण-चातुरी सबसे बढ़कर बात है। कुछ अन्य बोले कि धर्म की पूजा से आगे तो कुछ भी नहीं है, वह श्रेष्ठ है।

जवाब सब अलग-अलग थे। सो राजा किन्हीं से राजी नहीं हुआ। और किसी को इनाम नहीं दिया। पर सवालों के ठीक जवाब पाने की इच्छा उसके मन में थी ही। सो एक जोगी से जाकर पूछने की उसने मन में ही ठहराई! उस जोगी के ज्ञान की दूर-दूर शोहरत थी।

वह जोगी एक वन में रहता था। कभी बाहर नहीं आता था। और देहात के सीधे-सादे लोगों के अलावा किन्हीं और से नहीं मिलता था। सो राजा ने अपना सादा वेष कर लिया और जोगी की कुटिया आने से पहले ही घोड़े से उतर पाँव-पाँव हो लिया। साथ के रक्षक सिपाहियों को वहीं छोड़ दिया और कुल एक—अकेला होकर चला।

राजा पास पहुँचा तो देखता है कि जोगी कुटिया के आगे धरती खोद रहे हैं। राजा को देखकर जोगी ने स्वागत-वचन कहे और फिर उसी तरह अपने खोदने में लगे रहे। जोगी की काया निर्बल थी और वह कृश थे। धरती में एक फावड़ा मारते कि उनकी साँस जोर-जोर से चलने लगती थी।

राजा ने पास जाकर कहा, "हे ज्ञानी जोगी, मैं आपके पास तीन सवाल पूछने आया हूँ। पहला, ठीक काम का ठीक वक्त मैं कैसे जान सकता हूं। दूसरा कि कौन लोग मेरे लिए सबसे जरूरी हैं और इसलिए किनका औरों से मुझे विशेष खयाल रखना चाहिए। और तीसरा कौन काम सबसे महत्त्व का है जिधर मुझे पहले ध्यान देना चाहिए।"

जोगी ने राजा की बात सुनी, पर जवाब नहीं दिया। हथेली को थूक से गीलाकर फावड़ा ले आपने फिर खोदना शुरू कर दिया।

राजा ने कहा, "आप थक गए हैं, लाइए, मुझे फावड़ा दीजिए" कुछ देर मैं ही आपकी जगह काम कर दूँ।"

"अच्छा—"

कहकर फावड़ा जोगी ने राजा को दे दिया और खुद अलग जमीन पर बैठ सुस्ताने लगा।

दो क्यारी खोद चुकने पर राजा रुके और उन्होंने अपने सवालों को दुहराया। जोगी ने फिर कोई जवाब नहीं दिया। पर खड़े हो गए और हाथ बढ़ाकर बोले, "लाओ, अब तुम आराम करो। मैं खोद लेता हूँ।"

पर राजा ने फावड़ा उन्हें नहीं दिया और आप ही खोदने लगा। एक घंटा बीता, फिर दूसरा बीता। ऐसे पेड़ों के पीछे सूरज छिपने लगा। आखिर राजा ने फावड़ा धरती में लगा छोड़, कहा, "हे ज्ञानी पुरुष, मैं अपने प्रश्नों के उत्तर के लिए आपके पास आया था। अगर आप मुझे कोई जवाब नहीं दे सकते तो वैसा कहिए, मैं घर चला जाऊँगा।"

जोगी ने कहा, "देखो, वह कोई भागा आ रहा है। जाने कौन है।"

राजा ने मुड़कर देखा तो एक दाढ़ीवाला आदमी वन से भागा आ रहा था। उसने दोनों हाथों से पेट को अपने दबा रखा था और वहाँ से लहू बह रहा था। राजा के पास पहुँचना था कि वह धीमी आवाज से कराहता हुआ गिर गया और बेहोश हो गया। राजा ने और जोगी ने उस आदमी के कपड़े खोले। पेट में उसके एक बड़ा घाव था। जैसे बन पड़ा राजा ने उस घाव को धोया और जोगी का अंगोछा ले अपना रूमाल फाड़ उसकी पट्टी-वट्टी बाँधी। लेकिन खून रुकता नहीं था। राजा ने खून से तर-बतर पट्टी को फिर खोला और धोया और फिर पट्टी बाँधी। ऐसे आखिर खून बहना बंद हुआ तो आदमी होश में आया और उसने पीने को कुछ माँगा। राजा ने ताजा पानी लाकर उसे पिलाया। इतने में सूरज छिप गया था और सरदी होने लगी थी। सो जोगी की मदद से राजा उस घायल आदमी को कुटिया के अंदर ले गया और वहाँ बिछौने पर लिटा दिया। बिछौने पर पहुँचकर आदमी ने आँखें मींच लीं और उसे कुछ चैन मालूम हुआ। लेकिन राजा भी अब थक गया था। कुछ तो वह इतना चला था और कुछ काम की थकान थी। सो वह वहीं देहलीज के पास चौखट का तकिया लगा गुड़ी-मुड़ी लेट गया, लेटते ही सो गया और ऐसी नींद गाढ़ी आई कि गरमियों की वह छोटी रात जरा में कब निकल गई पता नहीं चला। सबेरे पलक मींजता जो वह उठा तो कुछ देर तो उसे याद न आई कि कहाँ हूँ और यह आदमी कौन है। वह अजनवी दाढ़ीवाला आदमी बिछौने पर पड़ा चमकीली आँखों से गौर बाँधकर उसी की तरफ देख रहा था।

जब देखा कि राजा जग गया है और उसी की तरफ देख रहा है तो दाढ़ीवाले आदमी ने धीमी आवाज में कहा, "जी, मुझे माफ कीजिए।"

राजा बोला, "भाई, मैं तो तुम्हें जानता नहीं हूँ। और माफ मैं किस बात के लिए तुम्हें कर सकता हूँ।"

घायल बोला, "आप मुझे नहीं जानते हैं। लेकिन मैं आपको जानता हूँ। मैं वही आपका दुश्मन हूँ जिसने आपसे बदला लेने की कसम खाई थी। आपने मेरे भाई को फांसी दी थी और जाएदाद छीन ली थी। मुझे मालूम था कि आप यहाँ जोगी के पास अकेले आए हैं। मन में ठहराया था कि लौटते वक्त मैं आपका तमाम काम कर दूँगा।

लेकिन दिन पूरा हो गया और आप लौटे नहीं। सो मैं अपने छिपने की जगह से देखने के लिए बाहर आया। बाहर आने पर आपके संतरी लोग मिले। उन्होंने मुझे पहचान लिया और घायल कर दिया। ज्यों-त्यों उनसे बच मैं भाग तो आया; लेकिन आप मेरे घाव पर पट्टी न बाँधते तो मैं मर ही चुका था। सो देखो, मैंने तो आपको मारने की ठानी और आपने मेरी जान बचाई। अब मैं जीता रहा और आपने चाहा तो जन्म भर गुलाम की तरह आपकी ताबेदारी करूँगा और अपने बेटे को भी यही ताकीद कर जाऊँगा। आप मुझे माफ कर दें, यह विनती है।"

राजा को बड़ी प्रसन्नता हुई। ऐसे सहज दुश्मन से सुलह ही नहीं हो गई बल्कि दुश्मन की जगह यह आदमी दोस्त हो गया। सो राजा ने उसे माफ ही नहीं किया, बल्कि कहा कि मैं अभी तुम्हारी तीमारदारी में अपने आदमी और राज-वैद्य भेज देता हूँ। और जाएदाद भी सब लौटाने का वचन राजा ने भरा।

घायल आदमी से रुखसत लेकर राजा जोगी को देखने बाहर आया। जाने के पहले एक बार फिर वह जोगी से अपने सवालों का जवाब पाने के लिए निवेदन करना चाहता था। जोगी बाहर धरती पर घुटनों के बल बैठ कल की खुदी क्यारियों में बीज बो रहे थे।

राजा पास आकर बोला, "हे ज्ञानी पुरुष, अंतिम बार मैं फिर आपसे अपने प्रश्नों के उत्तर के लिए प्रार्थना करता हूँ।"

अपनी दुबली टाँगों पर उसी तरही सिकुड़े धरती पर बैठे जोगी ने अपने सामने खड़े राजा की तरफ देखकर कहा, "जवाब तो तुमको मिल गया है, भाई।"

"मिल गया है?" राजा ने पूछा, "कैसे? आपका क्या मतलब है?"

जोगी बोले, "देखते नहीं हो, अगर कल मेरी दुर्बलता पर तुम दया नहीं करते, और मेरी जगह इन क्यारियों को नहीं खोदने लगते, बल्कि वापस राह लौट जाते, तो वह आदमी तुम पर हमला कर बैठता कि नहीं? और फिर यहाँ न ठहरने के लिए तुम पछतावा करते। सो सबसे जरूरी वक्त तुम्हारे लिए था जब तुम क्यारियाँ खोद रहे थे। और तब सबसे जरूरी आदमी तुम्हारे लिए था मैं। और फिर मेरी भलाई करना तुम्हें उस वक्त सबसे जरूरी काम था। इसके बाद वह आदमी जब भागा-भागा हमारे पास आकर गिरा तो सबसे महत्त्व की घड़ी थी, जब तुम उसकी परिचर्या में लगे। क्योंकि अगर तुम घाव न बाँधते तो मन में वह तुम्हारा वैर साथ लिए-लिए ही मरता। इसलिए उस समय वह तुम्हारे लिए सबसे जरूरी आदमी था और जो उसके अर्थ किया, वही तुम्हें सबसे महत्त्व का काम था। इससे याद रखो कि एक ही घड़ी है जो महत्त्व की है और वह हाल की घड़ी है। वही सबसे महत्त्व की है, क्योंकि वही घड़ी है जो हम जीते हैं और हमारे हाथ में होती है। और सबसे जरूरी

और महत्त्व का आदमी वह है कि जिसके साथ इस घड़ी हम हों। क्योंकि कौन जानता है कि आगे किसी और दूसरे से मिलना हमारी किस्मत में बदा भी हो कि नहीं। और सबसे महत्त्व का काम है उस आदमी की उस वक्त की जो सेवा हो कर देना। क्योंकि वही एक काम है जिसको आदमी के हाथ देकर उसे यहाँ भेजा गया है।''

हमसे सयाने बालक

रूस देश की बात है। ईस्टर के शुरू के दिन थे। बरफ यों गल चला था, पर आँगन कहीं-कहीं अब भी चकत्ते थे। और गल-गलकर बरफ का पानी गाँव की गलियों में होकर बहता था।

एक गली में आमने-सामने के घरों से दो लड़कियाँ निकलीं। गली में था पानी। पानी वह पहले खेतों में चलकर आता था, इससे मैला था। बाहर गली के चौड़े में एक जगह खाली तलैया-सी बन गई थी। दोनों लड़कियों में एक तो बहुत छोटी थी, एक जरा बड़ी थी। उनकी माँओं ने दोनों को नए फ्राक पहनाए थे। नन्हीं का फ्राक नीला था और बड़ी का पीली छींट का। और दोनों के सिर पर लाल रूमाल थे। अभी गिरजे से लौटी थीं कि आमने-सामने मिल गईं। पहले दोनों ने एक-दूसरे को अपनी फ्राक दिखाई और खेलने लगीं। जल्दी ही उनका मन हो उठा कि चलें, पानी में उछालें मारें। सो छोटी लड़की जूतों और फ्राक समेत पानी में बढ़ जाना चाहती थी कि बड़ी ने रोक लिया।

''ऐसे मत जाओ, निनी।'' वह बोली, ''तुम्हारी माँ नाराज होंगी। मैं अपने जूते-मोजे उतार लेती हूँ। तुम भी अपने उतार लो।''

दोनों ने ऐसा ही किया और अपने-अपने फ्राक का पल्ला ऊपर सँभाल पानी में एक-दूसरे की ओर चलना शुरू किया। पानी निनी के टखनों तक आ गया और वह बोली, ''यहाँ तो गहरा है, जीजी, मुझे डर लगता है।''

जीजी का नाम था मिशा। बोली, ''चली आओ, डरो मत। इससे और ज्यादा गहरा नहीं होगा।''

जब दोनों पास-पास हुईं तो मिशा बोली—

''खबरदार निनी, पानी न उछालो। जरा देखकर चलो।''

वह कह पाई ही होगी कि निनी का पाँव एक गड्ढे में जाकर पड़ा और पानी उछलकर मिशा की फ्राक पर आया। फ्राक पर छींटें-छींटें हो गईं और ऐसे ही मिशा

की आँख और नाक पर छींटे हो गए। मिशा ने अपनी फ्राक के धब्बे जो देखे तो वह नाराज हो उठी और निनी को मारने दौड़ी। निनी घबरा गई और मुसीबत देख वह पानी से निकल घर भागने को हुई। लेकिन ठीक तभी मिशा की माँ उधर आ निकलीं। अपनी लड़की की फ्राक और उसकी आस्तीनें छींटे-छींटे गंदी हुई देख बोली—

"शैतान कहीं की, गन्दी लड़की, यह क्या कर रही है।"

मिशा बोली, "मैं नहीं निनी ने यह खराब किया है।"

सो मिशा की माँ ने निनी को पकड़कर कनपटी पर एक चपत रख दिया। निनी हो-हल्ला करके रोने लगी। ऐसी कि सारी गली में आवाज पहुँच गई। सो उसकी माँ निकल बाहर आ गई।

"तुम क्यों मेरी निनी को मार रही हो जी?" कहकर वह फिर अपनी पड़ोसिन को खूब खरी-खोटी कहने लगी। बात-पर-बात बढ़ी और उन दोनों में खासा झगड़ा हो गया। और लोग भी निकल आए। एक भीड़ ही गली में इकट्ठी हो गई। हर कोई चिल्लाता था, सुनता कोई किसी की नहीं था। वे झगड़ा किए ही गईं। यहाँ तक कि धक्कम-धक्का की नौबत आ गई। मामला मार-पीट तक आ लगा था कि मिशा की बूढ़ी दादी बढ़कर उनमें आई और समझाने-बुझाने की कोशिश करने लगी।

"अरी, क्या कर रही हो, भली मानसो? अरी, सोचो तो कुछ। भला कुछ ठीक है और आज त्यौहार-परब के दिन! यह मंगल का दिन है, कि फजीते का?"

पर बुढ़िया की बात वहाँ कौन सुनता था? जमघट के धक्का-धक्के में वह गिरते-गिरते बची। वह तो निनी और मिशा ने ही मदद न की होती तो बुढ़िया के बस का कुछ न था। वह भला क्या भीड़ को शांत कर पाती! पर उधर औरतें आपस की गाली-गलौज में लगी थीं कि इधर मिशा ने कीचड़ के छींटे-छींटे पोंछकर फ्राक साफ कर ली थी और फिर पानी की तलैया पर पहुँच गई थी। पहुँचकर क्या किया कि एक पत्थर लिया और तलैया के पास की मिट्टी को खरोंच-खरोंच कर हटाने लगी। जिससे रास्ता बन जाए और पानी गली में बहने लगे। यह देख निनी भी झट आकर उसकी कारगुजारी में हाथ बंटाने लगी। लकड़ी की एक छिपटी ली और उससे मिट्टी खोदने लगी। सो ठीक जब स्त्रियां हाथा-पाई ही किया चाहती थीं, कि पानी उन नन्हीं लड़कियों के बनाए रास्ते से निकल गली की तरफ बढ़ा। वह उधर बहकर चला, जहाँ बुढ़िया खड़ी उन्हें समझा रही थी। पानी के साथ-साथ एक इधर तो दूसरी उधर दोनों लड़कियाँ भी चली आ रही थीं।

"अरी, पकड़ इसे निनी, पकड़।" मिशा ने यह कहा तो, पर निनी को हँसने से

फुर्सत नहीं थी। पानी में बही जाती हुई लकड़ी की छिपटी में वह बड़ी मगन थी। पानी की धार में आगे-आगे छिपटी को तैरते देखती, खूब मगन, वे मुन्नियाँ दौड़ी-दौड़ी उन लोगों के झुंड में ही आ पहुँची। उस समय दौड़ी बुढ़िया इन्हें देख, भीड़ से बोली—

"अरी, तुम लोगों को अपनी पर शर्म नहीं आती। इन छोकरियों के लिए लड़ते जा रहे हो और इन्हें देखो कि कैसी ये सब-कुछ भूल चुकी हैं। वे तो मिली-जुली खुश-खुश खेल रही हैं। और तुम! खुदा के बंदो, तुमसे तो कहीं वे ही समझदार हैं।"

सब लोगों ने उन नन्हीं लड़कियों को देखा और शर्मिंदा हुए। फिर खुद पर ही हँसते हुए सब अपने-अपने घर चले गए।

सो कहा ही है, "जब तक बदलोगे नहीं, और बच्चों जैसे ही नहीं हो जाओगे, किसी तरह रामकृपा और स्वर्गलोक न पा सकोगे।"

बदी छले, नेकी फले

पुराने जमाने की बात है कि एक आदमी रहा करता था। वह नेक और दयालु था। धन-माल सब तरह का उसके पास खूब था और बहुत-से गुलाम थे। गुलाम लोगों को भी अपने इस नेक मालिक पर अभिमान था।

वे कहते थे, "इस धरती पर तो हमारे मालिक जैसे कोई दूसरे होंगे नहीं। हमें अच्छा खाने-पहनने को देते हैं और काम भी हमारे बस जितना ही हमें देते हैं। मन में कीना कोई नहीं रखते। न कभी किसी को सख्त लफ्ज निकालते हैं। और मालिकों की तरह के वह नहीं हैं, जो गुलामों से ऐसे बरतते हैं जैसे जानवर। जो कसूर-बेकसूर उन्हें पीटते रहते हैं और कभी कोई मीठा बैन मुंह से नहीं निकालते। हमारे मालिक हित चाहते हैं, हमारी भलाई में ही रहते हैं और सदा मीठी बानी बोलते हैं। हमें तो सब सुख है। और इससे बढ़कर इस हालत की जिंदगी में हमें और चाहना क्या हो सकती है?"

इस तरह के वचनों से नौकर लोग मालिक की बड़ाई किया करते थे। पर पाताल-लोकवासी शैतान को इस पर बड़ी खीझ होती थी कि देखो, ये नौकर-मालिक दोनों कैसे आपस में हेल-मेल से रहते हैं। सो नौकरों में से उसने आलिब नाम के एक नौकर को फुसलाया। सो एक दिन जब सब-के-सब जमा थे और मालिक की बड़ाई की बातें कर रहे थे, उस समय आलिब ऊँची आवाज में बोला—

"मालिक की नेकी की इतनी बड़ाई क्यों करते हो, जी ? हमीं बेवकूफ हैं, नहीं तो और क्या। देखो, सुनो। अगर पाताल-लोकवासी का सब लोग कहा करो तो वह हम पर भी कृपा करने को कहते हैं। अब तो हम अपने मालिक की खिदमत में रहते हैं और सब कामों में उसकी मरजी निहारा करते हैं। मन में उनके कुछ आया नहीं कि झट दौड़कर हम उसे पूरा कर देते हैं। सो वह हमारी तरफ नेक न होंगे तो क्या होंगे। बात तो तब देखी जाए कि हम उनका कहा न करें और नुकसान करके रख दें। तब देखना है कि वह क्या करते हैं। उस समय औरों की तरह गाली का बदला गाली से न दें, तब बात है। देख लेना कि जैसे बेरहम और मालिक होते हैं वैसे ही बेरहम हमारे-तुम्हारे मालिक भी निकलेंगे।"

पर और नौकरों ने आलिब की बात नहीं मानी। बोले कि नहीं जी, यह झूठी बात है। सो मतभेद पड़ा और बहस होने लगी। आखिर उनमें एक शर्त ठहरी। आलिब ने कहा कि अच्छी बात है, मैं उनसे गुस्सा लाकर दिखला दूँगा, नाकाम रहूँ तो मेरी पोशाक तुम्हारी। और जो जीत गया तो तुम सबको अपनी पोशाक मेरे हवाले करनी होगी। यह भी ठहरा कि जीतने पर सब फिर उसकी हिमायत करेंगे और उसका कुछ बिगड़ने नहीं देंगे। सजा मिलेगी तो बचा लेंगे। जो कहीं पाँव में बेड़ी डालकर हवालात में डाल दिया गया तो खोलकर रिहा कर देंगे। शर्त पक्की हो गई और आलिब ने अगले ही दिन मालिक में अविवेक ला दिखाने का वायदा किया।

आलिब के जिम्मे चराई का काम था। भेड़ें उसके सिपुर्द थीं। उनके रेवड़ में कुछ बड़ी ही कीमती जात की भेड़ें भी थीं। मालिक उन्हें बहुत चाहते थे। उन भेड़ों पर उन्हें नाज था।

अगले दिन सबेरे के वक्त मालिक के साथ कुछ मेहमान भेड़ों के बाड़े में आए। असल में मालिक उन्हें अपनी बेशकीमती ऊन देनेवाली भेड़ें बताने को साथ लाए थे। उनके आने पर आलिब ने साथियों की तरफ आँख मटकाकर इशारा किया कि अब देखो, क्या होता है। देखना मालिक झल्लाते हैं कि नहीं ?

नौकर-चाकर लोग बाड़े के इधर-उधर घिरकर खड़े थे। कोई बाड़े के द्वार की जाली में से देख रहा था, कोई ऊपर से ही उझककर। और पाताललोक से शैतान महाराज भी आकर ऊपर पेड़ पर चढ़कर बैठ गए थे कि देखें, हमारा सेवक अपना काम कैसा करता है।

मालिक बाड़े के अंदर चलते हुए आए। मेहमानों को मुलायम बालोंवाले बचकाने मेमने दिखाते जाते थे। एक उनमें सबसे ही आला किस्म का था, उसे खास तौर से दिखाना चाहते थे।

बोले कि यों तो ये भेड़ें भी कम कीमती नहीं हैं, लेकिन एक तो बेशकीमती ही

है। उसके सींग पास-पास हैं और ऐसे पेचदार और पैने कि बड़े खूबसूरत लगते हैं। जानवर क्या है, मेरी आँख का तो रुकन है।

बाड़े में अजनवी सूरत को देखकर भेड़ें और उनके बच्चे इधर-उधर छूट-छूटकर भागते थे। सो मेहमान गौर जमाकर उस बेशकीमती जानवर को नहीं देख पाते थे। वह कहीं एक जगह खड़ा होता कि आलिब अनजान बना नागहानी रेवड़ को चल-बिचल कर देता था। सो फिर भेड़ें आपस में रल जातीं और किसी खास पर निगाह रखना मुश्किल हो जाता था। ऐसे मेहमान लोग ठीक-ठीक नजर में ही नहीं ला सके कि आला किस्म का जानवर उनमें है कौन-सा। आखिर मालिक भी इससे परेशान आ गए। बोले, "भैया आलिब, मेहरबानी करके उस मेमने को पकड़कर तो जरा सामने लाओ। हाँ,वही पेचदार सींग का गौहर। देखो, होशियारी से पकड़ना और छन दो-एक को उसे हाथ में थाम भी रखना।"

मालिक का कहना मुँह से निकलकर पूरा नहीं हुआ कि आलिब शेर की तरह उनमें घुसा और जोर से जाकर गरदन पर उस मुलायम मेमने को धर दबाया। उसकी खाल को एक हाथ से जोर से मुट्ठी में कसकर दूसरे हाथ से पिछली बाईं टाँग से पकड़कर धरती से अधर में उठाकर लटका लिया और मालिक की आँखों के आगे ला किया। ऐसी झोंक और झटके के साथ यह किया कि पतली टहनी की तरह उस बेचारे की टाँग मोच खा गई। आलिब ने इस तरह टाँग तोड़ ही दी और मेमना धरती पर फड़फड़ाता गिरा। बाईं टाँग तकलीफ के मारे मुड़कर लटक गई थी कि आलिब ने दाईं टाँग से पकड़ लटकाया। मेहमान, आस-पास घिरे नौकर-चाकर उस समय दर्द से और सहानुभूति के मारे जैसे चीख ही पड़े। मगर ऊपर पेड़ पर चढ़कर बैठा हुआ शैतान अपने सेवक आलिब की चतुराई पर प्रसन्न हुआ। मालिक गुस्से के मारे ऐसे काले पड़ गए जैसे बिजली भरा बादल। भवें उनकी जुड़ आईं। पर वह सिर लटकाकर रह गए और एक शब्द भी नहीं बोले। मेहमान भी और नौकर-चाकर भी चुप्पी बाँधे रह गए थे। सब शांत थे कि अब जाने क्या होगा, कि कुछ देर गुम-सुम रहकर मालिक ने सिर झटका, जैसे कोई बोझ ऊपर से अलग किया हो। फिर सिर को सीधा कर आँखें अपनी आसमान की ओर उठाईं। कुछ देर आकाश में मुँह किए वह खड़े रहे कि इतने में चेहरे की सलवट विलय हो गई और वहाँ नीचे आलिब की तरफ देखकर मुस्कराहट के साथ बोले—

"ओ आलिब, तुम्हारे मालिक का तुम्हें हुक्म था कि मुझे गुस्सा दिलाओ। पर मेरे भगवान तुम्हारे मालिक से जबर्दस्त हैं। मैं तुम पर गुस्सा नहीं करूँगा, कि उल्टे तुम्हारे मालिक को गुस्सा करना हो जावे। तुम डरते हो कि मैं तुम्हें सजा दूँगा। तुम्हारे मन में मुझसे छूटने की मर्जी है तो अपने मेहमानों के सामने मैं तुम्हें आजाद

करता हूँ। जहाँ चाहे जाओ। और पोशाक और जो पास हो सब साथ ले जा सकते हो।''

इसके बाद मालिक मेहमानों के साथ घर लौट आए। लेकिन शैतान दाँत पीसता हुआ पेड़ से धरती पर आ गिरा और गिरकर पाताल में समा गया।

मूरखराज

1

एक समय किसी देश में एक किसान रहता था। खासी खाती-पीती हालत थी और तीन उसके बेटे थे। बलजीत सिंह, धनवीर सिंह और प्यारा सिंह। बलजीत सिंह फौजी निकला, धनवीर कुशल कारबारी बना, पर प्यारा सिंह मूरख था। लोग उसे मूरखराज कहते थे। एक लड़की भी थी, पीतमकौर। वह गूंगी और बहरी थी सो वह बिन ब्याही ही रही। बलजीत तो राजा की तरफ से फौज में लड़ाई करने गया, धनवीर शहर जाकर एक सौदागर के साथ व्यापार में लग गया और मूरखराज लड़की के साथ घर ही रहा। वहाँ धरती के काम में जुटकर रहता और कुनबे का गुजारा चलाता था। इसमें मेहनत उसे इतनी पड़ती थी कि कमर झुक जाती।

बलजीत ओहदे-पर-ओहदा पाता गया। सो एक अपना इलाका उसने खड़ा कर लिया और एक सरदार की बेटी से ब्याह किया। अच्छी उसे तनख्वाह मिलती थी, ऊपर से भत्ता। और पास का इलाका भी कम नहीं था, फिर भी खर्च के वक्त हाथ तंग ही पाता था। असल में पति जो लाता, श्रीमती सब उड़ा देती थीं। इससे हाथ में पैसा कभी नहीं बचता था।

सो बलजीत एक बार अपने इलाके की जमीन में तहसील करने गया, पर वहाँ कारिंदा बोला कि अजी, आमदनी हो कहाँ से और पैसा कैसे जमा हो? पास हमारे न हल-बैल हैं, न औजार हैं। गाड़ी नहीं, तांगा नहीं। पहले सामान हो, तब तो आमदनी हो।

इस पर बलजीत अपने पिता के पास गया। बोला, ''पिता जी, तुम्हारे पास जमीन है, जाएदाद है और माल है। लेकिन मुझे कुछ हिस्सा नहीं मिला। ऐसा करो कि सब तीन हिस्सों में बांट दो और मेरा हिस्सा मुझे दे दो। मैं फिर उससे अपने इलाके को बढ़ा भी सकूँगा।

बूढ़े पिता ने कहा, ''तुमने घर में कुछ लाकर रखा है जो तीसरा हिस्सा तुम्हें दे दूँ? और बेचारे मूरखराज और पीतमकौर के हित में यह अन्याय होगा।''

बलजीत बोला, "मूरख तो मूरख है, और पीतमकौर गूँगी-बहरी है। और उमर भी काफी हो गई है। इलाके-जाएदाद का वे भला करेंगे भी क्या?"

बूढ़े ने कहा, "खैर, मूरख से इस बाबत पूछ तो लें।"

मूरख आया। पिता के पूछने पर बोला, "पिता जी, जो ये चाहें, इनको दे दीजिए।"

सो बलजीत बाप के माल में से अपना तिहाई हिस्सा ले वहाँ से चल दिया। उसके बाद फिर वह राजा की फौज में लड़ाई के लिए जा पहुँचा।

उधर धनवीर ने भी खासा धन पैदा किया और एक बड़े व्यापारी की लड़की से शादी की पर तबियत और पाने को भी होती थी। सो वह भी बूढ़े बाप के पास आया और बोला, "मेरा भी हिस्सा मुझे दे दो।"

लेकिन धनवीर को भी हिस्सा देने की मर्जी बूढ़े बाप की नहीं थी। बोले, "तुम क्या घर में कुछ ले आए हो जो माँगते हो? घर में अब जो है मूरख की कमाई है। सो उस पर और बेचारी लड़की पर अन्याय मैं किस भाँति करूँ?"

धनवीर बोला, "मूरख को क्या जरूरत है। वह ठहरा मूरख। शादी उसकी हो ही नहीं सकती। कौन उसे अपनी बेटी देने बैठा है? और न गूंगी पीतम के काम का कुछ है।"

यह कहकर धनवीर मूरखराज से बोला कि सुन मूरख, आधा गल्ला मेरे हवाले कर दो। तुम्हारे हल-औजारों में से मुझे कुछ नहीं चाहिए। और डंगरों में से कुछ नहीं चाहिए। लेकिन वह जो बादामी रंग की घोड़ी है बस वह मैं ले लूँगा। वह तुम्हारे तो किसी खास काम की है भी नहीं।"

मूरख हँसा, बोला, "जो चाहो, भाई ले लो। और कुछ मुझे चाहिएगा तो मैं मेहनत कर ही लूँगा।"

सो धनवीर को भी अपना हिस्सा मिल गया। नाज-माल ढोकर वह अपने शहर चलता बना और बादामी घोड़ी भी ले गया। बस एक जोड़ी बैल और हल लेकर अपने माँ-बाप और बहन का भरण-पोषण करने और गुजर-बसर चलाने के लिए मूरखराज घर रह गया।

2

लेकिन पाताल में रहता था एक शैतान। उसको बड़ी झुंझलाहट हुई कि देखो, तीनों भाइयों में बंटवारे का झगड़ा भी कोई नहीं हुआ। सब काम अमन-सुलह से हो गया। सो उसने अपने तीन चरों को बुलाया।

बोला, "देखो जी, ये हैं तीन भाई। बलजीत फौजी, धनवीर, व्यापारी और

प्यारा मूरख। उन तीनों में कलह होनी चाहिए। उनमें कलह नहीं हुई और तीनों हेल-मेल से रहते हैं। असल में खराबी सब उस मूरख की है। उसी ने मेरा काम बिगाड़ रखा है। देखो, तुम तीनों जाओ और एक-एक करके उन तीनों भाइयों को कब्जे में लो। ऐसी तदबीर करो कि तीनों आपस में नोच-खसोट करने लगें और जान के ग्राहक हो जाएँ। बोलो, कर सकोगे?''

तीनों बोले,''जी, कर लेंगे?''

''भला, कैसे करोगे?''

वे बोले, ''पहले तो हम उनका धन-माल बरबाद कर देंगे। जब पास उनके खाने को न रहेगा तो तीनों को इकट्ठे एक जगह कर देंगे बस फिर आपस में वे ऐसे लड़ेंगे कि आप देखिएगा। यह पक्की बात है।''

''वाह, खूब ठीक, तुम लोग काम काम समझते हो और होशियार हो। अब जाओ और लौटना तब जब वे एक-दूसरे की जान के गाहक हो चलें। नहीं तो तुम जानते हो तुम्हारी जीती खाल मैं खिंचवा लूँगा।''

वे तीनों चर वहाँ से चले और एक गढ़े में आकर सलाह करने लगे कि काम कैसे शुरू करें। खूब सोचा और खूब बहस की। असल में सब अपने लिए हलका और दूसरे को भारी काम चाहते थे। आखिर पक्का हुआ कि परची डालकर तय कर लिया जाए कि किसके जिम्मे कौन भाई आता है यह कि अगर एक का काम पहले निबट जाए तो वह आकर दूसरे की मदद में लगे। सो चरों ने परचियाँ डालीं और दिन नियत किया कि उस रोज सब जने फिर इसी गढ़े में आकर जमा हों। तब देखा जाएगा कि किसका काम पूरा हुआ किसको मदद की जरूरत है।

आखिर वह दिन आया और निश्चय के मुताबिक तीनों चर गढ़े में आकर जमा हुए। हरेक फिर अपनी बीती सुनाने लगा। पहला, जिसने बलजीत फौजी का जिम्मा लिया था, बोला, ''भाई, मेरा तो काम खूब चल रहा है। कल ही बलजीत अपने बाप के घर पहुँच जाएगा।''

औरों ने पूछा, ''यह तुमने किया कैसे?''

बोला, ''पहले तो बलजीत के अंदर मैंने हिम्मत भरी। हिम्मत के साथ-साथ घमंड। आखिर इतना बूता उसमें हो आया कि अपने राजा से बोला कि आपको मैं सारी दुनिया फतह करके दे सकता हूँ। राजा ने इस पर उसे सिपहसालार बना दिया। कहा, ''अच्छा, हिंदुस्तान का मोरचा लो और जाकर वहाँ के राजा को शिकस्त दो।'' सो दोनों की फौजें मोरचे पर मिलीं। पर इधर मैंने क्या किया कि बलजीत की छावनी की तमाम बारूद नम कर दी और हिंदुस्तानी फौज के लिए रात-ही-रात में फूंस के इतने सिपाही बना दिए कि गिनती के बाहर।

"सो सबेरे बलजीत की फौज ने उन फूसी सिपाहियों को अपना घेरा डाले देखा तो वह घबरा गई। बलजीत ने गोली चलाने का हुक्म दिया। लेकिन तोप और बंदूक चल कहाँ से सकती थीं। सो बलजीत के सिपाही मारे डर के भेड़ों की तरह भाग निकले। भागने में उन्हें पकड़-पकड़कर हिंदुस्तान के राजा ने बहुतों को जम के घाट उतार दिया। बलजीत की बड़ी ख्वारी हुई। सो उसका सब इलाका छिन गया और कल फांसी चढ़ा देने की बात है। बस अब मुझे एक दिन का काम बाकी रह गया है। जाकर उसे बस जेल से छुड़ा देना है कि भागकर वह अपने घर जा पहुँचे। तुममें से जिसे मदद की जरूरत हो, कल मैं मदद को पहुँच सकता हूँ।"

उसके बाद दूसरा चर जिसने धनवीर को हाथ में लिया था अपनी बीती सुनाने लगा। बोला, "मुझे तो भाई, किसी की मदद की जरूरत है नहीं। मेरा भी काम खासी कामयाबी से बढ़ रहा है। धनवीर को काबू में लाने में एक हफ्ता भी नहीं लगता। पहले तो खूब आराम दे मैंने उसे फुलाकर मोटा कर दिया। फिर तो उसका लोभ इतना बढ़ गया कि जो दीखे उसी को रुपए से खरीद लेने की तबियत होने लगी। अब दुनिया भर का माल खरीदकर उसने भर लिया है। रुपया सारा उसमें गला जा रहा है, पर खरीद अब भी जारी है। अभी कर्ज का रुपया वह लगाने लगा है। कर्जा उसके गले में पत्थर की तरह बँध गया है। ऐसा वह उसमें उलझता जा रहा है कि छुटकारा हो नहीं सकता। हफ्ते भर में रुपया चुकती का दिन आनेवाला है! उससे पहले ही जो माल उसने जमा किया है सो सब मैं सत्यानाश करके रखे देता हूँ। कर्ज वह फिर चुका नहीं सकेगा और लाचार बाप के घर भागा आएगा।"

इनके बाद वे दोनों प्यारे मूरखवाले चर से उसकी कहानी पूछने लगे। बोले, "क्यों दोस्त, अब तुम बताओ, तुम्हारा क्या हाल है?"

वह बोला, "भाई, मेरा मामला तो ठीक रास्ते पर नहीं आ रहा है। बात कुछ बन ही नहीं रही है। पहले तो मैंने उसके दूध के कटोरे में कुछ मिला दिया कि पेट में उसके पीर हो आए। उसके बाद जाकर पीट-पीटकर खेत की धरती को ऐसा कर दिया कि पत्थर। जोतो तो वह जुते ही नहीं। मैंने सोचा था कि वह अब इसे क्या जोतेगा। पर मूरख जो अजब ठहरा। देखता क्या हूँ कि वह तो हल लिए चला आ रहा है। आकर जमीन को गोड़ना उसने शुरू कर दिया। पेट की पीर से कराह-कराह पड़ता था, पर बंदा हल नहीं छोड़ता था। मैंने फिर क्या किया कि हल तोड़कर रख दिया। पर वह मूरख गया और घर जाकर दूसरा हल निकाल लाया और लगा फिर धरती को गोड़ने। मैं फिर धरती के अंदर घुस गया और हल की पैंड़ को पकड़ लिया। पर पकड़े रहता कैसे? हल पर अपना सारा बोझ देकर वह चलाने लगा। पैंड़ की धार पैनी थी और मेरा हाथ भी जख्मी हो गया। सो

उसने सारा खेत जोत डाला है, बस जरा किनारी बची रह गई है। भाई, आकर मेरी मदद करो। क्योंकि उस पर काबू नहीं चला तो हमारी सारी मेहनत अकारथ जाएगी। वह मूरख बाज न आया और ऐसे ही धरती के साथ कामयाब होता चला आया तो उसके भाइयों को भूख की नौबत न आएगी और सबके पेट के लायक यह अकेला ही पैदा कर लेगा।''

बलजीतवाले चर ने कहा, ''अच्छी बात है। मैं कल तुम्हारी मदद को आए जाता हूँ।''

इसके बाद तीनों चर अपने-अपने काम पर चले गए।

3

प्यारे ने खेती की सारी धरती गोड़ डाली थी। कुल एक नन्हीं किनार बची रह गई थी। उसी को पूरा करने वह आ जुटा। पेट पिरा रहा था, पर खेत का काम तो होना ही चाहिए। सो जोता बैल, घुमाया हल और गुड़ाई शुरू कर दी। एक लीक उसने पूरी कर दी। दूसरे पर लौट रहा था तो हल फिसटता-सा मालूम हुआ, जैसे अंदर किसी जड़ से अटक गया हो। पर असल में धरती में दुबककर बैठा था वह चर। उसने ही हल की पैंड़ पर टाँगें अपनी कसकर लिपटा ली थीं और उसे चलने से रोक रहा था।

प्यारे ने सोचा कि यह क्या अजब बात है। कल तो यहाँ कोई जड़-वड़ थी नहीं। फिर भी यह जड़ यहाँ आई तो कहाँ से आई।

सो झुककर गहरे हाथ देकर धरती के अंदर उसने टटोला। अंदर कुछ गीली-गीली और चिकनी चीज उसे छुई। प्यारे ने उस चीज को पकड़कर बाहर खींच लिया। जड़ की तरह की कोई काली वस्तु थी और कुलबुला रही थी। असल में वह उस चर की ही काया थी।

देखकर प्यारे बोला, ''छिः, क्या गंध है।'' कहकर हाथ ऊपर उठाया कि उस चीज को हल से दे मारे।

पर यह देखकर वह चर चीख पड़ा। बोला, ''मुझे मत मारो। जो बताओ, मैं वही तुम्हारे लिए करूँगा।''

''तुम क्या कर सकते हो?''

''जो कहो, वही।''

प्यारे ने सिर खुजलाया, बोला, ''मेरे पेट में दर्द है। उसे अच्छा कर सकते हो?''

''जरूर कर सकता हूँ।''

''तो करो अच्छा।''

सुनकर वह चर वहीं अंदर धरती में घुस गया। वहाँ पंजों से खरोंचे खरोंच, आस-पास टटोल, आखिर एक जड़ी खींचकर बाहर लाया। जड़ में से उसकी, तीन शाख निकल रही थीं, लाकर प्यारे के हाथ में दे दी।

बोला, ''यह देखिए, इन में जो कोई एक खाएगा, उसके सब रोग दूर हो जाएँगे।''

प्यारे ने जड़ी को लिया। तीनों को अलग-अलग किया और एक उनमें से उसने खा ली। सो पेट का दर्द उसका खाते ही अच्छा हो गया।

इसके बाद चर ने कहा, ''मुझे अब छोड़ दीजिए। मैं अब धरती में होकर सीधा पाताल चला जाऊँगा और फिर नहीं लौटूंगा।''

प्यारे ने कहा, ''अच्छी बात है, जाओ। और भगवान तुम्हारा भला करे।''

भगवान का नाम प्यारे के मुँह निकलना था कि जैसे जल में कंकड़ गिरकर गायब हो जाए वैसे ही वह चर धरती में गिरकर लोप हो गया। वहाँ निशानी में बस एक सूराख रह गया।

प्यारे ने बाकी बची दोनों जड़ी को टोपी में खोंस लिया और अपने हल में लग गया। खेत की बची किनार उसने पूरी कर दी। फिर हल उलटाकर अपने घर लौट चला, बैलों को खोलकर बाँध दिया और घर के अंदर आया। वहाँ देखता है कि बड़ा भाई बलजीत और उसकी बीबी जीमने थाली पर बैठे हैं। बलजीत का इलाका-जाएदाद सब जब्त हो गया था और जैसे-तैसे वह जेलखाने से निकल भागकर यहाँ बाप के घर दिन गुजारने आया था।

प्यारे को देखकर बलजीत ने कहा, ''प्यारे, हम तुम लोगों के यहाँ रहने आए हैं। दूसरा बंदोबस्त हो, तब तक मैं और मेरी बीबी तुम्हारे ऊपर हैं। खयाल रखना।''

प्यारे बोला, ''अच्छी बात है। खुशी के साथ यहाँ रहिए।''

पर हाथ-मुँह धोकर प्यारे जो आकर खाने साथ बैठने लगा तो बलजीत की श्रीमती को अच्छा नहीं लगा। प्यारे के कपड़ों से उसे बास आती मालूम हुई। अपने पति से बोली, ''ऐसे गँवार देहाती के साथ बैठकर मुझसे नहीं खाया जाता।''

सो बलजीत ने कहा, ''प्यारे, तुम्हारी भाभी कहती है कि तुमसे बास आती है। सो तुम बाहर जाकर खा सकते हो।''

प्यारे बोला, ''अच्छी बात है। यों भी रात मुझे बैलों की सानी-पानी को बाहर रहना था।''

सो रोटी ली और दोहर कंधे पर डाल बाहर ढोरों के सानी-पानी के काम में वह लग गया।

4

अपना काम निबटाकर बचन मुताबिक उस रात बलजीत का चर मूरखवाले अपने साथी की तलाश में आया। वह मूरख-प्यारे को बस में लाने में साथी की मदद करने आया था। पर प्यारे के खेत पर आकर उसने बहुतेरी खोज-ढूँढ़ की। पर साथी तो मिला नहीं, मिला वह धरती का सूराख।

सोचा, "जरूर कोई मेरे साथी पर विपत पड़ी है। सो मुझे उसकी जगह भरनी चाहिए। खेत तो खैर उसने पूरा खोद दिया है। सो चलकर चराई की जगह उस मूरख की खबर लेता हूँ।"

सो जाकर शैतान के बच्चे ने मूरख की जमीन को पानी-ही-पानी से भर दिया जिससे घास सब कीच से लथपथ हो गई।

मूरख सबेरे के वक्त बाहर चला। हँसिया उसने पैना लिया कि जाकर घास काटनी है। कटाई उसने शुरू की। पर दो-एक हाथ मारना था कि क्या देखता है कि हँसिया मुड़-मुड़ जाता है और घास कटती नहीं है। कहीं और धार पैनाने की जरूरत नहीं आ गई? कुछ देर तो प्यारे कोशिश करता रहा। फिर बोला, "ऐसे नहीं, घर चलकर कुछ लाऊँ कि हँसिया सीधा हो जाए। चलो शाम की रोटी भी लिए आता हूँ। देखा जाएगा जो होगा। हफ्ता भर चाहे क्यों न लगे। मुझे भी घास काटकर ही छोड़नी है।"

चर ने यह सुना तो सोचा, "यह मूरख तो लोहे का चना मालूम होता है। ऐसे यह बस में नहीं आएगा। कोई दूसरी तरकीब चलनी चाहिए।"

प्यारे लौटा। हँसिया सीधा किया और पैनाया और फिर घास काटने पर आ भिड़ा। पर चर इस बार धरती में घुसकर क्या करता कि हँसिए को बार-बार बेंटे से पकड़कर ऐसे घुमाता कि नोक उसकी धरती में आकर लगती। सो प्यारे को काम में बड़ी कठिनाई पड़ी। पर वह भी लगा ही रहा और दल-दल की जरा-सी जगह को छोड़ आखिर सब घास उसने काट ही डाली। तब चर आकर उस दलदल की धरती में बैठ गया। बोला, "चाहे मेरे पंजे कट जाएँ, घास मैं उसे नहीं काटने दूँगा।"

मूरख अन्त में उस दलदली जमीन पर पहुँचा। घास वहाँ ऐसी घनी तो नहीं थी, फिर भी हँसिया के बस न आती दीखती थी। प्यारे को गुस्सा चढ़ आया और हँसिया को पूरे जोर से घुमाकर मारने लगा। वह चर तब हार रहा। हँसिया का साथ पकड़े रहना उसे दूभर होता था। आखिर देखा कि यह बात भी ठीक नहीं बनी। सो एक झाड़ी में वह घुस बैठा। होते-होते प्यारे उधर भी बढ़ आया। झाड़ी को हाथ से पकड़ हँसिया जो उसने चलाया तो चर की आधी पूंछ कटकर अलग हो गई। खैर, घास की कटाई खतमकर उसने बहन को बताया कि इसकी दबिया कर डालो। फिर

खुद जई के खेत पर पहुँचा। हँसिया साथ ले गया था। बेपूंछ का चर वहाँ पहले जा पहुँचा था। उसने जई की बालों को ऐसा उलझा दिया था कि हँसिया उनकी कटाई के लिए बेकाम पड़ गया। तो मूरख घर गया और दाँतेदार दरांत ले आया। उससे जई उसने काट ली।

फिर बोला, "अब चलो, कल मकई शुरू करेंगे।"

पूंछकटे चर ने यह सुना और मन में यह कहने लगा कि खैर, यहाँ काबू में नहीं आता तो क्या। चलकर मकई में देखेंगे। सबेरे तक की ही तो बात है।

सबेरे जल्दी ही वह चर खेत पर पहुँच गया। वहाँ पर देखता क्या है कि मकई तो सब कटी बिछी है। प्यारे ने रात-ही-रात में सब काट डाली थी। सोचा था कि ऐसे दाने कम बिखरेंगे और सोफते में काम हो जाएगा। यह देख चर को बड़ा गुस्सा हुआ।

"देखो न कि कमबख्त ने मुझे लहूलुहान कर दिया है और थका मारा है। लड़ाई न हुई, यह तो आफत हो गई। क्या मूरख से पाला पड़ा है कि रात को भी नहीं सोता। पार पाना उससे मुश्किल हो रहा है। खैर, मैं भी उसके पूलों में घुसा जाता हूँ और सब अंदर से सड़ा दूँगा।"

सो वह चर जई के पूलों में दाखिल हो गया और सड़ांध फैलाना शुरू किया। पहले तो वहाँ गरमी पहुँचाई। पर इससे खुद को भी उसे ताप मिला और सरदी में गरमी पाकर वह चैन में सो गया।

प्यारे गाड़ी लेकर बहन के साथ जई ढोने आ पहुँचा। पूलों के ढेरों पर आ एक-एक कर उन पूलों को उसने गाड़ी में फेंकना शुरू किया। ऐसे दो-एक फेंके होंगे कि जेली लेकर उसने ढेर को सहलाया। यह करना था कि जेली की नोक जाकर ऐन चर के बदन पर पड़ा और चर उसकी नोक में छिद गया। जेली को उठाया तो क्या देखता है कि उसकी नोक पर पूंछ कटा कोई जंतु-सा लिपटा हुआ है, कुलबुला रहा है और छूटने की कोशिश कर रहा है।

"क्यों रे, गंदगी के कीड़े, तू फिर यहाँ?"

चर बोला, "जी नहीं, मैं दूसरा हूँ। पहला मेरा साथी था और मैं तब तुम्हारे भाई बलजीत पर लगा हुआ था।"

प्यारे बोला, "खैर जो भी हो, तुम्हारी भी वही गति होगी।"

कहकर गाड़ी के पहिए की हाल से वह उसे दे मारने हीवाला था कि चर बोला— "मुझे छोड़ दीजिए। मैं फिर आपको नहीं सताऊँगा। बल्कि जो मुझे कहेंगे, वही कर दूँगा।"

"तुम क्या कर सकते हो?"

"चाहे जितने मैं आपको सिपाही बना दे सकता हूँ।"

"और सिपाही वे करेंगे क्या?"

"जो चाहे काम आप उनसे लें। जो कहेंगे, वही कर सकेंगे।"

"गा-बजा भी सकेंगे?"

"हाँ।"

"अच्छी बात है। तो बना दो मुझे कुछ सिपाही।"

चर बोला, "यह देखिए, ऐसे जई का एक पूला ले लीजिए। उसे धरती पर जमा दीजिए और यह मंतर पढ़िए—

पूले-ले, सुन और मान,
मेरी तुझको यही जुबान।
जहाँ-जहाँ हो तेरी सींक
वहीं हो उठे एक जवान।"

प्यारे ने पूला लिया, धरती पर जमाया और चर का बताया मंतर पढ़ा। पूला देखते-देखते बिनस गया और उसकी एक-एक बाल की जगह वर्दी से लैस सिपाही खड़ा दिखाई दिया। एक के पास ढोल था, दूसरे के पास तुरही—ऐसे पूरे बैण्ड का सरअंजाम था।

देखकर प्यारे खुश हुआ और खूब हँसा। बोला, "यह तो बढ़िया बात रही। देखकर लड़कियाँ कैसी खुश होंगी!"

चर बोला, "अब मुझे जाने दीजिए।"

प्यारे ने कहा, "नहीं जी, सिपाही मैं खाली पुआल के बनाऊँगा। कोई मैं भला उनके लिए नाजवाली बाल खराब करनेवाला थोड़े ही हूँ। सो बताओ कि सिपाही फिर पहले पूले की हालत में कैसे आ सकते हैं? सोचो, मुझे उनमें से नाज निकालना है कि नहीं!"

चर बोला, "तो यह मंतर पढ़िए"—

सुनता है तू ओरे जवान,
मेरी है बस एक जुबान।
सींक-सींक था जैसा पहले,
वैसा ही तू हो जा मान॥

प्यारे का यह मंतर कहना था कि सिपाही अन्तर्धान हो गए और जैसा-का-तैसा वहाँ पूला हो आया।

चर फिर हाथ जोड़कर कहने लगा कि अब मुझे जाने दीजिए।

सुनकर जेली की नोक से उसे छुड़ाया और कहा अच्छी बात है, जाओ भगवान

तुम्हारा भला करे।

भगवान का नाम मुँह से निकलना था कि कंकड़ पानी में गिरे, वैसे वह धरती पर छूटकर गायब हो गया। और वहाँ निशानी में एक सूराख रह गया।

प्यारे लौटकर घर पहुँचा कि यहाँ देखा कि उसका मंझला भाई धनवीर आया हुआ है। साथ बीबी भी है और दोनों जने खाने पर बैठे हैं।

धनवीर अपना देना चुकता नहीं कर सकता था। सो साहूकारों से बचकर यहाँ भाग आया था और आकर बाप के घर में शरण ली थी। प्यारे को देखकर धनवीर ने कहा, "सुनो भाई मूरख, दूसरा काम लगे तब तक मैं और मेरी बीबी यहीं हैं और हमको कोई कष्ट न हो, यह तुम्हारा काम है।"

प्यारे बोला, "अच्छी बात है, आप चाहें, तब तक यहाँ रहिए।"

प्यारे दोहर रख, मुंह धो, आकर खाने पर बैठने लगा।

पर धनवीर की बीबी बोली, "मैं उस गंवार के साथ खाना नहीं खा सकती। सारे बदन में तो उसके पसीने की बू आ रही है।"

इस पर धनवीर बोला, "प्यारे, तुम्हारे बदन से गंध आती है। जाओ बाहर जाकर खा लो।"

प्यारे बोला, "अच्छी बात है। मुझे तो वैसे भी इस वक्त बाहर जाना था।" कहकर रोटी ले मूरख ओसारे में बाहर चला आया।

5

धनवीर का चर भी खाली हो गया था। सो ठहरे मुताबिक मूरख को बस में लाने में अपने साथियों की मदद करने वह भी उस रात आ पहुँचा। पर खेत में घूम-फिरकर बहुतेरा देखा, वहाँ कोई नहीं था। मिला तो वहाँ सूराख मिला। वह फिर चरी की धरती में आया। वहाँ दलदली धरती में देखें तो उसके साथी की पूंछ कटी पड़ी है। और जईवाले खेत में दूसरा एक सूराख और भी उसे मिला।

सोचा कि मेरे साथियों पर कोई विपत पड़ी दीखती है। सो उनका काम अब मुझे सँभालना चाहिए और उस मूरखराज को काबू में लाना चाहिए।

यह सोच वह चर मूरख प्यारे की तलाश में गया। प्यारे ने नाज खलिहान में रख दिया था और अब जंगल के पेड़ गिरा रहा था। बात यह थी कि दोनों भाई बोले, "यहाँ तो घर में जगह कम है और गिचपिच मालूम होती है। इससे जाओ प्यारे, पेड़ गिराकर कुछ जगह साफ कर डालो और वहाँ हमारे लिए नए मकान बनवाकर खड़े करो।"

चर दौड़ा जंगल में पहुँचा। वहाँ दरख्तों की टहनियों से लुककर प्यारे के काम

में अड़चन डालने लगा। प्यारे ने उस दरख्त को जड़ से काट लिया था। और ऐसे था कि वह कुछ साफ धरती पर आ जाए। पर देखता क्या है कि दरख्त गिरा तो नहीं, बल्कि दूसरे पेड़ की शाखों से उलझकर रह गया।

प्यारे ने इस पर बल्ली की मदद से उसे जड़ से कुछ सरकाया। तब कहीं पेड़ धरती पर आकर गिरा। और पेड़ों के गिराने में भी ऐसे ही बीती। बहुतेरा करता, पर दरख्त सीधा साफ धरती पर न गिरता। तीसरा पेड़ काटा और वही बात हुई।

उम्मीद थी कि छोटे-मोटे पचास पेड़ तो आज काट ही गिराऊँगा। पर दस-एक भी नहीं हुए कि साँझ हो चली और वह थककर चूर हो गया। सरदी के मारे बदन से निकली पसीने की भाप जंगल में धुएँ के मानिंद फैली दीखती थी। पर उस बंदे ने भी काम नहीं छोड़ा, चिपटा ही रहा। एक और दरख्त उसने काट लिया। लेकिन अब कमर इतनी दुखने लगी कि खड़े रहना मुश्किल था। आखिर कुल्हाड़ी पेड़ में लगी छोड़ धरती पर बैठकर वह दम लेने लगा।

चर ने देखा कि प्यारे काम से हार बैठा है। इस पर वह बड़ा ख़ुश हुआ। सोचा, आखिर अब आकर थका तो। अब आगे भला क्या काम उठाएगा। सो चलो, मुझे भी सुस्ताने का मौका मिल गया।

यह सोच चर पेड़ की शाख पर फैलकर आराम से सो गया। चैन की साँस ली। पर थोड़ी देर में प्यारे तो उठ खड़ा हुआ और कुल्हाड़ी खींच सिर के ऊपर से घुमाकर परली तरफ जोर से जो मारी कि एकदम पेड़ ढ़हता हुआ आ गिरा। चर को यह आस न थी। उसे सँभलने का समय नहीं मिल पाया और पेड़ गिरा तो उसके पंजे उसमें फँसे रह गए। प्यारे एक-एक कर पेड़ की टहनियाँ काटने लगा। इतने में देखता क्या है कि दरख्त से चिपटे यह हजरत जीते-जागते वहाँ लटके हुए हैं। प्यारे को अचंभा हुआ। बोला, "क्यों-जी, फिर तुम यहाँ आ पहुँचे?"

चर बोला, "जी, मैं वह नहीं, दूसरा हूँ। अब तक तुम्हारे भाई धनवीर के साथ था।"

"जो हो। चलो, तम्हें अपने कर्मों का फल मिला।"

यह कहकर कुल्हाड़ी घुमा मूठ उसकी उसके सिर पर दे मारनेवाला ही था कि वह चर दया के लिए गिड़गिड़ाने लगा।

बोला, "मुझे मारो नहीं, जो कहोगे, मैं वही तुम्हारे लिए करूँगा।"

"तुम क्या कर सकते हो?"

"मैं अशर्फी बना सकता हूँ। जितनी कहो उतनी।"

"अच्छी बात है, बनाकर दिखाओ।"

वह चर अशर्फी बनाने की तरकीब बताने लगा। बोला, "उस बड़ के कुछ पत्ते

हाथ में ले लीजिए और फिर मसलिए। धरती पर गिरकर बस अशर्फियाँ-ही-अशर्फियाँ बन जाएँगी।''

प्यारे ने कुछ पत्ते लिए और हाथों से मला। देखता क्या है कि हाथों से अशर्फियों की धार-की-धार गिर रही है।

बोला, ''यह तो खूब बात है। चलो, बाल-बच्चों के मन-बहलाव का यह तो अच्छा सामान हो गया।''

चर बोला, ''अब मुझे जाने दीजिए।''

प्यारे ने उसको पेड़ से छुड़ा दिया। बोला, ''अच्छी बात है, जाओ भगवान तुम्हारा भला करे।''

और भगवान का नाम आना था कि पानी में पत्थर की तरह वह चर धरती में गिरकर अन्तर्धान् हो गया। बस एक सूराख रह गया।

6

सो दोनों भाइयों के लिए हवेलियाँ खड़ी हो गईं और वे अलग-अलग मकान में रहने लगे। प्यारे ने खेत की कटाई-लुनाई निबटाकर तैयारी की और एक त्यौहार के रोज भाइयों को अपने घर खाने का निमंत्रण दिया। पर भाई दोनों उसके घर आने को राजी नहीं हुए।

बोले, ''बड़ी आई कहीं की दावत! जो इन गंवारों को खाने का सलीका भी हो! सो भला हमीं उसमें जाने को रह गए हैं!''

भाई लोग नहीं आए तो प्यारे ने गाँव के और स्त्री-पुरुषों को जिमाया-जुठाया। बड़ी हँसी-खुशी रही। दावत के बाद बाहर के चौक में प्यारे आया। वहाँ स्त्रियाँ मगन होकर गरबा नाच रही थीं। प्यारे आकर उनसे बोला कि वाह-वाह, एक नाच, भाई, हमारे नाम का हो जाए। उसके बाद मैं ऐसी चीज तुम्हें बांटूं, कि पहले जिंदगी में तुमने देखी भी न हो।

स्त्रियाँ और भी हँसी और खुश-खुश प्यारे की तारीफ में गाना गाती नाचने लगीं। उसके बाद बोलीं, ''लाओ देखें, तुम्हारी वह क्या चीज है?''

प्यारे ने कहा, ''अभी लो।''

कहकर उसने नाज भरी एक डलिया ली और चला जंगल की तरफ। स्त्रियाँ हँसने लगीं। बोलीं, ''है असल मूरख।'' उसके बाद फिर अपने इधर-उधर की चर्चा करने लगीं।

इतने में देखती क्या हैं कि प्यारे डलिया लिए जंगल की तरफ से भागा चला आ रहा है। डलिया किसी चीज से भरी हुई मालूम होती है।

आकर बोला, "बोलो, दूँ तुम्हें?"

"हाँ-हाँ, दो न!"

प्यारे ने एक मुट्ठी अशर्फियाँ लीं और बीच में बखेर दीं। बस अनुमान कर लीजिए कि कैसी भगदड़ वहाँ मची होगी। सब जनी उन्हें बीनने और छीनने-झपटने लगीं। आस-पास के लोग भी टूट पड़े। एक बिचारी बुढ़िया की तो जान जाते-जाते बची।

प्यारे बहुत हँसा। बोला, "अरे, मूरखो! बुढ़िया बेचारी को क्यों कुचले डाल रहे हो। जरा सबर कर लो, मैं और बखेरता हूँ।"

कहकर उसने एक पर्स सोना और बिखरा दिया। तब तो और भी लोग आ जुटे और प्यारे ने जितनी थीं, सब मुहरें वहीं फेंक बखेरी। उसके बाद लोग फिर और माँगने लगे।

पर प्यारे बोला, "अब तो मेरे पास और रही नहीं। फिर किसी वक्त और सही। आओ, नाचें-कूदें। और अजी, तुम लोग रुक क्यों गईं? गाना गाना अपना जारी रखो न?"

स्त्रियाँ पहले की भाँति गाने लगीं।

बोला, "नहीं जी, ये तो तुम्हारे गीत कुछ बढ़िया नहीं हैं।"

स्त्रियाँ बोलीं, "खूब! बढ़िया गीत भला हम और कहाँ से लाएँ?"

बोला, "देखो, मैं बताता हूँ।"

कहकर प्यारे खलिहान की तरफ बढ़ा। एक पूला लिया, नाज के दाने उसके अलग किए और फिर सकेर कर उसे धरती पर जमा कर रख दिया। बोला—अब देखो—

'पूले-पूले सुन और मान
मेरी तुझको यही जुबान।
जहाँ-जहाँ हो तेरी सींक
वहीं हो उठे एक जवान।'

उसका यह कहना था कि पूला विलीन हो गया और हर एक सींक की जगह एक सिपाही लैस खड़ा हो गया। ढोल-ताशे बजने लगे और तुरही बोलने लगी। प्यारे ने सिपाहियों को हुक्म दिया कि हाँ, ऐसे ही गा-बजा कर सबको खुश करो। इसके बाद आगे-आगे वह और पीछे-पीछे बैण्ड पार्टी, ऐसे गली-गली जुलूस घूमा। लोगों को बड़ा विनोद मालूम हुआ। खूब गाते-बजाते थे। अन्त में प्यारे ने कहा, "अब कोई साथ मत आना।" कहकर सिपाहियों को अलग एक तरफ ले गया और फिर सबको सींक बनाकर पूले में बाँध अपनी जगह डाल दिया।

ऐसे सब हँसी-खुशी दिन बीता। उसके बाद रात हुई और प्यारे घर जाकर तबेले में धरती पर अपना कंबल डाल चैन से सो गया।

7

अगले दिन फौजी बलजीत के कान में इस बात की खबर पड़ी। सो वह भाई के पास आया। बोला, "प्यारे, यह बताओ कि वह सिपाही तुमने कैसे बनाए थे और फिर उन्हें वहाँ ले जाकर क्या किया?"

प्यारे ने पूछा, "उससे तुम्हें भला मतलब क्या है?"

"मतलब क्या है? क्यों? सिपाही हों तो कोई कुछ भी कर सकता है। उनसे राज का राज जो जीता जा सकता है।"

प्यारे अचरज में बोला, "अच्छा, सचमुच? पहले से तुमने क्यों नहीं बताया? लो, जितने कहो उतने सिपाही बनाकर मैं तुम्हें दिए देता हूँ। बहन और मैंने दोनों ने मिलकर कितना ही भूसा छोड़ा है। सो सिपाहियों की क्या कमी?"

प्यारे अपने भाई को खलिहान के पास ले गया। बोला, "देखो, मैं सिपाही बना तो देता हूँ; लेकिन सबको अपने साथ ही तुम ले जाना। जो कहीं उन्हें घर से खिलाना पड़ गया तब तो एक दिन में वे गाँव-का-गाँव खा जाएँगे।"

बलजीत ने कहा, "हाँ, सिपाही सब मैं साथ ले जाऊँगा।"

इस पर प्यारे सिपाही बनाने लगा। एक पूला धरती पर जमा के रखा—कि फौज का दस्ता तैयार हो गया। दूसरा रखा, तो दूसरी टुकड़ी तैयार। सो इतने सिपाही बना दिए कि वह मैदान तो कुल उनसे भर गया।

फिर पूछा, "क्यों भाई, इतने काफी होंगे?"

बलजीत की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था। बोला, "हाँ, इतने बहुत होंगे। मैं तुम्हारा एहसान मानता हूँ, प्यारे।"

प्यारे बोला, "एहसान क्या। और चाहिए तो आ जाना, मैं बना दूँगा। इस मौसम में अपने यहाँ भूसे की कोई कमी तो है नहीं।"

फौजी बलजीत ने फौरन उन सब टुकड़ियों का कमान सँभाला, उन्हें जमा किया, तरतीब दी और सबको साथ ले जंग का मोर्चा लेने चल दिया।

जंगी बलजीत का जाना था कि वैश्य धनवीर आ पहुँचा। उसे भी कल की बात की खबर लगी थी। सो जाकर भाई से बोला, "भाई बताओ, सोने की मोहरें तुमने कहाँ और कैसे पाईं। मेरे पास जरा शुरू करने को भी कुछ धन हो जाता तो उससे मैं तमाम दुनिया का पैसा खींचकर दिखा देता।"

प्यारे अचरज में भरकर बोला, "अरे, सचमुच ही तुमने पहले से मुझे क्यों नहीं

बताया ? लो, जितनी कहो, उतनी अशर्फियाँ मैं तुम्हें बनाए देता हूँ।''

धनवीर बड़ा खुश हुआ बोला, ''शुरू में तो मुझे तीन टोकरी भर अशर्फियाँ बस हो जाएँगी।''

प्यारे बोला, ''अच्छी बात है। चलो, मेरे साथ जंगल की तरफ चलो। या बेहतर हो घोड़ा साथ ले लो और गाड़ी। क्योंकि यह सब बोझ तुमसे उठेगा कैसे ?''

सो दोनों जंगल में आए। यहाँ प्यारे ने बड़ के पत्ते हाथ में लिए और मलकर सोने की धार धरती पर छोड़ दी। सो देखते-देखते अशर्फियों का अंबार लग गया।

पूछा, ''क्यों भाई, इतनी काफी होंगी ?''

धनवीर का मन बांसों उछल रहा था। बोला, ''हाँ, हाल तो इतनी काफी होंगी। तुम्हारा एहसान मानता हूँ, प्यारे।''

''यह कोई बात नहीं'', प्यारे बोला, ''और जरूरत हो तो आ जाना। मैं और बना दूँगा। बड़ के पेड़ में अभी अनगिनत पत्ते बाकी हैं।''

व्यापारी धनवीर ने वह सारा गाड़ी भर धन बटोरा, भरा और व्यापार करने चल दिया।

ऐसे दोनों भाई चले गए। बलजीत युद्ध जीतने गया, धनवीर लेन-देन से धन बढ़ाने। सो जंगी बलजीत ने तो एक राज्य जीत लिया और धनवीर ने व्यापार में बहुत धन कमा लिया।

फिर दोनों भाई मिले तो अपनी-अपनी कहानी सुनाने लगे। बलजीत ने बताया कि कैसे मुझे सिपाही मिले और धनवीर ने अपनी अशर्फियाँ मिलने की बात बताई।

बलजीत अपने भाई से बोला, ''धनवीर, राज्य तो मैंने जीत लिया है और ठाठ-बाट से रहता हूँ। पर सिपाहियों को रखने के लिए काफी पैसा मेरे पास नहीं है।''

इस पर व्यापारी धनवीर ने कहा, ''धन तो मेरे पास अकूत है। पर मुश्किल यह है कि उसकी रखवाली के लिए सिपाही नहीं हैं।''

जंगी बलजीत ने कहा, ''एक काम करें—प्यारे के पास चलें। मैं तो कहूँगा कि तुम्हारे धन की रखवाली के लिए तुम्हें वह कुछ सिपाही बनाकर दे दे। और तुम कहना कि मेरे सिपाहियों के गुजारे के लिए धन की जरूरत है, सो मुझे मोहर बना दे।''

आपस में यह ठहराकर दोनों प्यारे के पास आए।

बलजीत बोला, ''भाई प्यारे, मेरे पास सिपाही काफी नहीं हैं। सो दो-एक टुकड़ी मुझे उनकी और चाहिए। बना दो।''

प्यारे ने सिर हिला दिया। बोला—

"नहीं, अब मैं और सिपाही नहीं बनाकर दूँगा।"

"लेकिन तुमने वचन दिया था कि बना देंगे।"

"हाँ, दिया था। लेकिन अब और नहीं बनाऊँगा।"

"बड़े मूरख हो। क्यों नहीं बनाओगे?"

"तुम्हारे सिपाहियों ने एक आदमी की जान ले ली, मैंने सुना है। उस दिन सड़क के किनारे का खेत मैं जोत रहा था, तभी एक औरत गाड़ी में बैठी जा रही थी। मैंने कहा, "क्या बात है, कोई मर गया है?" बोली कि मेरे पति को लड़ाई में बलजीत के सिपाहियों ने मार डाला है। मैं तो समझता था, सिपाही अपना गाना-बजाना किया करेंगे और लोगों का मन बहलाएँगे पर उन्होंने तो आदमी की हत्या कर डाली है! अब मैं और सिपाही बनाकर नहीं दूँगा।"

फिर उस अपनी बात से प्यारे डिगा नहीं और सिपाही नहीं बनाए।

धनी धनवीर ने भी प्यारे को कुछ और सोना बना देने को कहा।

लेकिन उस पर प्यारे ने सिर हिला दिया। कहा—

"नहीं, मैं अब सोना भी नहीं बनाऊँगा।"

"और जो तुमने वायदा किया था?"

"किया था, लेकिन अब मैं नहीं बनाता।"

"भला क्यों, मूरख?"

"क्योंकि तुम्हारी सोने की मुहरों ने हमारे हरिया की बेटी की दुधार गाय हर ली है।"

"सो कैसे?"

"कैसे क्या, हर ही जो ली है। उसके पास एक गाय थी। बाल-बच्चे उसका दूध पिया करते थे। पर उस दिन हरीचन्द की धेवती हमारे घर दूध माँगने आई। मैंने कहा, "क्यों, तुम्हारी गाय क्या हुई?" बोली, "महाजन धनवीर का कारिन्दा आया था। उसने सोने के तीन सिक्के अम्मा को दिए, सो अम्मा ने गाय उसे दे दी। अब कहाँ घर में दूध रखा है?" मैं तो समझता था कि सोने की मुहरें लेकर तुम अपना और लोगों का जी-बहलाव करोगे। पर उनसे तो तुम बच्चों का दूध छीनने लगे हो। नहीं, मैं और मुहर तुम्हें बनाकर नहीं दूँगा।"

और इस पर प्यारे अचल होकर अड़ गया और मोहरें बनाकर नहीं ही दीं। सो दोनों भाई अपने मुँह लौटकर चले गए। आते-जाते आपस में सलाह-मशविरा करने लगे कि कैसे अपनी मुश्किल हल करनी चाहिए।

बलजीत ने कहा, "सुनो, मैं बताता हूँ। एक काम करो। तुम तो सिपाहियों के लिए मुझे धन दो और मैं तुम्हें अपना आधा राज्य दिए देता हूँ। बस, फिर धन की

रक्षा के लिए काफी सिपाही भी तुम्हारे पास हो जाएँगे।"

धनवीर इसमें राजी हो गया।

सो दोनों भाइयों ने आपस में बंटवारा कर लिया। इस तरह वे दोनों ही राजा बन गए। दोनों के पास रियासत हो गई और किसी के पास धन की कमी नहीं रही।

8

प्यारे अपने देहात के घर ही रहा। गूंगी बहन के साथ खेत में काम करता और माता-पिता को पालता था।

एक दिन ऐसा हुआ कि उनके पालतू कुत्ते को कहीं से खाज लग गई। वह ऐसा क्षीण होने लगा कि ज़ीने की आस ही नहीं रही। बिलकुल मराऊ हो आया। प्यारे को उस पर दया आई। बहन से कुछ रोटी माँग टोपी में रख कुत्ते को डालने वह बाहर आया। टोपी फटी थी, सो टुकड़ा जो कुत्ते को फेंका तो उसके साथ उस जड़ी की एक जड़ भी आ गिरी। कुत्ते ने रोटी खाई और साथ वह जड़ भी खा गया। खाना था कि वह तो एकदम चंगा हो गया। सब रोग जाता रहा और वह उछल-कूद मचाने लगा। कभी भौंकता और दुम हिलाता और किलोलें करता। यानी बिलकुल पहले की भाँति चुस्त-तन्दुरुस्त हो गया।

माँ-बाप को यह देख बड़ा अचम्भा हुआ। पूछने लगे, "कुत्ते का रोग तुमने कैसे छिन में हर लिया?"

प्यारे बोला, "मेरे पास एक जड़ी की दो जड़ थीं। उनमें से एक कोई खा ले तो सब रोग मिट जाएँ। तो उनमें से एक इस कुत्ते ने खा ली है।" उसी समय की बात है कि राजा की बेटी बीमार पड़ी। राजा ने गाँव-शहर सर्वत्र ऐलान कर दिया कि जो बेटी को आराम कर देगा, उसे खूब इनाम मिलेगा। और वह कुंवारा हुआ तो राजा की बेटी भी उसे ब्याह दी जाएगी। दूसरे गाँवों की तरह प्यारे के गाँव में भी यह ऐलान हुआ।

माँ-बाप ने यह खबर सुनकर प्यारे को बुलाया। बोले, "तुमने राजा की डोंडी की बात सुन तो ली है न? तुम कहते थे कि जड़ी है जिससे सब रोग कट जाते हैं। सो जाओ और उससे राजकुमारी को आराम कर देना। बस जन्म जीते को फिर चैन हो जाएगा।"

प्यारे बोला, "अच्छी बात है।"

कहकर वह चलने को उद्यत हुआ। हाथ-मुँह धोया, कपड़े पहने, पर द्वार से बाहर होना था कि वहाँ एक भिखारिन मिली। उसका हाथ गल रहा था और वह लूली हुई जा रही थी। बोली, "अजी मैंने सुना है कि तुम रोगों को आराम कर देते

हो। बड़ी दया हो कि मेरी इस बाँह को आराम कर दो। मुझसे इसके मारे कुछ भी करते-धरते नहीं बनता है।''

''अच्छी बात है।''

कहकर बाकी बची जड़ी उसने निकाली और भिखारिन को दे दी। कहा, ''लो, इसे खा लो।''

जड़ी को मुंह के नीचे उतारना था कि भिखारिन अच्छी-भली हो गई। अब वह पहले की भाँति चल-फिर सकती थी और सब काम के लायक थी।

इतने में अंदर से प्यारे के माँ-बाप भी राजा के यहाँ साथ चलने के लिए आए। उन्होंने सुना कि जड़ी तो इस मूरख ने गंवा डाली है, अब राजा की बेटी को काहे से आराम होगा? सुनकर दोनों प्यारे को खूब झिड़कने लगे। बोले, ''एक भिखारिन पर दया करते हो? भला राजा की बेटी का तुम्हें खयाल नहीं है?''

पर राजा की बेटी के लिए भी प्यारे के मन में दु:ख था। सो बैल गाड़ी में जोत, पुआल से उसकी बैठक मुलायम बना, उस पर सवार हो, प्यारे आगे बढ़ लिया।

माँ-बाप बोले, ''अरे, मूरख अब कहाँ जा रहा है?''

प्यारे बोला, ''क्यों राजा की बेटी का औगुन हरने जा रहा हूँ?''

''बढ़ा जा रहा है! अरे, तेरे पास अब जड़ी कहाँ रह गई है, बेवकूफ?''

बोला, ''कोई बात नहीं। देखा जाएगा।''

कहकर वह गाड़ी हाँके चला। चलता-चलता राजा के महल आया। पर महल की देहली पर उसका पाँव रखना था कि राज-कन्या को एकदम आराम हो गया।

राजा उस पर बड़ा खुश और विस्मित हुआ। प्यारे का आदर-सत्कार किया और कीमती कपड़े दिए।

बोला, ''अब तुम ही मेरे जमाई हो।''

प्यारे बोला, ''अच्छी बात है।''

और राजकुमारी का मूरख के साथ विवाह हो गया। उसके थोड़े अरसे के बाद राजा का देहाँत हो गया और मूरख ही राजा बना।

इस तरह अब तीनों भाई राजा हो गए।

9

तीनों अपने-अपने राज्य में राज करने लगे। जेठा बलजीत खूब कामयाब हुआ। उसने अपने राज्य का विस्तार बढ़ा लिया। जादू के सिपाही सो थे ही, अलावा भी उसने भर्ती किए। सारे राज्य में दस घर पीछे एक सिपाही देने का हुक्म था। उसका अच्छा कद हो और बदन में हट्टा-कट्टा भी। ऐसे जवानों की बहुत-बड़ी फौज

उसने खड़ी की और सबको कवायद सिखाई। कोई विरोध में चूँ भी करता तो झट बलजीत अपनी फौज भेज देता। सो उसका मनचाहा हो जाता था। इस तरह आस-पास के सब राजा उसका डर मानते थे। इस तरह बलजीत की खूब आराम और वैभव में गुजर होती थी। जिस पर नजर पड़ती, और जो भी चाहता, वही उसका था। क्योंकि वह सिपाही थे और वह मनचाही चीज जीत कर उसको ला सकते थे।

धनवीर वैश्य भी अपने आनंद से रहता था। प्यारे सिंह से जो रकम पाई थी, उसमें से उसने रत्ती भी नहीं खोया था, बल्कि उस दौलत को खूब बढ़ा-चढ़ा लिया था। अपने राज्य में अमन और आईन का उसने दौर डाल दिया था। पैसा खजाने में जमा रखता था, ऊपर से लोगों से कर उगाहता था! चुंगी-कर एक उसने जारी किया था और सड़क पर चलने या गाड़ी ले जाने का भी टैक्स डाला था। कपड़ा-लत्ता और सामान रसद इस तरह की चीजों पर भी टैक्स था। जो वह चाहता, उसे सुलभ था। पैसे की खातिर लोग सब उसे ला देते थे और खुद गुलामी को राजी थे। क्योंकि हर किसी को पैसे की चाह थी।

उधर उस मूरख प्यारे की भी हालत बुरी नहीं थी। ससुर के क्रिया-कर्म के अनंतर उसने क्या किया कि राज की सब पोशाक ली और बीबी से कहा कि इसे बक्सों में बंद करके रख दो। खुद वही अपने गाढ़े का कुरता तन पर ले लिया और काम पर चल पड़ा। बोला, "खाली तो मेरा जी नहीं लगता है। देखो, बदन पर चर्बी भी जमती जा रही है। भूख नहीं लगती और नींद भी खोई मालूम होती है।"

सो वह माँ-बाप को और अपनी गूंगी बहन को भी पास ही ले आया और पहले की तरह खेत पर काम करने लगा।

लोग बोले, "लेकिन आप तो राजा हैं।"

प्यारे बोला, "हाँ, पर राजा भी तो खाने को चाहता है न?"

एक दिन राजा का मंत्री आया। बोला, "तनख्वाह देने के लिए खजाने में पैसा नहीं है।"

प्यारे, "अच्छी बात है। तो मत तनख्वाह दो।"

"ऐसे कोई नौकरी नहीं करेगा।"

"अच्छी बात है। मत नौकरी करने दो। ऐसे उन्हें काम का और भी वक्त निकल आएगा। चलो, सब खाद ढोएँ। कितना तो घूरा जगह-जगह पड़ा है। यह सब खाद है कि नहीं।"

और लोग राजा के पास अपने मुकदमे लेकर आए। एक बोला, "अजी, इसने मेरा धन चुराया है।"

प्यारे ने कहा, "अच्छी बात है। चुराने से तो मालूम होता है कि उसके पास

कुछ था नहीं।''

सो इस तरह सब लोग जानते गए कि प्यारे सिंह राजा मूरख है।

बीबी उसकी बोली, ''लोग कहते हैं, तुम मूरख हो!''

प्यारे ने कहा, ''ठीक तो कहते हैं।''

पति की बात सुनकर वह सोच में रह गई। पर असल में वह भी मूरख ही थी। मन में बोली कि पति के खिलाफ मैं भला कैसे जा सकती हूँ। सुई जहाँ जाए, धागे को भी तो वहीं से जाना है न। यह कहकर उसने भी अपनी राजसी पोशाक उतारकर बक्स में बंद कर दी और अपनी गूंगी ननद से काम सीखने चली। सीखकर होशियार हो गई और अपने पति को खूब सहाय देने लगी।

इसका नतीजा यह हुआ कि चतुर-सयाने जितने जन थे, सब प्यारे का राज छोड़कर चले गए। बस मूरख-मूरख रह गए।

किसी के पास कोई पैसा-सिक्का नहीं था। सब रहते थे और काम करते थे। भरपेट खाते और दूसरों को खिलाकर खुश रहते थे।

10

और उधर पाताल-लोक में शैतान बाबा इंतजार में थे कि अब कुछ खबर मिले, अब मिले। तीनों भाइयों की बरबादी को तीन चर गए थे। पर गए मुद्दत हुई, खबर उनकी कोई नहीं आई। सो पता लगाने वह बाबा खुद-बखुद नर-लोक आए। यहाँ बहुत खोज-छान की। पर वे तीन चर तो कहीं मिले नहीं। मिले तो उनकी जगह तीन सूराख मिले।

सोचा कि मालूम होता है कि वे तीनों नाकाम रहे और विपत के शिकार हुए। सो चलो, अब मैं उन तीनों को खुद ही भुगतता हूँ।

यह मन में धार वह उन तीनों की तलाश में चला। पर अपनी पहली जगह तो कोई उनमें से था नहीं और देखता क्या है कि तीनों अपनी अलग-अलग राजधानी में राज्य करते हैं। इससे उस शैतान बाबा को बड़ी खीझ हुई। बोला, ''खैर, अब मैं उन पर अपना हाथ आजमा कर देखता हूँ।''

सो पहले तो वह राजा बलजीत के यहाँ गया। पर ऐसे नहीं गया। भेष बदलकर गया। एक फौजी सरदार का बाना उसने बनाया और घोड़ागाड़ी पर सवार महल पर पहुँचा। वहाँ जाकर बोला, ''हे राजा बलजीत, सुना है कि तुम बड़े बहादुर, बड़े पराक्रमी हो। मैंने भी कई युद्ध देखे हैं। जंगी मैदान का मुझे अनुभव है और मैं तुम्हारी सेवा में काम आना चाहता हूँ।''

राजा बलजीत ने उससे पूछताछ की और सवाल किए। देखा कि आदमी

होशियार है। सो उसे नौकरी में रख लिया और सिपहसालार बना दिया।

इन नए सेनापति ने राजा बलजीत को बताया कि कैसे एक मजबूत सेना तैयार करनी चाहिए, ऐसी कि कोई न हरा सके। इनके लिए तो हमें भरती बढ़ानी चाहिए। राज्य में बहुत-से लोग बेकाम हैं। जवानों को तो फौज में आना लाजिमी बना देना चाहिए। इस तरह फौज की ताकत अबसे पंचगुनी हो जाएगी। फिर तोप और बंदूक भी नए बनाने और मंगाने चाहिए। ऐसी बंदूक मैं ईजाद करूँगा कि एक बार में सौ छर्रे छोड़ेगी। और तोप ऐसी कि क्या आदमी और क्या घोड़ा या सवार और क्या दीवार जो सामने पड़े, सब उसकी मार से भस्म हो जाएँ। जिसके ध्वंस के आगे कुछ नहीं ठहर सकेगा।

राजा बलजीत ने सेनापति की बात पर गौर किया। हुक्म हो गया कि अच्छा, जवान लोगों को सबको फौज में भर्ती होना लाजिमी है और कारखाने बनवाए, जहाँ नई तरह की बंदूक और तोपें बड़ी तादाद में तैयार हो सकें। यह होते ही पड़ोस के राजा से लड़ाई ठान दी गई। आमने-सामने दोनों फौजों को मिलना था कि बलजीत ने सिपाहियों को हुक्म दिया कि जवानों, कस कर छर्रे छोड़ो और तोपों का जौहर दिखाओ। बस क्या था। एक धावे में दुश्मन की आधी फौज खेत रही। कुछ कट-कटा गए, बहुत ध्वंस हो गए और बाकी भाग निकले। दुश्मन राजा ऐसा भयभीत हुआ कि हथियार डाल दिए और सारा राज्य अपना सौंप दिया। राजा बलजीत अपनी विजय पर खुश हुआ।

बोला, "अच्छा, अब हिंदुस्तान की सल्तनत की बारी आनी चाहिए।"

लेकिन हिंदुस्तान के राजा ने राजा बलजीत के बारे में पहले से सब हाल-चाल ले रखा था। उसने भी वहाँ की ईजादों की नकल कर ली थी और अपनी नई ईजादें भी की थीं। इस तरह खूब तैयारी उसने कर रखी थी। सारे जवान मर्द ही नहीं, बल्कि बिन-ब्याही औरतों को भी सेना में भर्ती किया था और फौज उसकी बलजीत से भी बढ़ी-चढ़ी बन गई थी। हूबहू बलजीत की-सी तोप और बंदूक उसने ढलवा ली थीं। बल्कि हवा में उड़कर ऊपर से आग के बम फेंकने का भी तरीका ईजाद कर लिया था।

बलजीत हिंदुस्तान की सीमा पर चढ़ाई करने आया। खयाल था कि पहले राजा की तरह इसे भी हाथों-हाथ गिराऊँगा। पर पहली धार अब भोथरी हो गई थी। हिंदुस्तान के राज ने बलजीत की फौज को पास न फटकने दिया। पहले ही हवा के रास्ते अपनी जनाना पल्टन को भेज दिया कि बलजीत की फौज पर जा आग के बम बरसाओ। जनाना पल्टन ने वहाँ जाकर ऐसी आग की वर्षा की कि पतंगों की तरह बलजीत की फौज के लोग भुनने लगे। यह देख फौज भाग निकली और राजा

बलजीत अकेला ही रह गया। सो हिंदुस्तान के बादशाह ने बलजीत का इलाका भी हथिया लिया और बलजीत ने जैसे-तैसे भागकर जान बचाई।

इस तरह सबसे जेठे को निबटाकर शैतान अब राजा धनवीर के पास पहुँचा। इस बार व्यापारी का उसने भेष बनाया और धनवीर की राजधानी में जाकर डेरा डाला। वहाँ अपनी फर्म खोल दी और लगा पैसा जुटाने। हर चीज ऊँचे दाम उसने खरीदनी शुरू की। सो ज्यादा कीमत पाने के लिए दौड़-दौड़ सब लोग उसके पास पहुँचने लगे। बदले में लोगों के पास इतना सिक्का फैल गया कि सबके सब अपना पूरा टैक्स वक्त पर अदा कर देते थे और पहला बकाया भी सब चुका दिया था। राजा धनवीर इस पर खूब खुश हुआ। सोचा कि यह नया व्यापारी तो अच्छा आया है। अब तो और भी धन मेरे पास जुड़ जाएगा और जिंदगी और ऐश से कटेगी।

सो धनवीर राजा ने नई तामीर के नक्शे बनाए और एक नया महल खड़ा करने का हुक्म दिया। ऐलान कर दिया कि लोग लकड़ी और पत्थर लाकर दें और मजदूरी के लिए भी लोगों की जरूरत है। दर हर जिन्सकी ऊँची मिलेगी। धनवीर राजा का खयाल था कि लोग पहले की तरह झुंड-के-झुंड आएँगे। पर अचरज से देखता क्या है कि पत्थर और लकड़ी सिर ले-लेकर सब लोग उस व्यापारी के पास पहुँच रहे हैं और मजदूर भी उधर ही जाते हैं। राजा ने दर और भी ऊँची चढ़ा दी। लेकिन व्यापारी ने उससे भी सवाई कर दी। धनवीर के पास बहुत धन था, लेकिन व्यापारी के पास उससे भी अकूत था। सो हर जगह व्यापारी ऊँचे दाम चढ़ा ले जाता था और बाजी उसके हाथ रहती थी।

नतीजा यह कि राजा के महल पर सन्नाटा रहने लगा। नए महल की शुरुआत भी नहीं हो सकी।

धनवीर के मन में एक नया बाग तैयार करने की आई। सो बारिश बीतते उसने लोगों को बुलाया कि आएँ और बाग तैयार करें। पर कोई न फटका। सब लोग उस व्यापारी का एक तालाब खोदकर तैयार करने में लगे थे। जाड़ों के दिन आए, और धनवीर को कुछ पर और मुलायम पशमीनों की जरूरत हुई । आदमी खरीदने बाजार भेजे, लेकिन वे खाली हाथ लौट आए। बोले कि बाजार में तो ये चीजें मिलती ही नहीं हैं। सब-की-सब व्यापारी ने ले ली हैं। बड़ी-चढ़ी कीमत दे उसने बढ़िया पशमीने खुद खरीद लिए हैं और पहनने की जगह उन्हें बिछाने के काम लाता है।

धनवीर ने कुछ उम्दा घोड़े खरीदने चाहे। भेजा खरीददारों को। लेकिन उन्होंने आकर खबर दी कि अच्छे-अच्छे जानवर तो सब व्यापारी ने खरीद लिए हैं और पानी ढो-ढोकर उसका तालाब भरने के काम वे आ रहे हैं।

इस तरह राजा का सब कारोबार रुकने लगा। कोई उसके लिए काम करने को

राजी न होता था, क्योंकि सब व्यापारी के काम में लगे थे। बस सब लोग राजा के आगे वक्त पर अपना टैक्स चुकाने चले जाते थे। क्योंकि व्यापारी की कृपा से सिक्के की उनके पास कमी न थी। बाकी कोई राजा को नहीं पूछता था।

सो राजा के पास इतना धन जमा हो गया कि समझ न आता था, कहाँ उन सबको भर के रखा जाए। जिंदगी ऐसे दूभर होने लगी। नए मनसूबे बनाने तो उसके छूट ही गए। अब तो गुजारा चल जाता तो बहुत था। लेकिन गुजारे तक की मुसीबत होने लगी। हर चीज की उसके पास कमती हो आई। एक-एक कर रसोइए, कोचवान, नौकर उसे छोड़ व्यापारी की खिदमत में जाने लगे। ऐसे उसे खाने के भी लाले पड़ आए। बाजार से खरीदने को भेजता तो वहाँ कुछ मिलता ही नहीं। सब व्यापारी ने खरीद लिया था और लोग बस आकर राजा का टैक्स चुका जाते थे, अधिक उन्हें राजा से मतलब नहीं था।

आखिर राजा धनवीर को इस पर बड़ी झुंझलाहट हुई। उसने व्यापारी को देश निकाला दे दिया। पर व्यापारी वहाँ से गया तो देश की हद के पार ही एक जगह जाकर जम बैठा। यहाँ भी उसने पहले की तरकीब की। पैसे की खींच थोड़ी नहीं होती। सो राजा के बजाए सब लोग व्यापारी के पास जा-जाकर अपने माल के ऊँचे दाम उठाने लगे।

राजा धनवीर की हालत यों खराब-पर-खराब होती गई। दिन-के-दिन हो जाते, और खाने को नसीब न होता। अफवाह यहाँ तक उड़ी कि व्यापारी का कहना है कि ठहरो, अभी मैं खुद राजा को ही जो खरीदे लेता हूँ। धनवीर सुनकर बड़ा हैरान था। उसे कुछ समझ न पड़ता था कि क्या किया जाए।

इसी वक्त बलजीत उसके पास आया। बोला, ''हिंदुस्तान के राजा ने मुझे हरा दिया है। सो मेरी कुछ सहायता करो।''

लेकिन यहाँ धनवीर ही गले तक अपनी मुसीबतों में डूबा था। बोला, ''यहाँ मुझे ही जो दो दिन से खाने को नहीं मिला है, भाई! तुम अपनी कहते हो!''

11

इस तरह दोनों भाइयों को ठिकाने लगा अब शैतान मूरखराज की तरफ मुड़ा। उसने फौजी जनरल का वेश बनाया और आकर मूरख को समझाया कि राजा के पास एक फौज जरूर रहनी चाहिए।

बोला, ''फौज बिना राजा की भला शोभा क्या है। बस मुझे आप हुक्म दे दीजिए और मैं आपके राज्य की प्रजा में से ही सिपाही निकाल लूँगा और फौज खड़ी हो जाएगी।''

मूरख प्यारे ने उसकी बात सुनी। बोला, "अच्छी बात है। बनाओ फौज और उन्हें अच्छे-अच्छे गाने सिखाओ। गाती-बजाती फौज जरूर बड़ी भली मालूम होगी।"

सो राजाज्ञा पाकर वह शैतान प्यारे के तमाम राज में फौज की भरती करता घूमने लगा। कहने लगा कि सिपाही बनोगे तो मौज रहेगी। रोज शराब मिला करेगी और उम्दा लाल पोशाक मिलेगी और भत्ता और...

लोग सुनकर हँसते थे। कहते कि शराब तो घर चाहे जितनी हम खींच सकते हैं। और पोशाक की जो बात है तो हमारी बहन-बीबी जैसी कहो रंग-बिरंगी पोशाक हमें तैयार कर सकती हैं। और...

सो कोई भरती न होता था।

इस पर शैतान आया और प्यारे राजा से बोला, "आपकी प्रजा तो बड़ी मूरख है। अपने मन से कोई भरती नहीं होता है। सुनिए, उन्हें भरती करना होगा।"

प्यारे बोला, "अच्छी बात है। करो कोशिश।"

सो उस बूढ़े ने जाहिर ऐलान कर दिया कि सबको भरती होना होगा। जो इनकार करेगा, राजा के यहाँ से उसे मौत की सजा दी जाएगी। लोग सुनकर फौजी जनरल के पास आए और बोले, "तुम कहते हो कि भरती नहीं होंगे तो राजा से हमें मौत की सजा मिलेगी। लेकिन भरती होंगे तो क्या होगा, यह भी तो बताओ। हमने सुना है कि सिपाही भरती होकर लड़ाई में मारे जाते हैं?"

"हाँ, ऐसा कभी होता तो है।"

यह सुना तो लोग और हठ पकड़ गए। बोले, "तब तो हम नहीं भरती होंगे। हर हालत में मरना ठहरा ही तो बाहर से घर मरना अच्छा है।"

"तुम मूरख हो, जाहिल बेवकूफ हो।" शैतान बोला, "अरे, सिपाही तो मरे या नहीं भी मरे। लेकिन भरती नहीं होगे तो फिर राजा के हाथ तुम्हारी मौत पक्की है।"

सुनकर लोग झमेले में पड़ गए। मूरखराज के पास पूछताछ करने पहुँचे। बोले, "एक जनरल साहब आए हैं। कहते हैं कि सब फौज में भरती होओ। सिपाही बनकर तुम मर भी सकते हो और अब बच भी सकते हो। लेकिन भरती को राजी नहीं हुए तो प्यारे राजा तुम्हें जरूर सजा देकर मार देंगे। क्यों जी, यह सच है?"

प्यारे हँसा। बोला, "मैं अकेला तुम सबको कैसे मार दूँगा? मूरख न होता तो मैं तुम्हें समझा सकता था। पर सच यह है कि मेरी खुद की भी समझ में यह मामला नहीं आता है।"

लोग बोले, "तो हम भरती नहीं होंगे।"

प्यारे ने कहा, "अच्छी तो बात है। मत होओ।"

सो लोग जनरल के पास गए और भरती होने से इनकार कर दिया।

शैतान ने देखा कि यहाँ तो उसकी दाल गलती नहीं। सो उसने फतेहिस्तान के शाह के पास जाकर सांठगांठ शुरू की।

शहर के पास पहुँचकर बोला, "सुनिए शाह साहब, चलकर राजा प्यारे सिंह के इलाके पर आप हमला क्यों नहीं करते हैं। धन तो बेशक उस राज्य में नहीं है। लेकिन जमीन खूब है और चौपाए हैं, और गल्ला है और सब किस्म के कच्चे माल की इफरात है।"

सो फतेहिस्तान के शाह ने लड़ाई की तैयारी शुरू कर दी। बड़ी फौज इकट्ठी की। बारूद और तोप और बंदूक जमा की और दुश्मन के राज पर चढ़ाई बोल दी। फौज कूच करती हुई हद लांघ उस राज के अंदर दाखिल हो गई।

प्रजा के लोग अपने प्यारे राजा के पास आए। बोले, "फतेहिस्तान के शाह ने हम पर चढ़ाई कर दी है।"

प्यारे बोला, "अच्छी तो बात है। उन्हें आने दो।"

हद के अंदर फतेहिस्तान के नवाब ने पलटन की सफरमैना टुकड़ी आगे भेजी कि देखो दुश्मन की फौज कहाँ छावनी डाले हुए है। पर इधर-उधर देखा-छाना, दुश्मन की फौज का कोई पता-निशान न दीखता था। शाह इंतजार में रहे कि अब कहीं से फौज का सुराग मिले, अब मिले। पर फौज के नाम एक आदमी नजर नहीं आया कि जिससे लड़ा जाए। इस पर फतेहिस्तान के राजा ने हुक्म दिया कि जाओ, बढ़कर गावों पर कब्जा कर लो। सिपाही चलते हुए एक गाँव पर पहुँचे। गाँव के मर्द-औरत सब मिलकर अचरज से सिपाहियों को देखने लगे। सिपाहियों ने उनका गल्ला और चौपाए झपटकर काबू करने शुरू किए। पर उन लोगों ने कोई बाधा नहीं दी। बल्कि खुद सब बताकर आसानी कर दी। फिर सिपाही दूसरे गाँव गए। वहाँ भी यही हुआ। इसी तरह दिनभर वे बढ़ते गए। फिर अगले दिन भी सब जगह वही बात हुई। लोग सब माल यों ही ले-लेने देते थे, कोई विरोध नहीं करता था। बल्कि सिपाहियों से लोग कहते थे कि बड़ी खुशी की बात है, आओ न, हमारे साथ तुम भी रहो-सहो।

लोग कहते, "भाई, तुम्हारे यहाँ मुश्किल है और धरती पर खाने को नाज काफी नहीं है तो अच्छी बात है, सब आकर यहाँ हमारे साथ क्यों नहीं रहने लगते हो?"

सिपाही बढ़ते गए। पर फौज कोई न मिली कि लड़ाई हो। अमन से रहते लोग मिले जो अपने खुद खाते थे और आव-भगत के साथ औरों को खिलाने को तैयार

थे। सिपाहियों का उन्होंने कोई मुकाबला नहीं किया। बल्कि स्वागत-सत्कार किया और अपने साथ आकर रहने का न्यौता दिया। सो सिपाहियों का जी इस लूट-मार के काम में लगा नहीं। वे उकता गए। अपने शाह के पास आकर बोले, "यहाँ हम नहीं लड़ेंगे, कहीं और का हुक्म दीजिए। लड़ाई तो ठीक है, पर यह भी कोई लड़ाई है। यह तो दूध में छुरी भोंकने के समान है। यहाँ अब बिल्कुल नहीं लड़ सकते हैं।"

शाह सुनकर बड़े झल्लाए। बोले, "जाओ, सारा राज्य तहस-नहस कर डालो। गाँव लूट लो, मकान जला दो और नाज भी फूंक डालो। चौपाए मारकर खत्म कर दो। अगर हुक्म मेरा न माना तो एक-एक को फांसी दे दूँगा।"

सिपाही मारे डर के नवाब के हुक्म के मुताबिक करने लगे। मकानों में आग लगाई और गल्ला फूंका और गायों के गले काटने लगे। पर उस राजा की मूरख प्रजा ने अब भी मुकाबला नहीं किया। बस, वे आँसू गिराते थे। क्या बुड्ढे-बुजुर्ग, क्या बूढ़ी स्त्रियां और क्या जवान—आँसू गिराने से ज्यादा कोई कुछ नहीं करते थे।

बोले, "भले लोगों, हमें क्यों सताते हो? नाज ईश्वर की नियामत है और चौपाए कुदरत को बहाल करते हैं। इन्हें नाहक बरबाद करते हो? जरूरत हो तो अपने लिए ही तुम उन्हें क्यों नहीं ले जाते?"

आखिर सिपाहियों का मन इस अत्याचार को और नहीं सहार सका। आगे बढ़ने से इनकार कर दिया। सो फौज इस तरह तितर-बितर हो गई और भाग गई।

12

शैतान की यह युक्ति भी काम न आई। सिपाहियों को लेकर प्यारे का कुछ नहीं बिगाड़ा जा सका। सो उसने दूसरी राह पकड़ी। इस बार एक भले सौदागर के वेश में प्यारे सिंह के राज में पहुँचा और वहाँ घर बसाकर बैठ गया। सोचा कि ताकत के जोर से नहीं तो धनवीर की तरह पैसे के जोर से तो वह काबू में आ ही जाएगा।

जाकर राजा से बोला, "मैं आपकी भलाई करने आया हूँ। देखिए, एक नफे की और उपकार की बात मैं कहता हूँ। असल में आपको समझदारी सीखनी चाहिए। मेरा इरादा है कि आपके राज में एक बड़ा फर्म खोलूँ और व्यापार का संगठन करूँ?"

प्यारे राजा बोला, "अच्छी तो बात है। मरजी हो तो आइए; क्यों नहीं, आइए और हम लोगों के साथ रहिए।"

अगले दिन वह भला व्यापारी चौक में पहुँचा। सोने की मोहरों का थैला पास में रख लिया और लिखते-जाने को एक कागज खरीदा। वहाँ बीच चौक खड़े होकर बोला, "ये लोगो, सुनो! तुम पशुओं की भाँति हो। मैं तुम्हें सिखाना चाहता हूँ कि

कैसे रहना चाहिए! इल्म और अदब मैं तुम्हें बताऊँगा। देखो, इस नक्शे के मुताबिक मेरे लिए एक मकान तैयार किया जाना है। मैं बताता जाऊँगा, वैसे काम करते जाना। काम के बदले सोने की मोहरें तुम्हें मिलेंगी।''

यह कहकर बोरे में भरी मोहरें उसने लोगों को दिखाई।

उस राज्य की प्रजा के मूरख लोग बड़े अचरज में पड़े। उनके यहाँ धातु के सिक्के का चलन नहीं था। अपना माल अदल-बदल लेते थे और मेहनत करके लेना-देना चुकाते थे। सोने की मोहरों को वे अचंभे से देखते रह गए। बोले, ''चीज तो भाई, वह खूबसूरत दीखती है।''

सो अपना माल लाकर वह देने लगे या मेहनत करने को राजी हुए। एवज में कुछ मोहरें ले लेते थे। धनवीर के राज की तरह यहाँ भी शैतान बाबा ने हाथ अपना खोल दिया। आओ और लूटो। लोग आ-आकर अशर्फियाँ ले जाते, बदले में अपना सामान दे जाते, या कुछ मेहनत का काम कर देते।

यह देख वह बड़ा खुश हुआ। मन-मन में कहने लगा कि इस बार मामला ठीक चल रहा है। बस, धनवीर की तरह अब इस प्यारे को भी चंगुल में लिया। देखते जाओ। क्या दीन, क्या दुनिया, सोने के मोल कुल-का-कुल उसे खरीदे लिए लेता हूँ।

पर वे लोग थे मूरख। सोने की मोहरें पाईं कि उन्होंने अपनी औरतों को दे दीं। औरतों ने गहने बनवा लिए। लड़कियाँ उसके जेवर गले में पहनतीं और भाँति-भाँति के आकार में बनाकर अपने जूड़ों में बाँधतीं। होते-होते गली, सड़क में बालक उन सोने के टुकड़ों से खेलने लगे। सबके पास ही ऐसे टुकड़े बहुतेरे हो चले थे। और अब किसी को उनकी जरूरत न रह गई थी। सो सबने उन्हें लेना बंद कर दिया। लेकिन अभी उन नए महाजन की हवेली आधी भी नहीं बनी थी और सालभर के लायक भी माल-सामान उनके पास इकट्ठा नहीं हो पाया था। सो उन्होंने ऐलान किया कि अभी काम बहुत बाकी है और लोगों की जरूरत है। अभी बहुत-से गाय-बैल भी उसे चाहिए और गल्ला भी चाहिए। हर चीज और हर काम का नकद सोना दूँगा, और पहले से ज्यादा।

पर कोई बंदा काम करने न आया। न कोई कुछ बेचने लाया। हाँ, कभी हुआ तो कोई लड़का या कोई नन्हीं बच्ची हाथ में बेर-अमरूद ले उसके बदले में सोने की मोहर लेने वहाँ चली जाती तो चली भी जाती। और तो कोई पास फटकता नहीं था। सो उस महाजन को खाने के लाले पड़ने लगे। आखिर मारे भूख के वह भला आदमी गाँव में घूमने निकला कि कहीं कुछ सिक्का देकर खाना मिल जाए। एक घर पर जाकर उसने मोहरें देनी चाहीं और कहा, ''यह मोहर लो और मुझे दो

रोटी दे दो।''

लेकिन घर में से स्त्री बोली, ''मोहर को मैं क्या करूँगी। यह तो वैसे ही मेरे घर में बहुतेरी पड़ी हैं।''

फिर दूसरे मकान पर जाकर उसने कोशिश की। कहा, ''यह अशर्फी लो और मुझे एक रोटी दे दो।''

कि उस घर की मालकिन विधवा थी। बोली, ''अजी मुझे यह नहीं चाहिए। मेरे कोई बच्चा भी नहीं जो इनसे खेल सके। और ऐसे तीन सिक्के तो मुँह देखने को मेरे पास पड़े हैं।''

फिर एक किसान के घर जाकर उसने आजमाया। पर किसान को भी सिक्के की जरूरत नहीं थी। बोला, ''यह सिक्का तो तुम्हारा मुझे चाहिए नहीं। पर राम के नाम पर जो माँगते हो तो ठहरो। मैं घर में कह देता हूँ कि तुम्हें दो मुट्ठी चून दे दें।''

राम का नाम सुनना था कि मुँह बिचका शैतान वहाँ से भागा। राम के नाम पर कुछ लेना तो दूर की बात थी, वह नाम ही उसे ऐसा लगा जैसे बर्छी।

सो उसे खाने को कुछ भी नहीं मिला। मोहरें सभी के पास हो गई थीं। जहाँ-कहीं जाता, वहीं लोग कहते कि इन ठीकरों की एवज में तो देने को हमारे पास कुछ है नहीं। या तो कुछ और लाओ नहीं तो आओ और मेहनत करो। या चाहो तो हाँ, राम के नाम पर हम तुम्हें जरूर दे सकते हैं।

पर शैतान के पास पैसे-रुपए के सिवा कुछ था नहीं। काम करे तो शैतान कैसा। और राम के नाम पर जो लेने की बात...सो बाबा रे, वह तो उससे बन ही नहीं सकता था। सो उसको बड़ी खीझ हुई और झुंझलाहट आई।

बोला, ''जब नकद पैसा देता हूँ तो इससे ज्यादा तुम्हें और क्या चाहिए। पैसे से तुम चाहे जो खरीद सकते हो और चाहे जैसा काम निकाल सकते हो।''

पर मूरख लोगों ने उसकी बात को कान पर नहीं लिया। बोले, ''जी नहीं, हमें पैसा नहीं चाहिए। हमें किसी का देना नहीं है और कोई टैक्स नहीं है। सो भला हम इसका बनाएँगे क्या?''

आखिर शैतान भूखे पेट ही रात को पड़कर सो गया।

बात यह मूरख राजा प्यारे के पास पहुँची। लोग आए और पूछने लगे, ''जी, बताओ हम क्या करें? एक भला सौदागर आया है। वह खाना तो अच्छा-अच्छा चाहता है और आराम का सब सामान चाहता है और ठाठ के कपड़े, पर काम नहीं करना चाहता। न राम के नाम कुछ लेने के वह लायक है। बस हर किसी को हर चीज के बदले नकद सोने के सिक्के दिखाता है। पहले तो लोगों ने उनके चाव में उसे सब कुछ दिया। सिक्के वे देखने में बड़े सुहावने लगते थे। पर हरेक के पास

काफी सिक्के हो गए तो सबका जी भर गया। अब कोई उन्हें नहीं पूछता है। सो उस भले सौदागर आदमी का बताओ क्या किया जाए? ऐसे तो जल्दी बेचारा भूखा मर जाएगा।''

प्यारे ने पूरी बात सुनी। फिर बोला, ''अच्छी बात है, उसके पेट पालने का बंदोबस्त तो हमें करना ही चाहिए। ऐसा करो कि उसकी बारी बाँध लो। गाँव के चौपाए उसे चराने दे दिए जाएँ। और एक-एक दिन एक-एक घर से उसे खाने को मिल जाया करे। है न ठीक?''

ऐसा ही हुआ। बेचारे को दूसरा कोई चारा न था। सो वह बारी-बारी एक-एक घर से रोटी पाकर पलने लगा।

होते-होते प्यारे के घर की भी एक बेर बारी आई।

शैतान घर के अंदर खाना खाने के लिए पहुँचा तो रसोई में वह गूंगी पीतम बहन सब तैयारी कर रही थी।

पर वह चतुर थी और अनुभवी थी। जो काम-चोर होते और अपना काम निबटाने से पहले आकर खाने पर पहुँच जाते थे, उनको खूब पहचानती थी। धोखा उसकी आँखों को देना मुश्किल था। उसने असल में हाथों की पहचान कर रखी थी। जिनकी हथेली खुरदरी और सख्त होती, उन्हें वह परोसकर देती थी। औरों को अलग और पीछे बैठाया जाता था।

वह बूढ़ा शैतान आकर रसोई में थाली पर बैठ गया। पर गूंगी लड़की पकड़कर उसका हाथ देखने लगी। देखा तो उसकी हथेलियाँ मुलायम और चिकनी थीं। नाखून भी घिसे हुए नहीं थे। हाथों में खुरदरापन बिलकुल नहीं था। इस पर वह गूंगी बहन गुस्से में बड़बड़ाने लगी और खींचकर उसे पटड़े से अलग कर दिया।

इस पर प्यारे राजा की स्त्री बोली, ''इस बात पर आप नाराज न होना, मेरी ननदजी ऐसे आदमी को थाली-पटड़े पर नहीं बैठाती जिसके हाथ काम से खुरदरे न हों। थोड़ा सबर कीजिए। लोग जब खा चुकेंगे तो पीछे आपको मिलेगा।''

बूढ़े शैतान को इस पर बड़ी झुंझलाहट हुई कि राजा के घर में आकर उसका इस तरह अपमान किया गया। वह मूरखराज से बोला, ''तुम्हारे राज्य में यह क्या बेवकूफी का कायदा है कि सबको हाथ से काम करना पड़े। तुममें अकल नहीं है तभी तो ऐसा कानून बनाया है। क्या लोग हाथ से ही काम करते हैं? अक्लमंद लोग किससे काम करते हैं, कुछ जानते हो?''

प्यारे बोला, ''हम लोग मूरख हैं। कैसे वह सब जानेंगे। हम तो अपना ज्यादातर काम हाथ से और जिस्म से करते हैं।''

''तभी तो तुम लोग मूरख हो। लेकिन मैं बताऊँगा कि दिमाग से कैसे काम

किया जाता है, तब तुम्हें पता चलेगा कि हाथ से काम करने के बजाए सिर से काम करने से ज्यादा फायदा है।"

प्यारे अचरज में रह गया। बोला, "अगर ऐसी बात है तब तो ठीक ही है कि हमको मूरख कहा जाता है।"

पर बूढ़ा शैतान अपनी ही कहता रहा। बोला, "लेकिन एक बात है। दिमाग का काम आसान नहीं होता। मेरे हाथों पर दाग नहीं हैं सो तुम मुझे थाली पर नहीं बैठाते हो। लेकिन यह तुमको नहीं पता कि दिमाग का काम उससे सौ गुना कठिन होता है। कभी तो सिर उसमें फटने जैसा हो जाता है।"

प्यारे सुनकर जैसे सोच में पड़ गया। बोला, "तो बाबा, इतनी तकलीफ क्यों कोई अपने को दे? सिर फटने को होता है तो क्या यह कुछ अच्छा लगता है? इससे क्या यह बेहतर न होगा कि हाथ और बदन के सहारे मोटा ही काम कर लिया जावे, जिससे सिर सही रहे?"

पर शैतान बोला "यह सब हमें मूरख लोगों की खातिर करना होता है। अगर अपने सिर पर हम जोर न दें तो तुम लोग हमेशा को मूरख रह जाओ। सिर से काम लेने की वजह से अब मैं तुम्हें कुछ सिखा तो सकता हूँ।"

प्यारे अचंभे में भरकर बोला, "जरूर सिखाइए। जिससे हाथ दु:ख आए तो जी-बहलाव के लिए अपने सिर भी कभी इस्तेमाल कर लिया करें।"

बूढ़े बाबा ने वचन दिया कि अच्छा सिखाऊँगा। सो प्यारे ने सारे राज्य में डौंडी करवा दी कि एक भलेमानस आए हैं। वह सबको सिर से काम करना सिखाएँगे। बताएँगे कि कैसे हाथ से ज्यादा सिर से काम किया जा सकता है! सब लोगों को चाहिए कि आवें और सीखें।

प्यारे की राजधानी के नगर में एक ऊँचा मीनार था। काफी सीढ़ियाँ चढ़कर उसकी चोटी पर पहुँचना होता था। वहाँ एक लालटेन थी। प्यारे उन भलेमानस को वहीं चोटी पर ले गया कि सब लोग उनके दर्शन कर सकें।

वह बाबा उस उंची जगह पर जमकर बैठ गए और बोलने लगे। लोग सुनने के लिए नीचे आए। उनका खयाल था कि उपदेशक महोदय हाथों को बिना इस्तेमाल में लाए सचमुच सिर से काम करने का तरीका बताएँगे। पर असल में जो उन्होंने बताया, वह तो यह था कि बिना काम किए कैसे रहा जा सकता है। लोगों को उनका व्याख्यान कुछ ठीक समझ नहीं आया। सो पहले तो एक-दूसरे के मुँह की ओर वे ताकते रह गए और विचार में पड़े रहे। आखिर अपने-अपने काम-धंधे पर चले गए।

उपदेशक बाबा मीनार पर पूरे-के-पूरे दिन जमे रहे। उसके बाद दूसरे दिन भी।

व्याख्यान उनका बराबर चलता रहता था। पर इतनी देर वहाँ खड़े-खड़े उन्हें भूख लग आई थी। मूरख लोगों को मीनार पर जाकर उन्हें कुछ खाना देने की सूझ ही न होती थी। सोचते थे कि अगर हाथ के बजाए यह महोदय सिर से और भी बढ़कर काम कर सकते हैं तो उस सिर के जोर से अपने लिए खाने का इंतजाम तो आसानी से कर ही सकते होंगे।

सो तीसरा दिन हुआ और बाबा उसी जगह थे। बराबर उपदेश देते थे। लोग पास आते, थोड़े रुकते और सुनते और फिर अपनी राह चले जाते थे।

प्यारे ने लोगों से पूछा, "क्यों भाई, उन महाशय ने सिर से काम करना शुरू अभी किया है कि नहीं?"

लोग बोले, "अभी तो नहीं किया दीखता। अभी तो मुँह से ही बोल रहे हैं।"

ऐसे मीनार की चोटी पर खड़े बोलते-बोलते उन्हें एक दिन और बीता। पर कमजोरी बहुत होती जाती थी। सो आखिर वह लड़खड़ाए और उनका सिर लालटेन के खंभे में जाकर लगा! नीचे खड़े एक आदमी ने यह देखा तो दौड़ा गया और जाकर प्यारे की रानी को खबर दी। रानी दौड़ी अपने राजा के पास गई। राजा खेत में काम कर रहा था।

बोली, "अरे, चलो देखो तो। कहते हैं उन बाबा ने अब वहाँ सिर से काम करना शुरू कर दिया है।"

प्यारे को अचंभा हुआ। बोला, "सचमुच?"

सो हल-बैल छोड़ मूरखराज मीनार के पास आया। इस वक्त तक वह बूढ़ा बाबा भूख से बेहाल हो गया था और लड़खड़ाकर गिरा जा रहा था। बार-बार खंभे से आकर सिर उसका टकराता था। प्यारे का वहाँ पहुँचना था कि शैतान ढेर होकर ढह पड़ा और धम-धम जीने की सीढ़ियों पर से गिरता-लुढ़कता आने लगा।

मूरखराज बोला, "भाई, इनका कहना सच था कि सिर के काम से कभी-कभी वह बिलकुल फटने जैसा हो जाता है। छाला-गूमड़ी तो भला ऐसे में चीज क्या है। अचरज नहीं सिर के ऐसे सख्त काम के बाद मरहम पट्टी की जरूरत हो आवे।"

लुढ़कती-पुढ़कती वह काया आई और नीचे की पैड़ी पर धरती में धड़ाम से उसका सिर लगा। प्यारे पास पहुँचकर देखता ही था कि इन महोदय के सिर ने कितना कुछ करतब किया है, लेकिन तभी धरती फटी और उस काया का जीव वहीं जाने कहाँ पाताल में समा गया। बस एक सूराख वहाँ बाकी रह गया।

यह देख प्यारे ने अपना सिर खुजलाया। बोला, "छिः, यह तो वही नरक का गंध है। उसी योनि का कोई जीव मालूम होता है। पर राम-राम, यह तो पहले सबका बाप ही रहा होगा।"

मूरखराज अपने राज्य में अब भी राज करता है और बहुत लोग उसके राज में जाकर बसने पहुंचते हैं। उसके दोनों भाई भी वहीं आ गए और वह उनका भी पालन करता है। जो भी परदेशी कोई पहुंचे सबको प्यारे राजा का कहना है कि आओ भाई, सब आओ। आओ, रहो। हमारे यहाँ किसी को कोई कमी नहीं।

बस राज में एक नियम है। यह कि जिसके हाथ काम से खुरदरे होंगे उसे तो मान की रोटी मिलेगी। बाकी को बचे-खुचे से ही मिल सकेगा।

❐

बालकों का विवेक

अनुवादक

रामनाथ 'सुमन'

धर्म

एक बच्चा और उसकी माँ

बच्चा : माँ, दाई ने आज अच्छे-अच्छे कपड़े क्यों पहने हैं और मुझे यह नई कमीज क्यों पहनाई है ?

माँ : इसीलिए कि आज छुट्टी और त्यौहार का दिन है और हम लोग गिरजाघर-प्रार्थना करने जाएँगे।

बच्चा : आज कौन-सा त्यौहार है ?

माँ : स्वर्गारोहण-दिवस है।

बच्चा : 'स्वर्गारोहण' का क्या मतलब होता है, माँ ?

माँ : इसका मतलब यह है कि हमारे प्रभु ईसामसीह स्वर्ग की ओर आरोहण कर गए।

बच्चा : 'आरोहण' से क्या मतलब है ?

माँ : इसका मतलब यह है कि वे ऊपर की ओर चले गए।

बच्चा : वे कैसे ऊपर गए माँ ? क्या डैनों से ?

माँ : नहीं, डैनों से नहीं, वे यों ही ऊपर चले गए। क्योंकि वे ईश्वर हैं और ईश्वर सबकुछ कर सकता है।

बच्चा : पर वे गए कहाँ ? पिताजी तो मुझसे कह रहे थे कि यह आसमान सिर्फ खली जगह है। उसमें तारों के सिवाए कहीं कुछ नहीं हैं और तारों के आगे फिर दूसरे तारे हैं और जिसे हम आसमान कहते हैं, उसका कहीं अंत नहीं है। तब वे कहाँ गए ?

माँ : *(मुस्कराती हुई)* हर आदमी हर बात नहीं समझ सकता। उसे श्रद्धा भी रखनी चाहिए!

बच्चा : श्रद्धा किस चीज में ?

माँ : जो कुछ बड़े-बूढ़े कहते हैं,उसमें।

बच्चा : लेकिन जब मैंने कहा कि नमक बिखर गया है, इसलिए किसी की मौत होनेवाली है, तब तुम्हीं ने कहा था कि इन मूर्खतापूर्ण बातों का विश्वास

नहीं करना चाहिए।

माँ : हाँ, तुम्हें किसी वाहियात बात में विश्वास नहीं करना चाहिए।

बच्चा : पर मुझे कैसे मालूम होगा कि कौन-सी बात वाहियात या मूर्खतापूर्ण है और कौन-सी नहीं ?

माँ : तुम्हें सच्चे धर्म में विश्वास रखना चाहिए।

बच्चा : पर सच्चा धर्म है क्या ?

माँ : हमारा धर्म *(जरा मुँह एक तरफ मोड़कर)* मैं समझती हूँ कि मैं निरर्थक बातें कर रही हूँ। *(जोर-से)* जाओ, पिताजी से कहो कि चलने का समय हो गया है, और अपनी चादर ओढ़ लो।

बच्चा : क्या हमें प्रार्थना करने के बाद मिठाई मिलेगी ?

युद्ध

कार्लशेन शिमर : उम्र 9 वर्ष
पेटया आर्लोव : उम्र 10 वर्ष
माशा आर्लोवा : उम्र 8 वर्ष

कार्लशेन : हमारा प्रशा रूसियों को हमसे जमीन नहीं लेने देगा!

पेटया : पर हम कहते हैं कि जमीन हमारी है, क्योंकि हमने इसे पहले विजय किया है।

माशा : 'हम' कौन हैं ?

पेटया : तुम अभी बच्ची हो और समझती नहीं। 'हम' का मतलब 'हमारे देश के लोग' हैं।

कार्लशेन : सब जगह ऐसी ही बात है। कुछ आदमी एक देश के होते हैं, कुछ दूसरे देश के।

माशा : मैं किस देश की हूँ ?

पेटया : हम-सबकी तरह तुम भी रूस की हो।

माशा : पर मैं वहाँ की न होना चाहूँ तो ?

पेटया : चाहो या न चाहो तुम रूसी हो और हर देश का अपना जार या बादशाह होता है।

कार्लशेन : *(बाधा देकर)* या पार्लमेंट...

पेटया : हरएक की अपनी सेना होती है और हरएक अपने आदमियों से टैक्स

वसूल करता है।

माशा : पर वे एक-दूसरे से इतने अलग क्यों हैं ?

पेटया : तुम क्या कहती हो ? हर एक दूसरे देश से भिन्न है।

माशा : पर वे एक-दूसरे से इतने अलग क्यों हैं ?

कार्लशेन : ओह, इसीलिए कि हर आदमी अपनी ही पितृभूमि को—अपने ही देश को-प्यार करता है।

माशा : मैं नहीं समझ पाती कि वे अलग-अलग क्यों हैं ? क्या सब मिलकर रहें तो यह ज्यादा अच्छी बात न होगी ?

पेटया : खेल खेलने में साथ होना जरूर अच्छी बात है, पर यह खेल नहीं है; यह एक महत्त्वपूर्ण विषय है...एक बड़ी बात है।

माशा : मुझे तो कुछ समझ में नहीं आता।

कार्लशेन : जब तुम बड़ी हो जाओगी, तब समझ सकोगी।

माशा : तब मैं बड़ी होना नहीं चाहती।

पेटया : तुम अभी छोटी हो। पर अभी से रूठने लगती हो, जैसी कि सब लड़कियाँ होती हैं।

मातृभूमि : स्वदेश-राज्य

गवरीला : एक सेवक और रिजर्व सैनिक

मीशा : गवरीला के मालिक का छोटा लड़का

गवरीला : मेरे प्यारे छोटे मालिक मीशेंका, मैं अब जा रहा हूँ। पता नहीं कि ईश्वर पुन: हमें कभी मिलाएगा या नहीं!

मीशा : क्या तुम सचमुच जा रहे हो ?

गवरीला : हाँ, निश्चित रूप से। लड़ाई फिर से शुरू हो गई है और मैं रिजर्व सैनिक हूँ।

मीशा : किसके साथ लड़ाई है ? कौन किसके खिलाफ लड़ रहा है ?

गवरीला : दैव जाने! मेरे लिए यह जानना मुश्किल है। मैंने अखबारों में इसकी बावत पढ़ा है; लेकिन सब बातें मेरी समझ में नहीं आई। वे कहते हैं कि आस्ट्रिया इस पर नाराज़ है कि हमने उन लोगों का साथ दिया...अरे, मैं नाम भूलता जा रहा हूँ...

मीशा : लेकिन तुम क्यों जा रहे हो ? अगर ज़ारों-बादशाहों में झगड़ा है तो उन्हें

लड़ने दो।

गवरीला : मैं कैसे रुक सकता हूँ! ज़ार, मातृभूमि, स्वदेश और सनातन धर्म के लिए मुझे जाना ही पड़ेगा।

मीशा : लेकिन तुम्हारी इच्छा तो जाने की नहीं है?

गवरीला : ऐसा कौन है जो स्त्री और बच्चों को छोड़कर जाना चाहेगा? और फिर ऐसी अच्छी जगह छोड़कर मैं क्यों जाना चाहूँगा?

मीशा : तब तुम क्यों जाते हो? उनसे कह दो कि मैं नहीं जाना चाहता और मैं न जाऊँगा। वे क्या कर लेंगे?

गवरीला : *(हँसता है)* वे क्या करेंगे? वे मुझे जबरदस्ती ले जाएँगे!

मीशा : पर तुम्हें घसीटकर कौन ले जाएँगे?

गवरीला : क्यों! मेरे-जैसे आदमी, जिनको हुक्म दिया जाएगा?

मीशा : पर जब वे तुम्हारे ही जैसे आदमी हैं, तब तुम्हें घसीटकर क्यों ले जाएँगे?

गवरीला : यह सेनापतियों, फौजी अफसरों का हुक्म है। हुक्म देते ही आदमी घसीटकर ले जाए जाते हैं।

मीशा : लेकिन अगर वे भी इनकार कर दें?

गवरीला : वे ऐसा नहीं कर सकते।

मीशा : क्यों नहीं कर सकते?

गवरीला : क्यों? इसीलिए... इसीलिए कि यह कानून है।

मीशा : किस तरह का कानून?

गवरीला : तुम अचंभे की बातें करते हो! अच्छा, अब तुमसे बातें करते काफी देर हो गई। आखिरी बार यहाँ चाय तैयार करने का समय हो गया है।

टैक्स

अमीन : टैक्स वसूल करनेवाला अफसर

ग्रुश्का : सात वर्ष की एक लड़की

(अमीन एक टूटी-फूटी झोंपड़ी में प्रवेश करता है। वहाँ सात साल की लड़की ग्रुश्क के सिवाय और कोई नहीं है। अमीन चारों तरफ देखता है।)

अमीन : क्या अंदर कोई नहीं है?

ग्रुश्का : माँ गाय को लेकर गई हैं और पिताजी मालिक की चौपाल पर होंगे।

अमीन : अच्छा; अपनी माँ से कह देना कि अमीन साहब आए थे। कहना कि वह तीसरी बार आ चुके, और अगर वह रविवार तक टैक्स के रुपए नहीं देती, तो मैं गाय ले लूँगा।

ग्रुश्का : तुम हमारी गाय ले लोगे! क्या तुम चोर हो ? हम तुम्हें उसे लेने न देंगे।

अमीन : *(मुस्कराते हुए)* वाह, तुम तो बड़ी चतुर लड़की हो। तुम्हारा नाम क्या है ?

ग्रुश्का : ग्रुश्का।

अमीन : अच्छा ग्रुश्का, तुम अच्छी और तेज बच्ची हो; लेकिन मेरी बात सुनो! अपनी माँ से कह देना कि मैं गाय ले जाऊँगा, यद्यपि मैं चोर नहीं हूँ।

ग्रुश्का : जब तुम चोर नहीं हो तो हमारी गाय क्यों ले जाओगे ?

अमीन : इसलिए कि कानून जो कुछ माँगता है, उसे चुकाना ही पड़ेगा। मैं टैक्स के बदले तुम्हारी गाय ले लूँगा।

ग्रुश्का : टैक्स से तुम्हारा क्या मतलब है ?

अमीन : तुम तो बड़ी चालाक लड़की मालूम पड़ती हो। टैक्स क्या है ? ज़ार अपनी प्रजा को जो कुछ देने, अदा करने का हुक्म देते हैं, वही टैक्स है।

ग्रुश्का : किसे अदा करने को ?

अमीन : किसे! अरे, खुद ज़ार को। और फिर वे तय करते हैं कि वह रुपया किस काम में खर्च हो।

ग्रुश्का : पर क्या ज़ार गरीब हैं ? हम गरीब हैं और वह मालदार हैं। तब फिर वह हमसे टैक्स क्यों लेते हैं ?

अमीन : अरी मूर्ख! वह अपने लिए यह रकम नहीं लेते। उन्हें हमारे लिए, हमारी आवश्यकताओं के लिए, अफसरों के लिए, फौज के लिए, शिक्षा के लिए हमारी ही भलाई के लिए जरूरत पड़ती है।

ग्रुश्का : अगर तुम हमारी गाय ले जाओगे तो हमारा क्या भला होगा ? हमारा तो कोई भला न होगा।

अमीन : जब तुम बड़ी हो जाओगी, तब इसे समझोगी। अच्छा, जो कुछ मैंने कहा है, अपनी माँ से कह देना। भूलना नहीं।

ग्रुश्का : मैं ऐसी वाहियात बात उनसे नहीं कहूँगी। अगर तुम्हें या ज़ार को किसी चीज की जरूरत हो तो खुद काम करके पैदा करो; और हमें जिसकी जरूरत होगी, हम उसे करेंगे।

अमीन : आह, यह लड़की बड़ी होकर जहर की पुड़िया निकलेगी।

निंदा

मितिया : उम्र 10 वर्ष
इल्यूशा : उम्र 6 वर्ष
सोनिया : उम्र 9 वर्ष

मितिया : मैंने पीतर सेमिनोविच से कहा कि हम लोग बिना कपड़े रहने की आदत डाल सकते हैं। उसने कहा, ''ऐसा नहीं हो सकता।'' तब मैंने उसे बताया कि माइकेल इवानोविच का कहना है कि जैसे हमारे मुँह को बहुत दिनों से खुले रहने के कारण ठंड बर्दाश्त करने की आदत पड़ गई है, उसी प्रकार हम अपने सारे शरीर में सहने की शक्ति बढ़ा सकते हैं। पीतर कहता है, ''तुम्हारा माइकेल इवानोविच गधा है!'' *(हँसती है)* और अभी कल ही माइकेल इवानोविच ने मुझसे कहा, 'पीतर सेमिनोविच बहुत झूठ बोलता है, लेकिन एक गधे-मूर्ख से और उम्मीद ही क्या की जा सकती है?' *(हँसती है)*

इल्यूशा : मैं तो उससे कहती, ''तुम उसके बारे में गंदी बातें करते हो; वह तुम्हारे बारे में गंदी बातें करता है।'

मितिया : लेकिन सच्ची बात यह है कि पता नहीं, दोनों में कौन गधा-मूर्ख हैं!

सोनिया : दोनों गधे हैं। जो दूसरे को गधा-मूर्ख कहता है, वह खुद गधा है।

इल्यूशा : ओह! अभी तुमने दोनों को गधा कहा है, इसीलिए तुम भी वही हो!

मितिया : मुझे अच्छा नहीं लगता कि दोनों एक-दूसरे के पीठ-पीछे एक-दूसरे को गधा कहें। जब मैं बड़ी होऊँगी, मैं ऐसा नहीं कहूँगी। मैं किसी के बारे में जो कुछ सोचती हूँ वह उसके मुँह पर कहूँगी।

इल्यूशा : मैं भी ऐसी ही करूँगी।

सोनिया : और मैं अपने को अपने तक ही रखूँगी।

मितिया : इसका क्या मतलब?

सोनिया : मेरा मतलब है कि मैं किसी के बारे में जो कुछ सोचती हूँ, वह तभी कहूँगी जब मैं वैसा चाहूँगी; और जब मैं न चाहूँगी तो नहीं कहूँगी।

इल्यूशा : इससे मालूम होता है कि तुम भी गधी हो।

सोनिया : अभी तुमने कहा था कि तुम किसी के बारे में गंदी बातें न करोगी।

इल्यूशा : ओह! पर मैंने ऐसा तुम्हारे पीठ-पीछे तो नहीं कहा।

दया

माशा } दो बच्चे
मीशा }
बूढ़ी औरत

(माशा और मीशा अपने घर के सामने, अपनी गुड़ियों के लिए झोंपड़ी बनाने में लगे हैं।)

माशा : *(मीशा से गुस्से में)* नहीं, इस तरह नहीं। मूर्ख! वह लकड़ी वहाँ से हटा ले।

बूढ़ी औरत : *(बाहर की ड्योढ़ी के पास पहुँचकर बड़बड़ाती है)* प्रभु उसका भला करे! वह बिलकुल देवी है, हर एक के प्रति दया से भरी हुई। *(बच्चे खेलना बंद कर बूढ़ी औरत की ओर देखते हैं।)*

मीशा : तुम किसके बारे में कह रही हो?

बूढ़ी औरत : तुम्हारी माँ के। वे ईश्वर को याद रखती हैं और हम गरीब-दुखियों पर दया करती हैं। उन्होंने अभी-अभी मुझे एक लहँगा, कुछ रकम और चाय दी है। ईश्वर और स्वर्ग की रानी उन पर कृपा करें! वह उधर रहनेवाले उस दुष्ट की भांति नहीं हैं, जो कहता है, "तुम-जैसी कितनी घूमती-फिरती हैं!" उसके कुत्ते इतने खूँखार हैं कि पूछो मत। मैं मुश्किल से उनसे जान बचाकर निकल सकी।

मीशा : यह आदमी कौन है?

बूढ़ी औरत : कलवरिया के सामने रहनेवाला। आह! वह बड़ा निर्दय है। होने दो! मैं इस देवी की अहसानमंद हूँ, जिसने मेरी विपदा में मुझे मदद दी और आराम पहुँचाया। अगर दुनिया में ऐसे लोग न हों तो हम लोग कैसे जिएँ? *(रोती है)*

माशा और मीशा : हाँ, वह बड़ी दयावती हैं।

बूढ़ी औरत : जब तुम बड़ी होना तो उसकी तरह होना। गरीब-दुखियों को न भूलना, तब ईश्वर भी कभी तुम्हें न भूलेगा। *(जाती है)*

मीशा : बेचारी गरीब बुढ़िया!

माशा : मुझे खुशी है कि माँ ने उसे कुछ दिया।

मीशा : मुझे समझ में नहीं आता कि जब हमारे पास बहुत-सा सामान है तो हम क्यों न दें? हमें जरूरत नहीं और उसे जरूरत है।

माशा : तुम्हें याद होगा कि संत जॉन ने कहा है, "जिसके पास दो कोट हों, वह एक दे दे!"

मीशा : हाँ, जब मैं बड़ी होऊँगी तो सब कुछ दे दूँगी।

माशा : तुम ऐसा नहीं कर सकती।

मीशा : क्यों नहीं ?

माशा : तब तुम्हारा क्या होगा ?

मीशा : मेरे लिए एक ही बात है। अगर हम हर एक के प्रति दयालु हों तो सब कुछ ठीक हो जाएगा।

(अपना खेल छोड़कर बाल-शिक्षण-गृह में जाती है। नोटबुक से एक पन्ना फाड़कर उस पर कुछ लिखती है और अपनी जेब में रख लेती है। पन्ने पर लिखा हुआ था, 'हमें दयालु होना चाहिए।')

नशा

मकर्का : उम्र 12 वर्ष

मार्फ़त्का : उम्र 6 वर्ष

पावलुश्का : उम्र 10 वर्ष

शिक्षक

(मकर्का और मार्फुत्का एक मकान से निकलकर गली में आती हैं। मार्फुत्का रो रही है। बगल के एक मकान के दरवाजे की सीढ़ियों पर पावलुश्का खड़ी है।)

पावलुश्का : अरे, तुम इतनी रात को यहाँ क्या कर रही हो ?

मकर्का : अरे, वह फिर नशे में पगला रहे हैं।

पावलुश्का : कौन, प्रोखीर काका ?

मकर्का : और कौन होगा!

मार्फुत्का : वह माँ को मार रहे हैं।

मकर्का : मैं अब अंदर न जाऊँगी। वह मुझे भी मारेंगे। *(ड्यौढ़ी पर बैठ जाती है।)* मैं यहीं रात बिता दूँगी; मैं अंदर न जाऊँगी। *(चुप्पी। मार्फुत्का जोर से रोती है।)*

पावलुश्का : चुप रह भाई, चुप रह! रोने से क्या फायदा होगा! बोल, हमारा क्या वश है ? जा, मैं कहती हूँ जा!

मार्फुत्का : *(आँसू ढलकाते हुए)* यदि मैं जार होती तो मैं उनकी कसकर खबर

लेती जो उन्हें वोदका[1] पिलाते हैं। मैं किसी को वोदका बेचने ही न देती।

मकर्का : बहुत खूब! अरे, खुद जार ही तो वोदका बिकवाता है। वह दूसरों को बेचने से रोकता ही इसीलिए नहीं कि उसकी आमदनी न मारी जाए।

पावलुश्का : गप्पी कहीं की!

मकर्का : गप्पी! कैसे? जा, ज़रा पूछ तो कि अकूलिना को कैद क्यों हुई? इसीलिए तो कि उसने बिना लाइसेंस लिए वोदका बेची और ज़ार का नुकसान हुआ।

पावलुश्का : सचमुच इसीलिए सजा हुई? वे लोग तो कहते थे कि उसने गैर-कानूनी काम किया था...

मकर्का : हाँ, दूसरा क्या गैर-कानूनी, यही कि लाइसेंस लिए बिना वोदका बेची।

मार्फुत्का : मैं तो इसे किसी को बेचने न दूँगी। वोदका से सब तरह से नुकसान-ही-नुकसान है। वैसे तो वह कभी-कभी ठीक भी रहते हैं, पर जब नशे में पागल हो जाते हैं तो सबको बुरी तरह मारते हैं।

पावलुश्का : तू अजीब बात करती है। मैं कल अपने मास्टर से पूछूँगी। उनको सब मालूम होगा।

मकर्का : ठीक है, पूछना।

(दूसरे दिन मकर्का के पिता प्रोखीर रात-भर नशे में सोने के बाद, होश होने पर उठकर, जिस कुत्ते ने उन्हें काटा था उसका बाल लेने, बाहर चले गए हैं। मकर्का की माँ, जिसकी आँखें सूजी हुई और लाल हो रही हैं, आटा गूँध रही है। बच्चे अभी तक जगे नहीं हैं, शिक्षक बाहर के बरामदे में बैठा तंबाकू पी रहा है, बच्चे स्कूल में प्रवेश कर रहे हैं।)

पावलुश्का : *(शिक्षक के पास जाकर)* यूजेनीसेमिविच, बताइए... कल किसी ने मुझे बताया कि ज़ार वोदका का रोज़गार करता है; किंतु अकूलिना को वही काम करने के लिए क़ैद हो गई। क्या यह सच है?

शिक्षक : जिस किसी ने तुमसे यह बात कही वह गधा था और तुमने उसकी बात का विश्वास किया, यह तुम्हारी बेवकूफी है। जार कोई रोजगार नहीं करता, इसीलिए तो वह ज़ार है। अकूलिना को बिना लाइसेंस

---

1. गेहूँ से बनाई हुई एक प्रकार की रूसी मदिरा।

लिए वोदका बेचने और यों सरकारी खजाने को नुकसान पहुँचाने के जुर्म में कैद हुई।

पावलुश्का : उसने नुकसान कैसे पहुँचाया ?

शिक्षक : इसलिए कि शराब पर आबकारी-कर लगा हुआ है जिस शराब पर सरकारी लागत दो रुपया पड़ती है, उसे वह लगभग साढ़े आठ रुपए में बेचता है। इस तरह जो मुनाफा है वह सरकारी आमदनी के रूप में खजाने में जाता है। और यह आमदनी बहुत बड़ी है, करोड़ों तक पहुँचती है।

पावलुश्का : मतलब यह कि जितनी ही वोदका खर्च होगी उतनी ही ज्यादा आमदनी होगी।

शिक्षक : जरूर होगी। अगर इस तरह आमदनी न हो तो फौज और स्कूलों के लिए और हमारी अन्य आवश्यकताओं के लिए इतनी रकम कहाँ से आएँगे ?

पावलुश्का : लेकिन जब हर आदमी को इन चीजों की जरूरत है तो वे हमसे सीधे पैसे क्यों नहीं वसूल कर लेते ?

शिक्षक : "वोदका बेचकर क्यों ?" इसलिए कि वैसा ही कानून है। अच्छा बच्चो, अब तुम लोग आ गए हो तो अपने-अपने स्थान पर बैठ जाओ।

मृत्यु-दंड

पीतर पेत्रोविच : एक प्रोफेसर
मेरिया इवानोवना : प्रोफेसर की पत्नी
फीदया : प्रोफेसर का 9 वर्ष का लड़का
इवान वेसिलेविच : सरकारी सैनिक वकील

(मेरिया इवानोवना सीं रही है। फीदया अपने पिता की बातें सुन रहा है।)

इवान वेसिलेविच : कोई आदमी इतिहास की शिक्षाओं से इनकार नहीं कर सकता। अपराध करनेवाले तथा समाज के लिए खतरनाक लोगों का दलन करने अर्थात् उनको समाज से हटा देने का आदर्श इसी प्रकार पूरा होता है जैसे हमने न केवल क्रांति के बाद फ्रांस में बल्कि इतिहास के और भी युगों में देखा है और आज यहाँ रूस में भी देख रहे हैं।

पीतर पेत्रोविच : नहीं, इसके बारे में हम निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकते। हम अंतिम परिणामों के संबंध में नहीं जान सकते। और इस स्थापना के अनुसार इन विशेष[1] कानूनों को ठीक नहीं कहा जा सकता।

इवान वेसिलेविच : लेकिन हमें पहले से इस बात की कल्पना कर लेने का कोई अधिकार नहीं है कि इन विशेष कानूनों का परिणाम हानिकारक ही होगा; और यदि हानि हुई भी तो वह इन कानूनों के प्रयोग से हुई, यह कैसे कहा जा सकता है? यह हुई एक बात; दूसरी बात यह है कि जिन मनुष्यों ने मानवता के संपूर्ण लक्षणों को छोड़ दिया है और खूँखार जानवर बन गए हैं; उनके साथ कठोरता का ही बर्ताव करना होगा। उदाहरणस्वरूप, जिस आदमी ने तीन-सौ साल के लिए बड़ी शांति से एक बूढ़ी औरत और उसके तीन बच्चों का खून कर दिया, उनको फाँसी देने के अलावा और क्या दंड दिया जा सकता है?

पीतर पेत्रोविच : मैं मृत्युदंड के प्रयोग की सर्वथा निंदा नहीं करता। मैं सिर्फ सैनिक न्याय का विरोध करता हूँ, जो अक्सर मृत्यु की सजा देता है। यदि बार-बार होनेवाली इन फाँसियों के डर से लोग अपराध से दूर रहते तो दूसरी बात थी, किंतु परिणाम उलटा होता है। इनके कारण लोग अपने भाइयों की हत्या के प्रति उदासीन होकर नैतिक पतन के गड्ढे में गिरते हैं।

इवान वेसिलेविच : फिर वही बात! हम अंतिम परिणामों के विषय में कुछ नहीं जानते; लेकिन हमें इससे फायदा होता है, उसे जानते हैं...

पीतर पेत्रोविच : फायदा?

इवान वेसिलेविच : हाँ, हम तुरंत होनेवाले फायदों से इनकार नहीं कर सकते। भला एक ऐसे मुलज़िम को उसके कृत्यों का बदला चुकाने से समाज अपने को कैसे वंचित कर सकता है?

पीतर पेत्रोविच : आपका मतलब यह है कि समाज को खुद बदला लेना चाहिए?

इवान वेसिलेविच : खुद बदला नहीं, इसके विरुद्ध व्यक्तिगत बदले की जगह सार्वजनिक सरकारी दंड की स्थापना करके।

---

1. उस समय रूस में सामान्य कानूनों को स्थगित करके एक प्रकार का सैनिक कानून प्रचलित था।

पीतर पेत्रोविच : हाँ, पर यह सब नियमित कानूनों द्वारा निर्णीत ढंग से होना चाहिए, न कि असाधारण कानून बनाकर।

इवान वेसिलेविच : सरकारी दंड ने उस इत्तिफाकी अतिशयोक्तिपूर्ण गैर-कानूनी प्रतिहिंसा का स्थान ले लिया है, जो प्राय: निराधार और गलत होती थी और जिसका लोग निजी और व्यक्तिगत रूप से प्रयोग करते थे।

पीतर पेत्रोविच : *(गरम होकर)* तब क्या आपका कहना यह है कि इस सार्वजनिक या सरकारी दंड का कभी गलत प्रयोग नहीं होता? क्या वह सदा शंका से परे होता है? क्या उसमें कभी गलती नहीं होती? नहीं, मैं इसे हर्गिज नहीं मान सकता। आपके तर्क मुझे या किसी को यकीन नहीं दिला सकते कि ये असाधारण कानून, जिनके द्वारा हज़ारों को फाँसी दी जा चुकी है और अब भी दी जा रही है, न्यायसंगत, उचित या लाभदायक हैं। *(उठ खड़ा होता है तथा उत्तेजित अवस्था में इधर-उधर टहलने लगता है।)*

फीदिया : *(अपनी माँ से)* माँ, पिताजी इतने उत्तेजित किसलिए हो गए?

मेरिया इवानोवना : पिताजी समझते हैं कि इतनी अधिक फाँसियों का होना ठीक नहीं है।

फीदिया : क्या आदमी मार डाले जाते हैं?

मेरिया इवानोवना : हाँ; उनका विचार है कि यह इतनी ज़्यादा मात्रा में नहीं होना चाहिए।

फीदिया : *(अपने पिता के पास आकर)* पिताजी, क्या दशाज्ञाओं *(टेन कमांडमेंट्स)* में यह नहीं कहा गया है, 'किसी की हत्या न कर!' तब तो यह बिल्कुल नहीं होना चाहिए।

पीतर पेत्रोविच : *(मुस्कराते हुए)* हम लोग जिस विषय पर बात कर रहे हैं उससे इसका संबंध नहीं है। इस धर्माज्ञा का मतलब यह है कि 'एक व्यक्ति दूसरे की हत्या न करे।'

फीदिया : लेकिन जब आदमियों को फाँसी होती है तब तो वे मारे ही जाते हैं।

पीतर पेत्रोविच : अवश्य। लेकिन तुम्हें समझना चाहिए कि कब और क्यों ऐसा किया जा सकता है।

फीदिया : कब ऐसा किया जा सकता है ?

पीतर पेत्रोविच : अब, मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ! उदाहरण लो, जैसे लड़ाई में होता है, या जब कोई अपराधी किसी को मार डालता है तब उसे बिना दंड दिए कैसे हो सकता है ?

फीदिया : पर धर्माज्ञा में यह क्यों कहा गया है कि हमें सबको प्यार और हरएक को क्षमा करना चाहिए ?

पीतर पेत्रोविच : अगर वैसा किया जा सके तो बहुत अच्छा हो, पर वैसा हो नहीं सकता! *(इवान वेसिलेविच की ओर मुड़कर, जो फीदिया की बातें सुनकर मुस्करा रहा है)* हाँ, तो मेरे योग्य मित्र इवान वेसिलेविच, मैं इन असाधारण कानूनों और सैनिक अदालतों को नहीं मानता, बिलकुल नहीं मान सकता।

जेल

क्षेमका : उम्र 13 वर्ष
अक्षुत्का : उम्र 10 वर्ष
मित्का : उम्र 10 वर्ष
पलश्का : उम्र 9 वर्ष
वानका : उम्र 9 वर्ष

(कुकुरमुत्ते इकट्ठे कर लेने के बाद बच्चे कुएँ के पास बैठे हुए हैं।)

अक्षुत्का : आह, काकी मैतर्ना की कैसी भयानक दशा थी! और बेचारे बच्चे! एक ने चीखना शुरू किया, फिर तो सब एक साथ चीखने लगे।

वानका : वे इतने घबराए हुए क्यों थे ?

पलश्का : क्यों? इसीलिए कि उनके पिता को जेल ले जाया जा रहा था। यह उन्हें घबरा देने के लिए काफी था।

वानका : उनके पिता को जेल क्यों भेजा गया ?

अक्षुत्का : क्या जानें! पुलिसवाले आए और उससे कहा कि जेल जाने को तैयार हो जाए। वे उसे पकड़कर साथ ले गए। हम सबने उसे देखा।

क्षेमका : वे उसे घोड़े चुराने के जुर्म में पकड़कर ले गए। डमकिन का घोड़ा चोरी हो गया था और क्रश्नोव का भी। यह उसी का काम था। हमारा अख्ता भी उसके हाथ लग गया था। क्या तुम समझती हो कि इसके लिए

पुलिसवाले उसे शाबाशी दें और उसकी पीठ थपथपाएँ?

अक्षुत्का : हाँ, मैं जानती हूँ, फिर भी मुझे बच्चों के लिए दुःख हो रहा है। तुम जानती हो, चार-चार बच्चे हैं। और वे लोग कितने गरीब हैं! उनके पास रोटी का एक टुकड़ा भी नहीं है। आज तो वे हमारे यहाँ भीख माँगने आए थे।

क्षेमका : किंतु तब उन्हें चोरी न करनी चाहिए।

मित्का : हाँ, किंतु चोरी तो बाप करता था, बच्चे तो नहीं करते थे। तब उन्हें भीख माँगने पर विवश क्यों होना पड़े?

क्षेमका : यह सीखने के लिए कि चोरी नहीं करनी चाहिए।

मित्का : पर चोरी बच्चों ने कब की, वह तो उनके बाप ने की।

क्षेमका : अरे, तू अपना वही राग अलापे जा रही है! 'बच्चे बच्चे!' उसने गलती क्यों की? क्या उसे इसलिए चोरी करने को छोड़ दिया जाए कि उसके कई बच्चे हैं?

वानका : वे लोग जेल में उसके साथ क्या करेंगे?

अक्षुत्का : सिर्फ उसे वहाँ रखेंगे और कुछ नहीं।

वानका : क्या वे उसे खाना भी देंगे?

क्षेमका : हाँ-हाँ, अवश्य। वह दंडित घोड़ाचोर! जेल उसके लिए क्या है! जिंदगी की हरएक चीज उसके लिए वहाँ मौजूद है और वहाँ आराम से बैठे-भर रहना है। अगर मैं ज़ार होता तो बताता कि घोड़ाचोरों से कैसा बर्ताव करना चाहिए। मैं उन्हें सिखा देता कि चोरी न करनी चाहिए। लेकिन अभी क्या है! वह वहाँ आराम के साथ, अपने ही जैसे चोरों के गिरोह में बैठा होगा और सब एक-दूसरे से और भी सफाई के साथ चोरी करना सीखते हैं। मेरे दादा कहते थे कि पेत्रुख बड़ा अच्छा लड़का था; लेकिन एक ही बार जेल जाने के बाद वह ऐसा पक्का बदमाश होकर निकला कि उसके लिए फिर कोई आशा न रही। उस समय से जो उसने चोरी शुरू की...

वानका : तब वे लोग इन चोरों को बंद क्यों करते हैं?

क्षेमका : जा, उन्हीं से पूछ!

अक्षुत्का : वे उसे बंद कर देते हैं, और खाना देते हैं...

क्षेमका : जिससे वह अपनी कला अच्छी तरह सीख ले।

अक्षुत्का : और उधर उसके बच्चे और उसकी माँ भूखों मर जाएँ! वे हमारे पड़ोसी हैं और मुझे उनकी हालत पर रंज है। उनका क्या होगा? वे रोटी माँगने

आते हैं और हम ऐसी हालत में उन्हें दिए बिना नहीं रह सकते।

वानका : तब वे लोगों को जेल में क्यों रखते हैं?

क्षेमका : उनके साथ और क्या किया जा सकता है?

वानका : और क्या किया जा सकता है! अरे किसी तरह... जिससे...

क्षेमका : तुम कहती हो 'किसी तरह', पर किस तरह, यह तुम स्वयं नहीं जानती। तुमसे ज्यादा बुद्धिमान लोगों ने इस बारे में सोचा है और कोई रास्ता नहीं पाया।

पलश्का : मैं सोचती हूँ कि भाई, मैं जारित्जा होती...

अक्षुत्का : *(हँसती है)* हाँ, जारित्जा, तुम तब क्या करतीं?

पलश्का : मैं ऐसा इंतजाम करती कि कोई चोरी न करता और बच्चों को रोना न पड़ता।

अक्षुत्का : हाँ, पर तुम ऐसा करती कैसे?

पलश्का : मैं ऐसा इंतजाम करती कि हर आदमी को वे सब चीजें मिलतीं जो उसके लिए जरूरी हैं, किसी के साथ कोई ज्यादती न होती और हर आदमी के लिए हर चीज ठीक रूप में होती।

क्षेमका : बहुत खूब जारित्जा! पर तुम यह सब करती कैसे?

पलश्का : मैं नहीं जानती, पर मैं करती ऐसा ही।

मित्का : चलो, हम लोग उधर की घनी बारी में चलें। पिछले दिन वहाँ लड़कियों को काफी छत्रक—कुकुरमुत्ते—मिले थे।

क्षेमका : हाँ, यह अच्छा विचार है। आओ, चलें। और जारित्जा! तू ध्यान रखना, कहीं तेरे कुकुरमुत्ते बिखर न जाएँ, तेरी अक्ल जोरों से बढ़ रही है।

(सब उठकर जाती हैं।)

संपत्ति

एक भूस्वामी,
उसकी पत्नी,
उनका 6 वर्ष का लड़का वासया
एक आवारा — बेकार

(भूस्वामी और उसकी पत्नी, अपनी लड़की और लड़के वासया के साथ बरामदे में बैठे चाय पी रहे हैं। एक आवारा युवक उनके पास आता है।)

भूस्वामी : *(आवारा युवक से)* क्या है?

आवारा : *(सिर झुकाकर)* मालिक, आप स्वयं देख सकते हैं कि क्या है। एक बेकार आदमी पर दया कीजिए! मैं भूखों मर रहा हूँ, और पहनने को ये चीथड़े-भर रह गए हैं। मैं मास्को में था, और अब भीख माँगते हुए अपने देश जा रहा हूँ। एक ग़रीब दुखिया की मदद कीजिए।

भूस्वामी : तुम्हारी यह हालत क्यों है?

आवारा : क्योंकि मेरे पास कोई रकम नहीं है।

भूस्वामी : अगर तुम काम करते, तो इतने गरीब न होते।

आवारा : काम करने में मुझे खुशी होगी, लेकिन आजकल कहीं कोई काम नहीं मिल रहा है। हर जगह काम बंद हो रहे हैं।

भूस्वामी : जब दूसरों को काम मिल जाता है, तब तुम्हें क्यों नहीं मिलता?

आवारा : मालिक! मैं ईमानदारी से कहता हूँ कि कहीं काम मिले तो मैं कृतज्ञ होऊँगा। लेकिन मुझे कोई काम मिल नहीं रहा है। मालिक! मुझ पर दया करो; आज दो दिन से मैंने कुछ नहीं खाया है।

भूस्वामी : *(अपना पर्स या थैली खोलकर देखता है। फिर पत्नी से कहता है)* क्या तुम्हारे पास खुदरे पैसे हैं? मेरे पास सिर्फ नोट हैं।

पत्नी : *(वासया से)* बेटा! मेरे पलंग के पास जो छोटा टेबुल है उस पर बैग है। जाओ, उसमें एक पर्स होगा। उसे उठा तो लाओ।

(वासया माँ की बात नहीं सुन पाता, वह टकटकी लगाए आवारा की ओर देखता रहता।)

पत्नी : वासया, तुम सुन नहीं रहे हो? *(आस्तीन पकड़कर खींचती है)* वासया!

वासया : क्या है माँ? *(उसकी माँ अपनी बात दोहराती है। वासया उछल पड़ता है।)* बहुत अच्छा, माँ! *(आवारा की ओर नजर गड़ाए हुए जाता है।)*

भूस्वामी : *(आवारा से)* वहाँ थोड़ी देर...एक मिनट के लिए, ठहरो! *(आवारा एक ओर हो जाता है। भूस्वामी अपनी पत्नी से फ्रांसीसी भाषा में कहता है, जिससे आवारा न समझ सके)* कैसी भयानक बात है कि इतने ज्यादा आदमी आजकल बिना काम के इधर-उधर फिर रहे हैं! यह सब आलसीपन का प्रभाव है। फिर भी अगर वह भूखा है तो बड़ी भयानक बात है।

पत्नी : ये लोग बढ़ा-चढ़ाकर बातें करते हैं। मैं सुनती हूँ कि यही हालत विदेशों में भी है। न्यूयार्क में एक लाख बेकार हैं। तुम और चाय लोगे?

भूस्वामी : हाँ, थोड़ी-सी दो; पर इस बार ज़रा हल्की हो।

(सिगरेट पीता है। सब लोग चुप हैं।)

(आवारा उनकी ओर देखता है, अपना सिर हिलाता और खांसता है। शायद इस तरह उनका ध्यान अपनी ओर खींचना चाहता है। वासया पर्स के साथ दौड़ा आता है और तुरंत आवारा की ओर देखता है। पर्स माँ को दे देता है और आवारा की ओर टकटकी लगाकर देखता है।)

भूस्वामी : *(पर्स से तीन आने कीमत का एक रूसी सिक्का निकालते हुए)* अरे, तुम्हारा नाम क्या है... लो!

(आवारा अपनी टोपी उतारकर सलाम करता है और सिक्का ले लेता है।)

आवारा : एक गरीब-दुखिया की मदद करने के लिए आपका धन्यवाद करता हूँ।

भूस्वामी : मेरे लिए तो असली दु:ख यह है कि तुम्हें काम नहीं मिल रहा है। यदि तुम काम करते तो कभी भूखे न रहते। जो काम करता है, उसे कमी नहीं होती।

आवारा : *(अपनी टोपी सिर पर रखता है और घूमकर रास्ता पकड़ते हुए कहता है)* लोगों का कहना सच है,

'श्रम से झुकती पीठ है,
पर ना भरता है पेट।'

(जाता है।)

वासया : उसने अभी-अभी क्या कहा?

भूस्वामी : एक मूर्खतापूर्ण किसानी उक्ति,

'श्रम से झुकती पीठ है,
पर ना भरता पेट।'

वासया : इसका क्या मतलब?

भूस्वामी : इसका मतलब यह है कि काम करते-करते कमर झुक जाती है, पर आदमी धनवान नहीं होता।

वासया : तो क्या यह गलत है?

भूस्वामी : अवश्य गलत है। जो इस आदमी की तरह इधर-उधर फिरते हैं और काम करना नहीं चाहते, हमेशा गरीब रहते हैं। जो श्रम करते हैं, वे ही धन कमाते हैं।

वासया : पर क्या बात है कि हम लोग धनी हैं? हम लोग तो काम नहीं करते!

पत्नी : *(हँसती हुई)* तुम कैसे जानते हो कि तुम्हारे पिताजी काम नहीं करते?

वासया : मैं नहीं जानता। पर इतना जानता हूँ कि हम लोग बड़े धनी हैं, इसीलिए पिताजी को खूब काम करना चाहिए। क्या वह कड़ी मेहनत करते हैं?

भूस्वामी : सब काम एक-से नहीं होते। शायद मेरा काम हर-कोई न कर सकेगा।

वासया : आपका काम क्या है ?

भूस्वामी : तुम्हें खिलाने, पहनाने और शिक्षा देने का प्रबंध करना।

वासया : पर ये काम तो उसे भी अपने बच्चों के लिए करने होंगे, तब उसे इतना कष्ट क्यों भोगना पड़ रहा है ? जब हम सब...

भूस्वामी : *(हँसते हुए पत्नी से)* यह वास्तविक समाजवादी है।

पत्नी : हाँ, अवश्य। एक मूर्ख उससे ज्यादा सवाल पूछ सकता है, जितना हजार विद्वान् जवाब दे सकते हैं। यहां 'मूर्ख' की जगह 'दयावान' शब्द रख देना चाहिए क्योंकि हर बच्चा वैसा होता है।

अपनी हानि करनेवालों को प्यार करना

माशा : उम्र 10 वर्ष
वान्या : उम्र 8 वर्ष

माशा : मैं सोच रहा था कि कितना अच्छा होता, यदि इस समय माँ लौट आतीं और अपने साथ हमें गाड़ी पर बाहर घुमाने ले चलतीं। उधर से ही हम लोग नास्त्या को भी देख आते। आखिर तुम क्या चाहती हो ?

वान्या : मैं ? मैं वही चाहती हूँ जो कल हुआ था।

माशा : क्यों, कल क्या हुआ था ? ग्रीशा ने तुमको मारा था और फिर तुम दोनों रोई थीं। इसमें अच्छी बात क्या थी ?

वान्या : हाँ, बात तो यही है; पर इसमें जो अच्छाई थी, उससे अच्छा कुछ नहीं हो सकता ! इसीलिए मैं चाहती हूँ कि आज फिर वही बात घटे।

माशा : पता नहीं, तुम क्या कह रही हो !

वान्या : मैं अपना मतलब समझाने की कोशिश करूँगी। तुम्हें याद है कि पिछले रविवार को काका पावेल इवानोविच ने किस तरह...ऐं ! क्या वे अच्छे नहीं हैं ?

माशा : हाँ, हर आदमी उन्हें प्यार करता है। माँ कहती हैं कि वे संत पुरुष हैं। और यह बात बिलकुल सही है।

वान्या : हाँ-हाँ... तुम्हें याद होगा कि पिछले रविवार को उन्होंने एक कहानी सुनाई थी—एक आदमी की, जिसके साथ हर आदमी खराब बर्ताव करता था; पर वे लोग उसके साथ जितना ही खराब व्यवहार करते थे, उतना ही वह उन्हें प्यार करता था। वे उसकी निंदा करते थे, गालियाँ देते थे; लेकिन

वह उनकी प्रशंसा करता था। वे उसे मारते थे, पर वह उनकी मदद करता था। काका कहते थे कि यदि लोग उस आदमी की तरह रहें तो वे बहुत सुखी होंगे। मुझे वह कहानी बड़ी अच्छी लगी और उस आदमी की तरह बनने की इच्छा हुई। इसीलिए जब कल ग्रीशा ने मुझे मारा, तो मैंने उसे चूम लिया। वह रोने लगा। मुझे बड़ी खुशी हुई। लेकिन दाई के साथ मैं उतना अच्छा व्यवहार न कर सकी। उसने मेरी निंदा शुरू की और मैं भूल गई कि मुझे कैसा व्यवहार करना चाहिए। मैंने उनके साथ उद्दंडता का व्यवहार किया। मैं हृदय से चाहती हूँ कि फिर कोशिश करूँ और उसके साथ भी वैसा ही व्यवहार करूँ, जैसा मैंने ग्रीशा के साथ किया था।

माशा : क्या तुम चाहती हो कि कोई तुम्हें मारे?

वान्या : हाँ! तब मैं वही करूँगी जो मैंने ग्रीशा के साथ किया था और मुझे बहुत आनंद होगा।

माशा : कैसी मूर्खता की बात है! तू सदा मूर्ख थी, और अब भी है!

वान्या : कोई परवाह नहीं। मैं अब जान गई हूँ कि सदा प्रसन्न रहने के लिए हमें क्या करना चाहिए।

माशा : नादान बच्ची! पर क्या ऐसा करने से सचमुच तुझे खुशी होती है?

वान्या : बहुत ज्यादा!

अखबार

वोलोदय : हाई स्कूल का विद्यार्थी, 14 वर्ष

सोन्या : उम्र 15 वर्ष

मीशा : उम्र 8 वर्ष

एक कुली

(वोलोदय पढ़ रहा है और 'होमवर्क' कर रहा है। सोन्या लिख रही है। कुली अपनी पीठ पर एक बड़ा बोझ लिए आता है, उसके पीछे मीशा है।)

कुली : भैया, यह बोझ कहाँ रखूँ? मेरी बाँहें उखड़ी जा रही हैं।

वोलोदय : तुमसे कहाँ रखने को कहा गया है?

कुली : वासिली तिमोफीविच ने कहा है कि इसे अभी पढ़ाई के कमरे में रख दिया जाए, फिर मालिक के आने पर वह जहाँ कहेंगे, वहाँ रखा जाएगा।

वोलोदय : तब, उस कोने में रख दो।
(फिर पढ़ने लगता है। कुली बोझा रख देता है और हाँफ रहा है।)

सोन्या : वह क्या लाया है?

वोलोदय : 'सत्य' नाम का अखबार है।

सोन्या : इतने ज्यादा क्यों हैं?

वोलोदय : यह पूरे साल-भर की फाइल है।
(पढ़ने लगता है।)

मीशा : लोगों ने इतना सब लिखा है!

कुली : सचमुच। जिन्होंने लिखा होगा, उन्होंने बड़ी मेहनत की होगी।

वोलोदय : तुमने क्या कहा?

कुली : मैंने कहा कि जिन्होंने यह सब लिखा होगा, वे काम से भागनेवाले न होंगे। अच्छा, अब मैं चलूँ। कृपा करके कह देना कि मैं यह अखबार रख गया हूँ। *(जाता है।)*

सोन्या : *(वोलोदय से)* पिताजी को इन सब पत्रों की क्या जरूरत है?

वोलोदय : वह बोल्शकोव के लेखों की कतरनें लेना चाहते हैं।

सोन्या : लेकिन काका माइकेल इवानोविच कहते हैं कि बोल्शकोव के लेख उन्हें क्षुब्ध कर देते हैं?

वोलोदय : हाँ, काका इवानोविच की यही राय है। वह 'सर्वोदय' पढ़ते हैं।

मीशा : क्या काका का 'सर्वोदय' भी इतना ही भारी-भरकम है?

सोन्या : इससे भी भारी! लेकिन यह सिर्फ एक साल की फाइल है और यह अखबार बीस साल या उससे भी ज्यादा समय से निकल रहा है।

मीशा : क्या? ऐसे-ऐसे बीस बोझे! दूसरे बीस बोझे!

सोन्या : *(मीशा को आश्चर्यचकित करने के लिए)* अरे, इतना ही बस नहीं है। ये तो सिर्फ दो अखबार हैं, और तीस से भी ज्यादा अखबार छपते हैं।

वोलोदय : *(अपना सिर उठाए बिना)* तीस! सिर्फ रूस में पाँच-सौ तीस निकलते हैं; अगर तुम विदेशों में छपनेवालों को गिनो तो उनकी संख्या हजारों तक पहुँचेगी।

मीशा : उनको एक कमरे में नहीं रखा जा सकता?

वोलोदय : इस कमरे में! उनसे तो हमारी सारी सड़क भर जाएगी। लेकिन उसकी चिंता न करो, कल मुझे परीक्षा देनी है और तुम्हारी बेकार बातों से मेरी पढ़ाई में बाधा पड़ रही है। *(फिर पढ़ने लगता है।)*

मीशा : मेरे विचार से उनको इतना ज्यादा न लिखना चाहिए।

सोन्या : क्यों ?

मीशा : क्योंकि यदि बातें सच्ची हैं तो उन्हें एक बात बार-बार दोहरानी न चाहिए; और अगर सच नहीं हैं तब तो एकदम लिखना ही न चाहिए।

सोन्या : ओह, तुम ऐसा सोचती हो!

मीशा : पर वे, इतना ज्यादा, पोथे-के-पोथे, लिखते क्यों हैं ?

वोलोदय : *(अपनी पुस्तक पर से सिर उठाकर)* क्योंकि पत्रों की स्वतंत्रता के बिना हमें सत्य का पता ही न चलेगा।

मीशा : लेकिन पिताजी कहते हैं कि सच्चाई इस 'सत्य' अखबार में है और काका माइकेल कहते हैं कि 'सत्य' पढ़कर उनकी तबियत भन्ना जाती है। वे कैसे पता लगाते हैं कि सच्चाई 'सत्य' में है या 'सर्वोदय' में ?

सोन्या : बिलकुल ठीक! दुनिया में बहुत-से अखबार, मासिक पत्र और किताबें हैं।

वोलोदय : बिलकुल औरतों-जैसी बातें हैं, सदा हलकेपन की बातें!

सोन्या : नहीं! मैं कहती हूँ कि उनकी तादाद इतनी ज्यादा है कि हम नहीं कह सकते...

वोलोदय : हर आदमी को विवेक या बुद्धि दी गई है कि वह सत्य कहाँ है, इसका निर्णय करे।

मीशा : अच्छा, अगर सब में विवेक-बुद्धि है तो हर आदमी अपने लिए खुद निर्णय कर सकता है।

वोलोदय : अच्छा! आपके महादिमाग ने इस विषय पर फैसला दे दिया! लेकिन अब दया करके यहाँ से कहीं चले जाइए और मेरी पढ़ाई में बाधा न दीजिए।

पश्चात्ताप

वोलया : उम्र 8 वर्ष

फीदिया : उम्र 10 वर्ष

(वोलया एक खाली तश्तरी लिए रास्ते में खड़ी है और रो रही है। फीदिया दौड़ता है और वोलया को देखकर एकदम रुक जाता है।)

फीदिया : माँ ने मुझसे कहा है कि मैं देखूँ, तू कहाँ है। तू रो क्यों रही है ? क्या तू दाई के पास खाना ले गई थी? *(खाली तश्तरी देखता और मुँह से सीटी बजाता है)* खाना कहाँ है ?

वोलया : मैं...मैं...मैं ले जाना चाहती थी; पर... पर एकाएक... ओह, ओह, ओह... मैं खाना न चाहती थी, पर खा गई...

फीदिया : अरे, तू उसे दाई के पास नहीं ले गई और खुद खा गई ? क्या मजे की बात तूने की! और माँ ने सोचा था कि तू उसे दाई के पास ले जाना पसंद करेगी।

वोलया : हाँ, मैं ले जाना चाहती थी... पर एकाएक... मैं वैसा करना नहीं चाहती थी...हाय! ...ओह!

फीदिया : तुमने सिर्फ चखा और फिर सब खा गई! क्या मजा रहा! *(हँसता है।)*

वोलया : हाँ, तुम्हारा हँसना ठीक ही है। लेकिन मैं अब उनसे कैसे कह सकती हूँ... मैं दाई से नहीं कह सकती और मैं माँ से नहीं कह सकती...

फीदिया : अच्छा, तुमने ऐसा किया! हा-हा-हा, तो तुम सब खा गईं! अब रोने से क्या फायदा होगा? तुम्हें सोचना होगा कि अब क्या किया जाए।

वोलया : मैं क्या सोचूँ, मैं क्या करूँ?

फीदिया : बड़ी कठिन समस्या है! *(हँसी रोकने की कोशिश करता है। चुप्पी)*

वोलया : अब मैं क्या करूँ? बहुत बुरा हुआ! *(सिसकती है।)*

फीदिया : तुम किस बात के लिए इतना घबरा रही हो? रोना बंद करो, बंद करो! बस, सीधे जाकर माँ से कह दो कि तुमने उसे खा लिया।

वोलया : यह तो और भी बुरा होगा!

फीदिया : तब जाओ, दाई से अपना सब दोष स्वीकार कर लो।

वोलया : मैं वैसा कैसे करूँगी?

फीदिया : तब सुनो! तुम यहीं रुको और मैं दौड़कर दाई के पस जाता हूँ और कह आता हूँ। वह बुरा न मानेगी।

वोलया : नहीं, उनसे कुछ मत कहो। मैं उनसे कैसे कह सकती हूँ?

फीदिया : हुश! मूर्ख! तुमने गलती की है, पर अब क्या किया जाना चाहिए? मैं जाता हूँ और उनसे कहता हूँ!
(दौड़कर चला जाता है।)

वोलया : फीदिया! फीदिया! ठहरो... अरे, वह चला गया... मैं सिर्फ उसे चखना चाहती थी; पर उसके बाद—मुझे याद नहीं आता कि कैसे... मैं सब-का-सब खा गई! मैं अब क्या करूँ! *(सिसकती है, फीदिया दौड़ता आता है।)*

फीदिया : बस, बहुत रो ली! मैं पहले ही कहता था कि दाई तुम्हें क्षमा कर देंगी। उन्होंने इतना ही कहा, 'अरी मेरी प्यारी बच्ची!'

वोलया : पर क्या उन्होंने गुस्सा नहीं किया?

फीदिया : उन्होंने गुस्सा होने की कोई बात ही नहीं सोची। वह बोली, "उसे खाने के साथ ईश्वर की कृपा भी प्राप्त हो। मैं तो खुद उसे वह खाना दे देती।"

वोलाय : लेकिन तुम समझ रहे हो, मेरी उसे खाने की इच्छा नहीं थी! *(फिर रोने लगती है।)*

फीदिया : अब क्या हुआ? हम यह बात माँ से न कहेंगे और दाई ने तुम्हें क्षमा कर ही दिया!

वोलया : हाँ, दाई ने मुझे क्षमा कर दिया। वह दयालु और अच्छी हैं। पर मैं बुरी हूँ, बुरी! यही सोचकर मुझे रोना आता है।

कला

नौकर : मेज पर परोसने का काम करनेवाला

आया :

पावेल : खानसामा का सहायक

नताशा : उम्र 8 वर्ष

नीना : हाई स्कूल में पढ़नेवाली लड़की

सेनेश्का : हाई स्कूल में पढ़नेवाला लड़का

नौकर : *(एक तश्तरी या ट्रे लिए आता है)* बादामी दूध और चाय, और कुछ रम![1]

आया : *(मोजा बुनती और सिलाई के अंक गिनती हुई)* ...बाईस, तेईस...

नौकर : सुनती हो, अरे सुनती हो?

आया : हाँ, मैं सुन रही हूँ, मैं सुन रही हूँ! पर मैं अधूरा काम छोड़कर नहीं उठ सकती। *(नताशा से)* मैं अभी तुम्हें अलूची देती हूँ, पहले मैं दूध तैयार कर लूँ। *(दूध छानती है)*

नौकर : *(बैठते हुए)* मैंने खूब देखा! ये क्यों अपना धन यों खर्च करते हैं?

आया : तुम किस विषय में बात कर रहे हो? क्या वे लोग थिएटर गए थे? जान पड़ता है, आज का खेल लंबा था।

---

1. गुड़ की विलायती शराब।

नौकर : संगीत-नाटक सदा लंबे होते हैं। बस बैठो और बैठे रहो... उन्होंने कृपा करके मुझे भी देखने दिया। मुझे तो देखकर बड़ा ताज्जुब हुआ।
(पावेल कुछ आलूचे लिए आता है और बात सुनने को खड़ा हो जाता है।)

आया : हाँ, तो वहाँ खूब गाना हुआ होगा ?

नौकर : हाँ, पर कैसा गाना ! सिर्फ गलेबाजी और चिल्ल-पौं। कोई ऐसी चीज नहीं, जिसमें असलियत हो। और फिर वे झगड़ते हैं और लड़ाई होती है, और फिर गाने लगते हैं।

आया : पर लोग कहते हैं कि संगीत-नाट्यालय का सीज़न-टिकट बहुत महँगा होता है।

नौकर : हम लोग अपने 'बाक्स' *(स्थानों)* के लिए बारह दिनों का तीन सौ रूबल[1] देते हैं।

पावेल : *(अपना सिर हिलाते हुए)* तीन सौ ! यह रकम कौन पाता है ?

नौकर : जो गाते हैं उनको बहुत काफी मिलता है। लोग कहते हैं कि प्रधान गायिका या अभिनेत्री[2] पचास हजार सालाना तक कमा लेती है।

पावेल : हजारों की बात जाने दो, तीन सौ ही एक किसान के लिए बहुत बड़ी रकम है। हममें से बहुतेरे सारी जिंदगी मरते हैं, फिर भी तीन सौ क्या, एक भी नहीं बचा पाते !
(नीना भंडारे में आती है।)

नीना : क्या नताशा यहाँ है ? तुम कहाँ थे ! माँ तुम्हें पूछ रही थीं।

नताशा : *(आलूचा खाते हुए)* मैं एक मिनट में आता हूँ।

नीना : *(पावेल से)* तुम सौ रूबलों की क्या बात कह रहे थे ?

आया : सेमेन निकोलविच *(नौकर की तरफ उँगली से इशारा करके)* हम लोगों को नाटक-गृह के आज के गानों के विषय में बता रहा था और वह कह रहा था कि गायकों को कैसी ऊँची तनख्वाह मिलती है। पावेल को सुनकर ताज्जुब हुआ। नीना, क्या यह सच है कि अच्छे गायक को पच्चीस हजार तक मिल जाते हैं ?

नीना : इससे भी ज्यादा ! एक गायक को तो अमेरिका जाने के लिए एक लाख पचास हजार का 'आफर' मिला था। इतना ही नहीं, कल के अखबारों में छपा था कि एक गायक को अपनी उँगली के नाखून के लिए पच्चीस

---

1. साढ़े नौ आने मूल्य का रूसी सिक्का।

2. बड़े-बड़े गायक, वादक।

हजार मिला।

पावेल : वे कुछ भी छाप सकते हैं। क्या ऐसी बातें संभव है?

नीना : *(भरोसे के साथ)* मैं कहती हूँ, यह सच है।

पावेल : पर उन्होंने इतना एक नाखून के लिए क्यों दिया?

नताशा : हाँ, क्यों दिया, बताओ!

नीना : क्योंकि वह एक पियानो बजानेवाला था और उसका बीमा हो चुका था कि अगर उसके हाथों को कुछ भी हुआ जिसके कारण वह न बजा सके तो उसे उतनी रकम मिल जाएगी।

पावेल : वाह रे सौदा!

(सेनेश्का आता है)

सेनेश्का : अरे, यहाँ कैसी सभा जुड़ी है! यह सब क्या हो रहा है?

(नीना उसे सब बताती है)

सेनेश्का : *(और भी अधिक संतोष के साथ)* मैं इससे भी बड़ी बात जानता हूँ। पेरिस की एक नर्तकी ने अपने पाँवों का दो लाख का बीमा कराया है। यदि उसके पाँवों में चोट लग जाए और वह काम न कर सके तो उसे इतना मिलेगा।

नौकर : पर क्षमा करना, ये वे लोग हैं जो नग्न कार्य करते हैं।

पावेल : तब तो तुम्हारे लिए अच्छा काम है। उन्हें इसके लिए रुपया मिलता है, यह कैसी कल्पना है!

सेनेश्का : पर याद रखो, हरएक आदमी इस तरह का काम नहीं कर सकता और सोचो, इसे सीखने में उन्हें कितने साल लग जाते हैं।

पावेल : क्या सीखने में? कोई अच्छी बात या पैरों की जोर से घुमाने में?

सेनेश्का : ओह! तुम नहीं समझते। कला बहुत बड़ी चीज है।

पावेल : मैं समझता हूँ, यह सब वाहियात है और यह सब मोटे आसामियों की बात है, जिनके पास फेंकने के लिए फालतू धन है। अगर उन्हें उसी तरह मेहनत से पैसा कमाना पड़ता जिस तरह हम कमाते हैं, जिसमें कमर झुक जाती है, तो इन नर्तकों और नायकों में से कोई पैदा न होता। ये सब मिलाकर एक कौड़ी मोल के नहीं हैं।

सेनेश्का : आह! अपढ़ रहना भी कैसी बात है! इसके लिए बीथावेन, वियार्डो और राफैल सब वाहियात हैं।

नताशा : और मेरी समझ से तो जो वह कहता है, ठीक है।

नीना : चलो, हम चलें। आओ!

विज्ञान

एक स्कूली लड़का : उम्र 15 वर्ष, स्कूल के आधुनिक विभाग में पढ़नेवाला।

एक स्कूली लड़का : उम्र 16 वर्ष, स्कूल के प्राचीन विभाग में पढ़नेवाला।

वोलोदय एवं पेत्रूशा : आठ वर्ष की आयु के दो जुड़वाँ बच्चे।

आधुनिकतावादी : मेरे लिए लैटिन और ग्रीक की क्या उपयोगिता है? जो भी अच्छी या महत्त्वपूर्ण बातें हैं उन सबका अनुवाद आधुनिक भाषाओं में हो गया है।

प्राचीनतावादी : जब तक तुम ग्रीक में न पढ़ो, 'इलियड' को कभी समझ न सकोगे।

आधुनिकतावादी : लेकिन मुझे पढ़ने की जरूरत क्या है; और मैं तो चाहता भी नहीं।

वोलोदय : 'इलियड' क्या है?

आधुनिकतावादी : एक कथा।

प्राचीनतावादी : हाँ, उस तरह की कथा दुनिया में दूसरी नहीं है।

पेत्रूशा : इतनी अच्छी बात उसमें क्या है?

आधुनिकतावादी : कुछ भी नहीं। वह भी बिलकुल दूसरी कहानियों की तरह है।

प्राचीनतावादी : जब तक तुम इन कहानियों को न जानो तब तक भूतकाल को ठीक-ठीक समझ नहीं सकते।

आधुनिकतावादी : मेरे मत से यह भी वैसा ही मूढ़-विश्वास है, जैसा परमार्थ-विद्या है।

प्राचीनतावादी : *(गरम होकर)* परमार्थ-विद्या झूठी और वाहियात है! पर यह तो इतिहास और ज्ञान है।

वोलोदय : क्या परमार्थ-विद्या सचमुच वाहियात है?

प्राचीनतावादी : तुम इस बहस में क्यों बोलते हो? तुम इस विषय में कुछ समझ नहीं सकते।

वोलोदय और पेत्रूशा : *(दोनों अपमान अनुभव करके एक साथ बोलते हैं)* हम क्यों नहीं समझते?

वोलोदय : शायद हम तुमसे भी ज्यादा अच्छी तरह समझते हैं।

प्राचीनतावादी : ओह! अच्छा, अच्छा। लेकिन चुप बैठो और हमारी बातचीत

	में बाधा मत डालो। *(आधुनिकतावादी से)* तुम कहते हो कि प्राचीन भाषाओं का आजकल के जीवन के लिए कोई उपयोग नहीं है। लेकिन यही बातें कीटाणु-शास्त्र और रसायन, पदार्थ-विज्ञान और रसायन-शास्त्र के विषय में भी कही जा सकती हैं। तारों की दूरी और उनका साइज तथा वे सब तफसील की बातें जानकर किसी का क्या भला होगा?
आधुनिकतावादी	: ऐसा क्यों कहते हो कि इस ज्ञान से कोई लाभ नहीं? यह तो बड़ा उपयोगी है।
प्राचीनतावादी	: किसलिए?
आधुनिकतावादी	: किसलिए! सब तरह की बातों के लिए, जैसे, जहाजरानी।
प्राचीनतावादी	: इसके लिए ज्योतिष की आवश्यकता नहीं।
आधुनिकतावादी	: अच्छा; खेती, औषधि और उद्योग-धंधों में विज्ञान का जो व्यावहारिक उपयोग हो रहा है, उसके लिए क्या कहोगे?
प्राचीनतावादी	: पर वही ज्ञान बम बनाने और युद्ध में भी काम आता है और उसी का उपयोग क्रांतिकारी भी करते हैं। अगर इसने लोगों को अच्छी जिंदगी बिताना सिखाया होता...
आधुनिकतावादी	: पर क्या लोग तुम्हारे ढंग के विज्ञान के द्वारा अच्छे बन जाते हैं?
वोलोदय	: कौन-सा विज्ञान लोगों को भला बनाता है?
प्राचीनतावादी	: मैंने तुमसे कहा था कि अपने से बड़ों की बातचीत में बाधा मत देना। तुम बेहूदी बातें करते हो।
वोलोदय और पेत्रूशा	: *(एक साथ)* बेहूदी सही, पर कौन-से विज्ञान आदमियों को ज्यादा अच्छा जीवन बिताना सिखाते हैं?
आधुनिकतावादी	: ऐसे कोई विज्ञान नहीं हैं। हरएक को खुद इसका विचार करना पड़ता है।
प्राचीनतावादी	: तुम बच्चों से क्यों उलझते हो? वे तो कुछ समझते नहीं।
आधुनिकतावादी	: क्यों नहीं? *(वोलोदय और पेत्रूशा से)* क्या हाई स्कूल में यह नहीं सिखाया जाता कि जीवन कैसे बिताना चाहिए?
वोलोदय	: अगर वहाँ यह नहीं सिखाया जाता तो फिर पढ़ने की जरूरत ही नहीं है।
पेत्रूशा	: जब हम बड़े होंगे तो अनावश्यक बातें नहीं सीखेंगे।
वोलोदय	: लेकिन हम खुद अच्छा जीवन बिताएँगे।
प्राचीनतावादी	: *(हँसते हुए)* देखो, इन ऋषियों ने कैसा सार निकाला!

मुकदमेबाजी

एक किसान
उसकी पत्नी
उसके लड़के का धर्म-पिता
फीदोर } उनके लड़के
पेतका }

किसान : *(झोंपड़ी में प्रवेश करके अपने वस्त्र उतारते हुए)* हे ईश्वर, कैसा मौसम है! मैं बड़ी मुश्किल से वहाँ तक पहुँच सका।

पत्नी : हाँ, दूर भी बहुत है। दस मील[1] तो जरूर होंगे।

किसान : अरे, पूरे चौदह मील हैं। *(फीदोर से)* जाओ, घोड़े को बाँध दो।

पत्नी : क्या उन्होंने हमारे हक में डिग्री की?

किसान : डिग्री नहीं, ख़ाक! सब गड़बड़ है।

धर्मपिता : भाई, क्या बात है? मेरी समझ में तुम्हारी बातें नहीं आ रही हैं।

किसान : बात यह है कि अवरयान ने मेरे रसोईघर से लगे बगीचे पर जबर्दस्त कब्जा कर लिया है। कहता है, यह मेरा है। इस मामले का निपटारा नहीं हो पा रहा है।

पत्नी : हम लोग दो वर्षों से मुकदमा लड़ रहे हैं।

धर्मपिता : हाँ-हाँ, मुझे मालूम है। पिछले साल यह स्थानीय अदालत में चल रहा था। पर मैंने तो सुना था कि फैसला तुम्हारे पक्ष में हुआ।

किसान : हाँ; पर अवरयान भूमि के अफसर के पास गया और उसने मुकदमा फिर से सुने जाने के लिए भेज दिया। इसके बाद मामला खत्म हो जाना चाहिए था, पर अब उन्होंने फिर विचार किया है और बगीचा उसे दे दिया है। कैसे भले जज हैं ये!

पत्नी : अच्छा, अब क्या होगा?

किसान : जो जगह मेरी है, उसे मैं कभी उसके हाथ न जाने दूँगा। मैं और बड़ी अदालत में मामला ले जाऊँगा। मैंने एक वकील से बातचीत भी कर ली है।

धर्मपिता : पर मान लो, वह अदालत भी उसी के पक्ष में फैसला करती है तब?

किसान : तब मैं इसे और ऊँची अदालत में ले जाऊँगा। मैं उस तोंदवाले

---

1. मूल पाठ में 15 वर्स्ट हैं। एक वर्स्ट 35 फुट लंबा होता है। लगभग दस मील हुआ।

थलथल शैतान को यों न छोड़ दूँगा। उसको भी पता चल जाएगा कि वह किससे लड़ रहा है।

धर्मपिता : ये जज भी एक बला हैं, अभिशाप हैं! सच्चे अभिशाप! पर यदि वे भी उसी के पक्ष में निर्णय दें तब क्या होगा?

किसान : मैं इसे ज़ार तक ले जाऊँगा...ओह, घोड़ा खड़ा है। जाऊँ, उसे घास तो दूँ। *(बाहर जाता है)*

पेतका : और अगर ज़ार भी हमारे विरुद्ध फैसला करे तो फिर हमें किसके पास जाना होगा?

किसान-पत्नी : ज़ार के बाद कोई नहीं है।

पेतका : इन जजों में से कुछ ने अवरयान और कुछ ने पिताजी के पक्ष में फैसला क्यों दिया?

किसान-पत्नी : इसलिए कि वे खुद अपने को समझ न पाए।

पेतका : जब वे जानते-समझते नहीं तब हम उनसे क्यों पूछते हैं?

किसान-पत्नी : इसीलिए कि कोई अपनी चीज पर से अपना अधिकार आसानी से नहीं छोड़ता।

पेतका : मैं समझ गया कि बड़ा होने पर ऐसे मामले में मैं क्या करूँगा। अगर हमारा किसी से मतभेद होगा तो हम चिट्ठी डालकर निर्णय कर लेंगे कि वह किसे मिले। चाहे जिसे मिले, मामला वहीं समाप्त हो जाएगा। मैं अकुल्का के साथ सदा यही करता हूँ।

धर्मपिता : और सचमुच, यही सबसे अच्छा उपाय है। बिना पाप के निर्णय हो जाता है।

किसान-पत्नी : हाँ, है तो ठीक। उस ज़मीन के टुकड़े के लिए हम लोगों ने न जाने कितना खर्च किया होगा— उसकी कीमत से भी ज्यादा! सचमुच, यह पाप है।

अपराध और दंड

ग्रिश्का : उम्र 12 वर्ष
सेम्का : उम्र 10 वर्ष
तिश्का : उम्र 13 वर्ष

तिश्का : वे लोग उसे जेल में रखेंगे, जिससे फिर वह चोरी करने किसी के

खलिहान में न जाए। अब वह ऐसा करने में हिचकेगा।

सेम्का : अगर उसने सचमुच यह काम किया हो तब तो ठीक है, पर मिकता दादा कह रहे थे कि मित्रोफान को गलत जेल भेजा गया है।

तिश्का : गलत! तुम्हारा क्या मतलब है? यदि उसे निरपराध सजा दी गई होगी तो क्या सजा देनेवाला दंड नहीं पाएगा?

ग्रिश्का : हाँ, अगर उसने गलत सजा दी होगी तो उसे शाबाशी नहीं मिलेगी। तब उसे भी सजा मिलेगी।

सेम्का : पर उसे सजा देगा कौन?

तिश्का : जो उससे भी ऊपर हैं।

सेम्का : और उससे ऊपर कौन हैं?

तिश्का : ऊँचे अधिकारी या अफसर।

सेम्का : लेकिन मान लो, अधिकारियों ने भी गलती की, तब?

ग्रिश्का : तब उनसे भी ऊँचे अफसर हैं, जो उनको दंड देंगे। इसीलिए तो ज़ार हैं।

सेम्का : और अगर ज़ार गलती करें तो उन्हें कौन दंड देगा?

तिश्का : 'कौन दंड देगा?' 'कौन दंड देगा?' हम जानते हैं...

ग्रिश्का : ईश्वर उन्हें दंड देगा।

सेम्का : तब फिर ईश्वर ही उस आदमी को दंड देगा, जो खलिहान में चोरी करने घुसा था। इसलिए केवल ईश्वर पर अपराधी को दंड देने का कार्य छोड़ देना चाहिए। ईश्वर कोई गलती न करेगा।

तिश्का : पर ऐसा कैसे हो सकता है?

सेम्का : क्यों नहीं?

तिश्का : क्योंकि...

निजी संपत्ति

एक बूढ़ा बढई

एक सात वर्ष का लड़का

(बूढ़ा बढ़ई पेश दरीचे बालकनी की धरनों की मरम्मत कर रहा है। मकान-मालिक का छोटा लड़का उसे देख रहा है और उसके काम के प्रति प्रशंसा से भर रहा है।)

लड़का : अहा, तुम कितनी अच्छी तरह यह काम कर रहे हो! तुम्हारा नाम क्या है?

बढ़ई : भैया, पहले लोग मुझे खोलका कहते थे, पर अब खोल कहते हैं। मेरा

दूसरा नाम सैविच है।

लड़का : खोल सैविच! तुम बहुत अच्छा काम करते हो।

बढ़ई : जितने भी काम करने योग्य हैं, उन्हें अच्छी तरह ही करना चाहिए। भद्दे काम में क्या आनंद है!

लड़का : क्या तुम्हारे मकान में भी ऐसा बरामदा *(बालकनी)* है?

बढ़ई : *(हँसते हुए)* बरामदा! अरे मेरे भैया, तुम्हारे मकान-जैसा बरामदा कहाँ मिलता है? हमारा तो ऐसा है जिसमें न खिड़की है, न दरवाजा, न छत, न दीवारें, न फर्श! कुछ ऐसा ही हमारा बरामदा है।

लड़का : तुम हमेशा मज़ाक करते हो। नहीं, सच बोलो, क्या तुम्हारे यहाँ भी ऐसा बरामदा है? मैं जानना चाहता हूँ।

बढ़ई : बरामदा! प्यारे भैया, मेरे-जैसे आदमियों को बालकनी या बरामदा कहाँ नसीब! यही बहुत बड़ी दया होगी यदि हमारे सिरों पर एक छत हो। मैं वसंत ऋतु से बराबर अपनी झोंपड़ी बनाने की कोशिश कर रहा हूँ। मैंने पुरानी गिरा दी, पर नई पूरी नहीं हो पा रही है। अभी भी उस पर छत नहीं पड़ी है और वह गिरती जाती है।

लड़का : *(आश्चर्य-चकित)* ऐसा क्यों?

बढ़ई : सिर्फ इसलिए कि मैं काफी शक्तिमान नहीं हूँ।

लड़का : शक्तिमान नहीं हो, इसका क्या मतलब? हमारा काम तो तुम करते हो। करते हो या नहीं?

बढ़ई : हाँ, मैं तुम्हारा काम करता हूँ, पर अपना काम नहीं कर सकता।

लड़का : क्यों नहीं? मुझे तुम्हारी पहेली समझ में नहीं आ रही, मुझे समझाओ।

बढ़ई : प्यारे बच्चे! जब तुम बड़े होगे, तब समझ जाओगे। मैं तुम्हारे लिए काम कर सकता हूँ, पर अपने लिए नहीं।

लड़का : पर ऐसा क्यों?

बढ़ई : क्योंकि मुझे अपने काम के लिए लकड़ी की जरूरत है, और मेरे पास कोई लकड़ी नहीं है। मुझे खरीदनी पड़ेगी। मेरे पास दाम नहीं कि उसे खरीदूँ। अब मैं तुम्हारा काम कर रहा हूँ। तुम्हारी माँ मुझे इसकी मजूरी देंगी। उनसे कहो कि मुझे जरा ज्यादा मजूरी दें। जब मैं छत के लिए लकड़ी खरीद लाऊँगा और उसे तैयार कर पाऊँगा।

लड़का : पर क्या तुम्हारा अपना जंगल नहीं है?

बढ़ई : हमारे यहाँ जंगल तो इतना बड़ा है कि तीन दिन तक बराबर चलते जाओ किनारा न मिले; पर मुश्किल यह है कि वे पेड़ हमारे नहीं हैं।

लड़का : पर माँ तो कहती थीं कि हमारे जंगल के कारण ही हमें सबसे ज्यादा परेशानी उठानी पड़ती है। उनकी इसके कारण बड़ी मुसीबत है।

बढ़ई : हाँ, यह तो दु:ख की बात है। तुम्हारी माँ की मुसीबत इसलिए है कि तुम्हारे जंगल बहुत बड़े हैं; पर मेरी मुसीबत यह है कि हमारे पास अपना कोई जंगल ही नहीं है। अरे, मैं तुमसे बात करने में अपना काम भूल गया। मेरे-जैसों को इसके लिए कोई प्रशंसा न मिलेगी। *(अपना काम जारी करता है)*

लड़का : जब मैं बड़ा होऊँगा तो ऐसी व्यवस्था करूँगा कि सबको एक-सी सुविधा मिले जिससे सबका हिस्सा बराबर हो।

बढ़ई : ईश्वर करे, तुम जल्दी बड़े हो, क्योंकि मैं बहुत दिन न जिऊँगा। पर याद रखना, भूलना नहीं! अच्छा मैंने अपना रंदा कहाँ रखा?

बच्चे

(एक महिला और उसके बच्चे—हाई स्कूल में पढ़नेवाला चौदह साल का लड़का और तानिश्का नामक पांच साल की लड़की। तीनों बगीचे में टहल रहे हैं। एक बूढ़ी किसान औरत उनकी ओर आती है।)

महिला : क्या बात है मतरेना?

बुढ़िया : मालकिन, मैं तुम्हारे ही पास आई हूँ।

महिला : क्या चाहती हो?

बुढ़िया : कहते शर्म लगती है, पर क्या करूँ! तुम्हारी धर्मकन्या को फिर बच्चा हुआ है और उसने मुझे तुमसे प्रार्थना करने को भेजा है कि तुम उसकी धर्म-माता[1] बनना स्वीकार करो।

महिला : लेकिन अभी तो बहुत दिन नहीं हुए जब उसे एक बच्चा हुआ था!

बुढ़िया : हाँ, पिछले साल की बात है।

महिला : तुम्हारे कितने नाती-नातिनियाँ हैं?

बुढ़िया : अरे, इनकी कोई गिनती है! कोई ले तो मैं उनमें से आधे दे दूँ। सब ज़रा-ज़रा-से हैं, एक के बाद एक छोटा। यह दुर्भाग्य है!

---

1. धर्म-पिता या धर्म-माता उसे कहते हैं जो बपतिस्मा के समय बच्चे की धार्मिक शिक्षा की जिम्मेदारी लेते हैं।

महिला : तुम्हारी लड़की के कुल कितने बच्चे हैं ?

बुढ़िया : यह सातवाँ है और सब जी रहे हैं। क्या अच्छा हो कि ईश्वर इनमें से कुछ को उठा ले!

महिला : तुम क्या बक रही हो ? तुम्हारे मुँह से ऐसी बात कैसे निकलती है ?

बुढ़िया : लेकिन क्या किया जाए! हम इतने मोहताज हैं कि पाप करने और दंड भोगने को तैयार हैं। हम पर दया करो, बच्चे की धर्म-माता बन जाओ, नहीं तो ईश्वर साक्षी है हमारे पास धर्म-शिक्षक को देने के लिए पैसे नहीं हैं, हमारे पास खाने को भी पूरा नहीं है, सब बच्चे छोटे हैं। मेरा दामाद बाहर नौकरी पर है और घर पर हम दो स्त्रियाँ भर हैं। मैं बूढ़ी, और वह सदा बच्चों के फेर में! नए-नए पैदा हो जाते हैं। ऐसी हालत में वह क्या काम-धाम कर सकती है! बस, मैं ही सब काम करने को बच जाती हूँ। फिर मेरे चारों ओर बच्चों का झुंड रहता है, जो रोटियों के लिए चिल्लाता है।

महिला : क्या सचमुच सात बच्चे हैं ?

बुढ़िया : ईश्वर मुझे उठा ले, यदि न हों! सबसे बड़ा अब कुछ संभलने लायक हो रहा है, बाकी सब बहुत छोटे हैं।

महिला : पर वह इतने बच्चे क्यों पैदा करती है ?

बुढ़िया : मालकिन, क्या किया जाए! दामाद पास के शहर में नौकर है। छुट्टियों में घर आता है... और फिर दोनों जवान हैं। अगर वह बहुत दूर चला जाए तो अच्छा।

महिला : हाँ, कुछ लोग इसलिए रोते हैं कि उनके बच्चे नहीं हैं या होते भी हैं तो मर जाते हैं; और तुम रो रही हो कि तुम्हारे यहाँ बहुत हैं।

बुढ़िया : हाँ, बहुत हैं, बहुत! उससे कहीं ज्यादा, जितनों के पालन की शक्ति हमारे पास है। हाँ, तो मालकिन, हम आशा करें ?

महिला : अच्छा! मैं औरों की धर्म-माता थी, इसकी भी बन जाऊँगी। क्या लड़का ?

बुढ़िया : हाँ, मालकिन, लड़का है। नन्हाँ पर स्वस्थ। जोर-से रोता है। ...हाँ, तो संस्कार किस समय होगा ?

महिला : जब चाहो रख लो।

(बुढ़िया धन्यवाद देकर जाती है।)

तानिश्का : माँ, ऐसा क्यों है कि कुछ लोगों के बच्चे हैं और कुछ के नहीं ? तुम्हारे और मतरेना को हैं, पर पराशा को नहीं हैं।

महिला : पराशा का अभी विवाह नहीं हुआ। बच्चे विवाह के बाद होते हैं। लोग ब्याह करके पति-पत्नी बनते हैं, तब बच्चे पैदा होते हैं।

तानिश्का : सदा ?

महिला : नहीं, सदा नहीं। तुम जानती हो कुक को, स्त्री तो है पर उनके बच्चे नहीं हैं।

तानिश्का : माँ, क्या ऐसा नहीं हो सकता कि जो लोग बच्चे चाहते हैं उनको बच्चे मिलें और जो नहीं चाहते उनको न मिलें ?

लड़का : तुम कैसी बातें करती हो !

तानिश्का : इसमें कोई वाहियात बात नहीं ! मैं समझती हूँ कि अगर मतरेना की लड़की बच्चे नहीं चाहती तो ऐसी व्यवस्था करना ज्यादा अच्छा होगा कि उसके बच्चे न हों। माँ, क्या ऐसा नहीं हो सकता ?

लड़का : तुम मुर्खतापूर्ण बातें करती हो। तुम इस विषय में कुछ नहीं जानतीं।

तानिश्का : क्यों माँ, क्या ऐसा नहीं हो सकता ?

महिला : तुम्हें क्या बताऊँ ? हमें नहीं मालूम...यह ईश्वर के ऊपर निर्भर है।

तानिश्का : पर बच्चे किससे पैदा होते हैं ?

लड़का : *(हँसता है)* बकरी से !

तानिश्का : *(अप्रतिभ होकर)* इसमें हँसने की कोई बात नहीं है। मैं सोचती हूँ कि अगर बच्चों के कारण, जैसा मतरेना कहती है, जीना कठिन हो जाए तो ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि वे पैदा न हों। नर्स *(दाई)* को कोई बच्चा नहीं है। कभी नहीं होता।

महिला : लेकिन वह विवाहित नहीं है। उसके कोई पति नहीं है।

तानिश्का : उन सबको, जो बच्चे नहीं चाहतीं, उसी की तरह रहना चाहिए। नहीं तो यह होता है कि बच्चे पैदा होते हैं, पर उनके पोषण के लिए कुछ नहीं रहता। *(महिला लड़के से नजर मिलाती है और चुप है)* जब मैं बड़ी हाकर विवाह करूँगी तो ऐसी व्यवस्था करूँगी कि एक लड़का और एक लड़की हो, इससे ज्यादा नहीं। यह ठीक बात नहीं कि बच्चे तो हों, पर उनको प्यार न मिले ! मैं अपने बच्चे को कितना प्यार करूँगी ! सचमुच माँ, मैं नर्स के पास जाऊँगी और इसके बारे में पूछूँगी। *(चली जाती है।)*

महिला : *(लड़के से)* हाँ, वह कहावत कैसे है ? 'बच्चों के मुँह से'... अरे भूल रही हूँ—हाँ, 'बच्चों के मुँह से सत्य निकलता है।' तानिश्का ने जो कुछ कहा बिल्कुल ठीक है। अगर लोग समझते हैं कि विवाह एक

महत्त्वपूर्ण बात है, मज़ाक नहीं है, और यह कि उन्हें अपने लिए नहीं, बच्चों के लिए विवाह करना चाहिए तो हम लोगों को तिरस्कृत और उपेक्षित बच्चों के वीभत्स दृश्य न देखने पड़ें, और मतरेना की लड़की की भांति बच्चे दु:ख का कारण न होकर आनंद के कारण बनें।

शिक्षा

एक मजूर

निकोलाय : उम्र 15 वर्ष। हाई स्कूल में पढ़नेवाला लड़का।

कातया : उम्र 7 वर्ष, निकोलाय का भाई।

उनकी माँ

(मजूर एक दरवाजे की मूठों पर पालिश कर रहा है। कातया छोटी ईंटों के सहारे मकान बना रहा है। निकोलाय आता है और अपनी किताबें एक और फेंक देता है।)

निकोलाय : जहन्नुम में जाएँ ये और इनका वाहियात स्कूल!

मज़ूर : क्या बात है भैया?

निकोलाय : बुरा हो इनका, इस बार इन्होंने फिर मुझे एक नंबर दिया है! फिर झगड़ा होगा। उनका भूगोल मेरे लिए बहुत लाभदायक है। क्लिीफोर्निया *(कैलिफोर्निया)* कहाँ है, यह जानकर मैं क्या करूँगा! मैं इसे क्यों जानूँ!

मजूर : अब वे लोग तुम्हारे साथ क्या करेंगे?

निकोलाय : फिर उसी क्लास में रोक रखेंगे।

मजूर : पर तुम अपना सबक क्यों नहीं याद करते भैया?

निकोलाय : इसीलिए कि मैं इन वाहियात बातों को नहीं याद कर सकता। सबको भाड़ में जाने दो। *(धम से कुर्सी पर पड़ जाता है)* मैं माँ से जाकर कह देता हूँ कि मैं इस तरह नहीं पढ़ सकता। बस, अब खतम है, उनकी जो इच्छा हो सो करें, पर मैं अब आगे नहीं पढ़ सकता। और अगर वह मुझे स्कूल से न हटा लेंगी तो कसम खाकर कहता हूँ, मैं भाग जाऊँगा।

मजूर : भागकर कहाँ जाओगे?

निकोलाय : घर से भाग जाऊँगा। मैं गाड़ीवान या कुली का काम करूँगा! इस पढ़ने से कोई भी काम अच्छा होगा।

मजूर : भैया, तुम जानते हो कि कुली या मजूर का काम सरल नहीं है। सुबह

उठना, लकड़ी काटना, बोझा ढोना, आग जलाना...

निकोलाय : शी... *(मुँह से सीटी बजाता है)* उसमें मौज है। लकड़ी चीरना बहुत अच्छा काम है। इन बातों से तुम मझे डरा नहीं सकते। वह तो बहुत ही बढ़िया काम है। ज़रा तुम भूगोल सीखने की कोशिश तो करो और देखो!

मजूर : सचमुच! पर वे तुम्हें इसके लिए मजबूर क्यों करते हैं?

निकोलाय : इस 'क्यों' का कोई जवाब नहीं है। वह एक रिवाज है। वे समझते हैं कि यह जाने बिना लोगों का काम ही न चलेगा।

मजूर : तुम्हें पढ़ना ही चाहिए, नहीं तो तुम अपने पिता या काका की भांति नौकरी और ओहदा न पा सकोगे।

निकोलाय : पर मान लो, मैं वैसा नहीं होना चाहता तो?

कातया : हाँ, वह न चाहे तो?

(माँ हाथ में एक कागज लिए आती है।)

माँ : हेडमास्टर ने लिखा है कि इस बार फिर तुम्हें सबसे कम नंबर मिले हैं! निकोलेका, इस तरह काम न चलेगा। दो में से एक बात करनी होगी—या तो पढ़ो या न पढ़ो।

निकोलाय : हाँ, दो में से एक ही करना होगा। मैं न पढ़ूँगा! ईश्वर के लिए मुझे स्कूल से हटा लो, मैं नहीं पढ़ सकता।

माँ : क्यों?

निकोलाय : बस, इसलिए कि मैं नहीं पढ़ सकता। वह मेरे दिमाग में नहीं घुसता।

माँ : तुम्हारे दिमाग में इसलिए नहीं घुसता कि तुम ध्यान नहीं देते! फिजूल की बातें छोड़कर अपने सबक पर ध्यान दिया करो।

निकोलाय : मैं सच कहता हूँ माँ, मुझे स्कूल छोड़ने दो! मैं और कुछ नहीं चाहता, सिर्फ इस भयानक पढ़ाई से, इस संकट से मुझे मुक्त कर दो। मैं इसे बर्दाश्त नहीं कर सकता।

माँ : पर आखिर तुम करोगे क्या?

निकोलाय : यह मेरा अपना मामला है।

माँ : नहीं, तुम्हारा मामला नहीं है, यह मेरा मामला है। मुझे तुम्हारे लिए ईश्वर के सामने जवाब देना पड़ेगा, मुझे तुम्हें शिक्षित करना ही पड़ेगा।

निकोलाय : पर मान लो, मैं नहीं पढ़ सकता, तो?

माँ : *(तेजी से)* क्या बेहूदी बातें करते हो! मैं तुम्हारी माँ होने के नाते तुमसे अंतिम बार अपील करती हूँ कि तुम नया जीवन शुरू करो और लोग

तुमसे जो आशा करते हैं, उसे पूरा करो। अगर तुम मेरी बात न मानोगे तो मुझे दूसरी कार्रवाई करनी पड़ेगी।

निकोलाय : मैंने तुमसे कह दिया कि मैं पढ़ नहीं सकता और पढ़ना भी नहीं चाहता।

माँ : निकोलाय, सावधान हो!

निकोलाय : सावधान होने की कुछ बात ही नहीं! तुम मुझे क्यों सता रही हो? तुम समझती नहीं।

माँ : मुझसे इस तरह की बातें करने की जुर्रत न करो। तुम इतनी ढिठाई करते हो? बस, इस कमरे से तुरंत निकल जाओ!

निकोलाय : बहुत अच्छा! मैं जाता हूँ। मुझे किसी बात का डर नहीं है और मैं तुमसे कुछ नहीं चाहता। *(तेजी से चला जाता है और जाते समय दरवाजा जोर से बंद करता है।)*

माँ : *(स्वागत)* इसकी चिंता के मारे मेरी मौत है। मैं जानती हूँ कि यह सब क्यों होता है? इसलिए कि वह जरूरी बातों पर अपना ध्यान केंद्रित नहीं कर सकता, वाहियात और बेहूदा बातों से अपना दिमाग भर लेता है।

कातया : पर माँ तुम्हें याद होगा कि तुम्हीं ने एक कहावत बताई थी कि अकेले कोने में खड़े होकर सफेद रीछ की बातें न सोचना असंभव है।

माँ : मैं उसके बारे में नहीं कह रही हूँ। मैं कह रही हूँ कि जो कहा जाए उसे सीखना चाहिए।

कातया : पर वह कहता है कि वह नहीं सीख सकता।

माँ : वह फिजूल बकता है।

कातया : पर वह यह तो नहीं कहता कि मैं कुछ नहीं करना चाहता, वह सिर्फ भूगोल नहीं पढ़ना चाहता है। वह काम करना चाहता है।

माँ : अगर वह मजूर का लड़का होता तो मजूर बन सकता था; पर वह तुम्हारे बाप का बेटा है, इसलिए उसे पढ़ना ही चाहिए।

कातया : पर वह पढ़ना जो नहीं चाहता।

माँ : वह चाहता है या नहीं, उसे पढ़ना ही चाहिए।

कातया : पर मान लो वह नहीं पढ़ सकता, तो?

माँ : खबरदार, कहीं तू भी उसका अनुकरण न करना!

कातया : पर मैं जरूर करूँगा। जो मैं नहीं चाहता, उसे किसी तरह न पढ़ूँगा।

माँ : तब तुम अज्ञानी मूर्ख बनोगे। *(चुप्पी)*

कातया : जब मैं बड़ा हो जाऊँगा और मेरे बच्चे होंगे तो कभी पढ़ने के लिए उन पर जबरदस्ती न करूँगा। अगर वे पढ़ना चाहेंगे तो उन्हें पढ़ाऊँगा; पर अगर वे न चाहेंगे तो उन्हें पढ़ने को विवश न करूँगा।

माँ : जब तुम बड़े होगे तो कोई ऐसी बात न करोगे।

कातया : अवश्य करूँगा, अवश्य करूँगा, अवश्य करूँगा!

माँ : तब तुम मुर्ख होगे।

कातया : दाई कहती थी कि ईश्वर को मूर्खों की ही जरूरत है।

•

कलवार की करतूत

अनुवादक

क्षेमानंद 'राहत'

पहला अंक

किसान : *(जोतता है, ऊपर देखकर)* दोपहर हो गया, बैलों को खोलने का वक्त आ गया; तिक, तिक, बढ़ो तो सही! क्यों थक गए? अच्छा चलो, एक दफे और घूमकर आ जाएँ, वही आखिरी हरय्या होगी और उसके बाद भोजन। यह अच्छा हुआ कि मैं रोटी अपने साथ लेता आया। मैं अब घर नहीं जाऊँगा और कुएँ के तीर पर बठकर रोटी खाऊँगा और एक लोटा ठंडा जल पीकर थोड़ी देर लेटकर आराम करूँगा। तब तक कलुआ और ललुआ घास चरेंगे। इसके बाद फिर काम पर डट जाएँगे और भगवान ने चाहा तो ठीक वक्त पर जुताई हो जाएगी।

[दूत का प्रवेश, एक झाड़ी के पीछे छिप जाता है]

दूत : यह किसान भी खूब है; भला आदमी हर वक्त भगवान का नाम लेता है। दोस्त, जरा ठहरो तो सही; अभी तुम शैतान को पुकारने लगोगे। बस, मैं इसकी रोटी चुराए लेता हूँ। थोड़ी देर बाद उसे न पाकर वह उसे खोजता फिरेगा। जब बच्चा को भूख लगेगी तो भगवान को भूल जाएगा और गालियाँ देने लगेगा।

[रोटी उठा लेता है ओर झाड़ी के पीछे छिपकर देखता है]

किसान : *(बैलों को खोल देता है)* जय बाबा कैलाश-पति की! *(कपड़ों के पास जाकर)* मुझे भूख बड़े जोर से लगी है। मेरी घरवाली ने रोटी तो खूब मोटी-सी बनाई है, मगर मैं सब खा जाऊँगा, एक किनका भी नहीं छोड़ूँगा। हैं! उड़ गई!! नहीं, मैंने चद्दर के नीचे रक्खी होगी। *(चद्दर उठाता है)* यह क्या? यहाँ भी नहीं है! रोटी हो क्या गई? *(चद्दर झाड़ता है)*

दूत : *(झाड़ी के पीछे से)* ढूँढ़े जाओ, ढूँढ़े जाओ। वह यहाँ मेरे पास है।

किसान : *(हल को हटाकर और फिर चद्दर झाड़कर)* यह तो एक ही रही, बड़ी अजीब बात है! इधर कोई आया भी नहीं और रोटी गायब हो गई। अगर चिड़ियाँ उसे खातीं तो कुछ टुकड़े तो रहते, मगर यहाँ तो

एक किनका भी नहीं है। यहाँ कोई नहीं आया, मगर फिर भी कोई ले गया!

दूत : *(उठकर देखता है)* देखो, अब वह गालियाँ देगा और शैतान की शरण में जाएगा।

किसान : मालूम होता है, रोटी तो अब मिलने से रही। खैर, कोई हर्ज नहीं, मैं भूख से कुछ मर तो जाऊँगा ही नहीं। अगर किसीने रोटी ले ली है तो ले लेने दो, ईश्वर उसका भला करे।

दूत : *(बकता है)* अरे अभागे किसान! गालियाँ देने के बजाए कहता है "ईश्वर उसका भला करे।" भला ऐसे के साथ कोई क्या करे?

[किसान सुस्ताने के लिए लेट जाता है, जम्हाई लेता है, ईश्वर का नाम लेकर सो जाता है]

दूत : *(झाड़ी के बाहर आता है)* डींग मारनेवालों को बातें बनाना खूब आता है। वे कहते हैं, "तुम नरक में किसानों को अच्छी संख्या में नहीं लाते हो। देखो कितने व्यापारी और अमीर आदमी और दूसरे हर तरह के लोग रोज झुंड-के-झुंड इधर आते हैं, मगर किसानों की संख्या कितनी थोड़ी है।" अब भला कोई बताए कि मैं इसे किस तरह फँसाऊँ! मैंने उसकी रोटी चुरा ली, वह भूखा था, मगर फिर भी उसने मुँह से गाली तक नहीं निकाली। मेरी समझ में नहीं आता कि क्या करूँ? जाऊँ, रिपोर्ट करूँ।

[जमीन के अंदर गायब हो जाता]

परदा गिरता है।

दूसरा अंक

[नरक-लोक। शैतानों का सरदार सबसे ऊँची जगह पर बैठा है। उसका मंत्री कुछ नीचे एक मेज के पास है। मेज पर लिखने का सामान है। दोनों तरफ संतरी खड़े हैं। दाहिनी ओर पाँच दूत हैं, बाईं ओर द्वार पर दरबान है। एक शौकीनों का दूत छैला बना हुआ सरदार के सामने खड़ा है।]

रंगीला दूत: तीन साल में मैंने 2,20,005 आदमियों को पकड़ा; वे सब मेरे काबू में हैं।

सरदार : अच्छी बात है, धन्यवाद! तुम जाओ।

[रंगीला दूत दाहिनी ओर जाता है]

सरदार : *(मंत्री से)* मैं थक गया हूँ। क्या अभी बहुत काम बाकी है? किन-किन की रिपोर्ट आ गई और अब किन-किन की बाकी है?

मंत्री : *(अँगुलियों पर गिनता है। ज्योंही गिनता है, दाहिनी तरफ के दूतों की तरफ इशारा करता जाता है। जिस दूत का नाम लिया जाता है, वह दूत सलाम करता है)*—अमीरों के दूत की रिपोर्ट आ गई। उसने कुल मिलाकर 1,836 का शिकार किया है। व्यापारियों के दूत नें 9,643 को फँसाया। वकीलों के दूत ने, 3,423 को। औरतों के दूत की रिपोर्ट भी हम सुन चुके, 1,86,315 विवाहित स्त्रियाँ और 17,438 कुँवारी। सिर्फ दो दूत बाकी हैं। एक अहलकारों का दूत और दूसरा किसानों का दूत। फहरिस्त में कुल 2,20,005 आत्माओं की संख्या है।

सरदार : अच्छा, तो हम इस काम को आज ही कर डालेंगे। *(दरबान से)* उन्हें आने दो।

[अहलकारों का दूत आता है और सरदार को नमस्कार करता है]

सरदार : कहो, कितनी सफलता हुई?

अहलकारों का दूत : *(हँसते और हाथ मलते हुए)* मेरा काम बिलकुल दुरुस्त है। मेरे हाथ ऐसा माल लगा है कि जैसा मैंने दुनिया की पैदाइश से आज तक नहीं पाया था।

सरदार : क्या तुमने बहुत-से लोगों को फँसाया है?

अहलकारों का दूत : तादाद तो कुछ अधिक नहीं है। सिर्फ, 1,350 लोग हैं, मगर सब एक-से-एक बढ़कर! एक-एक उनमें ऐसा है कि जिन्हें देखकर शैतान शर्मा जाए। वे लोगों को लूटने और धोखा देने में हमसे भी ज्यादा चालाक हैं। मैंने उनके अंदर एक नई बात ईजाद कर दी है।

सरदार : वह नई बात क्या है?

अहलकारों का दूत : पहले जमाने में वकील मुंसिफों और जजों के साथ रहते और लोगों को ठगते थे। अब मैंने ऐसा इंतजाम किया है कि वे जजों से अलहदा रहकर भी काम कर सकते हैं। जो ज्यादा रुपया देता है, बस, वे उसी का काम करते हैं। और वे उस पर इतनी मेहनत करते हैं कि जहाँ कोई बात भी न हो, वहाँ एक बड़ा भारी मुकदमा बनाकर खड़ा कर देते हैं। वकील और अहलकार मिलकर लोगों को जिस तरह धोखा देते हैं और जाल में फँसाते हैं, वैसा तो हम शैतान लोग भी नहीं कर सकते।

सरदार : अच्छी बात है, मैं उन्हें देखूँगा। तुम जा सकते हो।

[अहलकारों का दूत दाहिनी ओर जाता है।]

सरदार : *(द्वारपाल से)* अच्छा, अब आखिरी दूत को बुलाओ।

[किसानों का दूत रोटी लिए हुए आता है; वह जमीन तक झुककर सलाम करता है]

किसानों का दूत : हुजूर, मैं यह काम नहीं कर सकता, मुझे दूसरी जगह दीजिए।

सरदार : कौन-सी जगह ? तू बक क्या रहा है ? जरा होश में आकर बात कर। अपनी रिपोर्ट दिखा, इस हफ्ते में कितने किसान पकड़े हैं ?

किसानों का दूत : *(रोते हुए)* एक भी नहीं।

सरदार : क्या ? एक भी नहीं ! तब तू करता क्या रहा ? किधर घूमता-फिरता था ?

किसानों का दूत : मैं कहीं घूमता नहीं था; मैं तमाम दिन जी तोड़कर कोशिश करता था, मगर कुछ कर नहीं सका। यह देखिए, मैंने जाकर एक किसान की आँखों के सामने उसकी रोटी चुरा ली। वह बहुत भूखा था, मगर फिर भी गालियाँ देने के बजाए उसने कहा, 'ईश्वर उसका भला करे !'

सरदार : क्या रे ? तू क्या मिन-मिन कर रहा है ? जरा सम्हलकर बात कर। समझ में नहीं आता, क्या बे-सिर-पैर की हाँक रहा है।

किसानों का दूत : हुजूर, कल एक किसान खेत जोत रहा था; मुझे मालूम हो गया कि वह अपने साथ एक रोटी लाया है और उसके सिवाय उसके पास खाने को और कुछ नहीं है। मैंने वह रोटी चुरा ली। उसे अधिकार था कि वह रोटी चुरानेवाले को गालियाँ देता, मगर वह करता क्या है ? वह कहता है, ''जिसने रोटी ली है, वह उसी के भाग्य की थी; ईश्वर उसका भला करे।'' मैं वह रोटी अपने साथ लेता आया हूँ, यह देखिए ?

सरदार : अच्छा, और दूसरे किसान ?

किसानों का दूत : वे सब एक सरीखे हैं। मैं एक को भी नहीं फँसा सका।

सरदार : खाली हाथ हमारे सामने आने की तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई ? और तिसपर यह सड़ी-गली रोटी उठाकर ले आया है। क्या तू मेरी हँसी करना चाहता है ? तेरी इतनी मजाल ! अरे, तू नरक में रहकर हराम की रोटियाँ तोड़ना चाहता है ? और तो सब जी लगाकर मेहनत करते हैं। (दूतों की ओर इशारा करके) इनमें से हरेक 10,000 या 20,000 लाया है और कोई-कोई तो 2,00,000 आत्माओं को नरक में घसीट

लाया है। और तू है कि जो योंही खाली हाथ हिलाता चला आया है और तिस पर एक वाहियात रोटी दिखाकर बातें बनाना शुरू करता है। तू गप्पें खूब मारता है, काम कुछ नहीं करता; इसीलिए, किसान तेरे हाथ से निकल गए हैं। मगर देख, जरा ठहर, मैं अभी तुझे इसका मजा चखाता हूँ।

किसानों का दूत : हुजूर, सजा देने से पहले मेरी बात सुन लें। उन दूतों का काम बहुत आसान है जो कि अमीरों, व्यापारियों और स्त्रियों को फँसाने के लिए नियत किए गए हैं। उनके मार्ग में कोई कठिनाई नहीं है। किसी अमीर सामंत को ताज या जायदाद का लालच दिखाया नहीं कि बस वह फँसा नहीं! फिर उसे कोई कहीं भी ले जा सकता है। व्यापारियों का भी यही हाल है। रुपया दिखाकर उनके लालच को भड़का दो और फिर तुम नकेल डालकर उन्हें ज़िधर चाहो घुमा सकते हो। औरतों को फँसाना भी बहुत ही आसान है। उन्हें गहने, कपड़े और मिठाई दे दो—फिर जो जी चाहे उनके साथ कर लो। मगर किसानों की बात दूसरी है। उनको फँसाना असंभव है। वे सुबह से लेकर रात तक—और कभी-कभी आधी रात तक—काम करते रहते हैं और कोई काम ईश्वर का नाम लिए बिना शुरू नहीं करते। भला, ऐसे आदमी को कोई किस तरह फँसाए। मालिक, मुझे किसानों के काम से अलहदा कर दीजिए? उनके मारे मेरे नाकोंदम हो गया है और आपको नाराज कर दिया सो बट्टे-खाते में।

सरदार : अरे कामचोर, तू बातें खूब बनाता है। दूसरों का जिक्र करने से कोई फायदा नहीं। उन्होंने मेहनत की और लोगों को फँसाने के लिए नए-नए जाल रचे; इसीलिए उन्होंने सौदागरों, सामंतों और स्त्रियों को अपने वश में कर लिया है। अहलकारोंवाले दूत ने तो एक नई ही बात खोज निकाली। तुझे भी कोई तरकीब सोचनी चाहिए। तूने किया ही क्या? एक रोटी चुरा लाया और उस पर बातें बना रहा है। किसानों के चारों तरफ जालों का तांता लगा दो, फिर वे किसी-न-किसी में फँसेंगे ही। मगर तू इधर-उधर मटरगश्त करता फिरता है और किसानों को अकेला छोड़ दिया है। इसीलिए वे लोग इतने जबरदस्त हो गए हैं। उन्हें अपने खाने-पीने तक की परवाह नहीं रही है। अगर यही हाल रहा और उन्होंने अपनी औरतों को भी ये सब बातें सिखा दीं, तब तो वे बिलकुल हमारे हाथ से निकल जाएँगे। कोई नई बात निकालो और किसी-न-

किसी तरह उन्हें फँसाओ।

किसानों का दूत : मेरी समझ में नहीं आता, मैं क्या करूँ! आप मुझे बरखास्त कर दीजिए। यह काम अब मुझसे नहीं हो सकता।

सरदार : *(गुस्से से)* नहीं हो सकता! तब तुम चाहते क्या हो? क्या मैं जाकर तुम्हारा काम करूँ?

किसानों का दूत : हुजूर; मुझसे यह काम न होगा।

सरदार : नहीं होगा? अच्छा, जरा ठहरो। ऐ, कोई है? चाबुक तो लाओ, इसको कोड़े लगाओ।

[संतरी दूत को पकड़कर कोड़ों से मारते हैं]

किसानों का दूत : आह, आह, आह!...

सरदार : क्यों कोई तरकीब सोची?

किसानों का दूत : आह! आह!! मुझसे नहीं हो सकता।

सरदार : अभी और कोड़े लगाओ! *(कोड़े मारना)* क्यों, कुछ सोचा?

किसानों का दूत : हाँ, हाँ, सोचा है, सोचा है। सोचा।

सरदार : अच्छा, बताओ, क्या है?

किसानों का दूत : मैंने एक तरकीब सोची है, इससे वे सब मेरे वश में आ जाएँगे। बस, आप मुझे उस किसान का मजदूर बन जाने दीजिए। लेकिन यह तरकीब क्या है, यह मैं अभी नहीं बता सकता।

सरदार : अच्छी बात है। मगर याद रक्खो, अगर तुमने तीन साल के भीतर उस रोटीवाली भूल को दूर करके उसका बदला नहीं चुकाया तो मैं तुम्हारी खाल निकलवा लूँगा।

किसानों का दूत : तीन साल के भीतर वे सब मेरे वश में आ जाएँगे।

सरदार : अच्छी बात है! तीन साल खतम होने पर मैं खुद आकर देखूँगा।

परदा गिरता है।

तीसरा अंक

[खलिहान में अनाज से भरी हुई गाड़ियाँ खड़ी हैं। दूत मजदूर के भेष में गाड़ी से अनाज उतारकर देता है और किसान डले में भरकर ले जाता है]

मजदूर : तीन।

किसान : कितने मन हुए?

मजदूर : छिहत्तर मन हुए, यह सतहत्तरवें मन की तीसरी धड़ी है।

किसान : यह सब उसमें नहीं समाएगा। तीसरी कुठिया भी भर चुकी है।

मजदूर : खूब दबा-दबाकर भरो।

किसान : हाँ, भरता तो खूब दबादबा कर ही हूँ। *(डला लेकर प्रस्थान)*

मजदूर : *(अकेला, अपनी टोपी उतार लेता है, सींग दीखने लगते हैं)* उसे लौटने में कुछ देर लगेगी तब तक मैं अपने सींगों को आराम दे लूँ। *(सींग उठते हैं)* और अपने जूते भी जरा उतारे डालता हूँ। उसके सामने तो मैं इन्हें उतार नहीं सकता। *(जूते उतारते ही खुर दिखाई देते हैं। ड्यौढ़ी पर बैठ जाता है)* यह तीसरा साल है। अब हिसाब देने का वक्त आ गया है। अनाज तो इतना है कि उसे रखने को कहीं जगह भी नहीं है। बस, उसे एक बात और सिखा देना बाकी है और तब सरदार खुद आकर मेरी करतूत देख ले। मैं उस वक्त तक उसके दिखाने लायक कुछ कारगुजारी कर रखूँगा। वह मुझे रोटीवाले मामले के लिए माफ कर देगा।

[पड़ोसी आता है, मजदूर अपने सींगों और खुरों को छिपा लेता है]

पड़ोसी : राम, राम!

मजदूर : राम राम, भैया, राम राम!

पड़ोसी : तुम्हारे मालिक कहाँ हैं?

मजदूर : वह अनाज को दबाकर भरने गए हैं। यह सब अनाज कुठियों में समाता ही नहीं।

पड़ोसी : हरे राम, तुम्हारे मालिक का भाग्य भी कैसा अच्छा है। गल्ला भरने को जगह नहीं रही? तुम्हारे मालिक को इन दो सालों में जैसी अच्छी फसल मिली है उसे देखकर तो हमें बड़ा आश्चर्य होता है। ऐसा जान पड़ता है मानो किसी ने उसे भविष्य का हाल बता दिया हो। पार-साल बरसात कम हुई और उन्होंने नीची जमीन में बीज बोया। दूसरों की फसल तो मारी गई मगर तुम्हारे घर में नाज-ही-नाज हो गया। इस साल बरसात हुई और उन्होंने बुद्धिमानी की जो ऊँची जमीन ही बोई। और सब लोगों का नाज तो सड़ गया मगर तुम्हारी फसल खूब हुई। दाना कैसा है! देखो तो, कैसा बड़ा-बड़ा दाना पड़ा है।

[कुछ दाना उठाकर हाथ पर रखकर वजन देखता है और उन्हें चबाता है]

किसान : *(खाली डलिया लेकर आता है)* कहो भैया, कैसे रहे! राम राम!

पड़ोसी : भैया राम राम!! मैं अभी तुम्हारे आदमी से कह रहा था कि तुमने कैसी चतुराई से ऋतु पहचान कर बौनी की। सबको देख-देखकर आश्चर्य होता है। कितना ढेर-का-ढेर गल्ला तुम्हें मिला है! तुम इसे दस साल में भी नहीं खा सकोगे।

किसान : इसके लिए हम बेनी के अहसानमंद है। *(मजदूर की ओर इशारा करके)* इसके भाग्य की बदौलत ही यह सब हमें मिला। पिछले साल मैंने इसे जोतने को भेजा, मगर इसने निचला जमीन के सिवा और कहीं जोत-खोद नहीं की। मैंने इसे झिड़का भी, मगर इसने मुझे वही जमीन बोने की सलाह दी। मैंने ऐसा ही किया और उसका नतीजा बहुत ही अच्छा हुआ। इस साल भी इसका खयाल ठीक निकला; इस साल ऊँची जमीन बोई।

पड़ोसी : यह तो ऐसा जान पड़ता है, मानो इसे पहले ही से इस बात की खबर थी कि अबकी बार कैसी वर्षा होगी। इसमें कोई शक नहीं, तुम्हें बहुत-सा गल्ला मिल गया है। *(खामोशी)* और मैं तुमसे एक बोरा नाज माँगने आया था। हमारा नाज खतम हो गया है, अगले साल मैं वापिस कर दूँगा।

किसान : अच्छा, तुम ले जाओ।

मजदूर : *(किसान को मना करते हुए)* नाज मत देना।

किसान : ज्यादा बात करने की जरूरत नहीं है, तुम ले जाओ।

पड़ोसी : अच्छा, तो मैं जाकर बोरी ले आऊँ।

मजदूर : *(स्वगत)* अभी अपनी पुरानी चाल पर चलता है—अभी देने में आनाकानी नहीं करता है। कभी मेरा कहना नहीं मानता। मगर जरा ठहरो, जल्दी ही यह इस तरह दान देना छोड़ देगा।

(पड़ोसी का प्रस्थान)

किसान : *(घोड़ी पर बैठकर)* किसी भले को जरूरत हो तो देने से क्यों इनकार करें?

मजदूर : देना एक बात है, मगर वापिस लेना दूसरी बात। लोग ले तो लेते हैं मगर फिर देना नहीं जानते। किसीने सच कहा—

लाऊ-लाऊ सब करत हैं, फेरत नाहिन कोउ।
दुनिया को ढंग देखि ले, चतुर मूढ़ जनि होउ॥

किसान : चिंता करने की जरूरत नहीं। हमारे पास बहुत नाज है।

मजदूर : तो इससे क्या हुआ ?

किसान : हमारे पास काफी नाज है। अगली फसल तक ही नहीं वह दो साल तक नहीं चुकने का। हम भला, इस सबका क्या करेंगे ?

मजदूर : क्या करेंगे ? मैं तो इस अनाज की ऐसी चीज बनाकर तुम्हें दूँ कि जिसे तुम जन्मभर न भूलो।

किसान : क्यों, तुम उसका क्या बनाओगे ?

मजदूर : एक तरह का रस; ऐसा रस कि जो बूढ़े को जवान और दुर्बल को बलवान बना दे, भूखे की भूख दूर कर दे और प्यासे की प्यास हर ले, रोगी को चंगा बना दे और रोते को हँसा दे, बुजदिल को दिलेर बना दे और गीदड़ को शेर! मैं ऐसा रस तैयार करूंगा।

किसान : कैसी गप्पें मारता है।

मजदूर : गप्पें मारता हूँ! जब मैंने तुमसे पारसाल नीची जमीन बोने को और इस साल ऊँची जमीन में बीज डालने को कहा तब भी तुम इसी तरह मेरी बात का अविश्वास करते थे। अब मेरी बात तुम्हें सच मालूम होती है। इसी तरह तुम देखोगे कि यह रस बनाने की बात भी सच निकलेगी।

किसान : मगर तुम रस बनाओगे काहे का ?

मजदूर : इसी अनाज का।

किसान : मगर इससे पाप तो नहीं लगेगा ?

मजदूर : जरा, इनकी बातें तो सुनो। पाप क्यों लगेगा ? मजे उड़ाने के लिए ही हरेक चीज आदमी को दी गई है।

किसान : मगर बेनी, तुमने यह सब बातें सीखी कहाँ से ? देखने में तो तुम बिल्कुल मामूली आदमी मालूम होते हो और मेहनती भी हो। मैंने इन दो वर्षों में कभी तुम्हें जूते उतारे नहीं देखा। मगर फिर भी, जान पड़ता है, तुम्हें सब बातों का ज्ञान है। तुमने यह सब ज्ञान पाया कैसे ?

मजदूर : मैं देश-देशांतरों में खूब घूमा हूँ।

किसान : और तुम कहते हो कि इस रस से शरीर में बल आ जाएगा ?

मजदूर : जरा ठहरो, फिर देखना कि पीते ही उससे कितना फायदा होता है ?

किसान : तो उसे बनाएँगे किस तरह ?

मजदूर : एक बार मालूम हो जाए तो फिर बनाना कुछ मुश्किल नहीं है। बस, कुछ तांबे के वर्तनों की जरूरत होगी।

किसान : और वह पीने में मजेदार भी होता है ?

मजदूर : ऐसा मीठा जैसे शहद, एक बार मुँह से लग जाए तो फिर जन्म भर नहीं छूटे।

किसान : यह बात है! अच्छा, तो मैं अपने पड़ोसी के घर जाता हूँ। उसके पास कुछ तांबे के बर्तन हैं। हम लोग अजमाकर देखेंगे।

परदा गिरता है।

चौथा अंक

[खलिहान के बीचों-बीच में एक तांबे का बंद बर्तन एक दूसरे बर्तन के साथ आग पर रखा हुआ है, दूसरे बर्तन में नल लगा हुआ है]

मजदूर : *(नल के पास गिलास ले जाता है और शराब पीता है)* मालिक यह रस तैयार हो गया।

किसान : *(पैर की अँगुलियों के बल बैठकर देखता है)* कैसी अजीब बात है। इसमें से तो पानी निकल रहा है। क्यों, तुम इस पानी को क्यों निकाले देते हो?

मजदूर : यह पानी नहीं है, यही तो रस है।

किसान : यह इतना साफ कैसे है? मैंने समझा था कि अनाज की तरह पीले रंग का होगा। यह तो बिल्कुल पानी की तरह है।

मजदूर : जरा इसे सूँघो तो सही।

किसान : आहा, इसमें बास कैसी आती है! लाओ, जरा इसे चखकर तो देखें कि इसका मजा कैसा है। *(मजदूर के हाथ से गिलास लेना चाहता है)*

मजदूर : देखो, कहीं उसे गिरा न देना! *(नल बंद करके चखता है। होंठ चाटता है)* यह तैयार है, लो इसे पीयो।

किसान : *(पहले धीरे-धीरे पीता है, फिर घूँट भर-भरकर पीता है और गिलास खाली करके देता है)*—हाँ, कुछ और तो दो, कह नहीं सकते इसका स्वाद कैसा है?

मजदूर : *(हँसकर)* मगर मालूम होता है तुम इसे पसंद करते हो। *(कुछ और निकालता है)*

किसान : *(पीता है)* ओ हो, ऐसा है। औरतों को भी बुला लेना चाहिए। अरी मुन्नी, इधर तो आओ, यह देखो रस तैयार हो गया, जल्दी आओ।

[स्त्री और छोटी लड़की का प्रवेश]

स्त्री : क्या है जी, काहे को इतना शोर मचाया है।

किसान : जरा चखकर तो देखो, हमने क्या टपकाया है। *(गिलास देता है)* सूँघो तो, कैसी सुगंध आती है।

स्त्री : *(सूँघती है)* ओ हो!

किसान : पीयो।

स्त्री : कहीं यह नुकसान न करे।

किसान : तुम तो मूर्ख हो, जरा पीयो तो सही।

स्त्री : *(पीकर)* हाँ, है यह तो अच्छी चीज।

किसान : *(कुछ नशे में)* अच्छी चीज है। जरा ठहरो, फिर देखो क्या होता है। बेनी कहता है कि यह सुस्ती और थकावट को बिल्कुल दूर कर देती है। जवान बूढ़े हो जाते हैं—नहीं नहीं, बूढ़े जवान हो जाते हैं। यह देखो, मैंने सिर्फ दो ही गिलास पीए और जिस्म में जैसे नई जान आ गई। *(लड़खड़ाता है)* देखती हो? जब हम और तुम रोज इसे पिएँगे तो फिर जवान हो जाएँगे। आओ, प्यारी *(गले लगाता है)*।

स्त्री : हटो भी, इसने तो तुम्हें बिल्कुल बेवकूफ बना दिया है।

किसान : तुम कहती थीं कि हम दोनों मिलकर नाज खराब कर रहे हैं, मगर देखा? हमने कैसा अच्छा रस तैयार किया है? क्यों, अच्छा है न?

स्त्री : अगर यह बूढ़े को फिर से ज़वान बना देता है, तो सचमुच अच्छा है। देखो न, तुम्हें इसने कैसा अलमस्त बना दिया है। और मेरी तबियत में भी बहाली आ गई है। आओ, आओ, इधर आओ, मजा है, मजा है, *(गाती है)*

अब तो आपस में इशारे हो चुके।
हम तुम्हारे, तुम हमारे हो चुके॥

किसान : यह बात है! देखो, हम सब-के-सब जवान हो जाएँगे।

स्त्री : जरा सास को भी बुला लो, क्योंकि वह हमेशा रंजीदा रहती है। इसे पीकर उनके जिस्म में भी ताजगी आ जाएगी।

किसान : *(नशे में)* हाँ, माँ को बुलाओ, उसे और दादा को भी यहीं बुला लाओ। अरी मुन्नी, दौड़ जा, अपनी दादी और दादा को तो बुला ला। कहना, जल्दी आओ, तुम्हें फिर से जवान बना देंगे। हाँ, बस जल्दी जाओ। एक, दो, तीन; जाओ, तीर की तरह उड़कर जाओ। *(लड़की दौड़ जाती है) (स्त्री से)* आओ एक-एक गिलास और पिएँ।

[मजदूर गिलासों को भर देता है]

किसान : *(पीता है)* पहले-पहल तो हमारी जबान में जवानी आई और फिर हाथों में; अब तो पैरों में पहुँच गई है। मेरे पैरों में जोश आ गया है। वह तो खुद-ब-खुद चलने लगे। *(नाचने लगता है)*

स्त्री : *(पीती है)* बेनी, तुम तो बड़े करीगर हो। हाँ, जरा सारंगी तो बजाओ।

[मजदूर सारंगी लेकर बजाता है—किसान और उसकी स्त्री नाचते हैं]

मजदूर : *(सामने रंगमंच के अग्र-भाग में आकर बजाता है और उनकी तरफ देख-देखकर हँसता है और आँखें मटकाता है। फिर वह बजाना बंद कर देता है; मगर वे नाचते रहते हैं)* तुम रोटी का बदला चुकाओगे! खूब फँसे हो, अब इसमें से नहीं निकलने के, सरदार अब जब चाहे, आकर देख ले।

[एक मोटी-ताजी औरत और एक बहुत ही बूढ़े सफेद बालोंवाले आदमी का प्रवेश]

दादा : क्या मामला है? अरे, क्या पागल हो गए हो? सब लोग काम कर रहे हैं और तुम यहाँ नाच रहे हो!

स्त्री : *(नाचती और ताली बजाती है)* वाह जी वाह, वाह जी वाह! *(गाती है)*

मुझमें गर ऐब हैं तो क्या बुरा।
है फ़कत बेऐब इक जाते खुदा॥

प्रौढ़ा : अरी, ओ हरामजादी! अभी तक चौका-बर्तन नहीं हुआ और तू यहाँ नाच रही है।

किसान : माँ, जरा देखो तो सही, यहाँ कैसी-कैसी करामातें होती हैं। हम लोग बूढ़े को जवान बना सकते हैं। यह लो, जरा इसे पिओ तो।

प्रौढ़ा : पीने के लिए कुएँ में बहुत-सा पानी है *(सूँघती है)* मगर तुमने इसमें डाल क्या दिया? *(गिलास देती है)* मैया री—बास कैसी आती है।

किसान : पियो तो!

प्रौढ़ा : *(चखती है)* ओ हो! मगर इसे पीने से आदमी मर तो नहीं जाता है?

स्त्री : यह तुम्हारे जिस्म में नई जान डाल देगी, तुम्हें फिर से जवान बना देगी।

प्रौढ़ा : झूठ बकती है। *(पीती है)* मगर है तो अच्छी; हमारे शरबत में यह मजा नहीं होता! यह लो, काका, थोड़ी-सी तुम भी पियो।

[दादा बैठ जाता है और सिर हिलाकर मना करता है]

मजदूर : अच्छा, उन्हें रहने दो मगर काकी को तो एक गिलास और पीना चाहिए।

[प्रौढ़ा को गिलास भरकर देता है]

प्रौढ़ा : बस, इससे कोई नुकसान न हो। ओहो, इससे जलन तो होती है, मगर पीने में लगती अच्छी है।

स्त्री : इसे पी लो, फिर तुम देखोगी कि यह तुम्हारी नस-नस में दौड़ती फिरेगी।

प्रौढ़ा : अच्छा मैं, पीकर देखती हूँ। *(पीती है)*

स्त्री : क्या तुम्हारे पैरों तक़ पहुँच गई?

प्रौढ़ा : सचमुच, पीते ही यह जिस्म के आरपार हो जाती है और दिल में बहाली लाती है। लाओ, और थोड़ी-सी और दो *(पीती है)* आहा, अब तो मैं फिर से जवान हो गई।

किसान : देखो, मैंने तुमसे कहा था न?

प्रौढ़ा : *(नशे में)* अफसोस है, मेरा मर्द अब नहीं रहा। नहीं तो एक बार फिर वह मेरी जवानी की बहार देखता!

[मजदूर बजाता है, किसान और उसकी स्त्री नाचती है]

प्रौढ़ा : *(बीच में आकर)* तुम इसे नाच कहते हो? देखो, मैं बताती हूँ *(नाचती है)* देखो, यह तरीका है, पहले यों, फिर यों, उसके बाद यों, देखा?

[दादा उठकर बर्तनों के पास जाता है और नल खोलकर शराब गिराता है]

किसान : *(देख लेता है और अपने दादा पर झपटता है)* अरे, बूढ़े खूसट, यह क्या किया? ऐसी अच्छी चीज को खराब कर दिया। सठिया गया है। *(धक्का देकर हटा देता है और नल के नीचे गिलास लगाता है)* सब खाली कर दिया?

दादा : यह ठीक नहीं, बहुत बुरा है। ईश्वर ने तुम्हें अनाज की अच्छी फसल दी, मगर तुमने अनाज को शैतान के पानी में बदल डाला। इससे कुछ फायदा न होगा, इसे छोड़ दो। तुम इसे पीने की चीज समझते हो? यह आग है, आग! यह तुम्हें जला डालेगी *(एक जलती हुई लकड़ी ले शराब को जला देता है, शराब जल उठती है, सब-के-सब सहमी हुई दृष्टि से देखते हैं)*

पर्दा गिरता है।

पाँचवाँ अंक

*[झोंपड़े का अंदरूनी हिस्सा, मजदूर अकेला है,
उसके सींग और खुर दिखाई पड़ते हैं।]*

मजदूर : अनाज बहुत सारा है, इतना है कि उसके रखने के लिए जगह नहीं है और अब उसे इसका चस्का भी पड़ गया है। हमने इस बीच में कई बार शराब टपकाई थी और हमने एक बड़ा-सा पीपा भरकर उसे छिपा भी दिया है। वह किसी को मुफ्त में नहीं पिलाएँगे, जब किसी से कोई काम निकालना होगा बस, तभी उसको यह चीज पिलाएँगे। इसीलिए मैंने आज उससे कहा कि गाँव के मुखियों को बुलाकर उनकी खातिरदारी करो; जिससे वह सारी जायदाद तुम्हें और तुम्हारे दादा के दरम्यान इस तरह बाँट दें कि सारी चीजें तुम्हीं को मिल जाएँ और उसे कुछ भी न मिले। आज मेरा तीसरा साल खतम होता है और मेरा काम भी पूरा हो गया। अब वह खुद आकर मुआइना कर ले, मुझे किसी बात का डर नहीं है।

[सरदार जमीन के अंदर से निकलता है]

सरदार : मियाद खतम हो गई। उस रोटीवाली भूल का परिशोध तुमने कर लिया? मैंने तुमसे कहा था कि मैं खुद आकर देखूँगा। क्या तुमने उन किसानों को काबू में कर लिया है?

मजदूर : पूरी तरह से काबू में कर लिया है। आप खुद ही इस बात का फैसला कर लीजिएगा। कुछ किसान लोग अभी यहाँ इकट्ठे होंगे। आप यहाँ ऊपर छिपकर बैठ जाइए और देखिए कि वे क्या करते हैं। आप पूरी तरह संतुष्ट हो जाएँगे।

सरदार : *(ऊपर चढ़ जाता है)* अच्छा, मैं देखता हूँ।

[किसान और चार बूढ़े आदमियों का प्रवेश—पीछे-पीछे उसकी स्त्री आती है। आदमी बैठ जाते हैं। स्त्री कुछ खाने की चीजें लाकर रखती है। बूढ़े आदमी मजदूर से सलाम-दुआ करते हैं)

पहला मुखिया : क्यों, क्या तुमने वह रस कुछ और भी बनाया है?

मजदूर : हाँ, जितने की जरूरत थी उतना हमने टपका लिया है।

दूसरा मुखिया : और यह अच्छा बना है।

मजदूर : ओह, पहले से कहीं अच्छा है।

दूसरा मुखिया : मगर तुमने यह बनाना सीखा कहाँ?

मजदूर : दुनिया में घूमने-फिरने से आदमी बहुत-सी बातें सीख लेता है।

तीसरा मुखिया : हाँ, तुम बड़े जानकार आदमी मालूम पड़ते हो।

[स्त्री शराब की बोतल और गिलासों को लाती है]

किसान : थोड़ा-सा कुछ चखो तो सही।

[स्त्री बोतल में से उंडेलकर गिलास भरती है]

स्त्री : यह लो।

पहला मुखिया : *(पीता है)* ओहो, है तो अच्छी चीज। पीते ही नस-नस में दौड़ जाती है। यही तो पीने की चीज है।

[बाकी तीनों मुखिए भी पीते हैं। सरदार नीचे उतर आता है। मजदूर जाकर उसके पास खड़ा होता है।]

मजदूर : *(सरदार से)* देखो, अब क्या तमाशा होता है। मैं जाकर पैर से उसे हिला दूँ जिससे स्त्री के हाथ से शराब गिर जाएगी। पिछली बार उसने भूखे होने पर भी अपनी रोटी की परवा नहीं की, मगर अब देखना, एक गिलास 'रस' के लिए यह कैसा झगड़ा मचाता है।

किसान : अच्छा, गिलास भरकर एक-एक सबको दो। पहले हमारे इस दोस्त को, फिर हमारे गोविंद दादा को।

[स्त्री गिलास भरकर देने जाती है। मजदूर अपना पैर बीच में अड़ा देता है। ठोकर लगाने से गिलास गिर पड़ता है]

स्त्री : हरे, हरे यह सब बिखर गया। ओरे निगोड़े, तू क्यों मेरे रास्ते में आकर बैठ गया?

किसान : *(स्त्री से)* ओह! बिल्कुल जंगली जानवर है। हाथ तो टूट गए हैं और गालियाँ देती है दूसरे को। कैसी अच्छी चीज जमीन पर गिरा दी है!

स्त्री : मैंने कुछ जान-बूझकर तो गिराई ही नहीं।

किसान : जान-बूझकर नहीं गिराई! अच्छा, जरा देख, मैं अभी आता हूँ। ऐसे अच्छे रस को जमीन पर गिरा देने का मजा चखाता हूँ। *(मजदूर से)* अरे गधे, तू यहाँ क्या कर रहा है? तुझे शैतान ले जाए।

[स्त्री फिर गिलासों को भरकर देती है]

मजदूर : *(सरदार के पास फिर जाकर)* आपने देखा? पहले उसने भूखे होने पर भी अपनी रोटी खो जाने पर कुछ नहीं कहा : और अब एक गिलास शराब गिर जाने पर वह अपनी स्त्री को मारने चला था और मुझे आपके पास—शैतान के पास भेजता है।

सरदार : यह अच्छा है, बहुत अच्छा है। मैं संतुष्ट हूँ।

मजदूर : जरा ठहरिए! उन्हें यह बोतल खतम कर लेने दीजिए, फिर देखिए कि यह लोग कैसा तमाशा करते हैं। अभी तो ये एक दूसरे से मीठी-मीठी, चिकनी-चुपड़ी बातें कर रहे हैं, थोड़ी ही देर में एक-दूसरे की चालाक लोमड़ी की तरह खुशामद करने लगेंगे।

किसान : अच्छा, मेरे पुराने दोस्तो, मेरे मामले की बाबत आप लोगों की क्या राय है? मेरा दादा मेरे साथ रहता था और अभी तक मैंने ही उसे खिलाया-पिलाया। मगर अब वह मेरे चाचा के पास चला गया है और चाहता है कि अपने हिस्से की जायदाद लेकर मेरे चाचा को दे दे। तुम बुद्धिमान हो; इस बात पर ध्यानपूर्वक विचार करो। तुम्हारे बराबर गाँव भर में और कोई आदमी नहीं है। मिसाल के तौर पर आइवन तुम अपने ही को ले लो, क्या सब लोग नहीं कहते हैं कि तुम मनुष्यों में सबसे श्रेष्ठ हो? और रहा मैं, सो मैं तुमसे सच ही कहूँगा; मैं तो, सच पूछो, तुम्हें अपने माता-पिता से भी अधिक चाहता हूँ। और गिरधारी : वह तो मेरे पुराने दोस्त हैं।

पहला मुखिया : *(किसान से)* भले आदमी से बात करने में भी फायदा है। इससे बुद्धि आती है और ज्ञान बढ़ता है। तुम भी एक ही आदमी हो। तुम्हारे बराबर दूसरा नेक आदमी नहीं मिलेगा।

दूसरा मुखिया : बुद्धिमान और मिलनसार हो, इसीलिए तो मैं तुम्हें इतना चाहता हूँ।

तीसरा मुखिया : मैं तुम्हें बहुत ही पसंद करता हूँ। कल ही तो मैं अपनी स्त्री से कह रहा था।

चौथा मुखिया : तुम हमारे सच्चे दोस्त हो।

मजदूर : *(सरदार की तरफ इशारा करके)* आप सुनते हैं? यह सब झूठ बोल रहे हैं। पीठ-पीछे सब एक-दूसरे की बुराई करते हैं, लेकिन देखिए, इस वक्त कैसी बातें बना रहे हैं। लोमड़ियों की तरह अपनी दुम हिला रहे हैं। और यह सब इसी शराब की करामात है।

सरदार : यह चीज तो बहुत अच्छी है। अगर ये लोग इसी तरह झूठ बोलने लगें तो थोड़े दिनों में यह सब हमारे कब्जे में आ जाएँगे। ठीक है, मैं संतुष्ट हो गया।

मजदूर : जरा ठहर जाइए, दूसरी बोतल खतम होने पर और भी मजा आएगा।

स्त्री : *(देती है)* एक गिलास और लीजिए।

पहला मुखिया : यह अधिक तो नहीं है? अच्छा सलाम। *(पीता है)* भले आदमी के साथ पीने में आनंद आता है।

दूसरा मुखिया : गर शौक से पिलाए तो पीने में क्या बुराई।

तीसरा मुखिया : बम् भोलानाथ!

चौथा मुखिया : यह रस ठीक बना है। आओ, हम लोग आनंद मनाएँ। *(किसान से)* तुम कुछ चिंता न करो। मैं सब ठीक-ठीक कर दूँगा क्योंकि सब बातें मेरे ही हाथ में हैं।

पहला मुखिया : तुम्हारे हाथ में? नहीं, तुम्हारे हाथ में नहीं। बल्कि हम बड़े मुखियों के हाथ में हैं।

चौथा मुखिया : बड़े मुखिया बड़े मूर्ख हैं। जाओ, तुम अपनी राह लो।

दूसरा मुखिया : अरे बेवकूफो, तुम कह क्या रहे हो?

तीसरा मुखिया : वह सच तो कह रहा है, क्योंकि यह हमें कुछ मुफ्त में तो पिला ही नहीं रहा है, उसका कुछ काम है। काम बड़ी आसानी से बन जाएगा। बस, तुम अच्छी तरह खूब खिलाओ-पिलाओ और हमारी इज्जत करो क्योंकि काम तुम्हारा अटका है, कुछ हमारा काम तुमसे नहीं अटका है और अगर तुम नहीं मानते तो तुम गधे हो गए।

किसान : और तू गधा है, गधे का बच्चा है और गधे का पोता। तू यह क्या बक रहा है। मुझे धौंस दिखाना चाहता है? अरे तुम सब पेटू हो, तुमसे कुछ होने का नहीं।

पहला मुखिया : तू घमंड किसपर करता है, पकड़कर तेरा सर घुमा दूँगा।

किसान : अच्छा, देख कौन किसका सर घुमाता है।

दूसरा मुखिया : तुम अपने को अफलातून का बच्चा समझते हो तो जाओ, चूल्हे में पड़ो। मैं तुमसे नहीं बोलूँगा—मैं जाता हूँ।

किसान : *(उसे पकड़कर)* क्या तुम गोष्ठी में से चले जाओगे?

दूसरा मुखिया : मुझे जाने दो, नहीं तो मैं चिल्ला पड़ूंगा।

किसान : मैं नहीं जाने दूँगा; तुम्हें क्या हक है.... ?

दूसरा मुखिया : यह हक है, देख। *(मारता है)*

किसान : *(दूसरे लोगों से)* अरे दौड़ो, मुझे बचाओ।

[एक-दूसरे से भिड़ जाते हैं और सब एक साथ बोलते हैं]

पहला मुखिया : इसके मानी ये हैं कि हम लोग खूब तमाशा कर रहे हैं।

दूसरा मुखिया : मैं सब इंतजाम कर सकता हूँ।

तीसरा मुखिया : अच्छा, कुछ थोड़ा-सा और पीना चाहिए।

किसान : *(स्त्री से)* एक और बोतल ले आओ।

[सब लोग फिर बैठ जाते हैं और पीते हैं]

मजदूर : *(सरदार से)* देखा, आपने? भेड़ियों का खून इनमें उबल पड़ा है, अब ये लोग भेड़ियों की तरह भयानक हो उठे हैं।

सरदार : यह चीज वास्तव में बहुत अच्छी है; मैं संतुष्ट हूँ।

मजदूर : जरा देर और ठहरिए; इन्हें तीसरी बोतल भी खतम कर लेने दीजिए तब और भी अधिक मजा आएगा।

परदा गिरता है।

छठा अंक

[गाँव की गली, दाहिनी तरफ कुछ आदमी किसान के दादा के साथ बैठे हैं। बीच में कुछ लड़कों, लड़कियों और औरतों का झुंड है। वे गाते, बजाते और नाचते हैं। झोंपड़ी में से शोरो-गुल की आवाज आती है और शराबियों की-सी चीख-पुकार। एक बूढ़ा आदमी निकलकर पिए हुए आदमियों की तरह चिल्लाता है। किसान बाहर आता है और उसे फिर वापस ले जाता है]

दादा : आह, ये लोग कैसे कुकर्मी हैं! भला, कोई सोचे कि इससे बढ़कर और क्या चाहिए कि आदमी हफ्ते भर मजे से काम करे और जब छुट्टी हो तो घर की, और कपड़ों आदि की सफाई करे और कुछ आराम करके अपने परिवार के साथ अच्छी-अच्छी बातें करे, या बाहर जाकर बुजुर्गों के साथ धर्म-चर्चा करे; और अगर बालक या नौजवान हो तो खूब हँसे-खेले। यह देखो, वे लोग खेल रहे हैं, उन्हें देखकर कितना आनंद होता है। यह सब अच्छा और ठीक है। *(झोंपड़े के अंदर चीखें)* मगर इस तरह की बातें! ओह, यह सब भयानक है। इनसे आदमी बहककर कुमार्ग में जा पड़ता है। और यह सब आरामतलबी का ही नतीजा है। *[नशे में मतवाले लोग झोंपड़े से निकलकर चिल्लाते हैं और लड़कियों को पकड़ लेते हैं]*

लड़कियाँ : छोड़ दो, कुंदन दादा, मुझे छोड़ दो। अरे, तुम यह कर क्या रहे हो?

लड़के : चलो, उसी गली में चलें, यहाँ यह लोग खेलने थोड़े ही देंगे।

[सब खेलनेवाले चले जाते है]

किसान : *(दादा के पास जाता है)* अब तुम्हें क्या मिला? मुखिया सब जायदाद मुझे दे देंगे। *(अँगूठा दिखाकर)* तुम्हें तो बस यह मिलेगा, यह। मालूम

हो गया, तुम्हें कुछ नहीं मिलने का। सब मेरे हिस्से में आ जाएगा। मुखिया खुद तुमसे ऐसा ही कह देंगे।

[चारों मुखिया एक साथ बोलते है]

पहला मुखिया : क्योंकि मुझे मालूम है कि क्या बात है।

दूसरा मुखिया : मैं सब जानता हूँ क्योंकि मैं बड़ा-बूढ़ा हूँ।

तीसरा मुखिया : दोस्त, दोस्त, प्यारे दोस्त!

चौथा मुखिया : बहुत बातें बनाते फिरते थे, अब बच्चा कैसे फँसे हैं।

[अच्छा, आओ अब हम लोग चलें]

[मुखिया लोग एक-दूसरे का हाथ पकड़कर लड़खड़ाते हुए जाते हैं। किसान झोंपड़े की तरफ लौटता है मगर लड़खड़ाकर गिर पड़ता है, और बेतरह बकता-झकता है। क्या कहता है, कुछ समझ में नहीं आता, दादा और वह आदमी जिनके साथ वह बातें करता था, जाते हैं।]

(मजदूर और शैतानों के सरदार का प्रवेश)

मजदूर : आपने देखा जनाब? अब उनकी नसों में सूअर का खून खौल रहा है और भेड़ियों से ये अब सूअर बन गए हैं। *(किसान की तरफ अंगुली से इशारा करके)* यह देखा, कीचड़ में पड़ा हुआ कुत्ते की तरह गुर्रा रहा है।

सरदार : तुमने खूब किया, पहले लोमड़ियों की तरह, उसके बाद भेड़ियों की तरह और अब सूअरों की तरह! यह तो बहुत ही अच्छी चीज है। मैं समझता हूँ कि यह चीज लोमड़ियों, भेड़ियों और सूअरों के रक्त से मिलकर बनी होगी।

मजदूर : जी नहीं, मामूली खाने-पीने की चीजों से बनी है।

सरदार : भला, इसका स्वाद कैसा है? क्या बहुत अच्छा है?

मजदूर : *(जेब से एक शीशी निकालकर)* यह लीजिए, जरा चखकर देखिए।

सरदार : *(पीकर फौरन उगल देता है)* अख थू! यह क्या पिला दिया? क्या इसी को ये लोग पीते हैं?

मजदूर : जी हाँ।

सरदार : भला, यह चीज इनसे पी कैसे जाती है?

मजदूर : *(हँसकर)* जी हुजूर, यही तो मजा है। जो चीज हम शैतानों को भी अच्छी नहीं लगती, उसे ये बड़े शौक से पीते हैं। पहले मैंने इनको फँसाने के लिए इसका स्वाद अच्छा रखा था, मगर अब तो यह इसको भी बड़े मजे से पीते हैं।

सरदार : तुमने इसका क्या नाम रखा है ?

मजदूर : शराब।

सरदार : इसके क्या मानी हैं ?

मजदूर : हुजूर, यह फारसी का शब्द है। शर और आब से मिलकर बना है। इसके मानी होते हैं—शरारत का पानी, या यों कहिए ''शैतान का पानी।''

सरदार : यह तो ठीक नहीं है। ''शैतान का पानी'' कहने से इसे कौन पिएगा! लोगों को धोखा देकर फँसाने के लिए तुम्हें इसका नाम रखना चाहिए था ''खुदाब'' या ''खुदा का पानी।''

मज़दूर : हुजूर, डरने की कोई बात नहीं है। इन दिनों दुनिया में हमारे राजाधिराज शैतानदेव का राज्य है; भला, बेचारे खुदा को कौन पूछता है ? आप देखेंगे कि बड़े-बड़े, पढ़े-लिखे शराब की व्याख्या करेंगे—उसकी प्रशंसा में कविताएँ लिखेंगे और सब कुछ जानते हुए भी खुद पिएँगे और दूसरों को पिलाएँगे। और उनमें से बहुतेरे तो मरने से पहले ही, जीते जी, इसी दुनिया में रहते हुए, नालियों में गिरकर नरक के पैशाचिक आनंद का अनुभव करेंगे।

सरदार : मगर, यह सब किस तरह होगा ?

मजदूर : मनुष्यों की बुद्धि भ्रष्ट होने से।

सरदार : मगर उनकी बुद्धि भ्रष्ट कैसे होगी ?

मजदूर : यह तो बहुत ही सरल है। बस, आवश्यकता से अधिक धन पाने से।

सरदार : क्या कहते हो ? जरा अपना मतलब समझाकर कहो।

मजदूर : आप जानते हैं कि नरक अब भी धनवान स्त्री-पुरुषों से भरा रहता है। बड़े-बड़े सेठ, साहूकार, वकील, बैरिस्टर, ओहदेदार, अहलकार, जमीदार, और ताल्लुकेदार ढेर-के-ढेर नरक में जाकर जमा होते हैं, मगर मेहनत-मजदूरी करनेवाले किसान लोग अधिक नहीं फँसते ?

सरदार : यह तो ठीक है। उस दिन भी तुमने यही कहा था; मगर इसका कारण क्या है ?

मजदूर : जब तक मनुष्य के पास आवश्यकतानुसार अथवा आवश्यकता से कम धन रहता है तब तक उसके हृदय में मानव-प्रेम और भगवद्भक्ति का वास रहता है। वह पराए दुःख को जानता है। वह भूखा रहने पर भी अपनी रोटी में से आधी रोटी पास बैठे हुए बटोही के साथ बाँटकर खाना पसंद करेगा। मगर ज्योंही उसके पास आवश्यकता से अधिक

धन इकट्ठा हुआ कि उसके हृदय में लोभ, मोह और स्वार्थ का उदय हुआ। फिर वह और सब-कुछ भूलकर अधिक धन जमा करना ही अपना धर्म समझता है।

सरदार : तुम्हारा कहना ठीक है।

मजदूर : देखिए, जल जब तक बहता रहता है, स्वच्छ और विशुद्ध बना रहता है। मगर जहाँ उसका प्रवाह बंद हो जाता है, वहीं वह गंदा और दुर्गंधियुक्त हो जाता है। हवा जब तक खुले तौर पर कमरे के अंदर आती-जाती रहती है, शुद्ध बनी रहती है, मगर कमरे के अंदर बंद हो जाने पर गंदी हो जाती है। इस तरह धन जब तक अपनी और पराई आवश्यकताओं के पूर्ण करने में लगा रहता है, श्रेयस्कर होता है। मगर ज्योंही वह स्वार्थांधता के कारण ताले के अंदर बंद होता है, त्योंही नरकप्रद बन जाता है।

सरदार : ठीक है, बिलकुल ठीक है।

मजदूर : लोग आवश्यकता होने पर बड़ी श्रद्धा और भक्ति से माता के समान लक्ष्मी की पूजा और अभ्यर्थना करते हैं। जब लक्ष्मी आती है, भाई-बहनों और पड़ोसियों के साथ मिलकर खुशी मनाते हैं; लेकिन, यदि लक्ष्मी उनके पास अधिक देर तक ठहरती है तो वे उसे ताले के अंदर बंद करके रखना चाहते हैं। लक्ष्मी, माता के समान अपने पुत्रों का दुःख दूर करने के लिए स्वर्ग से मर्त्यलोक में उतरकर आती है और जब कोई धूर्त, दासी की भांति उसे बंद करने की कुचेष्टा करता है तो पुत्र-पौत्रों सहित उसका नरक-गामी होना अवश्यंभावी है।

सरदार : ठीक है, यदि ऐसा न हो तो हमारे नरक-राज्य को बड़ी हानि पहुँचे।

मजदूर : इसमें कोई शक नहीं। फिर न तो अमीर लोग लूटें और न चोर चोरी करें, न डाकू डाका डालें और न खूनी खून करें। फिर न अमीरों के बालक अजीर्ण रोग से मरें और न गरीबों के बच्चे भूख से तड़प-तड़पकर जान दें। फिर न अमीरों की स्त्रियाँ धन के मद से चूर होकर सतीत्व को लुटाती फिरें और न गरीब अबलाएँ अपने स्त्री-रत्न को बेचने पर मजबूर हों। फिर न एक जगह पहाड़ हो और न दूसरी जगह डार। फिर न एक तरफ ढेर-की-ढेर बहाली और दूसरी तरफ नितांत कंगाली। सभी जगह हर्ष और आनंद हो, यह दुनिया ही स्वर्ग बन जाए।

सरदार : सच कहते हो। देखो, दुनिया का कोई आदमी इस रहस्य को जानने न पाए।

मजदूर : यह कोई छुपी हुई बात थोड़े ही है। सभी धर्म एक स्वर से पुकार-पुकारकर इस बात की घोषणा कर रहे हैं—मगर सुनता कौन है। मालूम होता है सभी आँखों के अंधे और कानों के बहरे हैं और इसीसे तो मुझे विश्वास है कि हमारा नरक-राज्य स्वर्ग से अधिक श्रेष्ठ और बलवान है।

सरदार : ठीक कहते हो, ठीक कहते हो। हम तुम्हारी तरक्की की सिफारिश करेंगे।

मजदूर : धन, मदिरा और वेश्या। बस, फिर सारे आदमजाद, उस बुड्ढे खूसट आदमी की सारी औलाद, हमारे ही कब्जे में समझो।

सरदार : सच है, सच है। मैं तुम्हें यमदूतों का सरदार बनाने की कोशिश करूँगा। यमराज महाराज से मैं सिफारिश करूँगा—आओ, हम चलें।

[दोनों का प्रस्थान, मजदूर मूँछों पर ताव देते हुए जाता है]

परदा गिरता है।

(समाप्त)

अँधेरे में उजाला

अनुवादक

क्षेमानंद 'राहत'

पहला अंक

पहला दृश्य

(मेरी एक चालीस वर्ष की खूबसूरत स्त्री, उसकी बहन अलेक्जेंडरा, एक पैंतालीस वर्ष की बेवकूफ जिद्दी औरत और उसका पति पीटर, एक मोटा-सा आदमी, यह सब बैठे शराब पीते हैं।)

अलेक्जेंडरा : अगर तुम मेरी बहन न होती, बल्कि मुझसे अपरिचित अजनवी होतीं और निकोलस तुम्हारा पति न होकर महज एक मुलाकाती होता तो मैं इन बातों को मौलिक और मजेदार समझती और शायद मैं उसे कुछ उत्साहित भी करती; लेकिन जब मैं देखती हूँ कि तुम्हारा पति बेवकूफों-हाँ, बिल्कुल बेवकूफों का-सा काम कर रहा तब मुझसे चुप नहीं रहा जाता। इसीलिए इस संबंध में मेरे जो विचार हैं वह प्रकट कर देती हूँ और तुम्हारे पति निकोलस से भी साफ-साफ कह दूँगी। मैं किसी से डरती नहीं।

मेरी : सच है, बहन, तुम्हारा कहना सच है, मैं भी सबकुछ देखती हूँ लेकिन कुछ बोलती नहीं—मैं उन बातों पर अधिक ध्यान नहीं देती।

अलेक्जेंडरा : तुम अभी तो ध्यान नहीं देती हो, लेकिन मैं कहे देती हूँ कि अगर यही हाल रहा तो तुम लोग भिखारी बन जाओगे।

पीटर : देखो तो सही! भिखारी बन जाएँगे! इतनी आमदनी होते हुए?

अलेक्जेंडरा : हाँ, भिखारी! लेकिन मेहरबानी करके तुम हमारी बातों में दखल न दो। मर्द चाहे कुछ भी करें तुम लोगों को तो वह ठीक मालूम देता है।

पीटर : ओफ! मैं यह नहीं जानता। मैं तो कह रहा था...

अलेक्जेंडरा : मगर तुमको इसका जरा भी खयाल नहीं रहता कि तुम क्या कह रहे हो; क्योंकि तुम मर्द लोग जब कोई बेवकूफी करने लगते हो तो फिर ठहरना तो जानते ही नहीं। मैं तो बस इतना ही कहती हूँ कि

अगर मैं तुम्हारी जगह होती तो ये बातें कभी न होने देती। उन्हें एकदम रोक देती। आखिर इसके मानी क्या हैं ? उसके औरत है, बाल-बच्चे हैं, घर-बार है लेकिन इधर तो कोई ध्यान ही नहीं। न कोई काम है और न किसी चीज की देख-भाल है। सभी चीजें लुटाए देता है। जिसे जी में आया बस उठाकर दे दिया। मैं जानती हूँ और खूब अच्छी तरह जानती हूँ कि इसका क्या नतीजा होगा।

पीटर : *(मेरी से)* मगर मेरी, मुझे जरा बताओ तो सही यह नई हलचल क्या है ? मैं आजादखयाली, आम तालीम और कौंसिल-बहिष्कार आदि बातों को तो समझ सकता हूँ और समाजवाद, हड़ताल और श्रमजीवियों के प्रश्न को भी जानता हूँ लेकिन यह सब क्या है ? जरा बताओ तो सही।

मेरी : मगर कल उन्होंने आपको समझाया तो था।

पीटर : मैं मानता हूँ कि मैं नहीं समझा। बाइबिल, पर्वत पर का उपदेश, आदि की बातें कह रहे थे और कहते थे कि गिरजों की कोई आवश्यकता नहीं है। मगर फिर कोई पूजा-पाठ किस तरह करेगा ?

मेरी : हाँ, यही तो खराबी है। वह सब बातों को तो नष्ट कर देना चाहते हैं, मगर उनके स्थान पर कोई नई चीज हम लोगों को नहीं देते।

पीटर : इसका आरंभ किस तरह हुआ ?

मेरी : पारसाल से उनकी बहन की मृत्यु के बाद ही यह सब आरंभ हुआ। वह अपनी बहन को बहुत प्यार करते थे। उसकी मौत से उनको बड़ा धक्का लगा। वह बहुत ही गमगीन हो गए और हमेशा मौत का ही जिक्र किया करते थे। और फिर, जैसाकि आप जानते हैं, बीमार पड़ गए। जब अच्छे हुए तब तो वह बिल्कुल ही बदल गए।

अलेक्जेंडरा : मगर फिर भी फागुन के महीने में जब वह मुझसे मिलने मास्को आए थे तब तो वह अच्छे भले थे और खूब हँसी-खेल किया करते थे।

मेरी : यह तो ठीक, लेकिन फिर भी उनमें बहुत-कुछ परिवर्तन हो गया था।

पीटर : किस तरह का ?

मेरी : वह घर-गिरिस्ती की बातों से बिल्कुल लापरवाह थे और एक तरह की धुन उन्हें लगी रहती थी। वह कई दिनों तक लगातार बाइबिल पढ़ते रहते थे और रात को भी सोते न थे। वह रात को उठकर पढ़ा करते, कुछ उद्धरण लिखते, नोट्स लेते रहते और फिर उसके बाद से वह पादरियों तथा दरवेशों से मिलने जाने लगे और उनसे धर्म-

संबंधी वार्तालाप करने लगे।

अलेक्जेंडरा : और क्या वे व्रत, उपवास रखते और पूजादि करते थे ?

मेरी : हमारे विवाह के समय से–याने बीस वर्ष पहले से लेकर–उस समय तक उन्होंने न कभी व्रत–उपवास आदि रखा और न कभी पूजापाठ किया; मगर उस समय एक बार, उन्होंने गुरुद्वारे में मंत्र लिया और उसके बाद ही उन्होंने निश्चय कर लिया कि न तो किसी को मंत्र ही लेना चाहिए और न गिरजाघर ही जाना चाहिए।

अलेक्जेंडरा : यही तो मैं कहती हूँ कि वह एक बात पर दृढ़ नहीं रहते।

मेरी : हाँ, एक महीने पहले वह कभी गिरजा जाने से नहीं चूकते थे और हरेक व्रत रखते थे, लेकिन उसके बाद ही अचानक उन्होंने यह निर्णय कर लिया कि ये सब अनावश्यक है। भला, ऐसे आदमी के साथ कोई क्या करे ?

अलेक्जेंडरा : मैंने उससे बात की थी और फिर उससे बात करूँगी।

पीटर : ठीक है, मगर यह मामला इतना जरूरी नहीं है।

अलेक्जेंडरा : जरूरी नहीं ? तुम्हारे लिए नहीं होगा, क्योंकि तुम मर्दों को तो धर्म-कर्म का कोई खयाल ही नहीं है।

पीटर : मेरी बात तो सुनो। मैं कहता हूँ, यह कोई बात नहीं। बात यह है कि यदि वह गिरजा को अस्वीकार करते हैं तो फिर बाइबिल को किसलिए चाहते हैं।

मेरी : इसीलिए कि हम लोग बाइबिल और पर्वत पर के उपदेश के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करें और जो हमारे पास है वह सब दूसरों को दे डालें।

पीटर : अगर सबकुछ दे डालें तो फिर जिंदगी किस तरह बसर करें ?

अलेक्जेंडरा : और पर्वत पर के उपदेशों में उसे यह कहाँ मिला कि हम लोगों को नौकरों और साइसों से भी हाथ मिलाना चाहिए ? उसमें है "नम्र लोग धन्य हैं" मगर उसमें हाथ मिलाने का तो कोई जिक्र ही नहीं है।

पीटर : आज वह शहर किसलिए गए हैं ?

मेरी : उन्होंने मुझसे कहा तो नहीं लेकिन मैं जानती हूँ कि वह उन दरख्तों के मामले में गए हैं जो कुछ लोगों ने काट गिराए हैं। किसान लोग हमारे बाग से पेड़ों को काट कर ले जाते हैं।

पीटर : उस शीशमवाले बाग से ?

मेरी : हाँ, वे लोग शायद जेलखाने भेज दिए जाएँगे और उन्हें दरख्तों की

कीमत देनी होगी। उनके मुकदमे की आज पेशी है। यह बात उन्होंने मुझसे कही थी। इसीसे मुझे विश्वास है कि इसीलिए वह शहर गए हैं।

अलेक्जेंडरा : वह उन्हें जाकर माफ कर देगा और कल को वे आकर पार्क में से पेड़ों को काट ले जाएँगे।

मेरी : और क्या! इसका यही नतीजा होगा। अब भी तो वे हमारे आमों को तोड़ ले जाते हैं और हरे-भरे अनाज के खेतों को रौंद डालते हैं। और वह हैं कि इन सब बातों को माफ कर देते हैं।

पीटर : बड़ी अजीब बात है।

अलेक्जेंडरा : यही तो मैं भी कहती हूँ कि ऐसा नहीं होने देना चाहिए और अगर यही सिलसिला जारी रहा तो सब बरबाद हो जाएगा। मेरा तो खयाल है कि एक माँ की हैसियत से तुम्हें इन बातों को रोकने की कोशिश करनी चाहिए।

मेरी : भला बताओ तो सही, मैं कर ही क्या सकती हूँ?

अलेक्जेंडरा : करने को क्या है? बस उसे रोक दो। उसे कह दो कि ऐसा नहीं हो सकता। तुम बाल-बच्चेदार आदमी हो। उनके लिए यह कैसी मिसाल है?

मेरी : इसमें संदेह नहीं कि यह कष्टप्रद है लेकिन मैं उसे सह लेती हूँ। और यह आशा लगाए बैठी हूँ कि उनकी पहलेवाली तरंगों की तरह यह भी चली जाएगी।

अलेक्जेंडरा : यह तो ठीक है, लेकिन तुम जानती हो कि ईश्वर उनकी मदद करता है जो अपनी मदद आप करते हैं। तुमको चाहिए कि तुम उसे यह महसूस करा दो कि घर में अकेला वही नहीं है, और यह कि इस तरह गुजारा नहीं हो सकता।

मेरी : खराबी तो यही है कि अब उन्हें बच्चों का कुछ खयाल ही नहीं रहता है। और मुझे ही सबकुछ करना पड़ता है। और बड़े बच्चों के अलावा मेरी गोद में भी एक बच्चा है। इन बच्चों—लड़के-लड़कियों—की देखभाल भी करनी पड़ती है, पढ़ाने-लिखाने की भी व्यवस्था करनी पड़ती है, और यह सब मुझे अकेले ही करना पड़ता है। पहले तो वह बच्चों से बहुत प्रेम रखते थे और उनकी बड़ी खबरगिरी लेते थे; मगर अब तो, मालूम होता है, उन्हें कुछ परवा ही नहीं है। कल मैंने उनसे कहा कि वानिया ठीक तरह से

नहीं पढ़ता है और इम्तिहान में पास नहीं होगा तो वह बोले उसके लिए अच्छा तो यही है कि वह एकदम स्कूल जाना छोड़ दे।

पीटर : फिर कहाँ जाए?

मेरी : कहीं नहीं! यही तो बड़ी भयानक बात है। हम लोग जो करते हैं उसीको वह बुरा और गलत बताते हैं। लेकिन यह नहीं कहते कि ठीक और सही बात कौन सी है?

पीटर : यही तो बुरी बात है।

अलेक्जेंडरा : इसमें बुराई क्या है? यह तो तुम लोगों का मामूल है कि सब चीजों को बुरा बताना और खुद कोई काम न करना।

मेरी : स्ट्यूपा ने विश्वविद्यालय की शिक्षा समाप्त कर दी है और उसे अब किसी काम में डालना चाहिए। लेकिन उसके पिता इस बारे में कुछ बोलते ही नहीं। यह सिविल सर्विस में दाखिल होना चाहता था, लेकिन उसके पिता कहते हैं कि यह ठीक नहीं है। तब उसने फौजी विभाग में जाना चाहा, लेकिन उन्होंने यह भी नापसंद किया। तब लड़के ने पिता से पूछा "फिर मैं क्या करूँ? कहीं न जाकर हल चलाऊँ?" बाप ने कहा—"हल क्यों नहीं जोतना चाहिए? सरकारी नौकरी से तो यह हजार दर्जे बेहतर है।" भला वह क्या करे? मेरे पास आया और सलाह पूछने लगा, और मुझे ही यह सबकुछ तय करना पड़ता है। लेकिन फिर भी सब अधिकार तो उन्हींके हाथ में हैं।

अलेक्जेंडरा : तुम्हें साफ-साफ उनसे यह सब बातें कह देनी चाहिए।

मेरी : मुझे यह करना होगा। उनसे यह सब कह ही देना पड़ेगा।

अलेक्जेंडरा : उनसे स्पष्ट कह दो कि इस तरह गुजारा नहीं हो सकता। मैं अपना काम करती हूँ और तुम्हें अपना कर्तव्य पूरा करना चाहिए। और इस पर अगर वह राजी न हो तो उसे चाहिए कि वह सब अधिकार तुम्हें सौंप दे।

मेरी : लेकिन यह तो बहुत ही अरुचिकर बात है।

अलेक्जेंडरा : अगर तुम कहो तो मैं उससे सब बातें कह दूँ।

(एक घबराए हुए युवक पुरोहित का प्रवेश। उसके हाथ में एक किताब है। सबसे हाथ मिलाता है।)

पुरोहित : मैं निकोलससाहब से मिलने आया हूँ। वास्तव में मैं एक किताब लौटाने आया हूँ।

मेरी : वह शहर गए हैं, मगर अब आते ही होंगे।

अलेक्जेंडरा : आप कौन सी किताब लौटाना चाहते हैं?

पुरोहित : मि. रेनन का लिखा हुआ क्राइस्ट का जीवन-चरित्र है।

पीटर : ओह गजब! आप लोग कैसी किताबें पढ़ते हैं?

पुरोहित : *(कुछ विचलित होता है और सिगरेट जलाता है)* निकोलससाहब ने मुझे पढ़ने के लिए यह किताब दी थी।

अलेक्जेंडरा : *(हिकारत के साथ)* निकोलस ने दी! तो क्या तुम निकोलस और मि. रेनन से सहमत हो?

पुरोहित : जी नहीं, अगर सचमुच सहमत होता तो वास्तव में गिरजा का सेवक न रहता।

अलेक्जेंडरा : लेकिन वास्तव में यदि आप गिरजा के वफादार सेवक हैं तो निकोलस को रास्ते पर क्यों नहीं लाते?

पुरोहित : सच्ची बात तो यह है कि इस विषय में हरेक आदमी अपनी जुदा राय रखता है और निकोलससाहब के विचारों में वस्तुतः बहुत-कुछ सच्चाई है। सिर्फ वह एक खास-गिरजे के—विषय में भ्रम में पड़े हुए हैं।

अलेक्जेंडरा : *(हिकारत से)* निकोलस के ऐसे कौन-कौन-से विचार हैं जिनमें बहुत-कुछ सच्चाई है। क्या 'पर्वत पर का उपदेश' यह आज्ञा देता है कि हम अपनी सारी जायदाद दूसरे लोगों को दे डालें और अपने कुटुंब के लोगों को भिखारी बना दें?

पुरोहित : वास्तव में गिरजा पारिवारिक जीवन को विहित बतलाता है और गिरजा के पूज्यपाद महंतों ने परिवार के लिए आशीर्वाद भी दिया है, लेकिन उच्चतम समुन्नति का, आदर्श-मर्यादा पुरुषोत्तम का जीवन इस बात को चाहता है कि सांसारिक लाभ और पार्थिव ऐश्वर्य का त्याग किया जाए।

अलेक्जेंडरा : निस्संदेह साधु-संतों ने तो ऐसा ही किया; किंतु मैं समझती हूँ कि साधारण आदमियों को साधारण रूप से ही काम करना चाहिए जैसाकि सब नेक ईसाइयों को शोभा देता है।

पुरोहित : कोई यह नहीं कह सकता कि उसे क्या नहीं करना होगा।

अलेक्जेंडरा : आपकी शादी हो गई है?

पुरोहित : जी हाँ।

अलेक्जेंडरा : आपके कोई बच्चे भी हैं?

पुरोहित : दो।

अलेक्जेंडरा : तब आप सांसारिक लाभ और पार्थिव ऐश्वर्य को त्याग क्यों नहीं देते और क्यों सिगरेट पीते फिरते हो?

पुरोहित : यह मेरी कमजोरी है। सच पूछिए तो मेरी नालायकी है।

अलेक्जेंडरा : हाँ, मैं समझी! आप उसको राह पर लाने के बजाए खुद उसके विचारों का समर्थन करते हैं। लेकिन मैं कहे देती हूँ यह बात ठीक नहीं है। *(दाई का प्रवेश)*

दाई : बच्चा रो रहा है। मेहरबानी करके उसे दूध पिला दीजिए।

मेरी : चलो, यह चली। *(उठकर जाती है)*

अलेक्जेंडरा : मुझे अपनी बहन को देखकर बड़ा दुःख होता है। बेचारी को कितनी परेशानी है। सात बालक हैं। उनमें एक अभी दूध पीता है। तिसपर यह नए-नए चोंचले। मुझे तो साफ मालूम होता है कि उसके दिमाग में कुछ खलल है। *(पुरोहित से)* हाँ, जरा यह तो बतलाइए कि आप लोगों ने यह कौन-सा नया मत निकाला है?

पुरोहित : वास्तव में मुझे मालूम नहीं...

अलेक्जेंडरा : अजी बातें न बनाइए। आप अच्छी तरह जानते हैं कि मैं क्या पूछ रही हूँ।

पुरोहित : मगर सुनिए तो...

अलेक्जेंडरा : मैं पूछती हूँ कि यह कौनसा मत है जो हरेक किसान के साथ हाथ मिलाने की आज्ञा देता है और कहता है कि उनको दरख्त करने ले जाने दो, उनको शराब के लिए पैसे भी दो और अपने परिवार को त्याग दो?

पुरोहित : यह मैं नहीं जानता...

अलेक्जेंडरा : वह कहता है कि यही ईसाई धर्म है। आप यूनानी गिरजे के पुरोहित हैं और इसीलिए आपको मालूम होना चाहिए और बताना चाहिए कि क्या वास्तव में ईसाई धर्म डकैती को उत्साहित करता है?

पुरोहित : लेकिन मैं...

अलेक्जेंडरा : और नहीं तो आप पुरोहित क्यों कहलाते हैं। लंबे बाल क्यों रखते हैं और चोंगा क्यों पहनते हैं?

पुरोहित : लेकिन यह नहीं कहा है कि...

अलेक्जेंडरा : नहीं कहा है, बेशक! पर मैं पूछती हूँ, क्यों? मुझसे उसने कहा था कि बाइबिल में लिखा है "जो तुमसे माँगे उसे दे दो।" लेकिन

इसका मतलब क्या है ?

पुरोहित : मैं तो समझता हूँ कि इसका मतलब बिल्कुल साफ ही है।

अलेक्जेंडरा : लेकिन मैं समझती हूँ कि इसका मतलब स्पष्ट नहीं है। हमें हमेशा यह सिखाया गया है कि प्रत्येक मनुष्य का स्थान ईश्वर ने नियत किया है।

पुरोहित : बेशक, लेकिन फिर भी।

अलेक्जेंडरा : ठीक है, यह तो बिल्कुल वैसा ही मामला है जैसाकि मैंने सुना था। आप उसका पक्ष लेते हैं। और यह बिल्कुल अनुचित है। यह मैं आपके मुँह पर कहती हूँ। अगर कोई नौजवान स्कूल का मास्टर या कोई छोटा छोकरा उसकी हाँ-में-हाँ मिलाता तो यही बुरा था, लेकिन आपको एक पुरोहित की हैसियत से यह ध्यान रखना चाहिए कि आपके ऊपर कितनी बड़ी जिम्मेदारी है।

पुरोहित : मैं कोशिश करता हूँ...

अलेक्जेंडरा : जब वह गिरजा नहीं जाता और जंत्रमंत्र में विश्वास नहीं रखता तो फिर धर्म रहा कहाँ? और उसको होश में लाने के बजाए उसके साथ आप भी रेनन की पुस्तकें पढ़ते हैं और बाइबिल का मनमाना अर्थ लगाते हैं।

पुरोहित : *(उत्तेजित होकर)* मैं उत्तर नहीं दे सकता। सच बात तो यह है कि मैं गड़बड़ा गया हूँ और अब मैं कुछ न कहूँगा।

अलेक्जेंडरा : अगर मैं बिशप होती तो तुम लोगों को रेनन पढ़ने का और सिगरेट पीने का मजा चखाती। /

पीटर : मगर, ईश्वर के लिए ठहरो। भला तुम्हें क्या हक है ?

अलेक्जेंडरा : मेहरबानी करके आप मुझे सिखाइए मत। मुझे विश्वास है कि आप—हमारे पूज्य पुरोहित—मुझसे नाराज नहीं हैं। क्या हुआ अगर मैंने साफ-साफ बातें कीं। यह तो और भी बुरा होता अगर मैं गुस्से को दिल ही में रहने देती। ठीक है न ?

पुरोहित : क्षमा कीजिएगा, यदि मैं समुचित रूप से अपने विचारों को प्रकट न कर सका होऊँ। *(खामोशी, ल्यूबा और लिसा का प्रवेश—ल्यूबा मेरी की एक 20 वर्ष की खूबसूरत और फुर्तीली लड़की, लिसा अलेक्जेंडरा की लड़की। उम्र में वह ल्यूबा से कुछ बड़ी है। उनके हाथ में रुमाल है और फूल लेने के लिए छोटी-छोटी डलियाँ भी लिए हुए हैं। दोनों अलेक्जेंडरा, पीटर और पुरोहित को प्रणाम करती है।)*

ल्यूबा : माँ कहाँ है ?

अलेक्जेंडरा : अभी बच्चे के पास गई है।

पीटर : देखो बहुत-से अच्छे-अच्छे और सुंदर फूल लाना। आज सवेरे एक मालिन की लड़की अच्छे-अच्छे सफेद फूल चुनकर लाई थी। मैं खुद भी तुम्हारे साथ चलता, मगर गर्मी बहुत है।

लिसा : चलिए चलिए पिताजी, आप भी चलिए।

अलेक्जेंडरा : हाँ, जाओ, तुम बहुत मोटे हो रहे हो।

पीटर : अच्छा, चलता हूँ, मगर पहले सिगरेट लेता आऊँ।

(जाता है)

अलेक्जेंडरा : सब बच्चे कहाँ हैं ?

ल्यूबा : स्त्यूपा तो साईकिल पर स्टेशन गया है क्योंकि उसके मास्टर पिताजी के साथ शहर गए हैं, छोटे बच्चे गेंद खेल रहे हैं और वानिया बाहर बरामदे में कुत्तों के साथ खेलता है।

अलेक्जेंडरा : हाँ, तो स्त्यूपा ने कुछ फैसला किया है ?

ल्यूबा : हाँ, वह ''अश्व-रक्षकों'' में भरती होने के लिए खुद ही अर्जी देने गया था। कल वह पिताजी से बहुत बिगड़ पड़ा था।

अलेक्जेंडरा : इसमें शक नहीं कि बेचारा बड़ी मुश्किल में है। मानवी सहनशीलता की भी आखिर एक हद है। अब वह सयाना हुआ है। रोजी का सिलसिला देखना है और उससे कहा जाता है कि हल जोतो।

ल्यूबा : पिताजी ने यह तो नहीं कहा था; उन्होंने तो कहा था...

अलेक्जेंडरा : कोई हर्ज नहीं। फिर भी स्त्यूपा को अब जीवन में श्रीगणेश करना ही होगा और जिस बात को वह चाहता है उसीमें आपत्ति उठाई जाती है। लेकिन वह तो यहीं आ रहा है।

(पुरोहित एक तरफ हटकर, किताब खोलकर पढ़ने लगता है। स्त्यूपा का बरामदे की तरफ साईकिल पर प्रवेश)

अलेक्जेंडरा : तुम्हारी उमर बहुत बड़ी है। हम लोग अभी तुम्हारी ही बातें कर रहे थे कि इतने में तुम आ गए। ल्यूबा कहती है कि कल तुम अपने पिताजी से बिगड़ पड़े थे।

स्त्यूपा : बिल्कुल नहीं, कोई ऐसी बात नहीं हुई। उन्होंने अपने विचार प्रकट किए और मैंने अपने। अगर हमारे विचारों में अंतर और फेर है तो इसमें मेरा दोष नहीं है; ल्यूबा को तो आप जानती ही हैं, वह समझती तो खाक नहीं, लेकिन दखल हर बात में देती है।

अलेक्जेंडरा : अच्छा तो तुमने क्या फैसला किया है?

स्ट्यूपा : पता नहीं, पिताजी ने क्या निश्चय किया। मुझे भय है कि उन्होंने अभी तक इसका निश्चय नहीं किया है; लेकिन मैंने "अश्व-रक्षकों" में सम्मिलित होने का फैसला कर लिया है। हमारे घर में तो हरेक बात पर कोई-न-कोई खास ऐतराज किया जाता है। लेकिन यह तो बिल्कुल सीधी-सी बात है। मेरी पढ़ाई समाप्त हो गई है; इसलिए अब कुछ-न-कुछ काम तो करना ही होगा। फौज में भरती होना और निम्नश्रेणी के शराबी अफसरों के साथ रहना अरुचिकर होगा। इसीलिए मैं "अश्व-रक्षकों" में भरती हो रहा हूँ जहाँ मेरे कुछ दोस्त भी हैं।

अलेक्जेंडरा : ठीक है, लेकिन तुम्हारे बाप इस बात पर राजी क्यों नहीं होते?

स्ट्यूपा : मौसी! उनका जिक्र करने से क्या फायदा? उनको तो एक तरह की धुन लगी है। उनको अपनी बातों के अलावा कुछ दिखाई ही नहीं पड़ता। वह कहते हैं कि फौजी मुलाजमात सबसे नीच वृत्ति है। इसलिए उसमें किसी को न जाना चाहिए, और इसीलिए वह मुझे रुपया नहीं देते।

लिसा : नहीं, स्ट्यूपा! उन्होंने यह नहीं कहा। तुम्हें याद है, मैं उस वक्त वहाँ मौजूद थी। वह कहते थे कि जब जरूरत पड़े और तुम बुलाये जाओ तब लाचारी की हालत में फौजी खिदमत अंजाम दे सकते हो। लेकिन इस तरह खुद-ब-खुद अपनी इच्छा से भरती होना ठीक नहीं है।

स्ट्यूपा : लेकिन नौकरी करने मैं जाता हूँ, खुद वह तो जाते नहीं? वह खुद भी तो फौज में रहे थे।

लिसा : मगर उन्होंने यह तो नहीं कहा कि वह रुपया नहीं देंगे; बल्कि उन्होंने कहा था कि वह एक ऐसे काम में भाग नहीं ले सकते जोकि उनके विचारों के विरुद्ध है।

स्ट्यूपा : इसमें विचार और विश्वास का कोई काम नहीं है। कोई सेवा करना चाहता है—बस यही काफी है।

लिसा : मैंने जो कुछ सुना वह कह दिया।

स्ट्यूपा : मुझे मालूम है कि तुम हमेशा पिताजी से सहमत रहती हो। आप जानती हैं, मौसी, लिसा हर बात में पिताजी की तरफदारी करती हैं।

लिसा : जो बात सच्ची है...

अलेक्जेंडरा : मैं जानती हूँ कि लिसा हर तरह की बेवकूफी में भाग लेने को तैयार हो जाती है। बेवकूफी की तो उसे बू आती है और वह उसे दूर से ही सूँघकर पहचान लेती है।

(लाल कमीज पहने हुए एक हाथ में तार लिए वानिया का दौड़ते हुए प्रवेश। उसके पीछे कुत्ते भी आते हैं।)

वानिया : *(ल्यूबा से)* बताओ देखें, कौन आता है ?

ल्यूबा : बताने से क्या फायदा ? लाओ तार मुझे दो।

(तार लेने को वानिया की तरफ हाथ फैलाती है; वह तार नहीं देता है।)

वानिया : मैं तुम्हें यह तार नहीं दूँगा और न यही बतलाऊँगा किसने भेजा है। हाँ, यह एक ऐसे आदमी के पास से आया है, जिससे तुम शरमाती हो।

ल्यूबा : वाहियात! किसने भेजा है ? मौसी, तार कहाँ से आया है ?

अलेक्जेंडरा : चेरमशनोब्स के पास से।

ल्यूबा : ओह!

वानिया : देखो देखो, तुम शरमाती क्यों हो ?

ल्यूबा : मौसी, जरा तार देखूँ? *(पढ़ती है)* "हम तीनों जने डाकगाड़ी से आ रहे हैं—चेरमशनोब्स।" इसके मानी हैं शाहजादी साहबा, बोरिस और टानिया; ठीक है, बड़ी खुशी की बात है।

वानिया : अहा तुम्हें खुशी हो रही है; स्ट्यूपा, देखो तो वह कितनी शरमा रही है।

स्ट्यूपा : इतना बस है—बार-बार दिक करना ठीक नहीं।

वानिया : तुम टानिया को चाहते हो न ? तुम लोगों को लाटरी डालनी होगी; क्योंकि दो आदमी एक दूसरे की बहन को नहीं ब्याह सकते।

स्ट्यूपा : चुप रहो, बको मत, कितनी बार तुम्हें मना किया ?

लिसा : यदि वे डाकगाड़ी से ही आते हैं तब तो वे थोड़ी देर में आनेवाले हैं।

ल्यूबा : यह ठीक है, तब हम फूल चुनने को नहीं जा सकते।

(पीटर सिगरेट लिए हुए आता है)

ल्यूबा : मौसाजी, अब हम लोग नहीं जाएँगे।

पीटर : क्यों ?

ल्यूबा : चेरमशनोब्स आ रहे हैं। अच्छा है, आओ हम लोग तब तक टेनिस खेलें। क्यों स्ट्यूपा तुम भी खेलोगे न ?

स्त्यूपा : हाँ तैयार हूँ।

ल्यूबा : वानिया और मैं एक तरफ और तुम और लिसा दूसरी तरफ-क्यों राजी हो न? अच्छा तो मैं गेंद ले जाऊँ और छोकरों को भी बुला लाऊँ।

(जाती है)

पीटर : तो आखिर मुझे यहीं ठहरना पड़ा।

पुरोहित : *(जाना चाहता है)* मेरा आदाब-अर्ज है।

अलेक्जेंडरा : नहीं पुरोहितजी, जरा ठहरिए, मैं अभी आपसे बात करना चाहती हूँ और दूसरे निकोलस भी अब आता होगा।

पुरोहित : *(बैठता है और सिगरेट जलाता है)* शायद उन्हें आने में देर लगे।

अलेक्जेंडरा : वह देखिए, कोई आ रहा है। मैं समझती हूँ निकोलस ही है।

पीटर : चेरमशनोव खानदान के लोग हैं। कहीं गालिटजन की लड़की तो नहीं है।

अलेक्जेंडरा : हाँ-हाँ, यह तो वही चेरमशनोव ही है जो अपनी फूफी के साथ रोम में रहता था।

पीटर : ओहो! मुझे उनसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता होगी। मैं उनसे उस समय के बाद नहीं मिला हूँ जब हम रोम में साथ-साथ गजलें गाया करते थे। वह बहुत अच्छा गाती थी। उसके दो बच्चे भी हैं न?

अलेक्जेंडरा : हाँ, वे दोनों बच्चे भी आ रहे हैं।

पीटर : मुझे नहीं मालूम था कि सरियन्सव खानदान के साथ उन लोगों की इतनी घनिष्ठता है।

अलेक्जेंडरा : घनिष्ठता तो नहीं लेकिन पारसाल वे लोग बाहर परदेश में कहीं एक साथ ठहरे थे। शाहजादी ने ल्यूबा को अपने बेटे के लिए पसंद किया है। वह होशियार है, जानती है, कि इतना दहेज और कहाँ मिलेगा?

पीटर : लेकिन चेरमशेनव खानदान खुद भी तो अमीर था।

अलेक्जेंडरा : अमीर था, किसी जमाने में। शाहजादा अब भी जिंदा है मगर उसने सबकुछ बरबाद कर दिया है। वह शराबी है, और बिलकुल तबाह हो गया है। शाहजादी ने बादशाह के पास अर्जी भेजी, अपने पति को छोड़ दिया और इस तरह से वह थोड़ा-बहुत बचा सकी है। लेकिन उसने अपने बच्चों को शिक्षा अच्छी दी है, यह तो मानना पड़ेगा। लड़की गाने में निपुण है। लड़का सुंदर तथा होनहार है और

उसने विश्वविद्यालय की शिक्षा भी समाप्त कर ली है। मगर मैं समझती हूँ कि मेरी बहुत खुश नहीं है। इसी वक्त मेहमान का आना जरा कष्ट-प्रद है। यह लो निकोलस भी आ गया।

(निकोलस का प्रवेश)

निकोलस : चित्त तो प्रसन्न है, अलीना *(अलेक्जेंडरा का छोटा नाम)* और पीटरसाहब आपका मिजाज तो मुबारक! *(पुरोहित को देखकर)* ओहो! वासिली साहब हैं।

(सबसे हाथ मिलाता है।)

अलेक्जेंडरा : इसमें अभी कुछ काफी और बची है, क्या एक प्याले में दूँ? जरा ठंडी हो गई है मगर अभी गरम हुई जाती है। *(घंटी बजाती है)*

निकोलस : नहीं, कोई जरूरत नहीं, मैं कुछ खा-पी चुका हूँ। मेरी कहाँ है?

अलेक्जेंडरा : बच्चे को दूध पिलाने गई है।

निकोलस : वह अच्छी तरह तो है?

अलेक्जेंडरा : हाँ अच्छी तरह है। तुम अपना काम कर आए?

निकोलस : कर आया। देखो, अगर कुछ चाय या काफी बची हो तो मुझे दीजिए। *(पुरोहित से)* अच्छा आप पुस्तक वापस लाए हैं? आपने उसे पढ़ लिया? घर आते वक्त रास्ते में मैं आपके ही विषय में सोच रहा था। *(एक नौकर प्रवेश करता है और सबको सलाम करता है। निकोलस उससे हाथ मिलाता है और अलेक्जेंडरा अपनी आँख से पति को इशारा करती है।)*

अलेक्जेंडरा : जरा इस सामवार[1] को गरम कर लो।

निकोलस : इसकी जरूरत नहीं। वास्तव में तो वह मुझे नहीं चाहिए; मैं जैसी है वैसी ही पी लूँगा।

(मिसी अपने पिता को देखकर गेंद खेलना छोड़ दौड़ती हुई आती है और उससे लिपट जाती है।)

मिसी : पिताजी, हमारे साथ चलो।

निकोलस : *(पीठ पर हाथ फेरते हुए)* अभी चलता हूँ। जरा मैं कुछ खालूँ। तुम चलो, खेलो, मैं जल्दी आऊँगा।

(मिसी का प्रस्थान) (निकोलस मेज के पास बैठ जाता है और चाव के साथ खाता-पीता है।)

---

1. केटली की तरह का तांबे का बर्तन जो चाय बनाने के काम आता है।

अलेक्जेंडरा : हाँ तो क्या, उन्हें सजा हो गई?

निकोलस : हाँ, सजा हो गई। उन्होंने खुद जुर्म इकबाल कर लिया। *(पुरोहित से)* मैंने समझा था कि आपको रेनन के विचारों पर पूरा यकीन नहीं आयगा।

अलेक्जेंडरा : और तुमने फैसले को पसंद नहीं किया?

निकोलस : *(झुँझलाकर)* बेशक, मैं उसे पसंद नहीं करता। आपके सामने मुख्य प्रश्न ईसा के देवत्व या क्रिश्चियानिटी के इतिहास का नहीं बल्कि गिरजे का है...

अलेक्जेंडरा : तो क्या हुआ; उन्होंने तो अपने जुर्म का इकबाल किया और तुमने कहा कि नहीं यह ठीक नहीं है, तो उन्होंने लकड़ी चुराई नहीं बल्कि उसे ले लिया?

निकोलस : *(पुरोहित से बोलते-बोलते दृढ़ता के साथ अलेक्जेंडरा की ओर घूमकर)* प्यारी आलीना, तुम इस तरह की चुटकियाँ लेकर मेरे दिल में सूइयाँ क्यों चुभाती हो?

अलेक्जेंडरा : बिल्कुल नहीं...

निकोलस : अगर आप वास्तव में जानना चाहती हैं कि मैं किसानों को, सिर्फ उस लकड़ी के लिए, जिसकी उन्हें जरूरत थी और वे काट लाए थे, फँसाकर क्यों तकलीफ नहीं दे सकता...

अलेक्जेंडरा : मैं समझती हूँ कि शायद उन्हें इस सामवार की भी जरूरत होगी।

निकोलस : अगर आप जानना चाहती हैं कि मैं क्यों किसानों को महज इसी बात के लिए कि उन्होंने उस जंगल से दस दरख्त काट डाले, जिसे लोग मेरा कहते हैं, कैद में डालने के लिए और उनकी जिंदगी बरबाद करने के लिए राजी नहीं होता...

अलेक्जेंडरा : सब आदमी ऐसा कहते हैं।

पीटर : यह लो, फिर वही बहस करने लगीं।

निकोलस : यदि थोड़ी देर के लिए मान भी लूँ, जैसाकि मैं नहीं कर सकता, कि वह जंगल मेरा है, तो हम लोगों के पास 3000 एकड़ जमीन है जिसमें फी एकड़ 150 दरख्त होंगे। सब मिलाकर 450000 दरख्त हुए—ठीक है न? अब देखो कि उन्होंने उसमें से 10 पेड़ काट डाले—यानी 45 हजारवाँ हिस्सा। जरा सोचिए तो सही कि क्या यह मुनासिब है और क्या वास्तव में कोई मनुष्य इस बात को पसंद करेगा कि इस छोटी-सी बात के लिए बेचारे एक गरीब

आदमी को उसके परिवार से बेहरमी के साथ जुदा करके जेल में डाल दिया जाए ?

स्ट्यूपा : लेकिन अगर आप इस 45 हजारवें हिस्से को सुरक्षित नहीं रखेंगे तो बाकी 44990 दरख्त भी शीघ्र ही काट डाले जाएँगे।

निकोलस : लेकिन यह तो मैंने मौसी को जवाब देने के लिए कहा था। वास्तव में तो मेरा इस जंगल पर कोई हक नहीं है। जमीन हरेक आदमी की है या यों कहिए कि वह किसी की मिलकियत नहीं है। हमने इस जंगल के लिए भी कोई मेहनत नहीं की।

स्ट्यूपा : नहीं, लेकिन आपने रुपया बचाया और इस जंगल की रखवाली की जो ?

निकोलस : मैंने रुपया कहाँ से बचाया, और वह बचत कैसे हुई ? इसके अलावा मैंने जंगल की रखवाली नहीं की। लेकिन यह एक ऐसी बात है जो कि बहस के जरिये साबित नहीं की जा सकती। उस शख्त को जो कि अपनी हरकत से खुद शरमिंदा नहीं होता, जबकि वह किसी दूसरे आदमी को मारता है...

स्ट्यूपा : लेकिन यहाँ तो कोई किसी को मारता नहीं।

निकोलस : लेकिन जिस तरह एक आदमी खुद कोई काम न करके दूसरों से अपनी गुलामी कराने में शर्म महसूस नहीं करता और कोई शख्स इस बात को उसके सामने साबित नहीं कर सकता कि उसे अपनी हरकत पर लज्जित होना चाहिए; ठीक इसी तरह दूसरा आदमी इस बारे में हमारी भूल साबित करके हमें लज्जित नहीं कर सकता। और तुमने कॉलेज में जो अर्थशास्त्र पढ़ा है उसका एकमात्र उद्देश्य यही है कि वह यह बात साबित कर दिखाए कि हम लोग जिस स्थिति में अपना जीवन व्यतीत करते हैं वह ठीक है।

स्ट्यूपा : लेकिन, इसके विपरीत, साइंस हर तरह के बहमों को दूर करता है।

निकोलस : खैर, ये सब बातें जरूरी नहीं हैं। जरूरी यह है कि अगर मैं यकीम *(किसान का नाम)* की जगह होता तो मैं भी वैसा ही करता है जैसाकि उसने किया है। और अगर मुझे कैद हो जाती तो मैं न जाने क्या कर बैठता ? और चूँकि मैं दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहता हूँ जैसाकि मैं चाहता हूँ कि वे मेरे साथ करें—इसलिए मैं उसे सजा नहीं दे सकता बल्कि जहाँ तक होगा बचाने की ही कोशिश करूँगा।

पीटर : मगर इस तरह से तो कोई आदमी किसी भी चीज को अपने पास नहीं रख सकता।

(अलेक्जेंडरा और स्त्यूपा दोनों एक साथ बोलते हैं)

अलेक्जेंडरा : तब तो काम करने के बनिस्बत चोरी करना कहीं अधिक फायदेमंद है।

स्त्यूपा : आप किसी की दलीलों का उत्तर देते ही नहीं। मैं कहता हूँ, जो आदमी रुपया बचाता है उसे उपनी बचत से लाभ उठाने का अधिकार है।

निकोलस : *(हँसकर)* समझ में नहीं आता कि किसकी बात का मैं जवाब दूँ। *(पीटर से)* हाँ, यह सच है कि किसी को कोई भी चीज अपने पास नहीं रखनी चाहिए।

अलेक्जेंडरा : लेकिन कोई चीज अपने पास न रखी जाए इसका अर्थ तो यही होता है कि कोई भी आदमी कपड़ा-लत्ता यहाँ तक कि रोटी का टुकड़ा भी अपने पास नहीं रख सकता—सब दूसरों को दे डालना चाहिए और तब तो मनुष्यों का जीवन भी असंभव हो जाएगा।

निकोलस : लेकिन जीवन-निर्वाह असंभव तो यह होना चाहिए जैसी कि हम अपनी जिंदगी बसर करते हैं।

स्त्यूपा : दूसरे शब्दों में इसका मतलब यह हुआ कि हम लोगों को मर जाना चाहिए और इसलिए यह शिक्षा जीवन के काम की नहीं...

निकोलस : नहीं, लेकिन शिक्षा इसलिए दी जाती है कि मनुष्य जीवित रहना सीख सके। हाँ; यह भी ठीक है कि हमको सबकुछ दे डालना चाहिए न केवल जंगल ही, जिसका हम कोई उपयोग नहीं करते और शायद ही कभी जिसकी देखभाल करते हों, बल्कि अपने कपड़े और खाना तक दे डालना चाहिए।

अलेक्जेंडरा : और बच्चों का खाना भी?

निकोलस : हाँ-हाँ, बच्चों का भी! और सिर्फ खाना ही नहीं बल्कि खुद अपने-आपको भी। यही तो ईसा की शिक्षा है। हमें अपने पूरे बल के साथ दूसरों के लिए अपने को कुर्बान करने की—संपूर्ण आत्मत्याग करने की चेष्टा करनी चाहिए।

स्त्यूपा : इसके मानी होते हैं मरने के लिए।

निकोलस : हाँ, यदि तुम अपने मित्रों के लिए जान तक निसार कर दो तो यह भी तुम्हारे और तुम्हारे दोस्तों के लिए अच्छा होगा। लेकिन असली

बात तो यह है कि मनुष्य केवल आत्मा ही नहीं है, बल्कि शरीर-स्थित आत्मा है। मांस-मज्जा का बना हुआ यह शरीर जहाँ उससे केवल अपने ही लिए जीने का अनुरोध करता है वहाँ आत्मा उससे ईश्वर के लिए तथा परोपकारमय जीवन व्यतीत करने के लिए जीने का अनुरोध करती है। हमारा जीवन पाशविक ही नहीं है बल्कि पाशविक और आत्मिक दोनों के बीच में है। सो वह जितना ही ईश्वर के निकट होगा उतना ही अधिक अच्छा है। हमारी पशु-प्रवृत्ति तो शरीर की रखवाली करने से चूकने की नहीं।

स्ट्यूपा : तब बीच ही का रास्ता क्यों पसंद करें—अधर में क्यों रहें—अगर ऐसा ही करना उचित है तो सभी चीजें देकर मर क्यों न जाना चाहिए।

निकोलस : यह तो बहुत ही अच्छा और शानदार होगा। जरा करके देखो। और फिर तो यह तुम्हारे लिए और दूसरों के लिए—सभी के लिए—श्रेयस्कर सिद्ध होगा।

अलेक्जेंडरा : नहीं, यह ठीक नहीं। इसमें न तो स्पष्टता है, न सरलता। इसमें तो हद से ज्यादा बारीकी है।

निकोलस : इसके लिए तो अब और मैं कुछ नहीं कर सकता। और यह बात दलील देकर साबित नहीं की जा सकती। मगर जो कुछ हो, अभी तो इतना ही काफी है।

स्ट्यूपा : हाँ, बिल्कुल ठीक है। मेरी भी समझ में यह बात नहीं आती है।

(जाता है)

निकोलस : *(पुरोहित की तरफ घूमकर)* कहिए, किताब का आपके ऊपर कैसा असर पड़ा?

पुरोहित : *(उत्तेजित होकर)* किस तरह बताऊँ? सुनिए, पुस्तक का ऐतिहासिक भाग लिखा तो ठीक-ठीक गया है, पर न तो उससे पूरा यकीन ही होता और न, कहना चाहिए, वह पूरी तरह विश्वसनीय ही है। क्योंकि वास्तव में उसके लिए पर्याप्त सामग्री ही नहीं मिलती। रहा ईसा के देवत्व और अदेवत्व का प्रश्न; सो यह इतिहास से कभी हल नहीं किया जा सकता। उसके लिए तो एक ही अकाट्य प्रमाण है। *(इसी बातचीत के बीच में पहले तो स्त्रियाँ और फिर पीटर बाहर चले आते हैं।)*

निकोलस : आपका मतलब गिरजा से है?

पुरोहित : हाँ, बेशक गिरजा तो हुई है, पर साथ ही विश्वसनीय लोगों के, जैसेकि साधु-संतों के, प्रमाण भी हैं।

निकोलस : इसमें संदेह नहीं कि अगर विश्वास करने के लिए कुछ भ्रम-रहित लोगों के समूह का अस्तित्व होता तो बहुत ही अच्छा होता—बहुत वांछनीय होता। लेकिन उनकी वांछनीयता से यह सिद्ध नहीं होता कि ऐसे लोग मौजूद हैं।

पुरोहित : मगर मैं समझता हूँ कि उनके अस्तित्व की वांछनीयता और उपयोगिता ही उनके अस्तित्व का प्रमाण है। प्रभु ईसा मसीह ने अपने कानून को इसलिए संसार में प्रकट नहीं किया होगा कि वह नष्ट-भ्रष्ट हो जाए बल्कि वास्तव में अपने सत्य की रक्षा के लिए और उसे नष्ट-भ्रष्ट होने से बचाने के लिए अवश्य ही कोई-न-कोई संरक्षक छोड़ गए होंगे।

निकोलस : अच्छा, समझा, पर अब तक तो हमने सत्य को सिद्ध करने की चेष्टा की और अब सत्य के संरक्षक के अस्तित्व की संभावना को सिद्ध करने का उद्योग करते हैं, और शायद भविष्य में हमें उसकी प्रामाणिकता साबित करनी होगी।

पुरोहित : इसके लिए सच पूछिए तो श्रद्धा की जरूरत है।

निकोलस : श्रद्धा की ? हाँ, बेशक—श्रद्धा की जरूरत है। श्रद्धा के बिना काम नहीं चल सकता। मगर हमें श्रद्धा दूसरों के कहने पर नहीं, बल्कि हम खुद, जो कुछ देखकर सोच-विचारकर बुद्धि के द्वारा निश्चय करें, उसमें रखनी चाहिए। हमें श्रद्धा रखनी चाहिए ईश्वर में, सत्य और अविनाशी जीवन में।

पुरोहित : बुद्धि धोखा दे सकती है, क्योंकि हरेक का दिमाग जुदा-जुदा होता है।

निकोलस : *(तेजी से)* यही तो बड़ा भारी कुफ्र है। ईश्वर ने सत्य को जानने के लिए हमें यही तो एक पवित्र साधन दिया है; और यही एक साधन है सबको एकता के सूत्र में बाँधने का और हम उसी का विश्वास नहीं करते हैं।

पुरोहित : जबकि आपके निश्चयों में ही पारस्परिक विरोध है तब हम उसपर किस तरह विश्वास करें ?

निकोलस : विरोध है कहाँ ? क्या इसमें विरोध है कि दो और दो मिलकर चार होते हैं या इसमें भी विरोध है कि हमें दूसरों के साथ वह काम नहीं

करना चाहिए जिसे हम चाहते हैं कि दूसरे लोग हमारे साथ न करें? और क्या इसमें भी किसी को विरोध है कि प्रत्येक कार्य के साथ कारण होता है? इस प्रकार की सच्चाइयों को हम सब लोग मान लेते हैं क्योंकि यह हमारी बुद्धि के अनुकूल है। लेकिन यह कि खुदा कोहेनूर पर हजरते मूसा से मिला, बुद्धदेव एक सूर्य रश्मि पर चढ़कर आसमान में उड़ गए और मुहम्मदसाहब आस्मान को चले गए और ईसामसीह भी उड़कर वहीं गए—इस किस्म की बातों पर हम लोगों में मतभेद है।

पुरोहित : नहीं, हम लोगों में मतभेद नहीं है। जो लोग सत्य धर्म में विश्वास रखते हैं वे सब सम्मिलित होकर ईसा और ईश्वर में श्रद्धा और भक्ति रखते हैं।

निकोलस : नहीं, इस विषय में भी आप सब लोगों में एकता नहीं है। सब जुदा-जुदा रास्ते पर जा रहे हैं। तब फिर मैं एक बुद्ध लामा के वचनों पर विश्वास न करके आपकी ही बातों पर क्यों विश्वास करूँ? क्या सिर्फ इसलिए कि मेरा जन्म आपके मजहब में हुआ है?

(टेनिस खेलनेवाले झगड़ते हैं)

"आउट!" "नाट आउट!"

वानिया : मैंने देखा...

(इसी बातचीत के दरम्यान नौकर लोग मेज पर चाय और काफी ला रखते हैं)

निकोलस : आप कहते हैं कि गिरजा लोगों को परस्पर मिलाता है, मगर इसके बरखिलाफ गिरजे के बदौलत तो भारी-भारी झगड़े पैदा होते रहे हैं। "कितनी बार मैंने तुम्हें एकत्र करना चाहा, जिस तरह कि एक मुर्गी अपने बच्चों को इकट्ठा करती है..."।

पुरोहित : यह तो ईसा के पहले की बात है, उसने तो फिर सबको इकट्ठा किया।

निकोलस : हाँ, मैं मानता हूँ कि ईसा ने उन्हें मिलाया—एकत्र किया, मगर हम लोगों ने फूट का बीज बोया, क्योंकि हमने उनकी शिक्षा का उल्टा मतलब समझा है। ईसा ने तो गिरजाघरों का नाश किया है।

पुरोहित : क्यों, उन्होंने एक जगह यह नहीं कहा है—
"जाओ गिरजा से कहो।"

निकोलस : यहाँ शब्दों का प्रश्न नहीं है। इसके अलावा इन शब्दों का तात्पर्य

उससे नहीं है जिसे हम लोग आजकल "गिरजा" कहते हैं। हमें तो उपदेशों का जो भाव होता है उसी की आवश्यकता है। ईसामसीह की शिक्षा विश्व-व्यापी है, उसमें सब धर्मों का समावेश है। वह किसी एकांत, अद्भुत और असंगत बात को नहीं मानती है, न वह पुनरुत्थान को मानती है और न ईसा के देवत्य ही में विश्वास रखती है। वह मंत्र-जंत्रादि ऐसी बातों का प्रचार नहीं करती जो आपस में फूट डालती हों।

पुरोहित : गुस्ताखी माफ करें, मैं समझता हूँ कि आपने ईसा की शिक्षा का यह अर्थ तो अपनी तरफ से ही निकाला है। प्रभु मसीह की शिक्षा की बुनियाद तो वास्तव में उनके देवत्व और पुनरुत्थान पर ही है।

निकोलस : गिरजाघरों के विषय में यही तो बड़ी भयानक बात है। वे लोग इस बात की घोषणा करते हैं कि संपूर्ण अकाट्य और अचूक सत्य उनके अधिकार में है और लोगों में अंतर डालते हैं। देखिए अगर मैं यह कहूँ कि ईश्वर एक है और वह इस समस्त विश्व का एक मूल कारण है तो प्रत्येक पुरुष मुझसे सहमत हो सकता है और ईश्वर की यह परिभाषा हमें एकत्र करने में कारणभूत हो सकती है, लेकिन अगर मैं यह कहूँ कि ईश्वर एक है परंतु वह ब्रह्म है या जिहोवा है या त्रिमूर्ति है तो इस प्रकार के भाव से लोगों में भेद उत्पन्न होता है। मनुष्य मेल चाहते हैं, एकता चाहते हैं और इसके लिए तरह-तरह की युक्तियाँ भी खोज निकालते हैं किंतु मेल और एकता का मात्र असंदिग्ध साधन-सत्य और प्रेम की खोज-को भूल जाते हैं। यह तो ऐसा ही है जैसेकि सूरज की रोशनी को छोड़कर कोई घर की अँधेरी कोठरी में चिराग जलाकर एक दूसरे को पहचानने की चेष्टा करे।

पुरोहित : लेकिन जब तक कोई निश्चित सत्य न हो तब तक लोगों की रहनुमाई क्यों कर हो सकती है ?

निकोलस : यही तो आफत है। हममें से प्रत्येक को अपनी-अपनी आत्मा की रक्षा करनी है और स्वयं अपने-आप ईश्वर का काम करना है। लेकिन इसके बजाए हम अपना समय लगाते हैं दूसरों को बचाने और उनको सिखाने में। और हम उन्हें इस उन्नीसवीं सदी के अंत में सिखाते क्या हैं ? हम उन्हें सिखाते हैं कि ईश्वर ने छह दिन में दुनिया पैदा की, फिर एक तूफान आया और उसने सब जीवों को एक नाव में बिठाकर उन्हें बचाया आदि और ऐसी "ओल्ड टेस्टामेंट"

की तरह-तरह की भयंकर और वाहियात बातें सिखाई जाती हैं। इसके आगे फिर बताते हैं कि ईसा ने सबको पानी से बपतिस्मा दिया और इसके बाद पापों के निराकरण के भ्रमपूर्ण सिद्धांतों पर यह कहकर विश्वास दिलाया जाता है कि ये मुक्ति के लिए आवश्यक हैं। और पश्चात् यह बताया जाता है कि वह उड़कर स्वर्ग में चला गया कि जिसका वास्तव में कोई अस्तित्व ही नहीं है, और वहाँ जाकर वह अपने स्वर्गीय पिता के दाहिनी तरफ बैठ गया। हम लोग इसके आदी हो गए हैं, वरना सच पूछिए तो यह बड़ी ही भयंकर बात है। एक बच्चा, जिसका दिमाग साफ और ताजा है और अच्छी शिक्षा को पाने के लिए तैयार है, पूछता है कि यह दुनिया कैसी है, इसके नियम क्या हैं ? और हम लोग सत्य और प्रेम की शिक्षा का प्रकाश डालने के स्थान पर चालाकी के साथ उसके दिमाग में तरह-तरह की वाहियात बातें भर देते हैं। क्या यह भयानक नहीं है ? यह तो एक इतना बड़ा पाप और अपराध है कि जितना संसार में हो सकता है। और हम और आपका गिरजा यही करते हैं। बस माफ कीजिए।

पुरोहित : यदि ईसा की शिक्षा को बुद्धि की दृष्टि से देखा जाए तब तो वह ऐसी ही है।

निकोलस : चाहे जिस दृष्टि से देखिए यह बात ऐसी ही है।

(खामोश हो जाता है)

(अलेक्जेंडरा का प्रवेश, पुरोहित जाने के लिए उठता है और नमस्कार करता है।)

अलेक्जेंडरा : नमस्कार! आप निकोलस की बातें न सुनिए वह आपको बहका देगा।

पुरोहित : धर्म-पुस्तकों का मंथन कर हमें इस बात का निर्णय करना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि यह मामला निहायत जरूरी है और योंही छोड़ देने लायक नहीं है।

(जाता है)

अलेक्जेंडरा : सचमुच निकोलस तुम्हें उसपर जरा भी रहम नहीं आता। यद्यपि वह है पुरोहित लेकिन फिर भी अभी लड़का ही है ? क्या तुम उसे कोई निश्चित विचार नहीं दे सकते।

निकोलस : क्या उसे मायाजाल में फँसकर सर्वथा विनष्ट हो जाने दूँ ? नहीं, मैं

ऐसा नहीं करूँगा। इसके अलावा वह एक नेक और ईमानदार आदमी है।

अलेक्जेंडरा : लेकिन यदि वह तुम्हारी बातें मान ले तो उसका क्या परिणाम होगा?

निकोलस : उसे मेरी बात मानने की जरूरत नहीं। लेकिन यदि वह सत्य को खोज लेगा तो यह उसके तथा और अन्य लोगों के लिए भी अच्छा होगा।

अलेक्जेंडरा : यदि वास्तव में यह बात ठीक होती तो प्रत्येक आदमी तुम्हारी बात मानने के लिए तैयार हो जाता; लेकिन इस वक्त तो कोई भी नहीं मानता, यहाँ तक कि खुद तुम्हारी पत्नी ही उस पर विश्वास नहीं करती।

निकोलस : यह आपसे किसने कहा?

अलेक्जेंडरा : अच्छा, उसे समझाकर देखो तो? वह कभी इस बात को न समझ सकेगी। और दुनिया का कोई आदमी इस बात पर यकीन नहीं कर सकता कि दूसरे लोगों की तो खबरगीरी रखनी चाहिए और अपने बाल-बच्चों को छोड़ देना चाहिए। जरा जाकर मेरी को यह बात समझाओ तो सही।

निकोलस : हाँ-हाँ, मेरी अवश्य इस बात को समझेगी। मगर माफ करना अलीना, सच्ची बात तो यह है कि अगर दूसरे लोग अपना प्रभाव डालकर उसे न भड़काते तो वह अवश्य इस बात को समझती, इस पर विश्वास करती और मेरे कहने के अनुसार काम भी करती।

अलेक्जेंडरा : यफिम और उसके-जैसे नशेबाज लोगों की खातिर तुम्हारे बच्चों को भिखारी बनाने के लिए? कभी नहीं! अगर तुम इससे नाराज हो गए हो तो मुझे माफ करना। मुझसे बोले बगैर रहा नहीं जाता।

निकोलस : नहीं, मुझे गुस्सा नहीं आया। उल्टी मुझे खुशी है कि आपने ये सब बातें कहकर मौका दिया कि मैं मेरी को जीवन-संबंधी अपने विचार खुलासा बतलाकर सब बातें समझा दूँ। घर आते वक्त मैं रास्तेभर यही सोचता रहा था और अभी मैं उससे इस विषय पर बातचीत करूँगा। और आप देखेंगी कि वह मेरी बात पर राजी हो जाएगी; क्योंकि वह नेक और बुद्धिमती है।

अलेक्जेंडरा : परंतु इस विषय में मुझे तो पूरा संदेह है।

निकोलस : लेकिन मुझे तो बिल्कुल संदेह नहीं है। आप इतना तो जानती ही हैं कि यह बात मैंने अपनी तरफ से तो निकाली ही नहीं है। यह तो

वही बात है कि जिसे हम सब जानते हैं और जिसको ईसामसीह ने हम लोगों के वास्ते प्रकट किया है।

अलेक्जेंडरा : अच्छा, तुम समझते हो कि ईसामसीह ने इसी बात को प्रकट किया है; लेकिन मैं समझती हूँ कि उन्होंने कोई दूसरी ही बात प्रकट की है।

निकोलस : दूसरी बात तो हो ही नहीं सकती।

(टेनिस के मैदान से आवाजें आती हैं।)

ल्यूबा : 'आउट'!

वानिया : नहीं, हमने देखा।

लिसा : मैंने देखा कि गेंद यहाँ गिरी थी।

ल्यूबा : 'आउट'! 'आउट' !! 'आउट'!!!

वानिया : यह बात ठीक नहीं है।

ल्यूबा : हमेशा याद रखो कि किसी से यह कहना कि "यह बात ठीक नहीं है" एक उजड्डपन है।

वानिया : और जो बात ठीक नहीं है उसे ठीक बतलाना भी उजड्डपन है।

निकोलस : जरा ठहरिए! मेरी बात सुनिए। क्या यह सच नहीं है कि हम किसी भी क्षण मौत के मुँह में चले जा सकते हैं और तब हम उस परम पिता के सामने पेश किए जाएँगे जो यह आशा रखता है कि हम उसकी आज्ञानुसार बरतेंगे।

अलेक्जेंडरा : अच्छा?

निकोलस : तो भला, इस जीवन में इसके सिवा और मैं क्या कर सकता हूँ कि मैं वही काम करूँ जो मेरी आत्मा के अंतस्तल में सर्वोत्कृष्ट विचार के रूप में रमा हुआ ईश्वर मुझसे करने को कहता है। मेरा शुभ विवेक-मेरा ईश्वर चाहता है कि मैं हरेक आदमी को एक-समान समझूँ—सबसे प्रेम करूँ और सबकी सेवा करूँ।

अलेक्जेंडरा : अपने बच्चों के साथ भी वैसा ही बर्ताव करना?

निकोलस : बेशक, अपने बच्चों के साथ भी, मगर अंतरात्मा की आज्ञाओं का पालन करते हुए। और इन सबके अतिरिक्त मुझे यह ध्यान रखना चाहिए कि मुझे अपने जीवन पर कोई अधिकार नहीं है—न आपको अपने जीवन पर; उसपर केवल ईश्वर ही का अधिकार है, जिसने हमें इस दुनिया में भेजा और जो चाहता है कि हम उसकी आज्ञा का पालन करें। और उसकी आज्ञा है कि...

अलेक्जेंडरा : क्या तुम समझते हो कि तुम मेरी को इस बात पर राजी कर लोगे?

निकोलस : बेशक!

अलेक्जेंडरा : और क्या तुम्हारा यह भी खयाल है कि वह अपने बच्चों को शिक्षा देना बंद कर देगी और उन्हें छोड़ देगी? कभी नहीं!

निकोलस : न केवल वही इस बात को समझ लेगी, बल्कि तुम खुद समझने लग जाओगी कि यही एक चीज है जो करनी चाहिए।

अलेक्जेंडरा : नहीं, कभी, नहीं।

(मेरी का प्रवेश)

निकोलस : क्यों मेरी, मेरे उठने से तुम जग तो नहीं पड़ीं?

मेरी : नहीं, मैं तो उस समय जगती थी। क्यों तुम्हारा काम हो गया?

निकोलस : हाँ, हो गया।

मेरी : यह क्या, तुम्हारी काफी तो इतनी ठण्डी हो गई है? ऐसी क्यों पीते हो? हाँ, हमें मेहमानों के स्वागत के लिए तैयार हो जाना चाहिए। तुम्हें मालूम है न कि चेरमशेनव लोग आ रहे हैं?

निकोलस : अगर तुम उनके आने से संतुष्ट हो तो मैं बड़ा प्रसन्न हूँ।

मेरी : मैं शाहजादी और उनके बच्चों को चाहती हूँ, मगर वे लोग जरा बे-वक्त आ रहे हैं।

अलेक्जेंडरा : *(उठकर)* अच्छा तुम लोग बातें कर लो तब तक मैं जाकर टेनिस देख आऊँ।

(खामोशी, कुछ देर बाद दोनों बातचीत करते हैं)

मेरी : उनका आना बे-वक्त है; क्योंकि हमें कुछ बातचीत करनी है।

निकोलस : मैं अभी अलीना से कह रहा था...

मेरी : क्या?

निकोलस : नहीं, पहले तुम ही कहो।

मेरी : मैं तुमसे स्ट्यूपा के संबंध में बात करना चाहती थी? आखिर कुछ-न-कुछ तय तो करना ही पड़ेगा। वह बेचारा दु:खी और निरुत्साही होता जाता है। उसे यह मालूम ही नहीं पड़ता कि भविष्य में क्या होगा? वह मेरे पास आया, मगर मैं क्या बताऊँ?

निकोलस : बताने की जरूरत क्या है? वह खुद इस बात को तय कर सकता है।

मेरी : वह अश्व-रक्षकों में बतौर एक स्वयं-सेवक के भरती होना चाहता है और इसके लिए उसे तुम्हारे हस्ताक्षर की जरूरत है। इसके अलावा उसे अपने निर्वाह के लिए खर्चे की भी जरूरत होगी। मगर

तुम उसे कुछ देते ही नहीं।

(कुछ उत्तेजित हो जाती है)

निकोलस : मेरी, भगवान् के लिए जरा उत्तेजित मत हो। मैं न तो कुछ देता हूँ और न रोकता हूँ। अपनी इच्छा से फौज में नौकरी करना, मेरी राय में, एक विवेक और विचारहीन कार्य है जो वहशी आदमी के लायक है; क्योंकि वह उसकी बुराई को समझ नहीं सकता और अगर कोई मनुष्य उसे किसी लोभ की दृष्टि से करना चाहता है तो फिर तो वह एक महा-घृणित व्यवहार है।

मेरी : मगर आजकल तो तुम्हें हरेक बात वहशियाना और विवेकहीन दिखाई देती है। आखिरकार उसे भी दुनिया में रहना है न? और तुम भी तो इसी तरह रहे हो।

निकोलस : *(जरा तेज होकर)* हाँ, मैं इसी तरह रहा था, जबकि मैं कुछ भी समझता नहीं था और जब मुझे किसी ने नेक सलाह नहीं दी थी। मगर यह सब तय करना उसी के हाथ में है, मेरे हाथ में नहीं।

मेरी : तुम्हारे हाथ में कैसे नहीं? तुम्हीं तो उसको खर्च नहीं देते हो।

निकोलस : जो चीज मेरी नहीं है उसे मैं नहीं दे सकता।

मेरी : तुम्हारी नहीं है? तुम कह क्या रहे हो?

निकोलस : दूसरों की मेहनत-मजूरी पर मेरा कोई अधिकार नहीं है। मुझे उसे रुपया देने के लिए पहले दूसरों से लेना पड़ेगा। मुझे ऐसा करने का कोई हक नहीं है और मैं यह कर नहीं सकता। जब तक जायदाद का इंतजाम मेरे हाथों में है तब तक मुझे अपनी विवेक-बुद्धि के अनुसार ही उसका प्रबंध करना चाहिए। दूसरे मैं थके-माँदे किसानों का फल फौजी रक्षकों की वाहियात भ्रष्टतापूर्ण नालायकियों पर खर्च होने के लिए नहीं दे सकता। जायदाद मेरे हाथों में से ले लो, फिर मैं उसका जिम्मेवार न रहूँगा।

मेरी : यह तुम अच्छी तरह जानते हो कि मैं उसे लेना नहीं चाहती और न ले ही सकती हूँ। मुझे बच्चों को खिला-पिलाकर परवरिश करने के अलावा उन्हें लिखाना-पढ़ाना भी तो है। यह तो बड़ी निठुरता है!

निकोलस : प्यारी मेरी, यह बात नहीं है। जब तुम इस तरह बोलने लगी तो मैं भी साफ-साफ बातें कहने लगा। हमें इस तरह नहीं रहना चाहिए। हम लोग एक-साथ और एक-जगह रहते हैं, लेकिन फिर भी एक-दूसरे को समझ नहीं पाये। कभी-कभी तो ऐसा मालूम होता

है मानों हम लोग जान-बूझकर एक दूसरे को समझना नहीं चाहते।

मेरी : मैं समझना चाहती हूँ, लेकिन समझ नहीं पाती। सचमुच मैंने तुम्हें बिल्कुल ही नहीं पहचाना है। आजकल तुम्हें न जाने क्या हो गया है।

निकोलस : अच्छा, तो जरूर कोशिश करके समझो। लेकिन इसके लिए यह वक्त ठीक नहीं है। ईश्वर जाने, हम लोगों को कब ठीक मौका मिलेगा। तुम्हें मुझको समझने की जरूरत नहीं। तुम खुद अपने को ही समझ लो और सोचो कि तुम्हारे जीवन का अर्थ क्या है ? ईश्वर ने तुम्हें पैदा क्यों किया है ? बिना इस बात के जाने कि हम लोग जी किसलिए रहे हैं, इस तरह हम अपना जीवन नहीं बिता सकते ?

मेरी : हम लोग इसी तरह जीवन व्यतीत कर रहे थे और बड़े आराम से थे, *(खिजलाहट का भाव देखकर)* अच्छी बात है, अच्छी बात है, कहिए मैं सुनती हूँ।

निकोलस : बेशक, मैं भी इसी तरह जीवन व्यतीत कर रहा था, बिना इसका खयाल किए कि मेरे जीवन का उद्देश्य क्या है ? मगर एक वक्त ऐसा आया जबकि मैं अपने जीवन और अपनी परिस्थिति को देखकर दंग रह गया। जरा सोचो तो सही, हम लोग दूसरों की मिहनत पर अपना निर्वाह करते हैं। दूसरों से अपने लिए काम करवाते हैं, दुनिया में रहकर बच्चे पैदा करते हैं और उनको भी इसी तरह का जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देते हैं। बुढ़ापा आयगा और मौत का सामना होगा, तब मन में विचार आएँगे—मैंने संसार में रहकर क्या किया ? यही न कि अपने-जैसे और अनेक मुफ्त के टुकड़े-खोर पैदा किए! इसके अलावा, इतना होते हुए भी हम अपने जीवन का आनंद नहीं पाते हैं। यह जीवन, तुम जानती हो, हमें तभी तक सहज प्रतीत होता है जब तक हमारे अंदर वानिया की तरह जीवन में स्फूर्ति रहती है।

मेरी : मगर सब कोई इसी तरह का जीवन व्यतीत करते हैं!

निकोलस : और वे सब दु:खी हैं।

मेरी : बिल्कुल नहीं।

निकोलस : खैर, मैंने देख लिया कि मैं बहुत दु:खी हूँ, और मैंने तुम्हें और तुम्हारे बच्चों को भी दु:खी बना रखा है। तब मेरे दिल में विचार उठा कि क्या यह संभव है कि ईश्वर ने हमें इसीलिए पैदा किया

है। और जिस वक्त मेरे दिल में विचार उठा उसी दम मुझे मालूम हुआ कि नहीं ऐसा नहीं है। तब मैंने पूछा "फिर ईश्वर ने हमें किसलिए पैदा किया है?"

(एक नौकर का प्रवेश)

मेरी : *(निकोलस की बात को अनसुनी करके नौकर से)* कुछ गरम मलाई ले आओ।

निकोलस : और बाइबिल में मुझे इस बात का जवाब मिला कि हमें अपने ही लिए नहीं जीना चाहिए—अपना सारा जीवन स्वार्थ में ही नहीं व्यतीत करना चाहिए। जब बगीचे में मजदूरों के इस सिद्धांत पर विचार कर रहा था तब मुझे यह बात स्पष्ट मालूम हो गई। तुम समझीं?

मेरी : हाँ, मजदूरों के संबंध की न?

निकोलस : मुझे ऐसा मालूम हुआ कि इस दृष्टांत ने, मेरी, और बातों की अपेक्षा मेरी भूलों को अधिक स्पष्ट दिखलाया। उन मजदूरों के समान मैं भी यह मानने लगा था कि वह बगीचा खुद मेरा है और यह जीवन भी मेरा अपना ही है। इससे सब चीजें मुझे बड़ी भयंकर मालूम होतीं। मगर ज्योंही मैंने यह समझ लिया कि यह जीवन मेरा नहीं है; बल्कि इस दुनिया में मैं उस ईश्वर के इच्छानुसार कार्य करने के लिए भेजा गया हूँ...

मेरी : लेकिन इससे क्या? यह तो हम सब जानते हैं।

निकोलस : हाँ, यदि हम इतना जानते तो हम जिस प्रकार रहते हैं, न रहते होते; क्योंकि हमारा वर्तमान जीवन तो उसके बिल्कुल विरुद्ध है। और हम क्षण-क्षण पर उसकी आज्ञा का उल्लंघन करते हैं।

मेरी : मगर जब हम किसी दूसरे को हानि ही नहीं पहुँचाते तो अपराध कैसा?

निकोलस : मगर क्या सचमुच हम किसी को नुकसान नहीं पहुँचाते? तुम्हारी यह दलील बिल्कुल लचर है : अनपढ़ लोगों के जैसी है। हम दूसरों की मजदूरी से अपना फायदा नहीं करते? तो फिर यह अमीरी क्या है? यह ठाट-बाट साज-सामान आदि कहाँ से आए? नंगे बदन रहकर ठंड में ठिठुरनेवाले उन गरीब लोगों के शरीर का कपड़ा छीनकर हम अपने लिए बेशकीमती पोशाकें बनाते हैं, उनकी झोंपड़ियों को उजाड़कर हम अपने आलीशान महल बनवाते हैं और

निरीह भूखों मरते लोगों के मुँह का कौल छीनकर हम लोग तरह-तरह के लजीज पकवानों की दावतें उड़ातें हैं। यदि कोई मनुष्य किसी चीज का अधिक उपभोग करता है तो निस्संदेह यह समझ लेना चाहिए कि अवश्य ही कहीं सैकड़ों मनुष्य भूखों मरते होंगे।

मेरी : हाँ, दृष्टांत तो मेरी समझ में आ गया। ईश्वर ने सभी को बराबर दिया है।

निकोलस : (थोड़ी देर ठहरकर) नहीं यह ऐसा नहीं है। मगर मेरी, जरा इस बात को सोचो कि मनुष्य दुनिया में केवल एक ही बार आता है। तो फिर क्या यह उचित है कि हम उस जीवन को नष्ट कर दें? हमें उसका अच्छा-से-अच्छा उपयोग करना चाहिए।

मेरी : ना जी, मैं तुमसे बहस नहीं कर सकती। समझ में नहीं आता क्या करूँ। रात को बच्चों के मारे पूरी तरह सो भी नहीं पाती। मुझे घर का सब काम-काज देखना पड़ता है; उस पर तुम सहायता देने के बजाए मुझे ऐसी नई-नई बातें कहते हो जो मैं समझ ही नहीं सकती।

निकोलस : नहीं, पहले हम लोगों को आपस में एक समझौते पर आ जाना चाहिए। *(प्यार से)* क्यों ठीक है न?

मेरी : हाँ, बस तुम पहले जैसे हो जाओ।

निकोलस : नहीं, यह तो नहीं हो सकता। मगर सुनो तो।

(घंटियों और गाड़ियों के आने की आवाज)

मेरी : नहीं, अब नहीं—वे लोग आ गए हैं। मुझे उनसे मिलने के लिए जाना चाहिए।

(घर के पीछे के दरवाजे से जाती है। स्ट्यूपा और ल्यूबा उसके पीछे-पीछे जाते हैं। वानिया भी।)

वानिया : हम लोग इसे योंही नहीं छोड़ेंगे। हम लोग बाद में खेलकर फैसला कर लेंगे। क्यों, ल्यूबा, क्या है? अब तो तुम बड़ी खुश होगी?

ल्यूबा : *(गंभीरता से)* चुप रहो, बकवास न करो।

(अलेक्जेंडरा अपने पति और लिसा के साथ बरामदे से बाहर आती है। निकोलस विचार-मग्न होकर इधर-उधर घूमता है)

अलेक्जेंडरा : क्यों, तुमने उसे समझाकर राजी कर लिया?

निकोलस : अलीना, हम लोगों में परस्पर जो कुछ चल रहा है वह बड़ा गंभीर मामला है। इस वक्त मजाक बे-मौके है। कुछ मैं उसे थोड़े ही समझा रहा हूँ; बल्कि जीवन, सत्य और स्वयं ईश्वर उसे सन्मार्ग

दिखाने की चेष्टा कर रहे हैं। इसीलिए वह इसके बिना समझे और बिना यकीन किए रह ही नहीं सकती। अगर आज नहीं तो कल और कल नहीं तो परसों—एक-न-एक दिन वह सचाई को अवश्य समझेगी। मगर खेद है, ऐसे मौके पर उसे समय नहीं मिलता। अभी कौन आए हैं?

पीटर : चरेमशेनव लोग आए हैं। कैटिचि चेरमशेनव भी हैं। मुझे उनसे मिले 18 साल हो गए। पिछली बार जब हम लोग मिले थे तब हम लोगों ने यह गजल गाई थी—"दर्द मिन्नत कशे दवा न हुआ।"

अलेक्जेंडरा : मेहरबानी करके हमारी बातों में दखल न दो। और यह मत समझ बैठो कि मैं निकोलस से झगड़ पड़ूँगी। मैं तो सच-सच बात कहती हूँ। *(निकोलस से)* मैं तुमसे हँसी बिल्कुल नहीं करती हूँ। लेकिन मुझे यह बात बड़ी अजीब मालूम हुई कि तुम मेरी को उस वक्त यह बात समझाकर राजी करना चाहते थे जबकि वह तुमसे जी खोलकर बातें करने को तैयार हुई थी।

निकोलस : अच्छा, लो वे लोग आ गए हैं। कृपा करके मेरी से कह दीजिएगा कि मैं अपने कमरे में हूँ।

(प्रस्थान)

दूसरा अंक

पहला दृश्य

(उसी घर में एक सप्ताह बाद। एक बड़े भोजनालय में मेज के पास मेरी, शाहजादी और पीटर बैठे हैं; दीवार के पास एक पियानो भी रखा हुआ है।)

पीटर : शाहजादी, अब की दफे बहुत दिनों बाद हम लोगों की मुलाकात हुई। उस बार तो आपने खूब गाया था। कहिए, अब भी क्या आपको कुछ गाने का शौक है।

शाहजादी : मुझे तो अब उतना शौक नहीं रहा, मगर हमारे बच्चे गा सकते हैं।

पीटर : बेशक, आपकी लड़की बहुत अच्छा गाती है और पियानो भी अच्छा बजाती है। सब बच्चे कहाँ गए हैं? क्या अभी तक सोते हैं?

मेरी : हाँ, कल रात को चाँदनी में वे लोग बाहर सैर करने निकल गए थे और रात को बड़ी देर से वापस आए, मैं उस समय बच्चे को दूध

पिलाती थी। इससे मैंने उनकी आवाज सुनी थी।

पीटर : लेकिन हमारी अर्धांगिनीजी कब पधारेंगी ? क्या आपने उनके लिए गाड़ी भेज दी है ?

मेरी : हाँ, गाड़ी बड़े सवेरे ही चली गई थी, मैं समझती हूँ वह अब आती ही होंगी।

शाहजादी : क्या सचमुच, अलीना बीबी बाबा जिरैसियम को बुलाने गई हैं ?

मेरी : जी हाँ, यह बात कल उनके ध्यान में आई और उसी वक्त वे रवाना हो गई।

शाहजादी : ओहो! कितनी फुर्ती है। इसके लिए मैं उनकी तारीफ करती हूँ।

पीटर : ऐसे मामलों में हम लोग पीछे नहीं रहते। *(सिगार निकालता है)* अच्छा तो अब इजाजत दीजिए; मैं जरा जाकर सिगार पीऊँगा और कुत्तों के साथ पार्क की सैर करूँगा।

(जाता है)

शाहजादी : पता नहीं, कहाँ तक सच है, मगर मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि आप फिजूल में उस बात का इतना खयाल करती हैं। मैं उनकी दशा को समझती हूँ। उनके दिमाग की हालत इस वक्त बहुत ही बढ़ी-चढ़ी और ऊँची है। खैर, मान भी लो कि वह गरीबों को कुछ दे देते हैं तो इससे क्या होता है ? क्या हमको सदा ही जरूरत से ज्यादा अपनी फिक्र नहीं लगी रहती है ?

मेरी : मगर इतना ही हो तब न ? अभी आपको मालूम नहीं कि वह क्या करना चाहते हैं। सिर्फ गरीबों को मदद देने का ही सवाल नहीं है, बल्कि यह तो एक तरह की क्रांति है—सब चीजों का सर्वनाश है।

शाहजादी : मैं आपके पारिवारिक जीवन में व्यर्थ हस्तक्षेप करना नहीं चाहती, मगर आप...

मेरी : आप और व्यर्थ हस्तक्षेप ? बिल्कुल नहीं। मैं तो आपको अपना ही समझती हूँ, आप कोई गैर थोड़े ही हैं और खास कर अब-इस वक्त।

शाहजादी : मैं तो कहूँगी कि आप जी खोलकर उनसे साफ-साफ इस विषय में बातें करें और आपस में तय करके एक हद बाँध लें।

मेरी : *(आवेश में)* हद कहाँ ? यहाँ तो कोई हद नहीं है। वह तो सब-कुछ दे डालना चाहते हैं। वह तो चाहते हैं कि मैं अब इस उम्र में रसोइए और धोबिन का काम करूँ।

शाहजादी : नहीं जी, भला यह भी कहीं मुमकिन है ? यह तो बिल्कुल अजीब बात है।

मेरी : *(जेब से खत निकालते हुए)* हम लोग यहाँ अकेले ही हैं, इसलिए मैं आपसे सब बातें कह देती हूँ! उन्होंने कल मुझे यह खत दिया था, मैं पढ़कर सुनाती हूँ।

शाहजादी : क्या ? वह आपके साथ एक ही घर में रहते हुए खत भेजते हैं ? कैसे ताज्जुब की बात है ?

मेरी : नहीं, इसका कारण मुझे मालूम है। वह बोलते-बोलते बहुत उत्तेजित हो जाते हैं। मुझे तो उनके स्वास्थ्य की बड़ी चिंता हो गई है।

शाहजादी : उन्होंने क्या लिखा है ?

मेरी : पढ़ती हूँ, सुनिए—*(पढ़ती है।)* "तुम मुझे अपना पूर्व-जीवन उलट-पुलटकर डालने और उसके बजाए कोई नई चीज न देने के लिए बार-बार झिड़कती हो और कहती हो कि मैं यह नहीं बताता कि हम लोग अपना पारस्परिक जीवन किस तरह संगठित करें। जब हम इस विषय पर बहस करते हैं तो दोनों ही उत्तेजित हो उठते हैं; इसलिए मैं यह चिट्ठी लिख रहा हूँ। मैंने अक्सर बतलाया है कि किसलिए उस तरह का जीवन व्यतीत नहीं कर सकता, जैसाकि हम अब तक करते आए हैं और कर रहे लेकिन इस चिट्ठी में लिखकर तो मैं यह नहीं समझा सकता कि ऐसा क्यों है। और न मैं यही बतला सकता हूँ कि किसलिए हमें ईसा-मसीह की शिक्षा के अनुसार जीवन व्यतीत करना चाहिए। तुम दो में से एक बात कर सकती हो; या तो सत्य में विश्वास रखकर स्वेच्छा से मेरे साथ-साथ चलो या मुझमें विश्वास रखकर, मेरे ऊपर पूरा भरोसा करके मेरा अनुसरण करो।" *(पढ़ना बंद करके)* मैं न तो यही कर सकती हूँ और न वही। वह जिस तरह रहने को कहते हैं, वह मैं जरूरी नहीं समझती। मुझे बच्चों का खयाल रखना है और उन पर भरोसा नहीं कर सकती। *(फिर पढ़ती है)* "मेरा विचार तो यह है कि हम लोग जमीन किसानों को दे डालें और बाग, फुलवारी और नदी के चारागाहवाली जमीन के अलावा 135 एकड़ जमीन अपने पास रखें। हम लोग खुद मेहनत करने की कोशिश करें। मगर बच्चों को या एक-दूसरे को काम करने के लिए मजबूर न करें। हमारे पास जो कुछ जमीन बचेगी उससे भी तो 50 पौंड सालाना आमदनी होगी।

शाहजादी : 50 पौंड सालाना पर जिंदगी बसर करना—सात बच्चों को लेकर? बिल्कुल असंभव।

मेरी : देखिए तो, उनकी सारी तजवीज तो यह है कि हम अपना सारा घर भी दे डालें और उसे एक मदरसे के रूप में परिवर्तित कर दें और हम लोग एक मामूली दो कमरेवाली झोंपड़ी में रहें।

शाहजादी : हाँ, अब मुझे मालूम हुआ कि इसमें कुछ विलक्षणता है। अच्छा, आपने क्या उत्तर दिया?

मेरी : मैंने तो कह दिया कि यह नहीं हो सकता। यदि मैं अकेली होती तो निधड़क उनके पीछे चली जाती। मगर मेरे पास बच्चे हैं। जरा सोचो तो सही। छोटा बच्चा तो अभी दूध ही पीता है। मैंने तो उन्हें कहा कि हम सब चीजों को इस प्रकार दूर नहीं कर सकते। और क्या इसी बात पर ब्याह के वक्त मैं उनके साथ राजी हुई थी? दूसरे, अब न मैं जवान ही हूँ और न मेरे शरीर में ताकत है। भला मैं किस तरह इस बात को मान लूँ?

शाहजादी : यह तो मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि बात इतनी बढ़ गई है।

मेरी : बस, यही हाल है। मालूम नहीं क्या होनेवाला है! कल उन्होंने एक गाँव के किसानों का लगान माफ कर दिया! और वह जमीन भी उन्हींको दे डालना चाहते हैं।

शाहजादी : मैं समझती हूँ कि ऐसा तो नहीं होने देना चाहिए। अपने बच्चों की रक्षा करना अपना कर्तव्य है। अगर वह जायदाद का इंतजाम नहीं कर सकते तो उन्हें चाहिए कि उसे वह आपके हवाले कर दें।

मेरी : मगर यह तो मैं नहीं चाहती।

शाहजादी : बच्चों की खातिर आपको लेना चाहिए। बेहतर है कि वह जायदाद आपके नाम कर दें।

मेरी : बहन अलीना ने उनसे ऐसा कहा था; लेकिन वह कहते थे कि उन्हें ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं है; क्योंकि जमीन उन लोगों की है जो उसे जोतते हैं, बोते हैं, और उन्होंने यह भी कहा था कि यह उनका कर्तव्य है कि वह उसे किसानों को दे दें।

शाहजादी : हाँ, अब मुझे मालूम होता है कि मामला बेढब और संजीदा है।

मेरी : और पुरोहित! वह भी उन्हींका पक्ष लेता है।

शाहजादी : हाँ, कल मैंने देखा था।

मेरी : इसीलिए अलीनाबहन मास्को गई हैं। वह इस मामले में वकील से

सलाह लेना चाहती थीं। मगर खास तौर से तो वह बाबा जिरैसियन को बुलाने गई है कि जिससे वह अपना प्रभाव डालकर उन्हें रास्ते पर ले आएँ।

शाहजादी : हाँ, मैं नहीं समझती कि हजरत ईसा का सिद्धांत हमें पारिवारिक जीवन नष्ट करने की आज्ञा देता है।

मेरी : मगर वह बाबा जिरैसियन की बात भी नहीं मानेंगे। वह अपनी धुन के पक्के हैं। और जब वह मुझसे बहस करते हैं, तब आप जानती हैं, मैं कुछ जवाब नहीं दे सकती। यह तो और भी भयानक है। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि वह जो कुछ कहते हैं वह सब सच है।

शाहजादी : यह इसीलिए कि आप उन्हें प्यार करती हैं।

मेरी : मालूम नहीं। मगर है यह बड़ी गड़बड़—और यही इसाई-धर्म है।

(दाई का प्रवेश)

दाई : छोटा निकोलस जग पड़ा है। वह आपके लिए रोता है।

मेरी : अभी आती हूँ। *(शाहजादी से)* जब मैं उत्तेजित होकर अधिक बहस करती हूँ तो उनकी तबीयत बिगड़ जाती है।

(दूसरे द्वार से हाथ में कागज लिए निकोलस का प्रवेश)

निकोलस : नहीं, यह तो असंभव है।

मेरी : क्यों, क्या हुआ?

निकोलस : हुआ क्या! कुछ शीशम के दरख्तों की वजह से पीटर को कैद हो जाएगी।

मेरी : सो कैसे?

निकोलस : बिल्कुल सीधी-सी बात है। उसने कुछ पेड़ काट डाले, इसकी शिकायत मजिस्ट्रेट के पास की गई और मजिस्ट्रेट ने उसे तीन मास की सजा दी है। उसकी औरत उसके लिए आई है।

मेरी : क्या वह किसी तरकीब से बच नहीं सकता?

निकोलस : नहीं, अब नहीं बच सकता। बस, यही एक रास्ता है कि हम जंगल ही न रखें और मैं ऐसा ही करूँगा। भला इसके सिवा और क्या हो सकता है? मगर जाकर देखता हूँ कि किसी तरह उस बेचारे को छुटकारा हो सकता है।

ल्यूबा : प्रणाम पिताजी, *(हाथ चूमती है)* अब कहाँ जाते हैं?

निकोलस : मैं अभी गाँव से लौटा था और फिर गाँव को जा रहा हूँ। वे एक

भूखे आदमी को जेल में डालने के लिए घसीटे लिए जा रहे हैं। क्योंकि उसने...

ल्यूबा : शायद पीटर है?

निकोलस : हाँ पीटर ही है।

(जाता है, उसके पीछे-पीछे मेरी भी जाती है।)

ल्यूबा : *(सामधार के पास बैठती है)* तुम कॉफी चाहते हो या चाय?

बोरिस : कुछ भी नहीं।

ल्यूबा : सदा ही यह लगा रहता है, आखिर इसका कोई अंत भी है।

बोरिस : मेरी समझ में नहीं आता। मैं जानता हूँ कि किसान गरीब और अनपढ़ हैं और उनकी सहायता अवश्य करनी चाहिए; मगर इस तरह चोरों को उत्साहित करके नहीं।

ल्यूबा : फिर कैसे?

बोरिस : अपने समस्त कार्यों से। उनके लिए अपना समस्त ज्ञान काम में लाकर और अपने जीवन की कुर्बानी करके।

ल्यूबा : और पिताजी कहते हैं कि इसी बात की तो जरूरत है।

बोरिस : कुछ समझ में नहीं आता। एक आदमी अपना जीवन नष्ट किए बिना ही लोगों की सेवा कर सकता है। इसी तरह मैं अपने जीवन को ढालना चाहता हूँ। सिर्फ अगर तुम...

ल्यूबा : जो तुम्हें पसंद है वही मुझे पसंद है। और मुझे किसी चीज का डर नहीं है।

बोरिस : उन बालियों का और उस पोशाक का क्या किया जाए?

ल्यूबा : बालियाँ बेच डाली जा सकती हैं और पोशाक में तबदीली होनी चाहिए। बिल्कुल छैल-छबीली भी बनना ठीक नहीं है।

बोरिस : मैं तुम्हारे पिताजी से एक बार फिर बातचीत करना चाहता हूँ। क्या तुम समझती हो कि यदि मैं उनके साथ गाँव तक जाऊँ तो कुछ हर्ज होगा।

ल्यूबा : नहीं, बिल्कुल नहीं। देखती हूँ, कि वह तुमको पसंद करने लगे हैं और कल रात को तो वह ज्यादातर तुम्हींको मुखातिब करके बात करते रहे थे।

बोरिस : *(कॉफी पी लेता है)* अच्छा तो मैं जाऊँगा।

ल्यूबा : हाँ, जाओ, और मैं जाकर लिसा और टानिया को जगाती हूँ।

(पर्दा गिरता है।)

दूसरा दृश्य

(गाँव की गली, आहवन एक झोंपड़ी के पास लेटा हुआ है।)

आहवन : मालाशका! *(एक छोटी-सी लड़की बच्चों को गोद में लिए हुए आती है, बच्चा रोता है)* थोड़ा-सा पानी ले आ।

(मालाशका झोंपड़े में वापस जाती है; बच्चे का रोना सुनाई देता है; मालाशका एक लोटे में पानी लिए आती है।)

आहवन : बच्चे को क्यों मारती है? उसे हमेशा रुलाती रहती है। तेरी माँ से कह दूँगा।

मालाशका : अच्छा तो उससे कह दो। वह भूख के मारे रोता है।

आहवन : *(पानी पीता है)* जाओ और डेमकिन से कुछ दूध माँग लाओ।

मालाशका : मैं गई थी, मगर वहाँ कोई नहीं था।

आहवन : ओह, क्या ही अच्छा हो यदि मैं मर जाऊँ। क्या खाना तैयार है?

मालाशका : हाँ, तैयार है। यह देखो, जमींदारसाहब आ रहे हैं।

(निकोलस प्रवेश करता है)

निकोलस : क्यों, यहाँ बाहर क्यों लेटे हो?

आहवन : अंदर बहुत मक्खियाँ भिनभिनाती है और बड़ी गर्मी है।

निकोलस : यहाँ तुम्हें ठंड तो नहीं लगती?

आहवन : नहीं, मेरा जिस्म गरमी के मारे झुलस रहा है।

निकोलस : और पीटर कहाँ है? क्या घर में है?

आहवन : घर में! और इस वक्त? वह तो खेत में अनाज ढोने के लिए गया है।

निकोलस : मैंने सुना है कि वे लोग उसे जेल में डालनेवाले हैं।

आहवन : हाँ, यही बात है, पुलिस का आदमी उसे पकड़ने खेत पर गया है।

(एक गर्भवती स्त्री का प्रवेश, सर पर अनाज का गट्ठा है और हाथ में हँसिया है, मालाशका देखते ही सिर पर एक चपत लगाती है।)

स्त्री : क्योंरी, बच्चे को अकेला क्यों छोड़ दिया? सुनती नहीं, वह चिल्ला रहा है। बस इधर-उधर फिरना ही जानती है?

मालाशका : *(चिल्लाती हुई)* मैं अभी तो बाहर आई हूँ। पिताजी ने पानी माँगा था।

स्त्री : देख बताती हूँ अभी तुझे। *(निकोलस को देखकर)* वंदे ठाकुरसाहब। बच्चों की बड़ी आफत है। मैं तो बड़ी हैरान हो रही हूँ। सारा बोझ मेरे ही सिर पर है। हमारे घर में कमाई करनेवाला एक ही आदमी है। उसे भी वे लोग जेलखाने लिए जाते हैं और यह काम-चोर इधर निठल्ला पड़ा हुआ है।

निकोलस : क्या बोलती हो? देखो तो यह बेचारा कितना बीमार है।

स्त्री : यह बीमार है और मैं कैसी हूँ? क्या मैं बीमार नहीं हूँ? जब काम का वक्त होता है तब वह बीमार पड़ जाता है; मगर हँसने-बोलने और मेरे सिर के बाल नोंचने के लिए बीमार नहीं होता। मरे, कुत्ते की मौत मरे! मुझे क्या?

निकोलस : ऐसी खराब बातें तुम्हारे मुँह से कैसे निकलती हैं?

स्त्री : मैं जानती हूँ, यह पाप है। मगर मेरी जबान काबू में नहीं रहती। मेरे एक और बच्चा होनेवाला है। और अभी दो को सँभालना पड़ता है। सब लोगों की फसल कटकर तो घर में आ गई है, मगर हमारी चौथाई कटाई भी अभी नहीं हो पाई है। मुझे जौ के गट्ठे बाँधने थे, मगर नहीं बाँध सकी। बच्चों को देखने के लिए मुझे काम छोड़कर आना पड़ा।

निकोलस : जौ कट जाएँगे। मैं मजदूरों को लगा दूँगा। वे काट कर गट्ठे बाँध डालेंगे।

स्त्री : गट्ठे बाँधने में कुछ नहीं है, यह तो मैं खुद कर सकती हूँ, बस किसी तरह कटाई हो जाती। क्यों निकोलससाहब, आप क्या समझते हैं—क्या यह मर जाएगा? यह बहुत बीमार है।

निकोलस : मालूम नहीं, मगर बीमार तो सचमुच बहुत है। उसे अस्पताल भेजना चाहिए।

स्त्री : हरे राम! *(रोती है)* ईश्वर के लिए उसे कहीं मत ले जाओ, यहीं मर जाने दो। *(अपने पति से, जो कुछ कहता है)* क्या कहते हो?

आहवन : मैं अस्पताल जाना चाहता हूँ, यहाँ तो मैं कुत्ते से भी बदतर हूँ।

स्त्री : खैर जो कुछ हो। मेरा तो इस वक्त जी ठिकाने नहीं है। मालाशका! खाना परोस।

निकोलस : तुम्हारे खाने में क्या-क्या चीजें हैं?

स्त्री : क्या-क्या चीजें हैं? रोटी और आलू, और वह भी काफी नहीं हैं। *(झोंपड़े के अंदर आती है, एक सूअर का बच्चा चिल्लाता है, अंदर बच्चे रोते हैं)*

आहवन : हे ईश्वर, अब तो बस मौत दो। *(कराहता है)*

(बोरिस का प्रवेश)

बोरिस : क्या मैं कुछ सहायता कर सकता हूँ?

निकोलस : यहाँ कोई किसी की सहायता नहीं कर सकता। खराबी की जड़ गहरी पहुँच चुकी है। यहाँ बस हम अपनी सहायता कर सकते

हैं—यह देखकर कि हम किन चीजों से अपने जीवन के सुख का निर्माण करते हैं। यह देखो, एक परिवार है, पाँच बच्चे हैं; स्त्री गर्भवती है, पति बीमार है, आलुओं के सिवा घर में खाने के लिए कुछ नहीं है। और इस वक्त इस बात का निर्णय किया जा रहा है कि अगले साल भी उन्हें खाने के लिए काफी अनाज मिलेगा या नहीं? माना कि मैं एक मजदूर कर दूँ; मगर वह मजदूर होगा कौन? बस ऐसा ही एक दूसरा आदमी होगा कि जिसने शराब पीने या पैसा न होने की वजह से अपनी खेतीबारी का काम छोड़ दिया है।

बोरिस : माफ कीजिएगा। मगर ऐसी बात है तो फिर आप यहाँ क्या कर रहे हैं?

निकोलस : मैं अपनी स्थिति को समझने की कोशिश कर रहा हूँ। मैं यह देख रहा हूँ कि वह कौन है जो हमारे बागों में काम करता है, हमारे मकान बनाता है, हमारे कपड़े बनाता है और हमें खिलाता-पिलाता है। *(किसान हँसिए लिए हुए और स्त्रियाँ रस्सी लिए हुए जाते हैं और सलाम करते हैं। निकोलस एक किसान को रोककर)* एरमिल, क्या तुम इन लोगों के जौ काटकर नहीं ला सकते?

एरमिल : *(सिर हिलाकर)* मैं बड़ी खुशी से करता लेकिन, इस वक्त मैं यह काम नहीं कर सकता। मैंने खुद अभी तक अपना खेत नहीं काट पाया है। हम लोग अब खेत काटने जाते हैं। मगर आहवन का क्या हाल है।

दूसरा किसान : यह देखो सिबेश्चियन हैं, शायद यह राजी हो जाए। शिबा काका, यह लोग जौ काटकर लाने के लिए एक आदमी चाहते हैं।

शिबा : तुम्हीं इस काम को ले लो; इस वक्त तो एक दिन की मिहनत से साल भर का खाना मिलता है।

(किसान जाते हैं)

निकोलस : यह सब नंगे-भूखे हैं। इन्हें आधा पेट खाने को मिलता है। इसीलिए सब रोगी हो रहे हैं। और कई बुड्ढे हैं। देखो, वह बूढ़ा आदमी बीमारी से अधमरा हो रहा है। लेकिन फिर भी वह सुबह चार बजे से लेकर रात के दस बजे तक काम करता है। और हम लोग? यह सब देखकर क्या यह संभव है कि हम लोग शांतिपूर्वक दिन बिताएँ और फिर भी अपने को धार्मिक मनुष्य समझें? धार्मिक मनुष्य न सही, केवल पशु न समझें?

बोरिस : लेकिन इसके लिए क्या करना चाहिए?

निकोलस : इस बुराई में भाग नहीं लेना चाहिए? न जमीन को अपने कब्जे में रखना और न दूसरों की मिहनत से फायदा उठाना चाहिए। इन सब बातों का क्या प्रबंध होना चाहिए यह तो मैं अभी नहीं बता सकता। दर असल बात यह है कि हम लोग यह कभी सोचते नहीं कि हमारा जीवन किस तरह गुजर रहा है। मैंने यह कभी नहीं समझा कि मैं ईश्वर का पुत्र हूँ, और हम सब ईश्वर के पुत्र हैं, भाई भाई हैं। लेकिन जिस वक्त मैंने यह अनुभव किया था, जिस वक्त यह जान लिया कि हम सब एक—बराबर हैं, सबको इस दुनिया में जिंदा रहने का हक है, उसी वक्त मेरे दिल में हलचल मच गई। लेकिन यह सब बातें मैं इस वक्त नहीं बता सकता। इस वक्त तो मैं यही कहूँगा कि मैं बिल्कुल चक्षु-हीन था, जैसाकि इस वक्त मेरे घर के लोगों का हाल है। मगर अब मेरी आँखें खुल गई हैं और अब मैं इन बातों को देखें बिना नहीं रह सकता। लोगों की इस हीनावस्था को देखकर और उसका कारण जानकर अब मैं उसी तरह अपना जीवन व्यतीत नहीं कर सकता। खैर यह तो फिर देखा जाएगा। इस वक्त किसी तरह इनको मदद देनी चाहिए। *(पुलिस का आदमी, पीटर, उसकी स्त्री और बच्चे का प्रवेश)*

पीटर : *(निकोलस के पैर पकड़कर)* माफ करो, ईश्वर के लिए, मुझे माफ कर दो। नहीं तो मैं बिल्कुल बरबाद हो जाऊँगा। अकेली औरत किस तरह अनाज काटकर घर में ला सकेगी? कम-से-कम जमानत पर ही मैं छूट जाता!

निकोलस : मैं अर्जी लिखता हूँ। *(पुलिस मैन से)* क्या तुम इसे अभी नहीं छोड़ सकते?

पुलिस मैन : मुझे पुलिस स्टेशन ले जाने का हुक्म मिला है।

निकोलस : अच्छा तो जाओ मुझसे जो हो सकेगा मैं करूँगा। यह सब मेरी करतूत है। भला, इस तरह कोई कैसे रह सकता है?

(जाता है।)

तीसरा दृश्य

(उसी घर में। वर्षा हो रही है, एक कमरे में पियानो रखा हुआ है। टानिया पियानो के पास बैठी है, उसने अभी एक गीत समाप्त किया

है, स्ट्यूपा पियानो के पास खड़ा है। बोरिस बैठा है। ल्यूबा, लिसा, मित्राफेन, और वासिमी, पुरोहित सब गीत से प्रभावित और प्रसन्न हैं)

ल्यूबा : अहा! यह गीत कितना प्यारा है?

स्ट्यूपा : सचमुच बड़ी खूबसूरती से गाया।

लिसा : बहुत ही अच्छा है।

स्ट्यूपा : मगर मुझे मालूम नहीं था कि तुम गान-विद्या में इतनी निपुण हो। कोई उस्ताद भी इस तरह से शायद ही बजा पायेगा। ऐसा मालूम होता है कि तुम्हारे हृदय में स्वर्गीय भावों की अक्षय निधि है। उसमें से एक-एक करके वह चुने हुए सुंदर दिव्य-भाव कुछ ललित किशोर स्वरों की सवारी पर बैठकर आकाश की तरफ उड़ते हैं और अपनी ज्योतिर्मयी प्रभा की स्फूर्ति से समस्त संसार को आच्छादित और आह्लादित करते हुए अंत में दूर, बहुत दूर, आसमान में झिलमिलाते हुए सितारों की रोशनी में लीन हो जाते हैं, और देखते-देखते ही वे सितारे और भी अधिक उज्ज्वल, और भी अधिक सजीव और भी अधिक चंचल हो उठते हैं।

ल्यूबा : बस स्ट्यूपा ने मेरे मन की बात कही है। सचमुच टानिया तुम अप्सरा हो।

टानिया : मगर तो समझती थी कि मैं पूरी तरह अपने भावों को व्यक्त नहीं कर सकी। बहुत-कुछ अभी अव्यक्त ही रह गया है।

लिसा : भला, इससे बढ़कर और क्या हो सकता है? गाना आश्चर्यजनक था।

ल्यूबा : तानसेन और बैजूबावरा की याद आती है। सुनते हैं, बैजूबावरा के गाने का दिलपर अधिक असर पड़ता है।

स्ट्यूपा : हाँ, उसमें भक्ति के भाव अधिक भरे होते हैं।

टानिया : हम लोग उन दोनों का एक-दूसरे से मुकाबला नहीं कर सकते।

ल्यूबा : भक्ति के गानों में मीराबाई भी अद्वितीय हैं। क्या तुम्हें कोई गीत याद है?

टानिया : कौन-सा गीत चाहती हो? "मेरे मन राम नाम दूसरा न कोई"

(बजाना शुरू करती है)

ल्यूबा : नहीं, यह नहीं, यह भी बहुत अच्छा है, मगर उसे सब कोई गाता फिरता है। देखिए यह गीत :

(जितना मालूम है उतना बजाती है, फिर छोड़ देती है)

टानिया : ओह, यह तो बहुत ही अच्छा है...गाते-गाते मन खुशी से नाच उठता है।

स्त्यूपा : हाँ, हाँ, जरा गाइए तो सही। मगर नहीं तुम थक गई होगी। यों भी आज की सुबह हम लोगों ने बड़ी खुशी से बिताई, इसके लिए आपको धन्यवाद है।

टानिया : *(उठकर खिड़की में से देखती है)* बाहर कुछ किसान बैठे इंतजार कर रहे हैं।

ल्यूबा : इसीलिए तो गान-विद्या की इतनी कदर है, और कोई चीज इस तरह मनुष्य के सुख-दुःख को नहीं भुला सकती जिस तरह कि गान-विद्या क़रती है। *(खिड़की के पास जाकर किसानों से)* तुम किसे चाहते हो?

किसान : निकोलससाहब से मिलने हम लोग आए हैं।

ल्यूबा : वह घर पर नहीं हैं। तुम लोग जरा ठहरो।

टानिया : और फिर भी तुम बोरिस से ब्याह करना चाहती हो कि जिसे गान-विद्या का कुछ भी ज्ञान नहीं है।

ल्यूबा : जी नहीं, हरगिज नहीं।

बोरिस : गाना? नहीं, नहीं, मैं उसे पसंद करता हूँ, या यों कहिए कि मैं उसे नापसंद नहीं करता। गाने की बनिस्बत मैं गीतों को अधिक पसंद करता हूँ। क्योंकि उनमें सादगी है, उनमें इतनी कृत्रिमता-जनक उलझन नहीं होती।

टानिया : मगर क्या यह राग अच्छा नहीं है?

बोरिस : खास बात यह है कि यह चीज इतनी जरूरी नहीं है और मुझे यह देखकर दुःख होता है कि लोग गान-विद्या को इतना जरूरी समझते हैं जबकि हजारों आदमी बड़ी मुसीबत से अपने दिन काटते हैं।

(सब लोग मिठाई खाते हैं, मिठाई मेज पर सज़ी हुई है)

लिसा : यह कितने मजे की बात है कि प्रेमी मौजूद हों और मिठाइयाँ तैयार हों।

बोरिस : यह मेरा काम नहीं है, माँजी का है।

टानिया : बिल्कुल ठीक और मुनासिब है।

ल्यूबा : गाने की खूबी इसीमें है कि वह हमारे दिल पर जादू का-सा असर कर रहा है, हमें अपने वश में करके दुनिया के सुख-दुःख से दूर, बहुत दूर, ले जाता है, जहाँ थोड़ी देर के लिए हम संसार की स्थूल

वास्तविकता को भूल जाते हैं। अभी थोड़ी देर पहले हरेक चीज सुस्त और बे-मजा मालूम होती थी, मगर तुम्हारे गाने ने मानों सबमें जीवन डाल दिया है।

लिसा : तुम्हें कबीर के कोई गीत भी मालूम है ?

टानिया : यह... *(बजाती है)*

(निकोलस का प्रवेश, बोरिस, टानिया, स्त्यूपा, लिसा, मित्राफेन और पुरोहित से हाथ मिलाता है।)

निकोलस : तुम्हारी माँ कहाँ है ?

ल्यूबा : मैं समझती हूँ, वह पालनेवाले घर में होंगी।

(स्त्यूपा नौकर को बुलाता है—अफनासी!)

ल्यूबा : पिताजी, टानिया कितना अच्छा गाती-बजाती है और तुम कहाँ थे ?

निकोलस : गाँव में *(अफनासी का प्रवेश)*

स्त्यूपा : दूसरा सामवार लाओ।

निकोलस : *(नौकर को सलाम करके उससे हाथ मिलाता है)* नमस्कार।

(नौकर गड़बड़ा जाता है। प्रस्थान। निकोलस भी जाता है।)

स्त्यूपा : गरीब अफनासी! वह कितना गड़बड़ा गया था; पिताजी की बातें मेरी समझ में नहीं आतीं, इससे तो ऐसा मालूम होता है मानो हमने कोई जुर्म किया है।

(निकोलस का प्रवेश)

निकोलस : मैं अपने दिल की बात कहे बिना ही अपने कमरे को वापस जा रहा था। *(टानिया से)* तुम हमारे मेहमान हो, अगर मेरा कहना तुम्हें नागवार गुजरे तो मुझे माफ करना। लिसा, तुम कहती हो कि टानिया बहुत अच्छा गाती-बजाती है। तुम सात-आठ नौजवान-तंदुरूस्त औरत और मर्द दस बजे तक पड़े सोते रहे। उसके बाद उठकर खाया पिया और अब भी खा रहे हो। तुम सब मिलकर यहाँ गाते-बजाते और आपस में गाने के संबंध में बातचीत करते हो, और वहाँ, जहाँ से कि मैं आ रहा हूँ, गाँव के सब लोग सवेरे तीन बजे से उठ बैठे और जो लोग कोल्हू चलाते हैं वह तो बिल्कुल सोये ही नहीं। बूढ़े और जवान, रोगी दुर्बल, बच्चे और दूध पिलानेवाली माताएँ और गर्भवती स्त्रियाँ अपनी-अपनी शक्ति-भर मेहनत करती हैं और वह सिर्फ इसलिए कि हम लोग उनकी मेहनत से लाभ उठाकर मौज उड़ाया करें। इतना ही नहीं, अभी इसी वक्त उनमें से

एक आदमी जो अपने कुटुंब में अकेला ही कमानेवाला है, जेल में डाल दिया गया है; क्योंकि उसने एक शीशम का पेड़ हमारे जंगल से काट लिया है। हम लोग यहाँ सजधज कर आराम से बैठे हुए हैं और बहस कर रहे हैं कि कबीर के गीत अधिक प्रभावशाली हैं या मीराबाई के। यही मेरे दिल में विचार थे सो मैंने प्रकट कर दिए। तुम लोग जरा सोचो तो सही, कि क्या इस तरह जिंदगी बिताना ठीक और मुनासिब है?

लिसा : सच, बिल्कुल सच है।

ल्यूबा : मगर इन बातों का खयाल किया जाए तब तो फिर जीना ही दूभर हो जाए।

स्ट्यूपा : मगर मेरी समझ में नहीं आता कि कुछ लोग गरीब हैं इसीलिए हम लोग गाना क्यों न गाएँ? दोनों में पारस्परिक विरोध तो नहीं है। मगर...

निकोलस : *(क्रोध से)* अगर कोई निर्दयी है, अगर कोई पत्थर का बना है।...

स्ट्यूपा : अच्छी बात है, मैं नहीं बोलूँगा।

टानिया : यह बहुत ही कठिन प्रश्न है, यह हमारे जमाने की समस्या है और हमें उससे डरना नहीं चाहिए, बल्कि उसे हल करने की कोशिश करनी चाहिए।

निकोलस : हम लोग चुपचाप बैठकर इस बात का इंतजार नहीं कर सकते कि एक ऐसा वक्त आयगा कि जब खुद-ब-खुब यह मुश्किल हल हो जाएगी। हरेक आदमी को मरना है, आज, नहीं तो कल। एक-न-एक दिन सभी को ईश्वर के समक्ष अपने कर्मों का जवाब देना है। ऐसी हालत में मैं किस तरह इन सब बातों की देखते हुए अपनी आत्मा की आवाज को दबाकर चुपचाप मौज और मजे से योंही अपना जीवन बिताता रहूँ?

बोरिस : सच है, इस मुश्किल को हल करने का एक ही रास्ता है; और वह यह कि हम इन बातों में बिल्कुल ही भाग न लें।

निकोलस : अगर तुम्हें बुरा लगा हो तो मुझे माफ करना, मुझसे कहे बिना रहा नहीं गया।

(प्रस्थान)

स्ट्यूपा : इसमें भाग न लें? मगर हमारा समस्त जीवन इन्हीं बातों से बँधा हुआ है।

बोरिस : इसीलिए तो वह कहते हैं कि सबसे पहला काम यह होना चाहिए कि हम लोग कोई जायदाद ही न रखें, और अपने जीवन की गति को इस तरह बदल डालें कि हम दूसरों से अपनी सेवा न कराएँ, बल्कि खुद दूसरों की सेवा किया करें।

टानिया : अच्छा, तुम भी निकोलस की-सी बातें करने लगे हो!

बोरिस : हाँ, गाँव में जाकर अपनी आँखों से देखने के बाद, मैं सब-कुछ समझ गया। बेचारे गरीब किसानों और दीन-दरिद्र मजदूरों की मुसीबतों और हम लोगों की आरामतलबी और ऐशो-अशरत में क्या संबंध है, इस बात को जानना हो तो बस इतना काफी है कि हम अपनी आँखों से रंगीन चश्मा उतारकर एक बार सहृदयता के साथ आँखें खोलकर उनकी हीन, निस्सहाय और निर्जीव दशा को देखें और फिर अपनी निर्लज्ज निर्दय ऐयाशियों पर भी एक बार दृष्टिपात करें।

मित्रोफन : मगर उनकी मुसीबतों का इलाज यह नहीं है कि हम अपनी जिंदगी यों बरबाद कर दें।

स्ट्यूपा : ताजुब है कि मिट्रोफन और मेरा मत इस संबंध में एक ही है, यद्यपि हम दोनों के विचारों में जमीन और आसमान का फर्क है।

बोरिस : यह बिल्कुल ही स्वाभाविक है। तुम दोनों आराम के साथ अपनी जिंदगी गुजारना चाहते हो। *(स्ट्यूपा से)* इसलिए तुम वर्तमान स्थिति को बनाए रखना चाहते हो और मिट्रोफन एक नई प्रथा चलाना चाहते हैं।

(ल्यूबा और टानिया आपस में काना-फूसी करते हैं, टानिया पियानो के पास जाकर कबीर का एक गीत गाती है और खामोश है।)

स्ट्यूपा : बहुत अच्छा है, वह यहीं सब बातों को हल कर देता है।

बोरिस : इससे हल कुछ भी नहीं होता; बल्कि यह उसको और भी अस्पष्ट बनाकर अनिश्चित रूप में छोड़ देता है।

(टानिया गाती है; मेरी और शाहजादी चुपचाप आकर बैठ जाती हैं और गाना सुनती हैं। गीत खत्म होने से पहले गाड़ी की घंटियाँ सुनाई पड़ती हैं)

ल्यूबा : मौसीजी आ गईं। *(उससे मिलने जाती है)*

(गाना जारी है, अलेक्जेंडरा का प्रवेश, उसके साथ बाबा जिरैसियन, एक पुरोहित, जिसकी गर्दन में क्रास लटक रहा है और एक मुहर्रिर वकील है। सब उठ खड़े होते हैं।)

फादर जिरैसियन : आप गाइए, यह तो बहुत ही अच्छा है।

(शाहजादी और युवक पुरोहित आशीर्वाद लेने के लिए उसके पास जाते हैं।)

अलेक्जेंडरा : मैंने जैसा कहा था वैसा ही किया; मैं फादर जिरैसियन से जाकर मिली और उनसे प्रार्थना करके उन्हें यहाँ ले आई हूँ—बस मैंने अपना काम पूरा कर दिया। यह देखो, मुहर्रिर भी मौजूद है। उसने दस्तावेज तैयार कर लिया है, सिर्फ दस्तखत करने की जरूरत है।

मेरी : आप कुछ नाश्ता तो कीजिए।

(मुहर्रिर कागजों को मेज पर रखकर बाहर जाता है)

मेरी : मैं फादर जिरैसियन की बहुत ही कृतज्ञ हूँ।

फादर जिरैसियन : भला मैं क्या कर सकता था–यद्यपि मुझे दूसरी जगह जाना था; फिर भी ईसाई होने की हैसियत से मैंने यह अपना कर्तव्य समझा कि मैं उनसे मिलूँ।

(अलेक्जेंडरा उन नौजवानों से कानाफूसी करती है, वे एक दूसरे की राय लेते हैं और बोरिस के सिवा बाकी सब बरामदे में चले जाते हैं। नवयुवक पुरोहित भी जाना चाहता है।)

फादर जि० : नहीं, आपको पुरोहित और धार्मिक गुरु होने की हैसियत से यहाँ ठहरना चाहिए। आप खुद उससे लाभ उठाकर दूसरों को लाभ पहुँचा सकते हैं। अगर मेरी को कुछ आपत्ति न हो तो आप जरा ठहरिए।

मेरी : नहीं, मैं फादर वासिली को अपने घर का-सा समझती हूँ। मैंने उनसे इस बारें में सलाह भी ली थी। मगर कम उम्र होने की वजह से उनकी बात प्रमाण नहीं हो सकती।

फादर जि० : बेशक, बेशक।

अलेक्जेंडरा : *(पास आकर)* फादर जिरैसियन! आप ही मेरी नजर में एक ऐसे आदमी हैं, जो निकोलस को समझा-बुझाकर सीधे रास्ते पर ला सकते हैं। वह बहुत ही पढ़ा-लिखा और होशियार आदमी है; लेकिन आप जानते हैं कि एक तरह की विद्वत्ता से सिर्फ हानि पहुँचती है। वह एक तरह से भ्रम में पड़ा हुआ है। उसका विचार है कि ईसाई धर्म इस बात को मान्य करता है कि कोई आदमी निजी जायदाद न रखे—लेकिन यह भला किस तरह मुमकिन हो सकता है।

फादर जि० : यह सबकुछ नहीं, बड़ा कहलाने का लोभ, आत्मश्लाघा और अहम्मन्यता है। गिरजा के महंतों ने इस बात का संतोषजनक निर्णय कर दिया है। पर यह सब उसके मन में समाया कैसे?

मेरी : अरे साहब न पूछिए। जब हमारी शादी हुई तब धर्म-कर्म की तरफ उनका कोई खयाल न था और हम शुरू के बीस बरसों तक बड़े सुख-चैन से रहे। बाद को उनके मन में कुछ विचार आने लगे। या तो उनकी बहन के विचारों का प्रभाव उन पर पड़ा हो या शायद पुस्तकों का। जैसे भी हो, उनके मन में बहुत उथल-पुथल होने लगा और उन्होंने बाइबिल पढ़ना शुरू किया। एकाएक उनके अंदर धर्म का अंकुर जाग उठा—वे अपने जीवन को अत्यंत धार्मिक बनाने लगे। गिरजा जाने लगे और साधु-संतों से धर्म-चर्चा करने लगे। फिर एकाएक उन्होंने यह सब बंद कर दिया और अपने जीवन-क्रम को बिल्कुल ही बदल डाला। अपना काम हाथ से करने लगे—नौकरों को अपना काम करने से मना कर दिया और नौबत यहाँ तक आई कि अब तो वे अपनी जायदाद भी छोड़ रहे हैं। कल उन्होंने एक जंगल दे डाला—पेड़ और जमीन दोनों। यह सब देखकर मेरी तो रूह काँप उठती है; क्योंकि मेरे छह-सात बच्चे हैं। मेहरबानी करके उन्हें कुछ जरूर समझाइए। मैं जाकर पूछती हूँ कि वे आपसे मिलेंगे या नहीं।

(प्रस्थान)

फादर जि० : आजकल बहुत लोग इसी तरह अंट-शंट कर रहें हैं। और यह तो बताओ, जायदाद किसकी है, उसकी या उसकी बीबी की?

शाहजादी : उसकी है! यही तो मुसीबत है।

फादर जि० : और उसका ओहदा क्या है?

शाहजादी : कोई बहुत ऊँचा पद नहीं है। मेरा खयाल है, घुड़सेना का कप्तान है। फौज में भी रह चुका है।

फादर जि० : आजकल बहुत-से लोग इसी तरह बहक रहे हैं। मास्को में एक महिला थी, उसपर आध्यात्मिकता की धुन सवार हो गई और वह बड़ा नुकसान पहुँचाने लगी। आखिर बड़ी मुश्किल से हम उसे रास्ते पर लाए।

शाहजादी : खास बात आपके समझ लेने की यह है कि मेरा लड़का उसकी लड़की से ब्याह करनेवाला है। मैंने अपनी सम्मति दे दी है।

लड़की को मौज-शौक से रहने की आदत पड़ी हुई है और मैं नहीं चाहती कि मेरे लड़के को ही उसकी सारी जरूरतें पूरा रखने का बोझ अपने सिर लेना पड़े। मैं यह मानती हूँ कि वह मेहनती है और नवयुवकों में अपने ढंग का एक ही है।

(मेरी और निकोलस का प्रवेश)

निकोलस : कहिए शाहजादी साहबा, आपका मिजाज कैसा है? और आपका मिजाज शरीफ? *(फादर जिरैसियन से)* माफ कीजिए, मुझे आपका नाम मालूम नहीं है।[1]

फादर जि० : क्या तुम मेरा आशीर्वाद लेना नहीं चाहते?

निकोलस : जी, नहीं।

फादर जि० : मेरा नाम है जिरैसियन सिडोरोंलिच, आपसे मिलकर मुझे बड़ी खुशी हुई।

(नौकर लोग नाश्ते का सामान लाते हैं।)

फादर जि० : यह मौसम बहुत ही सुहावना और फसल के लिए अच्छा है।

निकोलस : मैं समझता हूँ कि आप मेरी भूल बतलाकर मुझे सन्मार्ग पर लाने के लिए ही अलेक्जेंडरा के बुलाने से यहाँ आए हैं। अगर यह सच है, तो आप इधर-उधर की बातें छोड़कर अपना काम शुरू कीजिए। मैं इस बात से इनकार नहीं करता कि मैं गिरजा की शिक्षा को नहीं मानता। किसी जमाने में, गिरजा की शिक्षा को मानता था। मगर उसके बाद से ऐसा करना छोड़ दिया। लेकिन मैं तहेदिल से सच्चाई को पाने की कोशिश करता हूँ और अगर आप सच्चाई मुझे दिखला देंगे तो मैं फौरन् बड़ी खुशी के साथ उसे कबूल कर लूँगा।

फादर जि० : यह भला तुम कैसे कहते हो कि तुम गिरजा की शिक्षा पर विश्वास नहीं रखते? अगर गिरजा नहीं तो फिर दूसरी कौन-सी चीज विश्वास करने के लिए है।

निकोलस : ईश्वर और बाइबिल में लिखा हुआ उसका कानून।

फादर जि० : गिरजा उसी कानून की तो तालीम देता है।

---

1. वह जानता है कि पुरोहित फादर जिरैसियन हैं। परंतु वह उन्हें पुरोहित समझकर बात नहीं करना चाहता, बल्कि उनका असली नाम लेकर करना चाहता है—जैसाकि आदमी दूसरे से आम तौर पर बात करता है।

निकोलस : अगर ऐसा होता तो मैं गिरजा में विश्वास रखता, लेकिन दुर्भाग्य से वह इसके विरुद्ध शिक्षा देता है।

फादर जि० : गिरजा विरुद्ध शिक्षा नहीं दे सकता; क्योंकि स्वयं ईसा-मसीह ने उसकी स्थापना की है।

निकोलस : अगर यह भी मान लें कि ईसा-मसीह ने गिरजा को स्थापित किया तब यह कैसे मालूम हो कि वह 'आप ही' का गिरजा है।

फादर जि० : भला गिरजा से कोई इनकार कर ही कैसे सकता है ? वही तो एक-मात्र मुक्ति का द्वार है।

निकोलस : यह तो मैं आपसे कह ही चुका हूँ कि मैं इस बात को स्वीकार नहीं करता। उसे इसलिए स्वीकार नहीं करता, क्योंकि मुझे मालूम हो गया है कि गिरजा कसम खाना, हत्या करना, और फाँसी देना जायज समझता है।

फादर जि० : ईश्वर ने जो अधिकार दिए हैं, गिरजा उनको पाक और जायज करार देता है।

(बातचीत के वक्त, स्त्यूपा, ल्यूबा, लिसा और टानिया एक-एक करके आते हैं और बैठकर या खड़े होकर उनकी बातें सुनने लगते हैं।)

निकोलस : मैं जानता हूँ कि बाइबिल सिर्फ यही नहीं कहती है कि "मारो मत" बल्कि उसका उपदेश है कि 'क्रोध मत करो।' फिर भी गिरजा फौज को जायज मानता है। बाइबिल कहती है "कभी कसम मत खाओ" मगर फिर भी गिरजा कसम खिलाता है, बाइबिल कहती है...

फादर जि० : माफ कीजिएगा, एक बार खुद ईसा-मसीह ने पाइलेट की कसम को स्वीकार किया था।

निकोलस : अरे गजब ! आप क्या कह रहे हैं। यह तो बिल्कुल ही असंगत और असंभव है।

फादर जि० : इसीलिए तो गिरजा हर किसी को गास्पल की व्याख्या करने की आज्ञा नहीं देता है कि लोग कहीं बहक न जाएँ; बल्कि खुद बच्चे की खबरगिरी करनेवाली माँ की तरह बच्चों की शक्ति के अनुसार गास्पल की व्याख्या करता है ! नहीं, ठहरिए, मुझे कह लेने दीजिए। गिरजा अपने बच्चों पर इतना भारी बोझ नहीं रखता है कि जिसे वह सँभाल न सकें और सिर्फ यही चाहता है कि वह लोग इन आज्ञाओं

का पालन करें : प्रेम करो, हत्या न करो, चोरी मत करो, व्यभिचारी मत बनो।

निकोलस : हाँ! मुझे मत मारो, मैंने जो चीज दूसरों से चुराकर जमा की है उसे मेरे पास से मत चुराओ। हमने दूसरों को लूटा है, उनकी जमीन जबरदस्ती चुरा ली है और उसके बाद यह कानून बना दिया है कि फिर कोई न चुराए, और गिरजा इन सब बातों को मंजूर करता है।

फादर जि० : कुफ्र और आध्यात्मिक अभिमान तुम्हारी वाणी द्वारा बोल रहे हैं। तुम्हें अपने इस पाण्डित्याभिमान को वश में रखना चाहिए।

निकोलस : यह गर्व या अभिमान नहीं है। मैं सिर्फ आपसे यह पूछता हूँ कि जब मुझे इस बात का ज्ञान हो गया है कि मैं लोगों को लूटने और जमीन के द्वारा उन्हें गुलामी में फँसाने का पाप कर रहा हूँ तब, ऐसी दशा में, मुझे क्या करना चाहिए? क्या मैं जमीन को अपने अधिकार में रखकर भूखों मरनेवाले लोगों के परिश्रम से लाभ उठाता रहूँ या मैं यह जमीन उन लोगों को वापस दे दूँ कि जिनसे मेरे बुजुर्गों ने उसे किसी तरह से चुराया या छीन लिया था।

फादर जि० : तुमको वही करना चाहिए जो गिरजा के भक्त के उपयुक्त है। तुम्हारे कुटुंब-परिवार है, बाल-बच्चे हैं, तुम्हें उनकी हैसियत के मुताबिक उनका भरण-पोषण और उनकी शिक्षा का प्रबंध करना चाहिए।

निकोलस : क्यों?

फादर जि० : क्योंकि ईश्वर ने तुम्हें उस स्थिति में रखा है। अगर तुम दानी और उदार बनना चाहते हो तो तुम अपनी जायदाद का कुछ हिस्सा दान देकर और गरीब लोगों की सहायता करके अपनी उदारता को विकसित कर सकते हो।

निकोलस : लेकिन फिर हजरत ईसा ने उस नौजवान अमीरजादे से यह क्यों कर कहा था कि अमीर लोग स्वर्ग नहीं जा सकते। "अमीर आदमी के स्वर्ग में जाने की बनिस्बत कहीं ज्यादा आसान है कि ऊँट सुई के नकुए में से होकर निकल जाए।"

फादर जि० : यह कहा है "अगर तू पूर्णता प्राप्त करना चाहता है।"

निकोलस : मगर मैं तो पूर्णता प्राप्त करना चाहता हूँ। बाइबिल कहती है, "अपने स्वर्गस्थ पिता की भाँति पूर्ण बनो।"

फादर जि० : मगर हमें यह भी तो देखना चाहिए कि किस संबंध में यह बात

कही गई है।

निकोलस : मैं यह समझने की कोशिश करता हूँ और "पर्वत पर उपदेश" में जो कुछ कहा गया है वह बिल्कुल स्पष्ट, बुद्धि-गम्य है।

फादर जि० : यह आध्यात्मिक अभिमान है।

निकोलस : अभिमान कैसा ? जबकि यह कहा है कि जो बात बुद्धिमानों से गुप्त है वह बच्चों के लिए प्रकट की है।

फादर जि० : नम्र लोगों पर प्रकट और व्यक्त है न कि घमंडियों के लिए।

निकोलस : लेकिन घमंड किसे है ? मैं अपने को मानव-जाति का एक साधारण मनुष्य समझता हूँ और इसीलिए विश्वास करता हूँ कि मुझे भी दूसरे भाइयों की तरह मेहनत करके गरीब और सादगी से जीवन-निर्वाह करना चाहिए। कहिए, मैं घमंडी हूँ या वे जो अपने को विशेष रूप से पवित्र समझते हैं, अपने को सर्वथा भ्रम-रहित और सारी सच्चाई का ठेकेदार समझते हैं, और जो ईसा-मसीह के शब्दों का मनमाना अर्थ लगाते हैं।

फादर जि० : *(क्षुब्ध होकर)* माफ कीजिएगा, निकोलससाहब, मैं आपसे इस बात की बहस करने नहीं आया था कि हममें कौन ठीक है, और न आप से भर्त्सना-पूर्ण शिक्षा लेने आया था। मैं तो अलेक्जेंडरा के बुलाने से आपके साथ बात-चीत करने चला आया। लेकिन चूँकि तुम हरेक बात मुझसे ज्यादा अच्छी तरह जानते हो इसीलिए यही अच्छा है कि हम बातचीत बंद कर दें। बस, एक बार और मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि ईश्वर के लिए तुम होश सम्हालो। तुम बे-तरह बहक गए हो और अपने को बरबाद कर रहे हो।

(उठता है)

मेरी : क्या आप कुछ नाश्ता नहीं करेंगे ?

फादर जि० : नहीं, मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

(अलेक्जेंडरा के साथ प्रस्थान)

मेरी : *(नवयुवक पुरोहित से)* कहिए, आप क्या कहते हैं ?

पुरोहित : मेरी राय में निकोलस साहब का कहना सत्य था और फादर जिरैसियन ने अपने पक्ष में कोई प्रमाण नहीं दिया।

शाहजादी : उन्हें बोलने ही नहीं दिया और उन्होंने सबके सामने इस प्रकार बहस करना पसंद नहीं किया। उन्होंने शिष्टता के विचार से बहस बंद कर दी।

बोरिस : यह किसी प्रकार की शिष्टता या नम्रता नहीं थी। यह स्पष्ट है कि उनके पास कुछ कहने को था ही नहीं।

शाहजादी : हाँ, तुम अपनी स्वाभाविक अस्थिरता के कारण हर बात में निकोलस से सहमत होने लगे हो। यदि तुम्हें ऐसी बातों पर विश्वास है तो तुम्हें शादी नहीं करनी चाहिए।

बोरिस : मैं तो केवल यही कहता हूँ कि सच्चाई सदा सच्चाई है और मैं उसे बिना कहे नहीं रह सकता।

शाहजादी : कोई कुछ कहे, मगर तुमको तो ऐसी बातें नहीं करनी चाहिए।

बोरिस : सो क्यों।

शाहजादी : क्योंकि तुम गरीब हो और तुम्हारे पास दे डालने को कुछ भी नहीं है। लेकिन, हमें इन बातों से क्या मतलब?

(जाती है। पीछे-पीछे मेरी और निकोलस के सिवा सब बाहर जाते हैं)

निकोलस : *(बैठा हुआ विचार करता है, फिर अपने ही आप मुसकराता है।)* मेरी! यह सब तुम क्या करती हो? तुमने उस बदबख्त गुमराह आदमी को क्यों बुला भेजा? यह शोर मचानेवाली औरत और पुरोहित हमारी अत्यंत आंतरिक जीवन में क्यों दखल देते हैं? क्या हम लोग खुद अपने मामलों को तय नहीं कर सकते?

मेरी : मगर तुम बच्चों को भिखारी बना देना चाहते हो तो मैं क्या करूँ? इसको तो मैं चुपचाप सहन नहीं कर सकती। तुम्हें मालूम है कि तुम्हारी बातें मेरी समझ में नहीं आती और तुम यह भी जानते हो कि मैं अपने लिए कुछ भी नहीं चाहती।

निकोलस : जानता हूँ। मैं यह जानता और विश्वास करता हूँ। मगर दुर्भाग्य तो यह है कि तुम सत्य पर विश्वास नहीं करती। मुझे विश्वास है कि तुम सत्य को देखती हो, मगर अपने मन को उसपर विश्वास करने के लिए तैयार नहीं कर पातीं। तुम न तो सत्य पर विश्वास करती हो, न मुझ पर। तुम विश्वास करती हो भीड़ पर, शाहजादी का और उसी के—जैसे दूसरे लोगों का।

मेरी : मैं तुममें विश्वास रखती हूँ, सदा से रखती हूँ, मगर जब तुम बच्चों को भिखारी बनाना चाहते हो।

निकोलस : इसके मानी हैं कि तुम मुझ पर विश्वास नहीं करतीं। क्या तुम समझती हो कि मेरे भी दिल में इस तरह द्वंद्वयुद्ध और शंकाओं का

तूफान नहीं उठा था? मेरे दिल में भी इसी तरह की आशंकाएँ पैदा हुईं, मगर बाद को मुझे पूर्ण निश्चय हो गया कि यह मार्ग संभव ही नहीं, वरन् नितांत आवश्यक है और इस मार्ग का अनुसरण स्वयं बच्चों के लिए भी आवश्यक और उपयोगी है। तुम हमेशा कहा करती हो कि अगर बच्चों का खयाल न होता तो तुम खुशी से मेरे कहने के मुताबिक काम करती, मगर मैं कहता हूँ कि अगर हमारे पास संपत्ति न होती तो हम लोग इसी लापरवाही से जिंदगी बिता देते, जैसे अब तक हम अपनी जिंदगी बसर करते थे, क्योंकि उस हालत में तो हम सिर्फ अपने ही आपको नुकसान पहुँचाते, मगर अब तो हम बच्चों को भी हानि पहुँचा रहे हैं।

मेरी : मगर मैं क्या करूँ? जबकि तुम्हारी बातें मेरी समझ में नहीं आतीं।

निकोलस : मैं ही क्या करूँ? क्या मैं यह नहीं जानता कि वह बदबख्त मनुष्य क्यों बुलाया गया था? और अलेक्जेंडरा उस मुहर्रिर को बुलाकर क्यों लाई? तुम चाहती हो कि मैं जायदाद तुम्हें दे दूँ, लेकिन मैं नहीं दे सकता। तुम जानती हो कि मैं तुम्हें बीस साल से, जब से हम साथ रहते आए हैं, प्यार करता हूँ। मैं तुम्हें प्यार करता हूँ और तुम्हारा भला चाहता हूँ इसीलिए जायदाद तुम्हारे नाम नहीं कर सकता। यदि मैं दूँ ही, तो उन किसानों को ही जिनसे मैंने ली है। अच्छा है, मुहर्रिर आ ही गया है, सब काम अभी हो जाएगा।

मेरी : नहीं यह भयानक है। यह निष्ठुरता किसलिए? यद्यपि तुम इसे पाप समझते हो, फिर भी अपनी जायदाद मेरे हवाले कर दो।

(रोती है)

निकोलस : तुम नहीं जानतीं कि तुम क्या कह रही हो? यदि अपनी जायदाद तुम्हें दे दूँ तो मैं तुम्हारे साथ नहीं रह सकता। मुझे चला जाना पड़ेगा। किसानों का खून, मेरे नहीं तो तुम्हारे नाम पर चूसा जाएगा और वे जेल भेजे जाएँगे। मैं यह देख नहीं सकता। तुम क्या पसंद करती हो?

मेरी : तुम कितने निठुर हो? क्या यही ईसाई-धर्म है? यह कठोरता है। जिस तरह तुम मुझे रखना चाहते हो मैं उस तरह नहीं रह सकती। मैं अपने बच्चों से छीनकर सारी जायदाद दूसरों को नहीं लुटा सकती, इसीलिए तुम मुझे छोड़ देना चाहते हो। अच्छा वही करो। मैं देखती हूँ कि तुमने मुझे प्यार करना छोड़ दिया, और यह भी

जानती हूँ कि क्यों?

निकोलस : अच्छी बात है—मैं हस्ताक्षर किए देता हूँ, मगर तुम मुझसे असंभव बात करा रही हो *(मेज के पास जाकर सही कर देता है।)* तुमने जो चाहा, मैंने कर दिया, मगर मैं इस तरह अपनी जिंदगी नहीं बिता सकता।

तीसरा अंक

पहला दृश्य

(एक बड़े कमरे में बढ़ईगीरी का सामान रखा हुआ है, एक मेज पर कुछ कागजात हैं, किताबों की एक अल्मारी है, दीवार से तख्ते टिके हुए हैं, एक बढ़ई और निकोलस बढ़ईगिरी का काम कर रहे हैं।)

निकोलस : *(एक तख्ते को रंदते हुए)* यह ठीक है न?

बढ़ई : *(रंदा हाथ में लेकर)* नहीं, इसमें खुरदरापन है, रंदे को इस तरह मजबूती से पकड़िए।

निकोलस : मजबूती से पकड़ो, यह कह देना तो आसान है। मगर मुझसे फिर यह चलता नहीं।

बढ़ई : लेकिन हुजूर, बढ़ई का काम सीखने का कष्ट क्यों उठाते हैं? आजकल योंही इतने बढ़ई बढ़ गए हैं कि हमें पेट भरना मुश्किल हो गया है।

निकोलस : *(फिर काम करता है।)* मुझे निकम्मा जीवन बिताते लज्जा आती है।

बढ़ई : आपकी हैसियत ही ऐसी है। ईश्वर ने आपको जायदाद दी है।

निकोलस : यही तो भूल है। मैं इस बात को नहीं मानता कि वह जायदाद ईश्वर की दी हुई है। मेरा खयाल है कि हमने उसे ले लिया है और अपने ही भाइयों से लिया है।

बढ़ई : *(आश्चर्य से)* यह बात है। लेकिन फिर भी आपको यह काम करने की जरूरत नहीं है।

निकोलस : मैं समझता हूँ कि तुम्हें ताज्जुब मालूम होता है कि मैं एक ऐसे घर में रहकर, जो गैर-जरूरी चीजों से भरा हुआ है, मेहनत-मजदूरी करके कुछ कमाना चाहता हूं।

बढ़ई : *(हँसकर)* नहीं; सब कोई जानता है कि भले घराने के लोग

हरफन-मौला बनना चाहते हैं। हाँ, अब जरा रंदे को तेजी से चलाइए।

निकोलस : तुम मेरी बात का विश्वास नहीं करते और हँसते हो; मगर फिर भी मैं कहता हूँ कि पहले इस तरह की जिंदगी से मुझे शर्म नहीं लगती थी, अब, चूँकि मैं ईसा की शिक्षा पर विश्वास रखता हूँ, मुझे अपने निकम्मे जीवन पर लज्जा आती है; क्योंकि उनका उपदेश है कि हम सब मनुष्य आपस में भाई-भाई हैं।

बढ़ई : अगर आपको उससे शर्म लगती है तो अपनी जायदाद दूसरों को दे डालिए।

निकोलस : मैं करना तो यही चाहता था, मगर कर न सका। मैं वह जायदाद अपनी स्त्री को दे बैठा।

बढ़ई : मगर बहर-हाल आपको ऐसा करना मुमकिन नहीं, क्योंकि आप आराम के आदी हैं।

(दरवाजे के बाहर से आवाज) पिताजी, क्या मैं अंदर आ सकती हूँ?

निकोलस : आओ बेटी, तुम जब चाहो आ सकती हो।

(ल्यूबा का प्रवेश)

ल्यूबा : बंदगी, जैकब।

बढ़ई : बंदगी अर्ज है, साहबजादी!

ल्यूबा : बोरिस अपनी पलटन को गए हैं। मालूम नहीं, वह वहाँ क्या कहें या कर बैठें? मुझे तो बड़ा भय लगता है। आप क्या कहते हैं?

निकोलस : मैं भला क्या बताऊँ! वह जो मुनासिब समझता है वही करेगा।

ल्यूबा : यह बड़े दुःख की बात है। उन्हें थोड़े ही दिन नौकरी करनी होगी। मगर डर है कि वहाँ जाकर वह अपने समस्त जीवन को बरबाद न करवा लें।

निकोलस : उसने यह अच्छा ही किया कि वह मुझसे मिलने नहीं आया। वह जानता है कि मैं उसे सच्ची बात के सिवाय और कुछ नहीं कह सकता कि जिसे वह खुद जानता है। उसने मुझसे कहा था कि उसके इस्तीफे देने का केवल यही कारण नहीं है कि उसकी दृष्टि में इससे बढ़कर नीति-भ्रष्ट नियम-रहित, क्रूर और हिंसक वृत्ति कोई और नहीं है; क्योंकि उसका उद्देश्य ही हत्या करना है; वरन् इस बात को भी भ्रष्टता और नीचता की पराकाष्ठा समझता है कि एक आदमी अपने अफसर की आज्ञा को चुपचाप, बिना चूंचपड़

किए मानने को बाधित किया जाता है-फिर वह आज्ञा कितनी ही कठोर, कितनी ही निर्दय अथवा आत्मा, बुद्धि और विवेक-विरुद्ध ही क्यों न हो। बोरिस इन सब बातों को जानता है।

ल्यूबा : मुझे यही तो डर है। वह इन बातों को जानते हैं। कहीं कुछ कर न बैंठें।

निकोलस : उसकी आत्मा और आत्मा में रहनेवाला परमात्मा उसका फैसला करेगा। अगर बोरिस मेरे पास आता तो मैं उसे सिर्फ एक सलाह देता। मैं बस यही कहता कि कोई ऐसा काम-मत करो, जिसमें केवल बुद्धि की ही प्रेरणा हो। इससे बढ़कर बुरी बात कोई नहीं है—बस उसी वक्त किसी महत्त्व के काम में हाथ डालो जब तुम्हारा मन, तुम्हारी आत्मा प्राण-पण से उस काम में लग जाने के लिए प्रेरित करे। मिसाल के तौर पर, मुझे ही लो। मैं ईसा-मसीह के उपदेश का स्मरण करने के लिए माता-पिता, स्त्री और बच्चों को छोड़ देना चाहता था। मैंने घर छोड़ भी दिया, किंतु उसका परिणाम क्या हुआ? मैं वापस आकर शहर में तुम लोगों के साथ ऐशो-आराम से रहने लगा। मेरी इस निरर्थक और लज्जा-जनक स्थिति का कारण यही है कि मैं अपनी शक्ति से बाहर का काम करना चाहता था। मैं सादगी के साथ रहकर और अपने हाथ से मेहनत करके खाना चाहता हूँ; किंतु इस परिस्थिति में, जहाँ नौकर और दरवान हैं, किसी तरह की मेहनत-मजदूरी करना एक तरह की बनावट और दिखावा मालूम होता है। देखो न, अभी तक जैकब मुझ पर हंस रहा है।

बढ़ई : मैं क्या हँसूँगा? आप मुझे वेतन देते हैं और पीने के लिए चाय देते हैं, मैं आपका कृतज्ञ हूँ।

ल्यूबा : मैं समझती हूँ, शायद यह अच्छा होगा कि मैं उनके पास हो आऊँ।

निकोलस : मेरी बेटी, मेरी प्यारी बच्ची, मुझे मालूम है कि तुम्हें यह देखकर बड़ा कष्ट और भय होता है, हालांकि ऐसा होना नहीं चाहिए। तुम डरो मत। ईश्वर सब भला करेगा। जो बात जाहिरा बुरी मालूम होती है, हकीकत में वही ज्यादा खुशी देती है। तुम्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जो मनुष्य इस मार्ग पर चलता है उसे दो बातों में से एक बात पसंद करनी होती है, और कभी-कभी ऐसा होता है कि ईश्वर और शैतान का पक्ष बिल्कुल एक समान होता है, दोनों

पलड़े एक-बराबर तुले रहते हैं, और ऐसे ही समय पर मनुष्य को महत्त्वपूर्ण निश्चय करना पड़ता है। उस वक्त, किसी तरह का बाहरी हस्तक्षेप अत्यंत भयावह और कष्ट-प्रद होता है। इस वक्त उसकी हालत ऐसी ही है, जैसे कोई आदमी किसी तंग पगडंडी पर एक भारी बोझ ले जाने की कोशिश कर रहा हो और उसकी हालत ऐसी नाजुक हो कि अगर कोई जरा भी छू दे तो वह मुँह के बल गिरकर हाथ-पैर तोड़ ले।

ल्यूबा : उसे इतना दु:ख उठाने की क्या जरूरत है?

निकोलस : यह बात ऐसी है, जैसे कोई कहे, माँ प्रसव-पीड़ा क्यों सहती है? प्रसव-पीड़ा के बिना संतानोत्पत्ति हो ही नही सकती और यही हाल आध्यात्मिक जीवन का है। मैं तुमसे एक बात कहता हूँ। बोरिस सच्चा ईसाई है, और इसीलिए वह स्वतंत्र है। अगर तुम खुद अभी उसकी तरह नहीं बन सकतीं, या उसकी तरह ईश्वर में विश्वास नहीं कर सकतीं तो उसके द्वारा ईश्वर में विश्वास करना सीखो।

मेरी : *(दरवाजे के पीछे)* क्या मैं अंदर आ सकती हूँ?

निकोलस : हाँ, तुम जब चाहो आ सकती हो, आज तो यहाँ मेरा खूब स्वागत हो रहा है।

मेरी : हमारे पुरोहित, वासिली महोदय, आए हैं। वह बिशप के पास जा रहे हैं और उन्होंने त्याग-पत्र दे दिया है।

निकोलस : असंभव है।

मेरी : वह यहीं हैं, ल्यूबा, जाओ, उन्हें बुला तो लाओ। वह तुमसे मिलना चाहते हैं। *(ल्यूबा का प्रस्थान)* मेरे आने का एक और कारण है। मैं तुमसे वानिया के विषय में बातचीत करना चाहती थी। उसके लक्षण कुछ अच्छे नहीं दिखाई पड़ते। वह अपना सबक भी याद नहीं करता। मुझे आशा नहीं कि वह इस साल पास हो। और जब मैं उससे कुछ कहती हूँ तो वह मेरे सिर चढ़ता है।

निकोलस : मेरी, तुम जानती हो कि मैं उस प्रकार के जीवन को पसंद नहीं करता जिस प्रकार तुम लोग अपना जीवन व्यतीत कर रहे हो। और न उस शिक्षा ही से मुझे सहानुभूति है, जो तुम बच्चों को दे रही हो। यह मेरे सामने एक भयंकर समस्या है कि क्या मैं बच्चों को इस तरह बरबाद होते हुए देखता रहूँ।

मेरी : तो तुम इसके सिवाय कोई दूसरी बात निश्चित रूप से बताओ। तुम क्या चाहते हो?

निकोलस : सो, मैं कुछ नहीं कह सकता। मगर मैं इतना जरूर कहूँगा कि सबसे पहले हमें इस निकृष्ट बनानेवाले सुखसंभोग से छुटकारा पाना चाहिए।

मेरी : ताकि वह लोग किसान बन जाएँ। यह तो मैं नहीं मान सकती।

निकोलस : तब फिर मुझसे कुछ मत पूछो। जो बातें तुम्हें बुरी मालूम होती हैं, जिनसे तुम्हें दुःख होता है वह बिल्कुल स्वाभाविक और अपरिहार्य हैं।

(पुरोहित और ल्यूबा का प्रवेश, पुरोहित और निकोलस मिलते हैं)

निकोलस : क्या यह सच है कि आपने उन सब बातों से हाथ धो लिया।

पुरोहित : हाँ, मुझसे अधिक नहीं सहा गया।

निकोलस : मुझे आशा नहीं थी कि यह बात इतनी जल्दी हो जाएगी।

पुरोहित : मगर वास्तव में मेरे लिए यह बिल्कुल असंभव हो गया था। इस पेशे के अंदर उदासीन होकर नहीं रह सकते। हमें लोगों की पाप-स्वीकृतियाँ *(Confessions)* सुननी पड़तीं, और मंत्र देने पड़ते हैं और जब एक बार इस बात का विश्वास हो गया कि यह सब असत्य है...

निकोलस : हाँ, तो अब आप क्या करेंगे?

पुरोहित : मैं अब बिशप के पास जाता हूँ, उसने जवाब-तलब किया है। मालूम होता है वह मुझे जिलावतन करके सालेवेट्स मठ में भेज देगा। पहले तो मैंने सोचा कि मैं आपसे कहीं बाहर भाग जाने के लिए मदद माँगूँ, मगर फिर मैंने सोचा कि इसमें कायरता प्रकट होगी। बस, मुझे अपनी पत्नी का खयाल है।

निकोलस : वह कहाँ हैं?

पुरोहित : वह अपने बाप के घर गई है। मेरी सास आई थी, वह मेरे बच्चे को अपने साथ ले गई। इससे मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैं चाहता हूँ।...

(ठहरता है, आंसू रोकने की कोशिश करता है।)

निकोलस : ईश्वर आपकी सहायता करें। क्या आप आज हमारे यहाँ ठहरेंगे?

शाहजादी : *(कमरे में दौड़ती आती है)* आखिर, वही हुआ। उसने नौकरी करने से इनकार कर दिया और वह गिरफ्तार कर लिया गया। मैं वहाँ गई थी, मगर मुझे अंदर नहीं जाने दिया। निकोलस, तुम्हें चलना पड़ेगा।

ल्यूबा : क्या उन्होंने इनकार किया है? आपको कैसे मालूम हुआ?

शाहजादी : मैं खुद वहाँ मौजूद थी। आंड्रीविच ने, जो कौंसिल का मेंबर है, मुझसे सारा हाल बयान किया। बोरिस ज्योंही अंदर गया उसने कह दिया कि न वह नौकरी करेगा और न हलफ उठाएगा, गर्जेकि उसने वह सारी बातें कहीं कि जो निकोलस ने सिखाई थीं।

निकोलस : शाहजादी! क्या यह बातें किसी को सिखाई जा सकती हैं?

शाहजादी : मुझे नहीं मालूम, मगर यह ईसाई-धर्म नहीं हो सकता। क्यों बाबा, आपकी क्या राय है?

पुरोहित : अब मैं पादरी नहीं रहा।

शाहजादी : लेकिन बात एक ही है...। हाँ, तुम उनसे सहमत हो। सो यह तुम्हारे लिए तो ठीक है। पर मैं सब बातें इस दशा में नहीं छोड़ सकती। यह कैसा बदबख्त ईसाई-धर्म है, जो लोगों को दुःख देकर तवाह और बरबाद करता है। मैं तुम्हारे इस ईसाई-धर्म से घृणा करती हूँ। यह चोचले तुम्हें भले ही अच्छे हों, क्योंकि तुम्हारा उनसे कुछ नहीं बिगड़ता। मगर मेरे तो एक ही लड़का है, और तुमने उसको बरबाद कर दिया।

निकोलस : शांत होओ, शाहजादी।

शाहजादी : हाँ, हाँ, तुम्हींने उसके जीवन को नष्ट किया है। तुमने उसे आफत में फँसाया, इसीलिए तुम्हींको उसकी रक्षा करनी होगी। जाओ और समझाओ कि वह इन सब वाहियात बातों को छोड़ दे। अमीरों के लिए यह सब ठीक हो सकता है, मगर हम लोगों के लिए नहीं।

ल्यूबा : *(रोती हुई)* पिताजी अब क्या होगा?

निकोलस : मैं जाता हूँ, शायद मैं कुछ कर सकूँ।

(चादर उतारता है)

शाहजादी : *(कोट पहनते हुए)* वह मुझे अंदर नहीं जाने देते, मगर अब हम दोनों साथ-साथ जाएँगे।

(प्रस्थान)

दूसरा दृश्य

(एक सरकारी दफ्तर। एक क्लर्क मेज के पास बैठा है और एक सिपाही इधर-से-उधर घूम रहा है। एक जनरल का अपने सेक्रेटरी के साथ प्रवेश। क्लर्क उठ खड़ा होता है; सिपाही फौजी सलाम करता है)।

जनरल : कर्नल कहाँ है ?

क्लर्क : हुजूर, वह उस नए सिपाही को देखने गए हैं, जो अभी भर्ती हुआ है।

जनरल : हाँ, ठीक है, जाओ, उन्हें यहीं बुला लाओ।

क्लर्क : बहुत अच्छा, हुजूर।

जनरल : और तुम क्या नकल कर रहे हो ? नए सिपाही का बयान है न ?

क्लर्क : जीहाँ, जनाब।

जनरल : लाओ, जरा मुझे दो।

(क्लर्क कागज जनरल के हाथ में देकर बाहर जाता है, जनरल अपने सेक्रेटरी को देता है)

जनरल : जरा उसे पढ़िये तो सही।

सेक्रेटरी : ''मुझसे तीन प्रश्न पूछे गए हैं कि *(1)* मैं कसम क्यों नहीं खाता ? *(2)* मैं सरकार की आज्ञाओं का पालन क्यों नहीं करता ? *(3)* किस वजह से मैंने ऐसे शब्द लिखे कि जो न केवल फौज का ही बल्कि उच्च पदाधिकारियों का भी विरोध और अपमान करते हैं। पहले प्रश्न का उत्तर यह है कि मैं ईसा-मसीह के उपदेश को मानता हूँ, जिसमें कसम खाने की साफ-साफ मनाई की गई है। देखिए मेथ्यू की गास्पल में परिच्छेद 5, पद 33-37 और जेम्स के एपिशेल में परिच्छेद 65, पद 12......

जनरल : नुकताचीनी करता है। अपना मन-माना अर्थ निकालता है।

सेक्रेटरी : *(पढ़ना जारी है)* ''गास्पल में लिखा है, कसम कभी मत खाओ, जो बात है उसके लिए बस 'हाँ', बोलो और जो नहीं है उसके लिए सिर्फ 'नहीं' कह दो, और इससे अधिक जो कुछ होता है वह बुरा है। सेंट जेम्स के एपिशेल में है 'भाइयों, किसी के सामने आसमान या जमीन की कसम मत खाओ और न किसी दूसरी तरह की कसम खाओ, बस हाँ के लिए 'हाँ' कहो और नहीं के लिए 'नहीं' जिससे तुम लोभ में न फँसो। अव्वल तो बाइबिल में ही बिल्कुल साफ-तौर पर कसम खाने की मनाई है, लेकिन बाइबिल में अगर ऐसी आज्ञा न भी होती, तो भी, मैं मनुष्य की आज्ञा पालन करने की कसम नहीं खा सकता, क्योंकि ईसाई होने की हैसियत से मुझे हमेशा ईश्वर की मर्जी पर चलना चाहिए और उसकी मर्जी हमेशा ही आदमी की मर्जी के अनुकूल हो, ऐसा नहीं होता...।''

जनरल : बहस करता है। अगर मेरा बस चलता तो ऐसा कोई आदमी रहने नहीं पाता।

सेक्रेटरी : "मैं उन आदमियों के आज्ञा-पालन करने से इनकार करता हूँ, जो अपने आपको गवर्नमेंट के नाम से पुकारते हैं, क्योंकि...

जनरल : कितनी बड़ी गुस्ताखी है?

सेक्रेटरी : "क्योंकि वे आज्ञाएँ पाप-मय और दुष्टतापूर्ण हैं, उनकी आज्ञा है कि मैं फौज में भरती होऊँ और फौजी शिक्षा प्राप्त कर मनुष्यों की हत्या करने के लिए तैयार हो जाऊँ हालांकि यह बात पुराने और नए दोनों ही टेस्टामेंटों में मना की गई है और खुद मेरी आज्ञा उसके विरुद्ध है। तीसरे सवाल।"

(कर्नल का प्रवेश, जनरल उससे हाथ मिलाता है।)

कर्नल : आप उसका बयान सुन रहे हैं।

जनरल : उसकी गुस्ताखी बेहद बढ़ी हुई है। हाँ, पढ़ो।

सेक्रेटरी : "तीसरा सवाल है कि किस वजह से मैंने अदालत के सामने ऐसे तीव्र और अरुचिकर शब्दों का प्रयोग किया। इसका जवाब है कि मैंने ईश्वर-सेवा के विचार से और उसके नाम पर जो धोखे-बाजी हो रही है उसकी पोल खोलने के उद्देश्य से ही उनका प्रयोग किया था, और मैं अपने इस विचार और उद्देश्य का आजन्म पालन करूँगा, और इसीलिए...।"

जनरल : बस, इतना काफी है। मैं इन वाहियात बातों को नहीं सुन सकता। जरूरत है कि इस तरह की बातों को जड़-मूल से उखाड़कर नष्ट कर दिया जाए। और इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि लोगों में यह बात न फैले और वह बहकने न पाएँ *(कर्नल से)* क्या आपने उससे बातचीत की थी?

कर्नल : मैं अब तक उसी से बातें करता था। मैंने उसे शर्मिंदा करने की कोशिश की और उसे बताया कि यह हरकत उसके हक में निहायत मुजिर साबित होगी और उससे कोई फायदा उसे न मिलेगा। इसके अलावा मैंने उसके रिश्तेदारों का भी खयाल उसे दिलाया। वह बहुत ही उत्तेजित हो गया, मगर अपनी बात पर डटा रहा।

जनरल : अफसोस है, आपने उससे इतनी बातचीत की। हम फौजी लोग हैं, हमें बहस नहीं, काम करना चाहिए। उसे बुलाओ तो इधर।

(सेक्रेटरी और क्लर्क का प्रस्थान)

जनरल : *(बैठ जाता है)* नहीं कर्नल साहब, यह तरीका नहीं है। इस तरह के लोगों के साथ दूसरी तरह का सलूक करना चाहिए। सड़े हुए अंग को काटने के लिए जबरदस्त और पुर-असर तरीका इख्तियार करना चाहिए। एक रोगी भेड़ सारे गल्ले में संक्रामक रोग फैला देगी। ऐसे मामलों में किसी तरह लिहाज नहीं रखना चाहिए। वह शाहजादा है, उसके एक माँ है और एक प्रेमिका है—इन बातों से हमें कोई मतलब नहीं। हमारे सामने तो, बस, वह एक सिपाही है, और हमें जार का हुक्म बजा लाना है।

कर्नल : मैंने समझा था कि शायद हमारे समझाने से वह रास्ते पर आ जावे।

जनरल : समझाने से! नहीं, कभी नहीं। सख्ती, बस सख्ती से ही ऐसे लोग राह पर आते हैं। मुझे ऐसे लोगों का तजुर्बा हो चुका है। उसे इस बात का अनुभव करा देना चाहिए कि वह बिल्कुल नाचीज है, अपदार्थ है—रथ के पहिए के नीचे वह केवल एक रज-कण है और वह इस रथ की गति में बाधा नहीं डाल सकता।

कर्नल : अच्छा, हम लोग कोशिश करके देखेंगे।

जनरल : *(नाराज होकर)* कोशिश करके देखने की जरूरत नहीं है। मुझे इस बात को आजमाने की जरूरत नहीं। मैंने चावालीस वर्ष जार की खिदमत में गुजारे हैं। मैंने जान हथेली पर रखकर खिदमत की है और अब भी कर रहा हूँ। अब यह छोकरा आकर मुझे शिक्षा देना चाहता है और मेरे सामने धार्मिक लेक्चर झाड़ता है। वह किसी पादरी के पास जाकर ऐसी बातें करे। मेरे सामने तो वह सिपाही, या फिर एक कैदी है।

(बोरिस का प्रवेश। साथ में दो सिपाही हैं, सेक्रेटरी और क्लर्क पीछे-पीछे आते हैं।)

जनरल : *(उँगली से दिखाकर)* लाओ, इसे उधर खड़ा करो।

बोरिस : मुझे कहीं आने की जरूरत नहीं है। जहाँ जी चाहेगा वहाँ मैं खड़ा रहूँगा, या बैठ जाऊँगा; क्योंकि मैं तुम्हारे शासन को नहीं मानता।

जनरल : चुप रहो! तुम शासन को नहीं मानते! देखो मैं अभी मनवाता हूँ।

बोरिस : *(एक स्टूल पर बैठ जाता है)* तुम्हारा इतना चिल्लाना कितना अनुचित है?

जनरल : इसे उठाकर खड़ा कर दो *(सिपाही उसे उठाते हैं)*।

बोरिस : हाँ, यह तुम कर सकते हो। तुम मुझे मार डाल सकते हो, मगर तुम

मुझसे कुछ मनवा नहीं सकते।

जनरल : खामोश, तुमसे एक बार कह दिया। मैं तुमसे जो कुछ कहता हूँ उसे सुनो।

बोरिस : तुम्हें जो कुछ कहना है, उसे मैं बिल्कुल नहीं सुनना चाहता।

जनरल : यह पागल है। शफाखाने में ले जाकर इसकी जाँच करनी चाहिए।

कर्नल : इसे जेंडरमीन के दफ्तर में भेज कर जाँच कराने का हुक्म हुआ था।

जनरल : अच्छा, तो इसे वहीं भेज दो। मगर इसे वर्दी पहना दो।

कर्नल : वह पहनता ही नहीं है। जोर करता है।

जनरल : इसे बाँध दो। *(बोरिस से)* मैं जो कुछ कहता हूँ मेहरबानी करके उसे सुनो। मुझे इस बात की पर्वा नहीं कि तुम्हारी क्या गति होगी, मगर मैं तुम्हारी खातिर तुम्हें सलाह देता हूँ कि जरा सोच समझ कर देखो। तुम किसी किले में सड़ते रहोगे और किसी को कुछ भी फायदा नहीं पहुँचा सकोगे। इन बातों को छोड़ दो। तुमने बिगड़कर बातें कीं, इसीलिए मैं भी बिगड़ पड़ा। *(कंधे पर हाथ रखकर)* जाओ, कसम खा लो, और इस वाहियातपन को छोड़ दो। *(सेक्रेटरी से)* क्या पादरी साहब मौजूद हैं? *(बोरिस से)* क्यों, क्या कहते हो? *(बोरिस खामोश है)* तुम उत्तर क्यों नहीं देते? बेहतर है, तुम मेरे कहने के मुताबिक काम करो। तुम कोड़ा मारकर डंडे को नहीं तोड़ सकते। तुम उन विचारों को दिल में रखकर किसी तरह मियाद पूरी कर दो। तुम्हारे साथ बल-प्रयोग नहीं करेंगे। क्यों?

बोरिस : मुझे जो कुछ कहना था, कह दिया। अब मुझे कुछ नहीं कहना।

जनरल : देखो, तुमने लिखा है कि बाइबिल में इस बात का वर्णन है। पादरी लोग इन सब बातों को अच्छी तरह से जानते हैं। तुम उनसे बातचीत करके निर्णय कर सकते हो। बस यही ठीक है। अच्छा, बंदे। मैं आशा करता हूँ कि दुबारा मिलने पर, मैं तुम्हें जार की फौज में भरती हो जाने पर बधाई दे सकूँगा। पादरी साहब को यहाँ बुला लाओ।

(प्रस्थान, साथ ही कर्नल और सेक्रेटरी जाते हैं।)

बोरिस : *(क्लर्क और सिपाहियों से)* देखो, वह तुम्हें किस तरह धोखे में डालते हैं। उनकी बात मत मानो। अपनी बंदूकें रख दो और नौकरी छोड़कर चले जाओ। वह शायद तुम्हें कोठरी में बंद करके कोड़े लगाएँगे। लगाने दो। यह कोड़े खाना इतना बुरा नहीं जितना कि इन

धोखेबाजों की नौकरी करना।

क्लर्क : मगर भला, फौज के बिना काम किस तरह चलेगा? यह तो असंभव है।

बोरिस : यह सोचना हमारा काम नहीं है। हमें तो यही देखना है कि ईश्वर की क्या आज्ञा है, और वह हमसे किस बात की आशा रखता है?

एक सिपाही : मगर फिर लोग "ईसाई-फौज" का नाम कैसे लेते हैं?

बोरिस : बाइबिल में इसका कहीं जिक्र नहीं। यह सब इन लोगों की मन गढ़ंत और चालबाजी है।

(क्लर्क के साथ एक जेंडरमी अफसर का प्रवेश)

अफसर : क्या प्रिंस चेरमशेनव नाम का नया सैनिक यहीं है?

क्लर्क : जी हाँ, यहीं है।

अफसर : मेहरबानी करके इधर आइए। क्या आप ही वह प्रिंस बोरिस चेरमशेनव हैं—जो शपथ खाना अस्वीकार करते हैं।

बोरिस : हाँ, मैं ही हूँ।

अफसर : *(बैठता है और सामने बैठ जाने का इशारा करता है।)* मेहरबानी करके बैठ जाओ।

बोरिस : मैं समझता हूँ, हमारी बातचीत बिल्कुल बेकार होगी।

अफसर : मैं तो ऐसा नहीं समझता। कम-से-कम आपके हक में बेकार साबित नहीं होगी। देखिए, बात यह है, मुझे सूचना मिली है कि आप फौजी नौकरी करना और कसम खाना अस्वीकार करते हैं, इसलिए आप पर क्रांतिकारी होने का संदेह है और मैं इसी बात का अनुसंधान करना चाहता हूँ। अगर यह बात सच है, तो हमें आपको नौकरी से हटाकर बगावत में आपने जैसा हिस्सा लिया उसके मुताबिक आपको कैद या जिला-वतन करना पड़ेगा। और अगर यह बात ठीक नहीं तो हम आपको फौजी अफसरों के हाथ में छोड़ देंगे। देखिए, मैं आपसे बिल्कुल साफ-साफ बातें करता हूँ। और, आशा है, आप भी मेरे साथ वैसा ही व्यवहार करेंगे।

बोरिस : अव्वल तो मैं उन लोगों का विश्वास नहीं कर सकता जो इस तरह की बरदी बगैरह पहनते हैं। दूसरे, आपका पेशा ऐसा है कि जिसकी मैं इज्जत नहीं कर सकता और जिससे मुझे सख्त नफरत है। मगर मैं आपके सवालों का जवाब देने से इनकार नहीं करता। आप क्या पूछना चाहते हैं?

अफसर : अव्वल तो, आप अपना नाम, पेशा और मजहब बताइए।

बोरिस : आपको यह सब मालूम है, इसलिए मैं जवाब नहीं दूँगा। हाँ, सिर्फ एक सवाल जरूरी है। मैं "कट्टर-ईसाई" नहीं हूँ।

अफसर : तब आपका क्या मजहब है ?

बोरिस : मैंने उसका कोई नाम नहीं रखा है।

अफसर : मगर फिर भी ...... ?

बोरिस : अच्छा तो, ईसाई-धर्म; 'पर्वत पर के उपदेश' के अनुसार।

अफसर : लिख लो *(क्लर्क लिखता है)* आप किसी जाति या राष्ट्र से संबंध रखते हैं ?

बोरिस : किसी से कोई संबंध नहीं है। मैं अपने को केवल मनुष्य और ईश्वर का सेवक समझता हूँ।

अफसर : तुम अपने को रूसी-राष्ट्र का एक सदस्य क्यों नहीं मानते हो ?

बोरिस : क्योंकि मैं किसी राष्ट्र को स्वीकार नहीं करता।

अफसर : स्वीकार नहीं करने से आपका क्या मतलब है ? क्या आप उन्हें नष्ट कर देना चाहते हैं।

बोरिस : बेशक, मैं उन्हें नष्ट कर देना चाहता हूँ और इसके लिए कोशिश कर रहा हूँ।

अफसर : *(क्लर्क से)* इसे भी लिख लो *(बोरिस से)* आप किस तरह की कोशिश करते हैं ?

बोरिस : मैं धोखेबाजी और चालबाजियों की पोल खोलता हूँ और सत्य का प्रचार करता हूँ। आप, जिस वक्त आए मैं इन सिपाहियों को यही समझा रहा था कि इनकी चालबाजियों में मत फँसो।

अफसर : मगर समझाने और पोल खोलने के सिवा क्या आप दूसरे तरीकों से भी काम लेना पसंद करते हैं ?

बोरिस : नहीं, मैं सिर्फ नापसंद ही नहीं करता, बल्कि हर तरह की हिंसा को पाप समझता हूँ। और सिर्फ हिंसा अथवा बल-प्रयोग को ही नहीं, बल्कि हर तरह के गुप्त-कार्यों को और चालबाजियों...

अफसर : इसको लिख लो। अच्छी बात है। अब मेहरबानी करके आप बताइए कि आप किस-किसको जानते हैं ? क्या आप आइवशेंको से परिचित हैं ?

बोरिस : नहीं।

अफसर : क्लीनको ?

बोरिस : मैंने उसका नाम सुना है, मगर कभी उससे मिला नहीं।

(पादरी का प्रवेश; पादरी बूढ़ा है, क्रास पहने हुए है, हाथ में बाइबिल है। क्लर्क उसके पास जाकर आशीर्वाद ग्रहण करता है।)

अफसर : बस, इतना ही काफी है। मैं समझता हूँ कि आप खतरनाक आदमी नहीं हैं, और हमारे शासन-विभाग के अंदर नहीं आते हैं। मैं चाहता हूँ, आप जल्दी रिहा हो जाएँ। अच्छा वंदे।

(हाथ मिलाता है)

बोरिस : एक बात मैं आप से कहना चाहता हूँ। माफ कीजिए, मगर मुझसे कहे बिना नहीं रहा जाता। आपने इस दुष्टता-पूर्ण क्रूर-वृत्ति को क्यों पसंद किया है ? मैं आपको सलाह दूँगा कि आप इसे छोड़ दें।

अफसर : *(मुस्कराता है)* आपकी मेहरबानी का मैं शुक्रिया अदा करता हूँ। इस बारे में मेरी राय आपसे नहीं मिलती। मैं आदाबअर्ज करता हूँ। *(पादरी से)* पादरी साहब मैं अपनी जगह आपको सौंपता हूँ।

(क्लर्क के साथ प्रस्थान)

पादरी : तुम अपने ईसाई-धर्म का पालन न करके और जार तथा मातृभूमि की सेवा से इनकार करके हाकिमों को क्यों इतना नाखुश करते हो ?

बोरिस : चूँकि मैं ईसाई-धर्म का पालन करना चाहता हूँ, इसलिए मैं सैनिक नहीं बनना चाहता।

पादरी : क्यों नहीं चाहते हो ? देखो, यह लिखा है, "दोस्त के लिए जान दे देना" सच्चे ईसाई का धर्म है।

बोरिस : हाँ, "अपनी जान दे देना" न कि दूसरे आदमी की जान लेना। बस, यही तो मैं करना चाहता हूँ—मैं अपनी जान देने को तैयार हूँ।

पादरी : ऐ नौजवान आदमी, तुम्हारा कहना ठीक नहीं है। जान ने सिपाहियों से कहा था—

बोरिस : इससे तो सिर्फ यह साबित होता है कि उन दिनों में भी सिपाही लोग लूटते थे और जान ने उन्हें ऐसा करने से मना किया।

पादरी : अच्छा, तुम कसम क्यों नहीं खाते ?

बोरिस : आप जानते हैं, बाइबिल में कसम खाना मना है।

पादरी : बिल्कुल नहीं। तुम जनाते हो, एक बार पाइलेट ने ईसा-मसीह को कसम दिलाकर पूछा था कि वह सचमुच ईसा-मसीह है। ईसा-मसीह ने जवाब में कहा था, "हाँ मैं वही हूँ।" इससे सिद्ध होता है कि कसम खाना मना नहीं है।

बोरिस : तुम्हें बूढे होकर ऐसी बात करते लज्जा नहीं आती ?

पादरी : मेरा कहा मानो, हठ मत करो। हम और तुम दुनिया को बदल नहीं सकते। बस, शपथ ले लो और आराम से रहो। यह बात जानने का काम गिरजा को ही सौंप दो कि पाप किसमें है और किसमें नहीं ?

बोरिस : तुम्हें सौंप दें। क्या तुम्हें अपने सिर पर इतना पाप का बोझा लादते डर नहीं लगता है ?

पादरी : कैसा पाप ? बचपन से ही मैं धर्म में श्रद्धा रखता हूँ और तीस साल से मैं पादरी का कार्य कर रहा हूँ। इसलिए मुझे कोई पाप लग ही नहीं सकता।

बोरिस : तुम इतने सारे लोगों को जो धोखा देते हो इसका पाप फिर किसको लगता है ? इन बेचारों के दिमाग में क्या भरा हुआ है ? *(सिपाहियों की ओर)*

पादरी : ऐ नौजवान आदमी, हम तुम कभी इस बात का फैसला नहीं कर सकते। हमारा काम यही है कि हम अपने से बड़ों की आज्ञा मानें।

बोरिस : मुझे अकेला रहने दो। मुझे तुमपर अफसोस आता है और मैं कहता हूँ कि तुम्हारी बातें सुनकर मुझे घृणा होती है। अगर तुम इस जनरल की तरह होते तो कुछ परवा नहीं थी, मगर तुम क्रास लटकाकर, बाइबिल लेकर ईसा-मसीह के नाम की दुहाई देकर, ईसा-मसीह की शिक्षा के विरुद्ध मुझे चलाना चाहते हो! जाओ *(उत्तेजित होकर)* हटो ! मेरे पास से चले जाओ सिपाहियों, मुझे कोठरी में बंद कर दो। मैं किसी से मिल न सकूँ। मैं थक गया हूँ—बेहद थक गया हूँ।

पादरी : यह बात है, तो मैं जाता हूँ वंदे।

(सेक्रेटरी का प्रवेश)

सेक्रेटरी : कहिए ?

पादरी : बड़ा ही हठ-धर्मी और बड़ा ही उद्दण्ड है।

सेक्रेटरी : तो वह शपथ लेने और नौकरी करने से इनकार करता है ?

पादरी : यह किसी तरह राजी नहीं होगा।

सेक्रेटरी : तब फिर उसे शफाखाने में भेजना होगा।

पादरी : और कह दिया जाएगा कि वह बीमार है ? बेशक यह ठीक होगा, नहीं तो उसकी देखा-देखी और लोग भी बहक जाएँगे।

सेक्रेटरी : मुझे हुक्म मिला है कि इसे मस्तिष्क-विकारवाले विभाग में निरीक्षण

के लिए रखा जाए।

पादरी : ठीक है, आदाब अर्ज करता हूँ। *(प्रस्थान)*

सेक्रेटरी : *(बोरिस के पास जाकर)* आइए, मुझे हुक्म मिला है कि मैं आपको पहुँचा दूँ...

बोरिस : कहाँ?

सेक्रेटरी : अव्वल तो शफाखाने में, जहाँ आप शांति से रहेंगे और अच्छी तरह से सोच-विचार सकेंगे।

बोरिस : मैंने बहुत पहले ही सब-कुछ सोच विचार लिया है। मगर आइए, हम लोग चलें।

(प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

(शफाखाने का कमरा, हेड डॉक्टर, असिस्टेंट डॉक्टर और एक अफसर, रोगी चारपाई पर बैठा है, वार्डर वर्दी पहने खड़े हैं।)

डॉक्टर : देखो, तुम्हें उत्तेजित नहीं होना चाहिए, मैं खुशी से तुम्हें शफाखाना छोड़कर चले जाने की आज्ञा देता, मगर तुम खुद ही जानते हो, आजादी तुम्हारे लिए खतरे से खाली नहीं है। अगर मुझे विश्वास होता कि बाहर तुम्हारी अच्छी तरह खबरगिरी...

रोगी : आप समझते हैं, मैं फिर शराब पीने लगूंगा? नहीं, मैं काफी शिक्षा पा चुका हूँ। मगर जो दिन मैं अब यहाँ गुजारता हूँ वह मुझे हानि ही पहुँचाता है। *(उत्तेजित होकर)* आपका जो कर्तव्य है, आप बिल्कुल उसके विरुद्ध कार्य कर रहे हैं। आप बड़े ही निर्दयी हैं, आप जो करें सो थोड़ा है।

डॉक्टर : उत्तेजित मत होओ।

(वार्डरों को इशारा करता है, वह लोग पीछे से आते हैं।)

रोगी : आप स्वतंत्र हैं, इसलिए आप मजे से बहस कर सकते हैं; मगर हम क्या करें, जबकि हमें पागलों के बीच रहने को मजबूर किया जाता है। *(वार्डरों से)* तुम क्या करना चाहते हो? चलो, हटो यहाँ से।

डॉक्टर : मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, आप जरा शांत रहिए।

रोगी : मगर मैं आपसे प्रार्थना और अनुरोध करता हूँ कि आप मुझे स्वतंत्र कर दीजिए!

(चिल्लाता है, और डॉक्टर पर झपटता है, मगर वार्डर उसे पकड़

लेते हैं, झगड़ा होता है, उसके बाद उसे बाहर ले जाते हैं।)

अ‍सिस्टेंट डॉक्टर : यह देखिए फिर शुरू हो गया। इस वक्त तो वह आप पर ही झपट पड़ा।

हेडडॉक्टर : नशे का असर है, कुछ भी नहीं किया जा सकता। मगर अब हालत कुछ बेहतर हैं।

(सेक्रेटरी का प्रवेश)

सेक्रेटरी : आदाबअर्ज है, जनाब।

हेड-डॉक्टर : आदाबअर्ज।

सेक्रेटरी : मैं प्रिंस बोरिस चेरमशेनव नाम के एक मजेदार आदमी को आपके पास लाया हूँ, वह हाल में ही फौज में भरती हुआ है, मगर धार्मिक कारणों से सैनिक सेवा करना अस्वीकार करता है। वह जेंडरमीस के पास भेजा गया था, मगर वह कहते हैं कि राजनैतिक षड्यंत्रों में सम्मिलित न होने के कारण वह हमारे शासन-विभाग में नहीं आता है। पादरी ने भी समझाया, मगर सब बेकार हुआ।

हेड डॉक्टर : *(हँसकर)* और उसके बाद, हस्ब-मामूल आप उसे यहाँ ले आए कि जिसे शायद आप अपील की सबसे ऊँची अदालत समझते हैं। अच्छा, लाइए।

(असिस्टेंट डॉक्टर का प्रस्थान)

सेक्रेटरी : कहते हैं कि वह एक उच्च-शिक्षा प्राप्त मनुष्य है और एक अमीर लड़की के साथ उसका विवाह होनेवाला है। यह बिल्कुल अजीब बात है। मैं वास्तव में समझता हूँ कि यह स्थान उसके योग्य ही है।

हेड डॉक्टर : उसपर किसी बात की धुन सवार है।

(बोरिस अंदर लाया जाता है)

हेड डॉक्टर : आइए, आइए। मेहरबानी करके तशरीफ रखिए। हम लोग कुछ बात-चीत करेंगे। *(सेक्रेटरी से)* आप मेहरबानी करके जाइए *(सेक्रेटरी जाता है)*

बोरिस : मैं आपसे एक प्रार्थना करता हूँ कि यदि आप मुझे कहीं बंद करना चाहते हैं तो मेहरबानी करके शीघ्र ही बंद कर दीजिए ताकि मैं कुछ आराम कर सकूँ।

हेड डॉक्टर : माफ कीजिए, हमें नियमानुसार काम करना पड़ता है। बस, मैं थोड़े-से ही सवाल करूँगा। आपको क्या हुआ ? आपको किस बात की शिकायत है ?

बोरिस : मुझे कुछ भी नहीं हुआ है, न मुझे कोई शिकायत है। मैं बिल्कुल भला-चंगा हूँ।

हेड डॉक्टर : मगर आप दूसरे लोगों का-सा व्यवहार तो नहीं करते?

बोरिस : मैं अपनी आत्मा के अनुसार व्यवहार करता हूँ।

हेड डॉक्टर : देखिए, आपने फौजी नौकरी करने से इनकार कर दिया। आखिर, आपने किस वजह से ऐसा किया?

बोरिस : मैं ईसाई हूँ, इसलिए हत्या नहीं कर सकता।

हेड डॉक्टर : मगर दुश्मनों से अपने देश की रक्षा करना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है, और सामाजिक शृंखला का विध्वंस करनेवाले को रोकना भी जरूरी है।

बोरिस : कोई हमारे देश पर आक्रमण नहीं कर रहा है। गवर्नर अथवा राज-कर्मचारी ही अधिक संख्या में सामाजिक शृंखला को विध्वंस करनेवाले होते हैं, बनिस्बत उन लोगों के कि जिन्हें वे पकड़ कर कैद करते हैं और सताते हैं।

हेड डॉक्टर : जी, आपका मतलब क्या है?

बोरिस : मेरा मतलब यह है। सब बुराइयों की जड़ शराब है, इसे खुद गवर्नमेंट बेचती है; झूठे और जालिम मजहब का प्रचार भी गवर्नमेंट ही करती है और यह फौजी नौकरी, जो वह मुझसे कराना चाहते हैं और जो लोगों को नीति-भ्रष्ट और पतित बनाने का मुख्य साधन है—यह भी इसी गवर्नमेंट के हाथ में है।

हेड डॉक्टर : तब आपकी राय में गवर्नमेंट अर्थात् शासन-संस्था और राष्ट्र अनावश्यक हैं।

बोरिस : यह तो मैं नहीं जानता; मगर यह बात मैं खूब अच्छी तरह से जानता हूँ कि मुझे किसी बुराई में भाग नहीं लेना चाहिए।

हेड डॉक्टर : मगर फिर दुनिया का क्या हश्र होगा? क्या ईश्वर ने हमें बुद्धि इसलिए नहीं दी है कि हम दूरदर्शिता से काम लें?

बोरिस : ईश्वर ने बुद्धि इसलिए भी दी है कि हम इस बात को समझें कि सामाजिक शृंखला की रक्षा हिंसा के द्वारा नहीं बल्कि नेकी के द्वारा करनी चाहिए; और इसलिए भी कि एक आदमी का किसी बुराई में भाग लेने से इनकार कर देना किसी तरह खतरनाक नहीं हो सकता।

हेड डॉक्टर : अच्छा, अब जरा मुझे जाँच करने दीजिए। क्या आप मेहरबानी

करके लेट सकते हैं? *(उसको छूकर)* यहाँ दर्द तो नहीं होता?

बोरिस : नहीं।

हेड डॉक्टर : और न यहाँ?

बोरिस : नहीं।

हेड डॉक्टर : जरा गहरी सांस तो लीजिए। अब जरा दम साध लीजिए। गुस्ताखी माफ हो। *(एक फीता लेकर उसकी पेशानी और नाक नापता है।)* अब मेहरबानी करके आप जरा आँख बंद करके चलिए।

बोरिस : आपको यह सब करते हुए शर्म नहीं आती?

हेड डॉक्टर : आप कह क्या रहे हैं?

बोरिस : यह सब वाहियात है। आप जानते हैं कि मैं बिल्कुल स्वस्थ हूँ और मैं यहाँ इसलिए भेजा गया हूँ कि मैं उनके दुष्कर्मों में सम्मिलित होना नहीं चाहता। और चूँकि मैंने जो कुछ कहा है वह बिल्कुल सच है और उसका यह कोई जवाब नहीं दे सकते, इसीलिए वह मुझे पागल समझने का बहाना करके लोगों को भुलावे में डालना चाहते हैं। और आप उनको इन वाहियात बातों में मदद देते हैं। यह बहुत ही घृणित और लज्जास्पद है।

हेड डॉक्टर : तो आप टहलना नहीं चाहते?

बोरिस : नहीं, कभी नहीं! आप जबरदस्ती से चाहे जो कराइए, मगर मैं अपने-आप कुछ नहीं करूँगा। *(तेजी से)* मुझे अकेले में रहने दीजिए।

(डॉक्टर घंटी बजाता है, दो वार्डरों का प्रवेश)

हेड डॉक्टर : उत्तेजित मत होओ। मैं जानता हूँ कि आप बहुत थक गए हैं। क्या आप मेहरबानी करके अपने वार्ड को जाएँगे?

(असिस्टेंट डॉक्टर का प्रवेश)

असिस्टेंट : चेरमशेनव से मिलने के लिए कुछ लोग आए हैं।

बोरिस : कौन लोग हैं?

असिस्टेंट : निकोलस और उनकी लड़की।

बोरिस : मैं उनसे मिलना चाहता हूँ।

हेड डॉक्टर : न मिलने की कोई वजह भी नहीं है। उन्हें अंदर बुलालो। आप उनसे यहीं मिल लीजिए।

(प्रस्थान, पीछे-पीछे असिस्टेंट और वार्डर जाते हैं, निकोलस और ल्यूबा का प्रवेश, शाहजादी दरवाजे से झांकती है और कहती है :

"तुम चलो, मैं पीछे से आऊँगी")

ल्यूबा : *(सीधी बोरिस के पास जाती है, उसका हाथ अपने हाथों में लेकर चूमती है)* अभागे बोरिस ?

बोरिस : तुम मेरे लिए दुःख न प्रकट करो। मुझे अत्यंत हर्ष, अत्यंत आनंद और अत्यंत आह्लाद है। आप कैसे हैं ?

(निकोलस का हाथ चूमता है)

निकोलस : मैं तुमसे खासकर एक बात कहने को आया हूँ। सबसे पहली बात यह है कि ऐसे मामलों में हद से ज्यादा बढ़ जाना काफी दूर न जाने से भी अधिक बुरा है। इस मामले में तुम्हें वही करना चाहिए जो बाइबिल में लिखा है, और पहले से ही इस तरह पेश-बंदी नहीं करना चाहिए, कि मैं यह कहूँगा या ऐसा करूँगा। "जब वे तुम्हें गिरफ्तार कर लें, तो तुम यह मत सोचो कि तुम क्या बोलोगे और किस तरह बोलोगे; क्योंकि ऐसे मौके पर तुम नहीं बोलते हो बल्कि तुम्हारे स्वर्गीय पिता की आत्मा ही तुम्हारे द्वारा बोलती है।" अर्थात् तुम किसी काम को महज इसलिए मत करो कि तुमने खूब सोच विचारकर उस काम को करने का निश्चय कर लिया है, बल्कि उसी वक्त उस काम में हाथ लगाओ कि जब तुम्हारा अंतःकरण और तुम्हारी आत्मा उस काम के करने की प्रेरणा करे, और तुम्हें ऐसा महसूस हो कि तुम उस काम को किए बिना रह ही नहीं सकते।

बोरिस : मैंने ऐसा ही किया है। मैंने यह सोचा नहीं था कि मैं नौकरी करने से इनकार कर दूँ, मगर जब मैंने यह धोखेबाजियाँ और पुलिस की चालाकियाँ देखीं, जब मुझे न्याय की नृशंसता और अफसरों की निरंकुशता मालूम हुई तब मैंने जो कुछ कहा वह मुझसे कहे बिना रहा नहीं गया। पहले, शुरू-शुरू में तो, मुझे भय लगा, मगर बाद को तो मेरा दिल हिम्मत और खुशी से भर गया।

(ल्यूबा बैठ जाती है और रोती है)

निकोलस : सबसे मुख्य बात यह है कि प्रशंसा के लिए और लोगों की सुसम्मति प्राप्त करने के लिए कोई काम न करना। अपने बारे में तो मैं साफ तौर से कहता हूँ कि अगर तुम इसी वक्त शपथ लेकर नौकरी में भरती हो जाओ, तो मैं तुम्हें पहले से किसी तरह कम नहीं, बल्कि, अधिक ही प्यार करूँगा और पहले से अधिक आदर

की दृष्टि से देखूँगा; क्योंकि बाह्य-जगत् में जो कुछ होता है वह महत्त्वपूर्ण नहीं है, महत्त्व तो उसी का है कि जो आत्मा के अंदर विस्फूर्तिमय विकास होता है।

बोरिस : बेशक, क्योंकि आत्मा के अंदर जो कुछ होता है, उसका प्रभाव बढ़ने से बाह्य-जगत् में परिवर्तन अवश्य होगा।

निकोलस : मुझे जो कुछ कहना था, वह मैं कह चुका। तुम्हारी माँ आई हैं। वह बहुत परेशान हैं। वह जो कुछ कहती हैं, अगर तुम कर सकते हो तो करो-बस; यही मैं तुमसे कहना चाहता था।

(नेपथ्य में रोने की आवाज, एक पागल अंदर घुस आता है। वार्डर उसे पकड़ ले जाते हैं।)

ल्यूबा : कितनी भयानक जगह है! और तुम्हें यहीं रहना होगा? *(रोती है)*

बोरिस : मुझे इस बात का डर नहीं है और सच पूछो तो अब मुझे किसी बात का डर नहीं रहा। मेरा दिल खुशी से भरा हुआ है; बस, मुझे तुम्हारा ही ख्याल है। क्या तुम मेरी खुशी बढ़ाने में सहायता दोगी?

ल्यूबा : क्या मैं यह देखकर खुश हो सकती हूँ?

निकोलस : नहीं, खुश नहीं, खुश होना असंभव है। मैं खुद खुश नहीं हूँ। मैं उसकी वजह से दुखी हूँ और खुशी से उसकी जगह लेने को तैयार हूँ। मगर, यद्यपि मैं दुःखी हूँ, फिर भी मैं जानता हूँ कि इसमें भलाई है।

ल्यूबा : हो सकती है। मगर वह इन्हें छोड़ेंगे कब?

बोरिस : यह कोई नहीं कह सकता। मैं तो भविष्य का ध्यान भी नहीं करता। वर्तमान ही बहुत सुखदायक है और तुम उसे और भी सुखदायक बना सकती है।

(शाहजादी का प्रवेश)

शाहजादी : मैं अधिक देर नहीं ठहर सकती। *(निकोलस से)* क्या तुमने इसे समझाया? वह राजी है न? बोरिस, मेरे लाल, जरा मेरी तरफ देख, मुझ पर रहम कर। तीस वर्ष से मैं तेरा मुँह देखकर जीती हूँ। मैंने पाल-पोसकर इतना स्याना किया, और अब, जबकि सब ठीक-ठाक हो गया, तू निर्मोही होकर हम सबको छोड़ता है। जेलखाना और बेइज्जती! अरे नहीं, बोरिया!

बोरिस : माँ, मेरी बात सुनो।

शाहजादी : *(निकोलस से)* तुम कहते क्यों नहीं? तुमने ही उसे बरबाद किया

है और तुम ही इसे समझाओ। यह सब चोचले तुम्हारे लिए ठीक हैं। ल्यूबा, कुछ बोलो। इसे समझाओ तो सही।

ल्यूबा : मैं कुछ नहीं बोल सकती।

बोरिस : सुनो माँ, दुनिया में कुछ ऐसी बातें हैं जो बिल्कुल ही असंभव है। मैं फौजी नौकरी नहीं कर सकता।

शाहजादी : तुम समझते हो कि तुम नहीं कर सकते। यह सब वाहियात है। सभी ने फौजी नौकरी की है और अब भी कर रहे हैं। तुमने और निकोलस ने मिलकर एक नए तरह का ईसाई-धर्म निकाला है। यह ईसाई-धर्म नहीं, बल्कि शैतानी-सिद्धांत है जो सबको दु:ख देता है।

बोरिस : जो कुछ बाइबिल में लिखा है, वही हमारा मत है।

शाहजादी : बाइबिल में यह कुछ नहीं है और अगर है तो वह मूर्खतापूर्ण है। मेरे प्यारे बोरिस! मुझ पर रहम करो। *(गर्दन से लिपटकर रोती है)* मेरा सारा जीवन दु:खमय है। मेरे जीवन में केवल एक ही आशा और सुख की किरण है, तुम उसी को नष्ट किए डालते हो। बोरिस मुझ पर दया करो।

बोरिस : माँ, यह मुझे बहुत ही कठिन और असह्य है। मगर, मैं तुम्हें कैसे बताऊँ?

शाहजादी : देखो, अब इनकार मत करो। कह दो, तुम नौकरी करोगे।

निकोलस : कह दो, तुम इस पर विचार करोगे। और तुम जरूर इस पर एक बार विचार करना।

बोरिस : अच्छी बात है। मगर माँ, तुम्हें भी मुझ पर तरस खाना चाहिए। यह मेरे लिए असह्य है। *(नेपथ्य में फिर रोने की आवाज)* तुम जानती हो कि मैं पागलखाने में हूँ और डर है कि कहीं सचमुच ही पागल न हो जाऊँ।

(हेड डॉक्टर का प्रवेश)

हेड डॉक्टर : श्रीमतीजी इसका खराब असर हो सकता है। आपका लड़का बहुत ही उत्तेजित अवस्था में है। मैं समझता हूँ कि इस मुलाकात को खत्म करना चाहिए। आप बृहस्पतिवार और रविवार को मिलने के लिए आ सकती हैं। मेहरबानी करके बारह बजे से पहले आइए।

शाहजादी : अच्छी बात है, अच्छी बात है, मैं जाती हूँ। बोरिया, मुझ पर रहम खाकर इस पर फिर से विचार करो और गुरुवार को खुश-खबरी

सुनाने के लिए तैयार रहना।

निकोलस : *(बोरिस से हाथ मिलाकर)* ईश्वर का नाम लेकर और यह समझकर कि जैसे तुम कल ही मरनेवाले हो, इस विषय पर फिर से विचार करके देखो। सत्य निर्णय पर पहुँचने का यही मार्ग है। अच्छा, वंदे।

बोरिस : *(ल्यूबा के पास जाकर)* और तुम मुझसे क्या कहती हो?

ल्यूबा : मैं झूठ नहीं बोल सकती, और मेरी समझ में नहीं आता कि तुम क्यों अपने को और दूसरे सब लोगों को दुःख देते और सताते हो। तुम्हारी बातें मेरी समझ में नहीं आतीं—और मैं तुम्हें कुछ कह नहीं सकती।

(रोती हुई बाहर जाती है। बोरिस के सिवाय सबका प्रस्थान)

बोरिस : *(अकेला)* मोह कितना कठिन, कितना असत्य है? ईश्वर मेरी सहायता करो। *(प्रार्थना करता है)*

(चोगा लेकर वार्डर आते हैं)

चौथा अंक

पहला दृश्य

(एक साल बाद निकोलस के मास्कोवाले घर में नाच का इंतजाम हो रहा है। पियानो के चारों तरफ प्यादे गमले रखते हैं। मेरी, एक शानदार रेशमी पोशाक पहने अलेक्जेंडरा के साथ आती है।)

मेरी : बॉल? नहीं, नहीं दिल बहलाने के लिए कुछ नाचना-गाना होगा। नौजवानों के लिए एक भोज भी होना चाहिए। मेरे बालकों ने जबसे मेकफवाले नाटकों में पार्ट लिया था तब से उन्हें हर कहीं नाच-पार्टियों में जाने के लिए निमंत्रण आते हैं। निमंत्रणों के बदले मुझे भी तो एक बार उन्हें निमंत्रित करना चाहिए।

अलेक्जेंडरा : मुझे भय है, निकोलस इसे पसंद नहीं करता।

मेरी : इसके लिए भला मैं क्या करूँ? *(प्यादे से)* उसे इधर रखो। *(अलेक्जेंडरा से)* ईश्वर जानता है, मेरी खुशी इसी में है कि मैं उन्हें सुखी देखूँ और किसी तरह का रंज न होने दूँ। मैं देखती हूँ कि अब वह इन बातों पर इतना जोर नहीं देते।

अलेक्जेंडरा : नहीं, नहीं, सिर्फ अपने दिल की बात अब उस तरह जाहिर नहीं

करता है। भोजन के बाद जिस वक्त वह अपने कमरे में चला गया, मैंने देखा कि वह बहुत ही अप्रसन्न और असंतुष्ट था।

मेरी : मैं क्या कर सकती हूँ? आखिर, हम आदमी हैं और हमें आदमियों की तरह रहना होगा। हमारे सात बच्चे हैं; अगर घर में उनके हँसने-खेलने और जी बहलाने का कोई इंतजाम न होगा तो ईश्वर जाने वह क्या न कर उठाएँगे। खैर, ल्यूबा की तरफ से मैं अब बिल्कुल निश्चित और संतुष्ट हूँ।

अलेक्जेंडरा : क्या सब तय हो गया? क्या उसने विवाह का प्रस्ताव किया था?

मेरी : हाँ, बस तय ही समझिए। वह उससे बोला था और ल्यूबा ने स्वीकार कर लिया।

अलेक्जेंडरा : इससे उसके दिल को और भी चोट पहुँचेगी।

मेरी : वह सब जानते हैं, उनसे कुछ छिपा थोड़े ही है।

अलेक्जेंडरा : वह उसे पसंद नहीं करता है।

मेरी : *(प्यादे से)* फल को अलमारी में रख दो। किसे पसंद नहीं करता? अलेक्जेंडरा मिकालोविच को? जी, वह उसे कभी पसंद नहीं कर सकते; क्योंकि वह उनके प्रिय सिद्धांतों के खंडन की जीती-जागती मूर्ति है। वह बहुत ही हँस-मुख, नेक और दयालु-प्रकृति है और दुनिया के रंग-ढंग को अच्छी तरह जानता है। मगर बोरिस चेरमशनव! ओह, उसके मारे तो मुझे नींद नहीं आती; स्वप्न देखकर सोते से चौंक उठती हूँ। मालूम नहीं, उस बेचारे की क्या गति हुई।

अलेक्जेंडरा : लिसा उसे देखने गई थी। वह *(बोरिस)* अब भी वहीं है। वह कहती है कि बोरिस बहुत ही दुबला हो गया है और डॉक्टरों को उसकी जान जाने और दिमाग में खलल पड़ जाने का डर है।

मेरी : हाँ, उनके विचारों की वजह से ही उसने अपनी जिंदगी को कुर्बान कर दिया है। भला, उसके जीवन को नष्ट करने से क्या फायदा है! मैं तो इसे कभी पसंद नहीं करती।

(पियानो बजानेवाले का प्रवेश)

मेरी : क्या आप पियानो बजाने के लिए आए हैं?

पियानोवाला : हाँ, मैं पियानो बजानेवाला हूँ।

मेरी : मेहरबानी करके बैठ जाइए। अभी कुछ देर है। थोड़ी चाय पीजिए न?

पियानोवाला : नहीं, इस वक्त तो माफ कीजिए *(पियानो के पास जाता है।)*

मेरी : मैं इन बातों को पसंद नहीं करती। मैं बोरिस को चाहती थी; मगर फिर भी वह ल्यूबा के योग्य वर नहीं था : खास तौर से जब वह उनके कहे मुताबिक काम करने लगा।

अलेक्जेंडरा : मगर फिर भी उसके विश्वास की दृढ़ता को देखकर आश्चर्य होता है। इस वक्त वह कैसी मुसीबतें सह रहा है? कर्मचारी कहते हैं कि जब तक वह सैनिक सेवा करना अस्वीकार करेगा तब तक वह या तो उसी जगह बंद रखा जाएगा, या फिर किसी किले के तहखाने में डाल दिया जाएगा, मगर उसकी जबान से वही जवाब निकलता है! लिसा कहती है कि इस हालत में भी वह बहुत प्रसन्न और आनंद से परिपूर्ण है।

मेरी : केवल अंध-विश्वास है। यह देखो, अलेक्जेंडरा मिकालोविच आ गए।

(मिकालोविच का प्रवेश)

मिकालोविच: मालूम होता है, मैं बहुत जल्दी आ गया हूँ।

(दोनों महिलाओं के हाथ चूमता है।)

मेरी : अच्छा ही हुआ।

मिकालोविच: ल्यूबा कहाँ है? उन्होंने निश्चय किया है कि आज खूब नाचकर गए वक्त की पूर्ति करेंगी और मैंने आज उन्हें सहायता देने का वचन दिया है।

मेरी : वह महफिल के इंतजाम में लगी हुई है।

मिकालोविच: तो मैं जाकर उनकी मदद कर सकता हूँ?

मेरी : जरूर, आप शौक से जाइए।

(मिकालोविच जाना चाहता है। ल्यूबा का प्रवेश, उसके हाथ में कुर्सी की गद्दियाँ और कुछ फीते हैं)

ल्यूबा : ओहो, तुम आ गए; बड़ी अच्छी बात है, तुम मुझे मदद दे सकते हो। बैठकखाने में तीन गद्दियाँ और हैं, उन्हें जाकर ले आओ।

मिकालोविच: मैं अभी दौड़कर जाता हूँ।

मेरी : देखो ल्यूबा, मेहमान लोग आनेवाले हैं, दोस्त लोग इस बारे में सवाल करेंगे। क्या मैं उन लोगों को सूचना दे दूँ?

ल्यूबा : नहीं, माँ, नहीं। लोग सवाल करेंगे तो करने दो। पिताजी इसे पसंद कहीं करेंगे।

मेरी : मगर वह जानते हैं; क्योंकि अब तक वह सब समझ गए होंगे। और

फिर किसी-न-किसी वक्त उनसे कहना तो होगा ही। मैं समझती हूँ कि आज ही इस विषय की सूचना दें तो अच्छा होगा।

ल्यूबा : नहीं-नहीं, माँ, ऐसा न करना। इससे रंग-में-भंग हो जाएगा। नहीं, इस विषय में तुम अभी कुछ न कहना।

मेरी : जैसी तुम्हारी मर्जी।

ल्यूबा : अच्छी बात है, मगर नाच खतम होने के बाद, दावत के ठीक शुरू में।

(मिकालोविच का प्रवेश)

ल्यूबा : क्यों, सब ले आए न?

मेरी : मैं जाकर जरा बच्चों को देखती हूँ।

(अलेक्जेंडरा के साथ प्रस्थान)

मिकालोविच: *(तीन गद्दियाँ लिए हुए है, जिन्हें वह ठोड़ी से सम्हालता है और रास्ते में कुछ चीजें गिराता है)* तुम तकलीफ न करो। ल्यूबा, रहने दो मैं उन्हें उठा लूँगा। तुमने गुलदस्ते तो बहुत-से बनाये हैं। बस मैं आज ठीक तरह से नृत्य में भाग ले सकूँगा। वानिया इधर आओ।

वानिया : *(बहुत-से फूल और गुलदस्ते लिए हुए)* यह लो, मैं सब उठा लाया हूँ।

ल्यूबा : मैंने और मिकालोविच ने आज शर्त बदी है; देखें कौन जीतता है।

मिकालोविच: तुम्हारे लिए बड़ी आसानी है; क्योंकि तुम सब लोगों को जानते हो। मगर मुझे तो पहले-पहल युवती महिलाओं को प्रसन्न करना होगा। इसके मानी यह है कि दौड़ने से पहले ही तुम चालीस कदम आगे हो।

वानिया : मगर तुम 'भावी वर' हो और मैं बालक हूँ।

मिकालोविच: नहीं भाई मैं अभी 'भावी वर' नहीं हूँ, और मैं बालक से भी गया-गुजरा हूँ।

ल्यूबा : वानिया! जरा मेरे कमरे से गोंद, सुई और कैंची तो ले आओ। मगर मेहरबानी करके कोई चीज मत तोड़ डालना।

वानिया : मैं सब चीजें तोड़ डालूँगा *(भाग जाता है)*

मिकालोविच: *(ल्यूबा का हाथ थामकर)* ल्यूबा इसे चूम सकता हूँ? *(उसका हाथ चूमकर)* मैं बहुत ही सुखी हूँ। प्यारी ल्यूबा, क्या मेरी आशा पूरी होगी? क्या तुम मुझे स्वीकार करके अपना दास बनाने की कृपा करोगी? नाच के वक्त हमें बात करने का मौका मिलेगा? क्या मैं अपने घरवालों को तार दे दूँ कि मेरी प्रार्थना स्वीकृत हो गई और मैं

बहुत ही सुखी हूँ।

ल्यूबा : हाँ, आज रात को।

मिकालोविच : बस, एक बात और है। निकोलससाहब को यह कैसा लगेगा? क्या तुमने उनसे कह दिया है?

ल्यूबा : नहीं, मैंने उनसे कहा नहीं है, मगर अब कह दूँगी। वह उसी तरह उदासीन भाव से उसे सुन लेंगे जिस तरह कि वह अब परिवार के सब कामों को देख-सुन लेते हैं। वह यही कहेंगे, "जैसा तुम्हें अच्छा लगे वैसा करो।" मगर इसमें शक नहीं कि उनके दिल को चोट लगेगी।

मिकालोविच : क्योंकि मैं चेरमशेनव नहीं हूँ।

ल्यूबा : हाँ, उनकी खातिर अभी तक मैं अपने दिल को दबाये और धोखा देती रही। यह इसलिए नहीं कि उनके प्रति मेरा प्रेम कम हो गया है, बल्कि इसलिए कि मैं झूठ नहीं बोल सकती। वह खुद ऐसा कहते हैं। मैं चाहती हूँ कि इसी तरह जीवन बिताऊँ।

मिकालोविच : और जीवन ही एक सत्य है। हाँ, चेरमशेनव का क्या हाल है?

ल्यूबा : *(उत्तेजित भाव से)* मेरे सामने उनका नाम मत लो। मैं उन्हें दोषी ठहराना चाहती हूँ—उस वक्त दोषी ठहराना चाहती हूँ, जब वह बेचारे मुसीबतें उठा रहे हैं; और जानती हूँ कि यह सब इसलिए है कि मैं उनकी अपराधिनी हूँ। बस, मैं इतना जानती हूँ कि मेरे दिल में उनके प्रति एक तरह का प्रेम है, मैं समझती हूँ कि वह प्रेम पहले के प्रेम से कहीं अधिक सच्चा और वास्तविक है।

मिकालोविच : ल्यूबा, क्या यह सत्य है?

ल्यूबा : तुम मुझसे यह कहलाना चाहते हो कि मैं तुम्हें उस सच्चे प्रेम के साथ प्यार करती हूँ? मैं यह नहीं कहूँगी। मैं तुम्हें प्यार करती हूँ, मगर यह प्यार दूसरी तरह का है-यह आदर्श-प्रेम नहीं है। वास्तव में न तो यही आदर्श प्रेम है और न ही वह। अगर किसी तरह इन दोनों का मिश्रण हो जाता तभी, मैं समझती हूँ, सच्चे प्रेम का आनंद आता।

मिकालोविच : नहीं-नहीं, मुझे जो कुछ मिला है, मैं उसी से संतुष्ट हूँ *(ल्यूबा का हाथ चूमता है)* ल्यूबा!

ल्यूबा : *(उसे हटाकर)* नहीं, जल्दी से इन्हें छाँट लेना चाहिए। लोग आने लगे हैं।

(शाहजादी, टानिया और एक छोटी लड़की का प्रवेश)

ल्यूबा : बैठिए, माँ अभी आती हैं।

शाहजादी : क्या हमीं लोग सबसे पहले आए हैं?

मिकालोविच : कोई-न-कोई तो सबसे पहले आवेगा ही।

स्त्यूपा : कल रात मैं समझा था इटेलियन सिनेमा में तुमसे जरूर मुलाकात होगी।

टानिया : हम लोग चाची के यहाँ गए थे इसलिए नहीं आ सके।

(विद्यार्थी, महिलाएँ, मेरी और एक काउन्टेस आती हैं।)

काउन्टेस : क्या हम लोग निकोलससाहब से नहीं मिल सकते?

मेरी : नहीं, वह पढ़ना छोड़कर हमारी महफिल में शरीक नहीं होते।

मिकालोविच : अच्छा अब शुरू कीजिए। *(ताली बजाता है, नाचनेवाले अपनी जगह आकर नाचते हैं।)*

अलेक्जेंडरा : *(मेरी के पास जाकर)* वह बहुत ही उत्तेजित हो गया। वह बोरिस से मिलने गया था और लौटकर आया तो देखा कि यहाँ महफिल लगी हुई है। वह चला जाना चाहता है। मैं उसके दरवाजे तक गई थी और उसे अलेक्जेंडर पेट्रोविच से बातें करते हुए देखा।

मिकालोविच : महिलाओ, तैयार हो जाइए, सज्जनो आगे बढ़ो।

अलेक्जेंडरा : उसने निश्चय कर लिया है कि इस घर में रहना उसके लिए असंभव है, वह घर छोड़कर जा रहा है।

मेरी : आह, यह आदमी कितना जालिम है?

(प्रस्थान)

दूसरा दृश्य

(निकोलस का कमरा; संगीत की आवाज दूर पर सुनाई पड़ती है। निकोलस ओवरकोट पहने हुए है। मेज पर एक खत रख देता है। अलेक्जेंडर पेट्रोविच फटे कपड़े पहने उसके साथ है।)

अलेक्जेंडर पेट्रोविच : आप कुछ चिंता न करें; हम लोग काकेशिया तो बिना एक पैसा खर्च किए जा सकते हैं; और वहाँ आप काम कर सकते हैं।

निकोलस : तूला तक हम रेल पर सफर करेंगे और वहाँ से पैदल चलेंगे। अच्छा, मैं तैयार हूँ। *(खत को मेज के बीच में रखकर दरवाजे तक जाता है, वहाँ मेरी को खड़ा देखता है।)* अरे, तुम यहाँ क्यों आ गई?

मेरी : क्यों आ गई? तुम्हें इस बज्र निठुराई से रोकने के लिए। तुम यह क्या कर रहे थे? घर क्यों छोड़े जाते हो?

निकोलस : इसीलिए कि मैं इस तरह नहीं रह सकता। मुझसे यह वीभत्स पतित जीवन नहीं सहा जाता।

मेरी : यह तो बहुत ही दु:ख-प्रद है। मेरा जीवन—जिसे मैंने तुम्हारी और बच्चों की सेवा के लिए ही अर्पण कर दिया, अब एकबारगी तुम्हें वीभत्स और पतित मालूम पड़ने लगा है। *(अलेक्जेंडर पेट्रोविच को देखकर)* कम-से-कम इस आदमी को तो बाहर भेज दो, मैं नहीं चाहती कि कोई हमारी बातें सुने।

अलेक्जेंडर पेट्रोविच : आप लोग बातें कीजिए, मैं जाता हूँ।

निकोलस : अलेक्जेंडर पेट्रोविच, जरा बाहर ठहरो, मैं अभी आता हूँ।

(अलेक्जेंडर पेट्रोविच का प्रस्थान)

मेरी : भला, तुम्हारा इसका क्या मेल है? वह तुम्हारी स्त्री से भी बढ़कर तुम्हें प्यारा क्यों है? कुछ समझ में नहीं आता। और तुम जा कहाँ रहे हो?

निकोलस : मैंने तुम्हारे लिए एक खत लिखकर रख दिया है। मैं बोलना नहीं चाहता था, क्योंकि यह मेरे लिए बहुत ही मुश्किल हो जाता है। लेकिन अगर तुम शांति से सुनना चाहती हो तो मैं शांति के साथ तुम्हें बताने की कोशिश करूँगा।

मेरी : नहीं, मैं यह कुछ नहीं समझती। तुम अपनी पत्नी को, जिसने अपना सर्वस्व तुम्हारे लिए निछावर कर दिया हो, क्यों दु:ख देते हो और सताते हो? क्यों उससे घृणा करते हो? मुझे बताओ, क्या मैं कभी बाल-नाच-पार्टी में जाया करती हूँ, या मैंने और कोई बुरी बात की है। मेरा सारा जीवन परिवार के कामों में ही लग रहा है। मैंने बच्चों को खुद ही दूध पिलाया, उनकी परवरिश की। पिछले साल उनकी पढ़ाई और घर के इंतजाम का सारा बोझ भी सर पर आन पड़ा है...।

निकोलस : *(बात काटकर)* मगर यह सब तुम्हारे सिर पर इसीलिए पड़ा कि तुम मेरे कहने के अनुसार नहीं रहना चाहतीं।

मेरी : मगर यह तो बिल्कुल असंभव है। चाहे किसी से पूछकर देखो। यह असंभव था कि बच्चों को अशिक्षित रहने दिया जाए, जैसाकि तुम रखना चाहते थे और यह मेरे लिए बहुत कठिन था कि मैं धोबी

और रसोइए का काम खुद करूँ।

निकोलस : यह तो मैंने कभी नहीं कहा।

मेरी : खैर, उसका मतलब कुछ इसी तरह का था। देखो, तुम ईसाई हो, तुम दूसरों के साथ नेकी करना चाहते हो और तुम कहते हो कि सब आदमियों को प्यार करते हो, लेकिन उस विचारी औरत को क्यों सताते हो, जिसने जन्मभर तुम्हारी सेवा में बिताया है।

निकोलस : मैं तुम्हें सताता किस तरह हूँ ? मैं तुम्हें प्यार करता हूँ, मगर...

मेरी : तुम मुझे छोड़कर चले जा रहे हो। यह सताना नहीं तो और क्या है ? यह सुनकर सब लोग क्या कहेंगे ? बस यही कहेंगे कि या तो मैं खराब औरत हूँ और या तुम पागल हो।

निकोलस : अच्छा, यही समझ लो कि मैं पागल हूँ, मगर मुझसे इस तरह नहीं रहा जा सकता।

मेरी : मगर इसमें ऐसी भयानक बात कौन-सी है ? अगर साल में एक बार *(और सिर्फ एक बार-क्योंकि मुझे डर था कि तुम उसे पसंद नहीं करोगे)* मैंने एक पार्टी दी, और वह भी बहुत छोटी और सादी-सी, जिसमें सिर्फ मानिया और बारबरा वासिलेबना को ही बुलाया तो वह भी तुम्हें पसंद न आया। उसे तुम इतना बड़ा अपराध समझते हो कि जिसके लिए मेरी बे-इज्जती और बदनामी होगी। सिर्फ बे-इज्जती ही नहीं, सबसे बुरी बात तो यह है कि उब तुम मुझे प्यार नहीं करते। तुम औरों को प्यार करते हो, सारी दुनिया को चाहते हो, और उस शराबी अलेक्जेंडर पिट्रोविच तक को प्यार करते हो, दुनिया भर में एक मैं ही ऐसी बुरी, बदकिस्मत और गई-गुजरी हूँ कि जिसे तुम प्यार करना नहीं चाहते ? तुम मुझे प्यार करो या न करो, मगर मैं तुम्हें अब भी चाहती हूँ और तुम्हारे बगैर जी नहीं सकती। अरे निर्मोही! तुम यह क्यों करते हो ? क्यों मुझे छोड़ते हो ? *(रोती है)*

निकोलस : मगर तुम मेरे जीवन : मेरे आध्यात्मिक जीवन को समझना भी तो नहीं चाहतीं।

मेरी : मैं समझना चाहती हूँ, मगर नहीं समझ पाती। मैं तो देखती हूँ कि तुम्हारे ईसाई-धर्म ने तुम्हें मुझसे और बच्चों से घृणा करना सिखला दिया है; मगर मेरी समझ में नहीं आता कि किसलिए ?

निकोलस : तुम देखती हो कि दूसरे लोग जरूर समझते हैं।

मेरी : कौन? अलेक्जेंडर पेट्रोविच जो तुमसे रुपए पाता है।

निकोलस : वह और दूसरे लोग भी। टानिया और वासिली साहब। लेकिन अगर कोई भी नहीं समझता तो इससे भी कोई अंतर नहीं पड़ता।

मेरी : वासिली साहब अपने किए पर पछताते हैं और टानिया इस वक्त भी स्ट्यूपा के साथ नाच रही है।

निकोलस : मुझे यह सुनकर दु:ख हुआ; मगर इससे स्याही सफेदी में नहीं बदल जाती। मैं अपने जीवन को नहीं बदल सकता। मेरी! तुम्हें मेरी जरूरत नहीं है। मुझे जाने दो। मैंने कोशिश की कि तुम्हारे जीवन में भाग लेते हुए मैं उन सिद्धांतों का भी समावेश करूँ जोकि मेरे लिए बहुत आवश्यक और प्रिय हैं; मगर मैं देखता हूँ कि यह असंभव है। इसका नतीजा यही है कि मुझे और तुम्हें दोनों को दु:ख होता है। इससे मुझे केवल दु:ख ही नहीं होता है, बल्कि मैं जिस काम को करना चाहता हूँ वह खराब हो जाता है। हरेक आदमी, यहाँ तक कि यह अलेक्जेंडर पेट्रोविच तक, यह कह सकता है कि मैं मक्कार हूँ—मैं बातें बघारता हूँ, मगर कुछ करके नहीं दिखाता। मैं सादगी और गरीबी की शिक्षा देता हूँ; मगर ऐशो-आराम से रहता हूँ और बहाना यह करता हूँ कि मैंने अपनी जायदाद स्त्री के नाम लिख दी है।

मेरी : तो तुम्हें डर इस बात का है कि लोग क्या कहेंगे? सचमुच तुम इस लोकापवाद की अवहेलना करके ऊँचे नहीं उठ सकते।

निकोलस : मुझे इसका भय नहीं है कि लोग क्या कहेंगे—उनकी बातें सुनकर मुझे शर्म ज़रूर लगती है। मगर मुझे भय इस बात का है कि मैं ईश्वर के काम को खराब कर रहा हूँ।

मेरी : यह तो तुम्हीं अक्सर कहते थे कि ईश्वर अपनी इच्छा को मनुष्यों के विरोध करने पर भी पूरा करके छोड़ता है। मगर इससे कोई मतलब नहीं। बोलो, तुम मुझसे क्या कराना चाहते हो?

निकोलस : यह तो मैं कई बार तुम्हें बता चुका हूँ।

मेरी : मगर, निकोलस, तुम जानते हो कि यह असंभव है। जरा सोचो तो सही, ल्यूबा का ब्याह होनेवाला है, वानिया कालेज में भरती होने जा रहा है, मिसी और काटिया स्कूल में हैं। भला, मैं इन सब बातों को किस तरह रोक सकती हूँ?

निकोलस : फिर भला, मैं क्या करूँ?

मेरी : वही करो कि जिसे तुम अक्सर मनुष्य का कर्तव्य बताते थे। धैर्य धारण करो और प्रेम-पूर्वक व्यवहार करो। क्या यह तुम्हारे लिए बहुत मुश्किल है। बस, हम लोगों के साथ रहकर जो कुछ हो सके करो, मगर घर छोड़कर मत जाओ। बोलो, तुम्हें किस बात का दुःख है?

(दौड़ते हुए वानिया का आना)

वानिया : माँ, वे लोग तुम्हें बुला रहे हैं।

मेरी : बोल दो, मैं अभी नहीं आ सकती, जाओ-जाओ!

वानिया : जल्दी आना *(भाग जाता है)*।

निकोलस : तुम मेरे विचारों को पसंद नहीं करती और न उहें समझना ही चाहती हो।

मेरी : यह बात नहीं है कि मैं समझना नहीं चाहती। मगर मैं समझ ही नहीं पाती।

निकोलस : नहीं, तुम समझती नहीं और हम एक दूसरे से दूर होते जाते हैं। तुम मेरे हार्दिक भावों को पहचानो, अपने को मेरी स्थिति में रखकर देखो, फिर तुम सब समझ सकोगी। एक तो यहाँ का जीवन नितांत पतित है। तुम्हें यह शब्द बुरा लगता है; मगर जिस जीवन की नींव डकैती के ऊपर है, उसे मैं किसी दूसरे नाम से पुकार ही नहीं सकता। हमारा जीवन "डकैती-मय" है; क्योंकि जिस धन पर हम निर्भर हैं, वह उसी जमीन से आता है जिसे हमने किसानों से चुराया या छीन लिया है। इसके अलावा मैं देखता हूँ कि इस प्रकार का जीवन बच्चों को भी अध:पतित और चरित्रहीन बना रहा है। कहा है कि जो बच्चों को गुमराह करता है वह बड़ा पापी है। और मैं रोज अपनी आँखों से देखता हूँ कि धीरे-धीरे बच्चे खराब और बरबाद हो रहे हैं। हरेक दावत से मेरे कलेजे में चोट लगती है।

मेरी : मगर यह सब तो पहले भी था। दुनिया में सभी जगह यह होता है।

निकोलस : लेकिन मुझसे यह नहीं हो सकता। जबसे मैंने समझ लिया कि हम सब भाई-भाई हैं तबसे यह फिजूलखर्ची, खुदगर्जी और लापरवाही मेरे दिल में कांटे की तरह खटकती है।

मेरी : यह सब तुम्हारे मन की बातें हैं। कोई अपने मन से जो चाहे सो बात निकाल सकता है।

निकोलस : *(तेजी से)* तुम कुछ समझती नहीं, यही तो बड़ी भयानक बात है। आज ही की बात है, सुनो। मैं आज अछूतों के मुहल्ले में गया, वहाँ

मैंने एक छोटे-से दूधमुँहे बच्चे को भूख से मरता हुआ देखा, एक दुबला-पतला बूढ़ा आदमी भयंकर रोग से पीड़ित जमीन पर पड़ा हुआ था; उसके पास एक छोटी लड़की अकेली पड़ी रो रही थी; उसके पास न खाने को अन्न था न दवा मोल लेने को पैसा; बाहर सड़क पर उसकी माँ सर्दी से काँपती हुई तन पर का भीगा कपड़ा सुखा रही थी; उसके पास कोई दूसरा कपड़ा न था और वह रह-रहकर खांसी के मारे बेदम हो रही थी, शायद उसे क्षय रोग हो गया है। घर आकर मैंने देखा—सब ऐशो-अशरत में मशगूल हैं, नौकरों की एक पलटन काम करने के लिए तैयार है, अपने सुख के लिए हमें किसी दूसरे का खयाल भी नहीं है। मैं बोरिस से मिलने गया कि जिसने सच्चाई के खातिर अपना सर्वस्व निछावर कर दिया। बोरिस—शुद्ध, उच्च और दृढ़ प्रतिज्ञ बोरिस तरह-तरह की मुसीबतें उठा रहा है। गवर्नमेंट उससे छुटकारा पाने के लिए जान-बूझकर उसके दिमाग को नुकसान पहुँचाकर उसे बरबाद कर देना चाहती है। मैं जानता हूँ और गवर्नमेंट को भी मालूम है कि उसका दिल कमजोर है, इसलिए वह पागलों के बीच में ले जाकर रखते हैं और उसे हर तरह से सताकर उत्तेजित करते हैं। यह दृश्य भयंकर महा भयंकर है। और जब मैं घर वापस आया तो सुना कि हमारे घरभर में, जिसने सच्चाई को समझा था, न केवल सच्चाई को ही छोड़ दिया बल्कि उस आदमी को भी त्याग दिया, जिसे प्रेम-दान देकर ब्याहने का वादा किया था और अब वह ब्याह करना चाहती है एक झूठे मक्कार से।

मेरी : यही तुम्हारी ईसाइयत है?

निकोलस : मैं जानता हूँ कि यह मेरे अयोग्य है और मैं दोषी हूँ; मगर तुमसे वही कहता हूँ कि तुम अपने को मेरी स्थिति में रखकर देखो। मेरा मतलब है कि वह सच्चाई से फिर गई।

मेरी : तुम कहते हो "सचाई से फिर गई" मगर और लोग, अधिकांश लोग, कहते हैं "भ्रम से निकल गई"। देखा, वासिलीसाहब भी एक बार बहक गए थे मगर फिर गिरजा को जाने लगे।

निकोलस : यह असंभव है।

मेरी : उन्होंने लिसा को लिखा है। वह तुम्हें खत दिखाएगी। इस तरह का विचार-परिवर्तन बहुत ही अस्थायी होता है, टानिया के मामले में

भी ऐसा ही हुआ। मैं उस आदमी का जिक्र भी नहीं करना चाहती; क्योंकि वह तुम्हारी बात इसलिए मानता है कि इसे, वह लाभदायक समझता है।

निकोलस : *(क्रुद्ध होकर)* खैर, जाने दो। मैं सिर्फ तुमसे कहता हूँ। मैं अब भी मानता हूँ कि सत्य सत्य ही है। यह सब देखकर मुझे दुःख होता है। यहाँ घर पर मैं देखता हूँ नाच-गाना हो रहा है, दावतों के सामान हैं और सैकड़ों रुपए बेकार पानी की तरह बहाये जा रहे हैं, जबकि बेचारे गरीब लोग भूखों मर रहे हैं। मुझसे यह नहीं देखा जाता। मुझ पर दया करो, मुझे जाने दो। मैं यहाँ नहीं रह सकता। खुदा हाफिज।

मेरी : मगर तुम जाओगे तो मैं भी तुम्हारे साथ जाऊँगी और अगर साथ नहीं ले जाओगे तो तुम जिस गाड़ी से जाओगे उसके नीचे दबकर मर जाऊँगी। भाड़ में पड़ने दो सबको—मिसी और कातिया को भी। हरे राम, हरे राम, कितना जुल्म है, कितना अत्याचार है।

(रोती है)

निकोलस : *(दरवाजे के पास)* अलेक्जेंडर पिट्रोविच, तुम घर जाओ, मैं नहीं जाऊँगा। *(अपनी पत्नी से)* अच्छी बात है, मैं ठहर जाता हूँ। *(ओवर कोट उतारता है)*

मेरी : *(गले लगाकर)* हमें बहुत दिन जिंदा नहीं रहना है। 28 वर्ष तक साथ रहने के बाद हमें अपने बीते हुए जीवन की खुशी को मिट्टी में नहीं मिलाना चाहिए। अब मैं कभी कोई पार्टी न दूँगी: मगर तुम मुझे इस तरह मत दंड दो।

(वानिया और कातिया दौड़े आते हैं।)

वानिया और कातिया : माँ, आओ, जल्दी करो।

मेरी : आती हूँ, अभी आती हूँ। अच्छा, अब पुरानी बातें भूलकर एक दूसरे को क्षमा कर देना चाहिए।

(कातिया और वानिया के साथ प्रस्थान)

निकोलस : बालक है, बिल्कुल बालक है, या चालाक औरत है? नहीं, एक चालाक बालक है, हाँ, ठीक है। मालूम होता है, ईश्वर, तू नहीं चाहता कि मैं तेरा सेवक बनकर तेरा यह काम पूरा करूँ। तू चाहता है कि लोग मेरी ओर उँगली उठावें और कहें "यह उपदेश देता है मगर काम नहीं करता है"। अच्छा यही सही मैं समझा, तू चाहता

है, त्याग, नम्रता, और आत्म-समर्पण। काश! मैं इतना ऊँचा उठ सकता।

(लिसा का प्रवेश)

लिसा : क्षमा कीजिएगा। मैं वासिलीसाहब का खत आपके पास लाई हूँ। वह मेरे नाम है, मगर उसमें लिखा है कि मैं आपको भी सुना दूँ।

निकोलस : क्या यह वास्तव में सच है?

लिसा : हाँ, क्या मैं पढ़कर सुनाऊँ?

निकोलस : हाँ, पढ़ो।

लिसा : *(पढ़ती है)* ''मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप यह निकोलस साहब को सुना दें। मुझे अपनी उस गलती पर सख्त अफसोस है कि जिसकी वजह से मैं गिरजा से बहक गया था। मगर खुशी की बात है कि मैं फिर गिरजा को मानने लगा हूँ। मुझे आशा है कि आप और निकोलस साहब भी इसी मार्ग का अनुसरण करेंगे। कृपया मुझे क्षमा कीजिएगा।''

निकोलस : उन्होंने बेचारे को सता-सताकर आखिर काबू में कर लिया।

लिसा : मैं आपसे यह भी कहने आई थी कि शाहजादी यहीं हैं। वह मेरे साथ दूसरी मंजिल तक अत्यंत उत्तेजित दशा में दौड़कर आईं और आपसे मिलकर जाएँगी। वह अभी बोरिस से मिलकर आई हैं। मैं समझती हूँ कि आप इस वक्त उससे न मिलें तो अच्छा है। आप से मिलकर उसे क्या फायदा हो सकता है?

निकोलस : नहीं, जाकर उन्हें अंदर भेज दो। मालूम होता है कि आज मुसीबतों का दिन है।

लिसा : अच्छा, तो मैं जाकर भेजती हूँ। *(प्रस्थान)*

निकोलस : *(अकेले में)* हाँ, काश कि मैं यह अच्छी तरह समझ सकता कि जीवन का अर्थ यही है कि मैं तेरी सेवा कर सकूँ; और मुझे आजमाने के लिए जब कोई मुसीबत मुझ पर डालता है तब तू जानता है कि मैं उसे सहन कर सकूँगा, उसे सह लेने की शक्ति मेरे अंदर मौजूद है, नहीं तो वह आजमाइश नहीं रहेगी...ईश्वर मेरी मदद करें!

(शाहजादी का प्रवेश)

शाहजादी : तुमने मुझे अंदर बुलाया? इतनी बड़ी इज्जत बख्शी? मैं आपको सलाम करती हूँ। मैं तुमसे हाथ नहीं मिलाऊँगी, क्योंकि मैं तुमसे

घृणा करती हूँ, तुम्हें तुच्छ समझती हूँ।

निकोलस : बात क्या हुई ?

शाहजादी : बस यह, कि वह उसे सजा देने के लिए दंड-भवन में लिए जा रहे हैं और इस बात के कारण तुम्हीं हो।

निकोलस : शाहजादी, अगर तुम्हें कुछ कहना है तो वह बोलो; लेकिन अगर तुम केवल मुझे कोसने ही को आई हो तो तुम अपने को ही हानि पहुँचाती हो। तुम्हारी बातों से मुझे चोट नहीं पहुँचेगी; क्योंकि मैं हृदय से तुम्हारे साथ सहानुभूति रखता हूँ और तुम पर तरस खाता हूँ।

शाहजादी : आहा, कितनी दया है! कैसी ऊँची ईसाइयत है! नहीं मि. सारयन्तसव, तुम मुझे धोखा नहीं दे सकते। अब हम तुम्हें अच्छी तरह समझ गए। तुमने मेरे लड़के को बरबाद कर दिया, और तुम्हें उसकी कुछ परवा नहीं। तुम 'बाल' कराते हो, नाच-पार्टी देते हो, और तुम्हारी लड़की, जिसका विवाह मेरे लड़के के साथ ठहरा था, अब किसी दूसरे लड़के के साथ विवाह करनेवाली है और तुम इस पर राजी हो। मगर तुम दुनिया को दिखाना चाहते हो कि तुम सादा जिंदगी बसर करते हो। इस मक्कारी और बहानेवाजी से तुम मुझे कितने घृणित और कितने तुच्छ मालूम होते हो ?

निकोलस : शाहजादी, इतनी उत्तेजित मत होओ। बोलो, तुम किसलिए आई हो ? महज मुझे झिड़कने या गाली सुनाने के लिए तो न आई होगी!

शाहजादी : हाँ, इसके लिए भी। मेरे दिल में जो आग जल रही है, उसे किसी तरह शांत भी करना है। मगर मैं जो कहना चाहती हूँ, वह यह है कि उसे वह दंड-भवन में लिए जा रहे हैं और यह मुझसे नहीं सहा जाता। तुमने ही यह सब काम कराया है। तुम्हीं ने, हाँ, तुम्हींने!

निकोलस : मैंने नहीं, यह काम ईश्वर ने कराया है। और ईश्वर जानता है कि मुझे तुम्हारे लिए कितना दु:ख है। ईश्वर की इच्छा में बाधा मत डालो। वह तुम्हें आजमाना चाहता है, इस आजमाइश को नम्रतापूर्वक, शांति से सहन करो।

शाहजादी : मैं इसे शांति से सहन नहीं कर सकती। मेरी सारी जान मेरे लड़के में है और तुमने उसे मुझसे छीनकर बरबाद कर दिया। मैं शांत नहीं रह सकती। मैं तुम्हारे पास आई हूँ और यह मैं अंतिम बार कहने आई हूँ कि तुमने मेरे लड़के को बरबाद किया है और तुम्हीं को उसकी रक्षा करनी चाहिए। जाओ, और कह सुनकर उसे आजाद कराओ।

डॉक्टर, गवर्नर-जनरल, शहंशाह या जिससे जी चाहे मिलो। यह सब तुम्हारा काम है। और अगर तुम यह न करोगे तो, मैं नहीं जानती, मैं क्या कर बैठूँगी। इसके लिए उत्तरदाई तुम्हीं हो।

निकोलस : बोलो, मैं क्या करूँ? तुम जो कहोगी वह मैं करने के लिए तैयार हूँ।

शाहजादी : मैं फिर दुहराती हूँ—तुम्हें उसकी रक्षा करनी होगी। अगर तुम नहीं करोगे तो सावधान! ईश्वर मालिक है!

(निकोलस गद्दी पर लेट जाता है। खामोशी। दरवाजा खुलता है और बाजे की आवाज जरा जोर से सुनाई देने लगी। स्त्यूपा का प्रवेश)।

स्त्यूपा : बाबा यहाँ नहीं हैं, अंदर आ जाओ।

(लोग जोड़े बनाकर नाचते हुए आते हैं)

ल्यूबा : *(निकोलस को देखकर)* ओहो, तुम यहीं हो बाबा, माफ करना।

निकोलस : *(उठकर)* कोई परवा नहीं है। *(नाचनेवाले जाते हैं)*

निकोलस : वासिली ने कदम पीछे हटा लिया; बोरिस को मैंने तबाह कर दिया। ल्यूबा ब्याह करनेवाली है। कहीं मैं भूल तो नहीं कर रहा हूँ? भूल कर रहा हूँ अपने में विश्वास करने की? नहीं, पिता मेरी मदद करो।

पाँचवाँ अंक

(पाँचवें अंक के लिए टॉल्सटॉय यह नोट छोड़ गए, जिसे वह कभी पूरा नहीं कर सके।)

दंड-भवन का एक कमरा। कैदी बैठे और लेटे हैं। बोरिस बाइबिल पढ़कर मतलब समझाता है। एक आदमी, जिसको कोड़े लगाए गए हैं, अंदर लाया जाता है। "आह इसका बदला चुकाने के लिए अगर पुगचेव जीता होता।" शाहजादी अंदर घुस आती है, मगर बाहर निकाल दी जाती है। एक अफसर से झगड़ा। कैदी प्रार्थना करने के लिए जाते हैं। बोरिस हवालात में डाला जाता है: "उसको कोड़े लगेंगे।"

(दृश्य बदलता है)

जार की सभा। सिगरेट, हँसी-मजाक। शाहजादी मिलना चाहती है। "उससे कहो जरा ठहरे।" अर्जी देनेवालों की पेशी। खुशामद, उसके बाद शाहजादी। उसकी प्रार्थना अस्वीकृत हुई।

(प्रस्थान)

(दृश्य बदलता है)

मेरी, निकोलस की बीमारी के बारे में डॉक्टर से बातचीत करती है। ''वह बदल गया है। नम्र और शांत है। मगर उदासीन रहता है।'' निकोलस आकर डॉक्टर से बातचीत करता है और कहता है कि इलाज करना बेकार है। मगर पत्नी की खातिर उसपर राजी हो जाता है। टानिया और स्ट्यूपा का प्रवेश। ल्यूबा मिकालोविच के साथ। जमीन की बाबत बातचीत। निकोलस इस तरह बातें करता है, जिससे उन्हें बुरा न लगे। सबका प्रस्थान। निकोलस लिसा से कहता है, मुझे संदेह है कि मैंने जो कुछ किया वह ठीक है कि नहीं। मैं किसी काम में कामयाब न हुआ। बोरिस नष्ट हो गया; वासिली पीछे हट गया; मैंने कमजोरी दिखाई। इससे प्रकट है कि ईश्वर मुझे अपना सेवक नहीं बनाना चाहता। उसके पास बहुत-से सेवक हैं-और वे मेरे बगैर उसकी इच्छा पूर्ण कर सकते हैं। जो आदमी इस बात को समझ लेता है, वह शक्ति पाता है। लिसा का प्रस्थान। वह प्रार्थना करता है। शाहजादी दौड़कर आती है और उसे गोली मारकर गिरा देती है। निकोलस कहता है कि इत्तफाक से गोली उसके हाथ से छूटकर लग गई। वह जार के नाम से एक चिट्ठी लिखता है। वासिली कुछ सच्चे ईसाइयों के साथ आता है! वह खुशी मनाते हुए मरता है कि गिरजा की धोखेबाजी जाहिर हो गई और कहता है कि वह अपने जीवन का अर्थ समझ गया।

□□□

भारतीय साहित्य चिंतन एवं राजनीति पर टॉल्सटॉय ने अपनी अमिट छाप छोड़ी है। धर्म-संस्कृति, अहिंसा-करुणा, सर्वोच्च मानवीय मूल्य-चेतना एवं संस्कारी आधुनिकता को उन्होंने जड़ों से सींचा है। इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक में जब हम टॉल्सटॉय की सर्जनात्मकता और विचार-दृष्टि पर विचार करते हैं तब स्पष्ट रूप से यह पाते हैं कि आज भी उनके विचारों की ताजगी में झुर्रियाँ नहीं पड़ी हैं। उनके निबंध हर दृष्टि से पठनीय हैं और उनकी कहानियाँ मानव-आत्मा की अमर प्रतिध्वनियाँ हैं जिनमें देश और काल से परे चिंतन के नए दिगंत आलोकित हो रहे हैं।

टॉल्सटॉय ने अपने समय एवं समाज में धर्मों-संस्कृतियों की टकराहट को झेला और समझा था। साथ ही वे भारत से प्रभावित थे। बौद्ध-दर्शन एवं अन्य भारतीय दर्शन की अंतर्यात्रा ने उन्हें एवं खास ढंग का भारतीय 'ऋषि' बना दिया था। यहाँ ऋषि का अर्थ है—रचनाकार एवं मनीषी। ऋषि ही कवि एवं मनीषी होता है—मुनि नहीं। इस दृष्टि से ऋषि को मुनि का पर्याय मानना भूल होगी। वे ऋषि थे और बहुश्रुत ऋषि। उनके चिंतन मे मानवतावाद की लौ निरंतर जल रही है और इस प्रकाश से पीढ़ियाँ प्रेरणा पाती रही हैं। उनके चिंतन में जटिल समस्याओं-चिंताओं के दार्शनिक समाधान हैं और इस चिंतन में नकलची भाव न होकर मौलिकता है। चिंतन की मूलगामी मौलिकता के कारण ही उनका चिंतन महात्मा गांधी के युवा-मानस को दक्षिण अफ्रीका में बहुत विस्मित और विक्षुब्ध करता है।

भारत में यह स्वाधीनता संग्राम का दौर था और अंगड़ाई लेकर एशिया का नवजागरण गुलामी की स्थिति से मुक्ति पाने का संकल्प ले रहा था। इस नवजागरण में टॉल्सटॉय के चिंतन का बहुत भारी योगदान है क्योंकि यह चिंतन आत्मविश्वास और मानवीय गरिमा की महत्त्व को प्रतिष्ठित करता रहा है। फ्रांसीसी राज्यक्रांति 1789 ई. का प्रभाव विश्व भर पर पड़ा था और उस चिंतन के मधुचक्र की भनभनाहट पूरे परिवेश में व्याप्त थी। भूलना न होगा कि इसी जागृति के परिवेश ने लियो टॉल्सटॉय की मनोभूमिका का गठन किया था। रेनेसाँ से यानी नवजागरण से एक नए विश्व का जन्म हो रहा था। सैकड़ों वर्षों से ढाली गयी सामंत प्रथा और आर्थिक ढाँचे सारे यूरोप में बदल रहे थे। कोलंबस और वास्कोडिगामा समुद्री रास्तों के खोजी एक नई इमारत रच रहे थे और अमेरिका तथा पूर्व के देशों से आई स्पेन और पुर्तगाल की दौलत ने यूरोप का दिमाग बदल दिया था। उसका दिमाग संसारव्यापी व्यापार से अथाह संपत्ति कमाने के लिए मचल उठा और संसार पर शासन करने का अरमान भी उठान पर था। प्रोटेस्टेंट और कैथोलिकों के धार्मिक युद्ध, साथ ही राष्ट्रीय आजादी के युद्ध जैसे नीदरलैंड के युद्ध बादशाही अधिनायकवादी तंत्र के विरुद्ध विद्रोह थे—मध्यवर्ग के विद्रोह। यहाँ सबसे बड़ा जमींदार था—ईसाई-संघ। इसलिए 'रेनेसाँ' नवजागरण 'रिफार्मेशन' या सुधार और 'रिवोल्यूशन' या क्रांति के विशेष अर्थ संदर्भ थे। दरअसल नवजागरण विधाओं का पुनर्जन्म था—जिसमें साहित्य कला, विज्ञान, दर्शन, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र के क्षेत्रों में और यूरोपीय भाषाओं में परिवर्तन-चक्र बहुत तेज हो गया था। वहाँ सुधार आंदोलन तो ईसाई संघ के खिलाफ़ खुला विद्रोह था। साथ ही छपाई ने शिक्षा का प्रसार किया। भारी संख्या में पुस्तक-प्रकाशन ने ज्ञान की लहर को तीव्र किया। इसी हलचल के भीतर से 'रेनेसाँ' का सूर्य निकला था जो इटली में उगा जरूर लेकिन प्रेरणा यूनान से पायी थी। तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी में फ्लोरेंस इतावली भाषा के दो महान व्यक्तित्वों को जन्म दे चुका था—कवि दांते और पेत्रार्क। चंचल फ्लोरेंस ने तीन अनुपम व्यक्ति पैदा किये—लिओनार्दो द विंची, माइकेल ऐंजिलो और राफिएल। लियानार्दो महान चित्रकार, मूर्तिकार, चिंतक और प्रयोग में सक्रिय वैज्ञानिक था। टॉल्सटॉय उसी परंपरा के महान लेखक थे।

भूमिका से...

सस्ता साहित्य मण्डल

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

एन-77, कनॉट सर्कस, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 23310505, 41523565

Visit us at : www.sastasahityamandal.org

E-mail : manager@sastasahityamandal.org

ISBN 978-81-7309-436-1